कला-गुरु प्रो. रघुवीर सेन धीर व्यक्तित्व एवं कृतित्व

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी की पी-एच.डी. (चित्रकला) उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

2007

निर्देशिका

डॉ. (कु.) सरोज भार्गव

प्राचार्या, बैकुण्ठी देवी कन्या महाविद्यालय, आगरा

शोधार्थी

बीरेन्द्र कुमार मौर्य

ज्योतिर्मय सत्ता को समर्पित

डॉ. (कु.) सरोज भार्गव
प्राचार्या, बैकुण्ठी देवी कन्या महाविद्यालय, आगरा
पूर्व अधिष्ठाता, ललित कला संकाय, डॉ. भीमराव अम्बेदकर विश्वविद्यालय, आगरा
पूर्व सदस्य, राज्य ललित कला अकादमी, लखनऊ

1/10, साहित्य कुञ्ज
महात्मा गाँधी मार्ग
आगरा-2
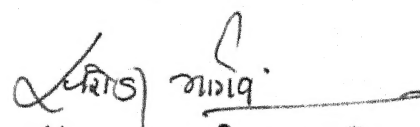
दिनांक 25.9.07

निर्देशक-प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि **श्री बीरेन्द्र कुमार मौर्य** ने बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी से मेरे निर्देशन में चित्रकला विषय में पी-एच. डी. उपाधि हेतु अपना शोधकार्य पूर्ण किया है। इनके शोध-प्रबन्ध का शीर्षक **''कला-गुरु प्रो. रघुवीर सेन धीर : व्यक्तित्व एवं कृतित्व''** है। यह कार्य बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी के नियमानुसार 'ललित कला विभाग', 'ललित कला अकादमी' तथा 'पुस्तकालय' में पूर्ण किया गया है। प्रस्तुत शोध पूर्णतः मौलिक है तथा शोधार्थी के अथक परिश्रम का परिचायक है।

मैं इनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करती हूँ।

सरोज भार्गव

डॉ. (कु.) सरोज भार्गव
शोध-निर्देशिका

प्राक्कथन

वर्तमान युग में जिस प्रकार वैज्ञानिक आविष्कारों ने भौगोलिक सीमाओं को लाँघकर अपनी उपयोगिता सिद्ध की है, उसी प्रकार कला ने भी वैश्विक पटल पर मानवीय और नैसर्गिक संवेदनाओं में अपनी व्यापकता सिद्ध की है । कला की नैसर्गिक व्यापकता से उत्पन्न एकरूपता को सभी ने स्वीकार किया है । आज वह जन-जन से जुड़कर जनचेतना जागृति में सहायक है ।

हमारे प्राचीन शिल्पग्रन्थों में कहा गया है कि भगवान् के बाद दूसरा स्थान कला का है । कलाकार समाज में रहकर उसके रीति-रिवाजों एवं परम्पराओं का अध्ययन करता है । समाज के दुःख दर्द को अपने अन्तःकरण से अनुभव करता है । स्वभावतः कलाकार चिन्तक होने के कारण अपनी कृतियों के माध्यम से दुःख दर्द को व्यक्त करने के लिए आतुर एवं बेचैन रहता है । वह कला, कला नहीं, जो प्रेक्षक के अन्तःकरण का दरवाजा न खटखटा दे । उसके लालित्य में डूबकर सादृश्य आनन्दमय न हो जाये । भारतीय ऋषियों ने भावों में रस की निष्पत्ति और उसके रसास्वादन में ही सौन्दर्य की अनुभूति की है ।

आधुनिक युग में कलाकार समाज में घटने वाली घटनाओं को देखता है और चिन्तन करता है व एक साधक के रूप में उसे साधता है । आज की आधुनिक कला अनेक दीर्घ यात्राएँ तय कर चुकी हैं और सृजन के विविध आयाम सृजित कर रही हैं । कला नये-नये प्रयोगों के द्वारा समाज में घटने वाली घटनाओं को व्यक्त करती रही है, माध्यम चाहे जो भी

हो । किसी भी सृजनात्मक कला के अस्तित्व को संजोए रखने के लिए नये-नये प्रयोगों का होना अति आवश्यक है । नये प्रयोगों से कलाकार स्वयं के चिन्तन और कल्पना को साकार करता है, उसका यह सदैव प्रयास रहता है कि उसकी स्वतन्त्र शैली निर्माण की दिशा में खरी उतरे ।

कलाकार सदैव सृष्टि के विविध रूपों को संवेदनानुसार आकार देता है और जीवन के घटनाक्रम को नये सृजन के माध्यम से निरन्तर सँवारता रहता है । वस्तुतः आधुनिक कला-प्रयोगों का सम्बन्ध भी हमारे वाह्य चक्षुओं से कम और आन्तरिक दृष्टि से अधिक है । इस समय के कलाकार स्वयं के प्रयोगों में अपनी आन्तरिक प्रेरणाओं से सामाजिक उत्तरदायित्व को ग्रहण करते हुए उसका निर्वहण कर रहे हैं । अनेक नये कलाकारों के प्रयोग प्रभावशाली कृतियों के रूप में उभरे हैं और दूर-दराज की कला के उत्थान में सहायक सिद्ध हुए हैं ।

आधुनिक भारतीय परिवेश में हमें रेखा, रंगों एवं आकारों के माध्यम से नयी शक्ति और नया रूप मिला है । जीवन की अनुभूति का स्पन्दन, अपने रीति-रिवाज और धरती की महक, भूखमरी से ग्रसित जनमानस अनुभूति के इस सत्य को भारतीय कलाकारों ने अपने नये प्रयोगों के माध्यम से नया रूप देकर समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया है । संघर्षों एवं उत्पीड़नों ने यदि कलाकार को भटकाया है तो जीवन में सत्य को उजागर करने में कोई कसर नहीं छोड़ी है ।

प्रो. रघुवीर सेन धीर देश के उन विशिष्ट कलाकारों में अपनी पहचान रखते हैं, जिन्होंने राष्ट्र की मूल भावना, परम्परा व प्रकृति से सामञ्जस्य रखते हुए भारतीय कला को प्रयोगों के माध्यम से ठोस आधार दिया । काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के दृश्य कला संकाय के अध्यक्ष रह चुके प्रो. धीर उस समय कला में संस्कारित हुए, जब कला एवं शिल्प

महाविद्यालय, लखनऊ का स्वर्णयुग था । प्रो. रणवीर सिंह विष्ट, प्रो. बद्रीनाथ आर्य, प्रो. योगेन्द्रनाथ योगी व श्री नित्यानन्द महापात्र जैसे कला-गुरुओं का सान्निध्य/शिष्यत्व पाकर प्रो. धीर ने दृश्य चित्रकारी, वाशशैली व रेखांकन के मर्म को गहराई से जाना । अपने प्रयोगधर्मिता की धार को पैनी किया तथा नाइफ से सपाट रंगों का प्रयोग कर स्थिर चित्रण, कोलाज चित्रण, कम्प्यूटर चित्रण तथा मधुबनी लोककला शैली के मौलिक स्वरूप के आधार पर समकालीन कला के परिप्रेक्ष्य में किये गये उनके प्रयोग, उनकी कला-यात्रा के वे पड़ाव हैं, जहाँ से उन्होंने निसर्ग के रहस्यों, परम्पराओं व दर्शन के प्रति आस्था, सामाजिक अनुभव एवं निज सृजनात्मकता के आधार पर अन्वेषणात्मक प्रवृत्ति ऊर्जा प्राप्त कर एक सच्चे, निष्ठावान कला साधक के रूप में भारतीय कला में अविस्मरणीय योगदान किया । काशी से प्रादुर्भूत 'समीक्षावाद' विशिष्ट कला-धारा के अग्रणी कलाकारों के रूप में प्रो. धीर ने सांस्कृतिक नगरी काशी को दृश्य-कला-जगत् में समकालीन विचारों से सम्बद्ध करने की पृष्ठभूमि तैयार की ।

कोलाज चित्रण, दृश्य चित्रण, म्यूरल तथा अन्य संयोजनों का अध्ययन करके यदि शोध-कार्य किया जाता है तो वह एक चित्रकार के कला-जीवन की यात्रा का सचित्र लेखा-जोखा होगा । मुझे आर. एस. धीर के चित्रण कार्य के अध्ययन करने की प्रेरणा उनकी मृत्यु के पश्चात् चित्रों की प्रदर्शनी से ही नहीं मिली बल्कि कला के प्रति उनकी निष्ठा के कारण मैं उनके और उनके चित्रों पर शोध के लिये कटिबद्ध हुआ ।

सम्पूर्ण शोध-प्रबन्ध को सात अध्यायों में विभाजित किया गया है । **अध्याय प्रथम** में उनके पारिवारिक जीवन, विद्यार्थी समय के कार्य, कला-प्रेरणा के स्रोत तथा कला-गुरु की इनकी कला पर पड़े प्रभाव का वर्णन है । **अध्याय द्वितीय** में इनके व्यक्तित्व को कलाकार

तथा शिक्षक के रूप में विस्तारित किया गया है । **अध्याय तृतीय** में प्रो. धीर की कला-विविधता को चित्रकला वाश चित्रण, साधारणीकृत चित्रण, कोलाज चित्रण तथा कम्प्यूटर चित्रण नामक शीर्षक से व्याख्यायित किया गया है ।

अध्याय चतुर्थ में चित्र-साधना का विषयगत् स्वरूप है, जिसमें धार्मिक, सामाजिक (व्यंग्यचित्र), दृश्य चित्र, वस्तु चित्रण तथा अन्य प्रकार के चित्रों का समावेश है । **अध्याय पंचम** में प्रो. धीर द्वारा अपनायी गयी विभिन्न तकनीकों जैसे— वाश तकनीक, कोलाज तकनीक, टेम्परा, जलरंग तथा मिश्रित माध्यमों का अध्ययन किया गया है । **अध्याय षष्ठम्** में श्री धीर के प्रमुख चित्रों का कलात्मक विश्लेषण एवं भावनात्मक महत्व प्रस्तुत है । **अध्याय सप्तम** में उपसंहार है । प्रो. धीर की कल-शैली का विवेचन बनारस तथा लखनऊ के साथ राष्ट्रीय कला-जगत् में इनके स्थान व योगदान को प्रस्तुत किया गया है ।

इस प्रकार प्रो. धीर पर किये गये शोध-कार्य से समकालीन कलाकारों पर हो रहे शोध में एक और कड़ी जुड़ सकेगी । युवा कलाकारों की पीढ़ी इस शोध द्वारा प्रो. धीर के कला जीवन तथा चित्रों से प्रेरणा ग्रहण करेगी ऐसा मेरा विश्वास है ।

बीरेन्द्र कुमार मौर्य

- बीरेन्द्र कुमार मौर्य

कृतज्ञताज्ञापन

कृतज्ञताज्ञापन

सर्वप्रथम मैं ऋद्धि-सिद्धि के देवता तथा विघ्नहर्ता श्री गणेश जी, इस गहन सृष्टि के रचनाकार एवं कलाकार परब्रह्म, सर्वव्यापक, सर्वज्ञाता, सर्वशक्तिमान और समस्त ललित कलाओं के आदि स्रोत परमगुरु त्रिपुरारी भगवान शिव और उनकी प्रेरणा-शक्ति माँ भगवती को शत्-शत् नमन करता हूँ। विद्या की देवी माँ सरस्वती एवं आदिशक्ति देवी माँ के चरणों में मेरा शत्-शत् वन्दन, जिनके प्रसाद से मेरा यह शोध-कार्य पूर्ण हुआ।

कला एवं शिल्प महाविद्यालय, लखनऊ में प्रो. धीर के प्रयोगधर्मी कलाकार के रूप में गढ़ने वाले उनके गुरु **श्री बद्रीनाथ आर्य** को स्मरण न करना महान भूल होगी। गुरु श्री आर्य के श्रेष्ठ सान्निध्य में ही प्रो. धीर ने न केवल वाश कला-पद्धति की बारीकियों को सीखा बल्कि नित नूतन प्रयोगों के लिए भी प्रोत्साहन प्राप्त किया। गुरु आर्य से मिलकर मेरी प्रसन्नता की सीमाएँ न रहीं, इनके द्वारा प्रो. धीर के विद्यार्थी जीवन के विषय में दी गयी जानकारियों के बगैर शोध-प्रबन्ध का पूरा होना सम्भव न था। परमस्नेही गुरु बद्रीनाथ आर्य को कोटिशः नमन करता हूँ।

इस शोध-प्रबन्ध को पूर्ण करने में **प्रो. रामचन्द्र शुक्ल जी** ने अपना अमूल्य समय देकर प्रो. धीर के अध्यापक, विद्यार्थी एवं कृतियों के बारे में जानकारियाँ प्रदान कीं, जिसके परिणामस्वरूप यह शोध-प्रबन्ध पूर्ण हो सका। मैं हृदय से प्रो. रामचन्द्र शुक्ल जी के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ।

शोध प्रबन्ध की पूर्णता में मैं अपनी शोध निर्देशिका सरल, सौम्य, वात्सल्यमयी, गरिमामयी व्यक्तित्व की स्वामिनी ***डॉ. (सुश्री) सरोज भार्गव*** के कुशल मार्गदर्शन, निरन्तर प्रोत्साहन, अमूल्य विचारों एवं सदैव सहायतारत रहने के प्रति कृतज्ञ हूँ। आपका ममतामयी स्नेह सदैव मिलता रहा है। आपके सान्निध्य में रहकर मैंने नित्य नूतन ज्ञान अर्जित किया। आपको शोध-निर्देशिका व गुरु के रूप में पाकर मैं परमसौभाग्य का अनुभव करता हूँ। व्यस्तताओं के रहने के बाद भी समय-असमय जब भी मैं अपनी शोध-सम्बन्धी समस्याओं को लेकर आपके पास गया, आपने तत्काल ही अपने अमूल्य विचारों से मेरी समस्याओं का निराकरण करते हुए मेरा उत्साहवर्धन किया। आपके प्रति मैं अपने उद्‌गारों को अक्षरशः व्यक्त करने में असमर्थ पा रहा हूँ। आपके निरन्तर प्रोत्साहित किये जाने का ही परिणाम है कि मैं अपना शोध-प्रबन्ध समय से प्रस्तुत कर पा रहा हूँ। मैं पुनः अपनी निर्देशिका डॉ. (सुश्री) सरोज भार्गव जी को कोटिशः नमन करता हूँ।

कला एवं शिल्प महाविद्यालय, लखनऊ में प्रो. धीर के सहयोगी **श्री जयकृष्ण अग्रवाल जी** का हृदय से अभारी हूँ। यूँ तो श्री अग्रवाल, प्रो. धीर से कक्षा में एक वर्ष पीछे थे, किन्तु कला-जगत् में प्रो. धीर व श्री अग्रवाल की मित्रता किसी से छिपी नहीं है। श्री अग्रवाल जी ने श्री धीर के वाश-तकनीकी तथा चित्रों के बारे में जानकारी प्रदान की, जो श्री धीर के कला-जीवन की सशक्त प्रस्तुति है।

इस शोध-कार्य को पूर्ण करने में प्रो. धीर की जीवनसंगीनी **श्रीमती सुदर्शन धीर** ने अपना अमूल्य समय देकर प्रो. आर. एस. धीर के रेखाचित्र, छायाचित्र और उनकी उपलब्धियों

के प्रमाणपत्रों की छायाप्रति मुझे उपलब्ध करायी । मैं श्रीमती सुदर्शन धीर के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ ।

ललित कला विभाग, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी की विभागाध्यक्ष **डॉ. (श्रीमती) सुनीता जी** का आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने समय-समय पर विश्व-विद्यालय के शोध-सम्बन्धी नियमों की जानकारी देकर मेरा शोध-कार्य सरल बनाया । ललित कला विभाग, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ के अतिथि अध्यापक **श्री विजय चालम जी** का आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने समय-समय पर मेरा मार्गदर्शन किया ।

कला-गुरु प्रो. आर. एस. धीर के प्रिय शिष्य श्री विनय कृष्ण अग्रवाल जी को हृदय से धन्यवाद देता हूँ । जिन्होंने श्री धीर के कला-जीवन के बारे में जानकारी के साथ ही समाचार-पत्रों का संकलन तथा कम्प्यूटर चित्रों का संकलन हमें सहर्ष प्रदान किया ।

मैं उन सभी आचार्यों, मनीषियों एवं विद्वान् लेखकों के प्रति वन्दनपूर्वक आभार प्रदर्शित करना अपना परम कर्त्तव्य समझता हूँ, जिनके ग्रन्थों, रचनाओं व लेखों से सहायता प्राप्त कर ज्ञानार्जन करके आपने विषय को सुस्पष्ट किया । मैं उन सभी को आभार व्यक्त करता हूँ, जिनके ग्रन्थों से मैंने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सहायता प्राप्त की ।

शोध के निमित्त जिन पुस्तकालयों में जाने का अवसर मिला, वहाँ के पुस्तकालयाध्यक्षों, संग्रहालय के संरक्षकों व कर्मचारियों का हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ । दिल्ली की राष्ट्रीय ललित कला अकादमी, राज्य ललित कला अकादमी, लाल वारादरी भवन, लखनऊ, दृश्य कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ का पुस्तकालय एवं बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय आदि का पुस्तकालय जहाँ से मैंने पुस्तकें प्राप्त की ।

इस शोध-प्रबन्ध के परिपूर्णता में देवस्वरूप पिता श्री रामानन्द मौर्य, ममतामयी, धैर्य, सहिष्णुता एवं कर्मठता की प्रतिमूर्ति माता श्रीमती वेला देवी को कोटिशः नमन करता हूँ । साथ ही पूरे परिवार का हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने निराशा और कुण्ठा की घड़ी में अपना पूर्ण स्नेह प्रदानकर इस कार्य को पूर्ण करने के योग्य बनाया ।

मैं अपने मित्र श्री चन्द्रप्रकाश मिश्र जी का हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने मेरे साथ चलकर इस शोध-प्रबन्ध को पूर्ण कराने में सहयोग प्रदान किया । अपने मित्र श्री लक्ष्मण प्रसाद, सुनीलजी, डॉ. संजय सिंह गौतम एवं श्री रूपेश जी का आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने शोध-कार्य के लिए प्रोत्साहित करने के साथ ही सहयोग भी प्रदान किया । अपने अनुज श्री राजेश कुमार विश्वकर्मा के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने छायाचित्रों को अपने कम्प्यूटर द्वारा संयोजित कर उसे सुन्दर बनाने में अपना अमूल्य समय दिया । अपने सभी शुभचिन्तक साथियों का हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ, जिनका स्नेह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से समय-समय पर मुझे प्राप्त होता रहा ।

बीरेन्द्र कुमार मौर्य

- बीरेन्द्र कुमार मौर्य

“कला-गुरु प्रो. रघुवीर सेन धीर : व्यक्तित्व एवं कृतित्व”

चित्र-सूची

रेखाचित्र-सूची

19. श्री नारद जी

20. लोक चित्र (कठपुतली)

21. लोक चित्र (कठपुतली)

22. लोक चित्र (कठपुतली)

23. लोक चित्र (कठपुतली)

24. लोक चित्र (कठपुतली)

25. लोक चित्र (कठपुतली)

26. लोक चित्र (कठपुतली)

27. झाँकी

28. पान की दुकान

भूमिका

भूमिका

कला का कोई क्रमबद्ध इतिहास बनाना कठिन है, लेकिन गुफाओं और शिलाओं पर पाये जाने वाले चित्रों से ये माना जा सकता है कि चित्रकला का आरम्भ 30000 ई. पू. से 10000 ई. पू. के मध्य हुआ । उस समय मानव जंगलों में रहकर अपना भरण-पोषण करता था । उसे अपनी भावनाओं को व्यक्त करने की आवश्यकता अनुभूत हुई, तभी से उसने रेखाओं द्वारा चित्र अंकित करने आरम्भ कर दिये, जो चारों ओर के वातावरण से सीधे सम्बन्धित थे ।

कला सदैव मानवीय संवेदना की संगिनी रही है । संवेदना और कला दोनों एक सिक्के के दो पहलू हैं । जहाँ-जहाँ मनुष्य रहा, वहाँ-वहाँ कला का स्वतः विस्तार हुआ । हजारों वर्ष पूर्व जब मानव गुफाओं एवं कन्दराओं में रहता था तभी से कला का जन्म माना जाता है । आदिमानव ने अपने जीवनकाल में जो भी सोचा, उसके अन्तर्गत जिन भावनाओं ने जन्म लिया उसे किसी-न-किसी रूप में व्यक्त किया । चित्र के माध्यम से, भाषा के माध्यम से (प्राकृतिक भाषा) एवं अन्य प्रकारों से उसने अपनी कामनाओं, भावनाओं को रूपरेखा प्रदान की । आदिमानव को गुफाओं एवं कन्दराओं में जो कुछ भी मिला उसने उसे ही सृजन का माध्यम बना लिया । आदिमानव की चित्रकारी का नमूना हमें दक्षिण की रायपुर और ऋषिमूलक की गुफाओं में प्राप्त होता है एवं उत्तर भारत के मिर्जापुर, सिंहनपुर आदि स्थानों से भी प्राप्त होता है । यही नहीं अपितु उसके औजारों, हथियारों एवं बर्तनों तक में भी कलात्मक सौन्दर्य दिखाई देता है ।

आदिमानवकालीन चित्रों का विषय आखेट था । मिर्जापुर पंचमढ़ी, सिंहनपुर, सिन्धु घाटी आदि स्थानों पर इस विषय से सम्बन्धित अनेक चित्र मिले हैं, जिनमें सरलीकृत रेखीय

शैली में पशुओं तथा मानवाकृतियों को विभिन्न स्थितियों में बनाया गया है । भोपाल के एक आखेट दृश्य-चित्र में आखेटक को मुखौटा पहने चित्रित किया गया है ।

आखेट दृश्य अत्यधिक प्राचीन होने के साथ-साथ कलात्मक दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है । इसी प्रकार के अनेक चित्र विविध स्थानों पर मिलते हैं । इन चित्रों के माध्यम से कई विद्वानों ने आदिमानव के मनोविज्ञान तक पहुँचने की चेष्टा की । इसके अतिरिक्त सिन्धु घाटी में चित्रित पशुओं की व्याख्या मृतात्माओं के रूप में मानी गयी है । आदिम कला केवल भारत में ही नहीं वरन्, बेबीलोन, यूरोप, सुमेर, सिन्ध कीट, मिश्र, उत्तरी-दक्षिणी अमेरिका एवं श्रीलंका आदि स्थानों पर भी पायी गयी है ।

चित्रकला के इतिहास में मानव-आकृति और प्रकृति को अनदेखा नहीं किया जा सकता । वे चाहे प्रागैतिहासिक काल के गुफाओं के चित्र हों या अजन्ता की गुफा के भित्तिचित्र या पहाड़ी शैली के लघु चित्र इनमें चित्रण का समय अन्तराल भले ही बहुत ज्यादा हो, लेकिन इन सभी में मानव-आकृति और प्रकृति के विविध रूप विद्यमान हैं ।

20वीं शताब्दी के आरम्भ में भारत के कलाकारों में स्वतन्त्र चेतना को चित्रों द्वारा अभिव्यक्त करने का चलन आरम्भ हो चुका था । जो भारत के चित्रकला-इतिहास में एक आन्दोलनकारी कदम था । इससे पहले जितना भी कार्य इस दिशा में हुआ, पूँजीवाद के अन्तर्गत हुआ । छोटी-छोटी रियासतों के राजाओं में अधिक लघुचित्र शैली पनपी, फिर कुछ जागीरदारों, बड़े-बड़े साहूकारों के तहत कार्य हुआ । परन्तु उसमें कलाकर को अपनी स्वतन्त्र अभिव्यक्ति का कहीं कोई स्थान नहीं होता था ।

1930 में इस दिशा में अमृता शेरगिल का नाम सर्वप्रथम आता है और इसके साथ ही तैल चित्रण का चलन भी शुरू हो गया । जहाँ तक तैल चित्रण के जन्मदाता का प्रश्न है तो उसमें राजा रवि वर्मा का ही नाम आता है । जिन्होंने इस माध्यम को प्रसिद्ध बनाया । इसमें

कोई शक नहीं कि राजा रवि वर्मा बहुत बड़े कलाकार थे लेकिन स्वतन्त्र अभिव्यक्ति की श्रेणी में वे नहीं आते; क्योंकि उनका कार्य पौराणिक कथाओं के पात्रों पर आधारित होता था। जितना भी कार्य राजा रवि वर्मा ने किया, वे सब कैलेण्डर-आर्ट तक सीमित रह गया, जिसे पापुलर आर्ट भी कहा गया। ठीक इसी समय बंगाल में टैगोर बन्धुओं द्वारा स्वतन्त्र चित्रकला अभिव्यक्ति का प्रयास हुआ जो कि कुछ हद तक बाद में अवनीन्द्रनाथ व रविन्द्रनाथ टैगोर के कार्यों में देखने को मिलता है; क्योंकि ये सभी परम्परागत शैलियों में बँधे हुए थे, जिसे छोड़ नहीं पा रहे थे।

ईजल चित्र शुरू होने का कलाकार को सबसे बड़ा फायदा यह हुआ कि कलाकार अपने मन के अनुसार सपाट धरातल के ऊपर अपनी अभिव्यक्ति को व्यक्त करने के लिए भीमकाय आवृत्ति से लेकर लघु आकृति तक बना सकते हैं।

1945 के करीब देश के अधिकांश भागों में कलाकारों ने अबतक तैल चित्रण को अपना लिया था, जिसमें कलकत्ता ग्रुप, जिसकी स्थापना 1943 ई. में मानी जाती है, जिसमें कलाकार गोपालघोष, नीरज मजूमदार, रथिन मित्रा, प्राणकृष्ण पाल और शिल्पकार प्रदोषदास गुप्ता थे, जबकि दूसरा ग्रुप 1940 के करीब 'तुरक' के नाम से स्थापित हुआ, जिसमें पी. टी. रेड्डी, केलेमैंट वपतिसा और ए. ए. मजिद थे, लेकिन इन सबसे अलग जिस संस्था ने चित्रकला में अलग नाम व पहचान बनाया उसका गठन 1948 में प्रोगेसिव आर्टिस्ट ग्रुप मुम्बई के नाम से हुआ। जिसके सदस्य हुसैन रजा, सूजा, आरा, गायतोंडे आदि थे। 1950 ई. के आस-पास इन्हीं कलाकारों की बदौलत चित्रकला की गतिविधियों के लिए एक महत्त्वपूर्ण स्थान बन चुका था, जिसमें आमजीवन से सम्बन्धित चित्र बनने लगे थे।

20वीं सदी के प्रथम चरण में ही बंगाल में चेतना का एक नया युग शुरू हो चुका था। ई. वी. हैवेल, कुमार स्वामी, ओंकाकुरा अवनीन्द्रनाथ, रवीन्द्रनाथ आदि के विचारों ने कला-

शिक्षा को एक नया भारतीय और एशियाई सन्दर्भ दिया । कलकत्ता के कला महाविद्यालय में ई. वी. हैवल ने पश्चिमी अकादमिक कला शिक्षा के ढाचे को बदलना चाहा । उनका विश्वास था कि भारतीय कला-परम्परा को रोम और यूनान की कला-परम्परा के बराबर रखा जा सकता है । यूरोप के महान चित्रों की अनुकृतियों को हटा दिया गया । राजपूत और मुगल काल के लघु चित्रों को स्थान प्राप्त हुआ । हैवेल ने अवनीन्द्रनाथ को अपना सहयोगी बनाया । बाद में अवनीन्द्रनाथ के कई प्रिय शिष्य देश के कई कला महाविद्यालयों में गये और वहाँ वातावरण को बदलने की कोशिश की । इस समय मार्डन रिव्यू प्रवासी कला पत्रिका के अंकों ने देश भर में इस नयी कला-चेतना को फैलाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई ।

भारत के कला-परिदृश्य का गहन अध्ययन करें तो यह ज्ञात होता है कि बीसवीं सदी के आरम्भिक दशकों से ही कलाकारों ने विभिन्न माध्यमों में अपनी कला अभिव्यक्ति को महत्त्व दिया । पारम्परिक तकनीकी ज्ञान के साथ ही आधुनिक तकनीकी ज्ञान को अपनाया । विश्व के नवीन कला-विधाओं की पद्धतियों में विशेष रुचि लेकर आधुनिकता की ओर अग्रसर हुए । भारतीय कलाकारों ने भारतीय विषय-वस्तु को नये सन्दर्भ में प्रस्तुत किया और विश्व के कला आन्दोलनों के समक्ष भारतीय कला को नयी दिशा प्रदान की । देश के विभिन्न कला महाविद्यालयों में गुरु-परम्परा के अन्तर्गत भारतीय कला-विधाओं में गहन पैठ करके जहाँ एक ओर भारतीय कला-परम्पराओं को निरन्तरता प्रदान की, वहीं पाश्चात्य कला-विधाओं को भी महत्त्व देकर आधुनिकता की ओर अभिप्रेरित किया ।

बीसवीं सदी की कला-विधाओं के अध्ययन से ज्ञात होता है कि स्वतन्त्रता से पूर्व और स्वतन्त्रता के पश्चात् संघर्षरत कलाकारों की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है । औपनिवेशिक पाश्चात्य कला के प्रभाव और परम्परावादी रूढ़िवादिता के प्रभाव से मुक्त एक नवीन मार्ग की खोज में कलाकारों की सृजनशीलता, स्वतन्त्र चिन्तन और प्रगतिशील मानसिकता ने कला में

नवीन सम्भावनाओं को जन्म दिया, साथ ही प्रतिकूल परिस्थितियों में सार्थक सृजन की ओर प्रवृत्त हुए । कला में मौलिक और नवीन विचारों को महत्त्व दिया गया एवं व्यक्तिगत चिंतन को प्रोत्साहन मिला ।

आधुनिक कला-जगत् में कलाकारों के क्रियाकलापों में कभी-कभी ऐसे रहस्यात्मक पहलुओं को उजागर होते हुए देखा जा सकता है, जो साधारणतया सम्भव नहीं होता, बल्कि जीवन के उस अवतेचन मन के अंधेरे पक्षों को परत-दर-परत खुलते हुए देखा जा सकता है जिसका रहस्योद्घाटन होने पर लोग अपने छुपे हुए खोल से बाहर आ जाते हैं । बीसवीं सदी के समकालीन परिवेश में यह एक प्रकार से नवीन रचनात्मकता का अभियान रहा है और परिवर्तनशील मानसिकता का संकेत रहा है ।

कलाकार ने अपने आस-पास जो कुछ देखा, परखा और अनुभव किया उन्हीं विचारों को अपने चित्रों में प्रतिध्वनित किया । मंथन के पश्चात् जटिल या सरल भाव में अभिव्यक्ति का आधार बनाया । अपने सम-सामयिक विचारों को आधुनिक कलाकार अधिक महत्त्व देते रहे हैं । इसका कारण यह भी हो सकता है कि प्राचीन विचारों को पूर्णरूप से त्यागने के लिए सम-सामयिक विचारों पर आधारित चित्रों का निर्माण करते हों । कलाकारों ने सम्प्रेषण के तौर पर अपनी कला में गहन विचारों को अपनाया । कलाकृतियों को परखने पर इनमें व्यावहारिक और रचनात्मक आवेग दिखाई देता है । दर्शकों ने इनमें अपने व्यक्तिगत या सामाजिक विचारों को गहन भाव में अभिव्यक्त होते देखा है । समकालीन कला में अभिव्यक्ति की गूढ़ता एक प्रकार से कलाकारों की ऐसी अभिव्यक्ति है जो व्यक्तिगत तौर पर अपनी कला से गहन विचारों की व्यक्त भावनाएँ हैं, इसलिए यह भी प्रश्न उठता रहा है कि कला से समाज का क्या सम्बन्ध हो सकता है । यह कहा जा सकता है कि कला समाज का ही प्रतिबिम्ब है, परोक्ष या अपरोक्ष रूप से वह समाज की ही अभिव्यक्ति मानी जाती है । यह अवश्य कहा जा सकता है कि समकालीन कलाकार अवचेतन मन की अवधारणा अपनी कलाकृतियों में करते हैं । इसलिए

यह भी कहा जा सकता है कि बुनियादी रूप में समकालीन कला सार्वजनिक अभिव्यक्ति है लेकिन रचनात्मक रूप में देखा जाये तो आज की कला में सौन्दर्य बोध को नयी दृष्टि से देखा जाता है और नये-नये माध्यमों के कारण उनमें प्रयोगात्मकता को महत्त्व मिला है, अर्थात् कलाकार विभिन्न माध्यमों द्वारा कला जगत में अपनी विशिष्ट पहचान बना सके हैं ।

बीसवीं सदी के समकालीन कला के कलात्मक पक्ष को परखा जाय तो यह आभास होता है कि कलाकार के व्यक्तिगत चिन्तन और सामाजिक परिवेश के मध्य जो सम्बन्ध रहा है, वह व्यक्तिवादी विचार से ऊपर उठकर समग्रता का भाव प्रस्तुत करता है । भारतीय कला में आधुनिक शैलियों और वादों (इज़्म) का बड़ा महत्त्व रहा है, लेकिन दूसरे रूप में भारत के कलाकारों का चिन्तन सामाजिक रहा है; क्योंकि कलाकारों ने समाज के उन भावों को उजागर किया है जो आज के समाज में घटित हो रहा है । जैसे व्यंग्यात्मक भाव में कलाकारों ने समाज के दुखद स्थितियों जैसे घृणा, विद्वेष, शोक आदि भावों को समाज के विकृतिकरण के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है । एक पक्ष यह भी महत्त्वपूर्ण है कि कलाकारों की भावा-भिव्यक्ति में अमूर्त अभिव्यंजना का पक्ष अधिक प्रबल रहा है जिस कारण अतियथार्थवादी कल्पनाओं को महत्त्व मिला । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि भारतीय आधुनिक समकालीन परिवेश में सामाजिक भावों को विशेष रूप से प्रस्तुत किया जाता रहा है । यह भी अनुभव किया जा सकता है कि समकालीन कलाकार भारतीय जनमानस की अभिव्यक्ति को गहन रूप में प्रस्तुत करते रहे हैं । एक ओर जहाँ कलाकारों को व्यक्तिवादी कहा जाता है, वहीं दूसरी ओर इनकी कलाकृतियों को समाज का दर्पण कहा जाता है । ऐसी परिस्थितियों में कलाकार का दृष्टिकोण सदैव सामाजिक रहा है ।

भारतीय कला पर विश्व की विभिन्न तकनीकी पद्धतियों और विधियों का प्रभाव पड़ा है, जैसे लाल रंग के वाश पद्धति, तैल रंग पद्धति, इटालियन म्यूरल तकनीकी एवं छापांकन

पद्धति (इन्ग्रेविंग, लिथोग्राफी, एचिंग आदि) इन पद्धतियों और तकनीक को अपनाकर कलाकारों ने आधुनिक विश्व के साथ भारतीय कला को भी स्थापित किया ।

चित्रकार आर. एस. धीर भी ऐसे कला साधकों में से एक हैं, जिन्होंने अनेक पद्धतियों, विधाओं एवं तकनीक में अपनी प्रतिबद्धता को प्रस्तुत किया है । अपने समकालीन परिवेश में जब वे विद्यार्थी जीवन में लखनऊ के कला एवं शिल्प महाविद्यालय में अध्ययनरत थे तभी वे वाश तकनीकी में विशेष अभिरुचि के अन्तर्गत गहन प्रयोगिक ज्ञान अर्जित करते रहे । उन्होंने आधुनिक कला-यात्रा में पहले अपने को परम्पराओं के पड़ाव पर प्रस्तुत किया और वाश पद्धति में पारम्परिक शैली के चित्रों का निर्माण आरम्भ किया । जल-रंगों में बने वाश चित्रों में रंगों की सुकोमलता तथा पारदर्शिता पर विशेष ध्यान दिया । इसी प्रकार जलरंग माध्यम के दृश्य चित्रों में रंगों की प्रवाहमयता और पारदर्शिता पर विशेष ध्यान दिया । प्रो. धीर के चित्रों के विषयवस्तु भारतीय रहे हैं, लेकिन उनमें आधुनिक चिन्तन प्रत्यक्ष दिखाई देता है । कला गुरु ने अपने स्वभाव के अनुसार चित्रों को मृदुल बनाया जैसा कि इनके दृश्य चित्रों में वातावरण का बखूबी आभास हो जाता है ।

वाराणसी के संगीत एवं कला महाविद्यालय में अध्यापन का कार्य करते समय भी लगातार विभिन्न माध्यमों में अभिव्यक्ति प्रदान करते रहे और कला शिक्षण में कला के विद्यार्थियों को अकादमिक शिक्षण की ओर जाने की प्रेरणा देते रहे ।

कला-गुरु आर. एस. धीर की कला-यात्रा पर एक समीक्षात्मक दृष्टि डाली जाय तो यह कहा जा सकता है कि कला में सम-सामयिक चिन्तन को महत्त्व मिला है । कुछ समय तक सामाजिक अभिव्यंजना को प्रोत्साहन दिये और समीक्षावादी विचारों को अभिव्यक्त करते रहे लेकिन फिर से कला के लिए अभिव्यक्ति की भाषा के साथ जुड़कर विशुद्ध कलात्मक चित्रों का निर्माण करते रहे जिससे यह ज्ञात होता है कि इन्हें विशेष रूप से— प्रकृति के गहन

सौन्दर्यात्मक पहलुओं को उजागर करने में बहुत आनन्द का अनुभव होता था। प्रकृति के वातावरण में स्निग्ध सौन्दर्य को चित्रों में उतारना उन्हें प्रिय था। इनका विचार था कि प्रकृति के सौन्दर्य रूप की गहराई को प्राप्त करने के बाद कलाकार में आध्यात्मिक विचारों का जन्म होता है और कला के सौन्दर्यात्मक भावों से समाज में सृजनात्मक विचार प्रबल होते हैं। फलों-फूलों और सब्जियों के स्थिर चित्र (स्टिल लाइफ) के प्रति उनका विचार था कि प्रकृति के इन उपयोगी जीवन्त वस्तुओं के रूप रंग से कलाकारों को बहुत कुछ सीखने का अवसर मिलता है और इनके आकारों में प्रकृति के सुन्दर तत्त्व होते हैं। इन्होंने स्थिर चित्र (स्टिल लाइफ) को जल-रंगों तथा तैल रंगों में बनाया, इस प्रकार एक कलाकार के रूप में इन्होंने प्रकृति के सुन्दरतम रूप को आत्मसात् किया।

कला में सौन्दर्यपरक विचारों के कारण अपने परिवेश को आत्म-अभिव्यक्ति का आधार प्रदान करते रहे हैं। एक प्रयोगवादी कलाकार के रूप में परम्पराओं को स्वीकार करते हुए नवीन भाव में सृजन करना कला-गुरु आर. एस. धीर का स्वभाव रहा है। एक ओर वे विशुद्ध रूप से परम्पराओं के अनुरूप चित्रण को महत्त्वपूर्ण मानते थे वहीं दूसरी ओर आधुनिक कला विधाओं के वैचारिक पहलुओं को स्वीकार करते रहे हैं। लोक-कला के सन्दर्भ को अपने चित्रों में अभिव्यक्त करते रहे और उनके रूप रंग को नवीन सन्दर्भ में दर्शाते रहे। लेकिन यह भी कहा जा सकता है कि इनके यथार्थवादी चित्र-संयोजनों में व्यक्तिगत शैलीबद्धता भी दिखाई देती है। सम-सामयिक घटनाओं एवं सामाजिक विषयों पर आधारित चित्रों में व्यंगात्मक भावों द्वारा समाज की विसंगतियों को भी उजागर करते रहे हैं। ऐसे व्यंग्यात्मक चित्र-संयोजन समीक्षावादी समूह के साथ बनाते रहे। इन चित्र-संयोजनों में अभिव्यंजनावादी दृष्टिकोण और अति यथार्थवादी विचारों को प्रोत्साहन मिलता रहा है लेकिन अपने सौन्दर्यवादी प्रकृति के कारण कला-गुरु ने ऐसे चित्र-संयोजनों को अधिक दिनों तक बनाना व्यक्तिगत तौर पर स्वीकार

नहीं किया । कला-गुरु आर. एस. धीर विशेष रूप से प्रकृति-चित्रण को अधिक महत्त्व देते थे । इस कारण चित्रों में प्रकृति का सौन्दर्य अधिक दिखायी देता रहा है ।

बीसवीं सदी के कला-जगत् में भारतीय कलाकारों पर पाश्चात्य कला-विधाओं का जो प्रभाव पड़ा उसके अन्तर्गत भारत में तकनीकी ज्ञान और पद्धतियों में नवीन सम्भावनाओं का मार्ग प्रशस्त हुआ । कला-गुरु आर. एस. धीर की कला पर भी इसका प्रभाव पड़ा, लेकिन उन्होंने भारतीय प्रगतिशील कलाकारों के समान केवल तकनीकी पद्धति एवं माध्यमों को स्वीकार किया और भारतीय वातावरण के अनुसार कलाकृतियों का निर्माण किया; क्योंकि उनके विषय-वस्तु भारतीय जन-जीवन का आलम्बन करते रहे हैं । सम-सामयिक कलाकारों के समान वस्तु-निर्पेक्षता की बात को वे पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं करते थे, बल्कि चित्रों में कल्पना को अवश्य स्वीकार करते थे । कला-गुरु को चित्रों में अतिशयोक्तिपूर्ण विचारों को स्वीकारना उतना ही पसन्द था जहाँ तक चित्रों में कुछ हद तक ही विकृतिकरण दिखायी दे ।

कला-गुरु की कला को यदि परखा जाय तो उनके व्यक्तिगत चिन्तन और सामाजिक परिवेश के बीच जो सम्बन्ध रहा है वह व्यक्तिवादी विचार से ऊपर उठकर समग्रता का भाव प्रस्तुत करता है । ऐसी परिस्थितियों में उनका कला दृष्टिकोण सदैव सामाजिक रहा है । कला-गुरु की कलाकृतियों को देखने पर उनमें व्यावहारिक और रचनात्मक आवेग दिखायी देता है । दर्शकों ने अपने सामाजिक विचारों को गहन भाव में अभिव्यक्त होते देखा है और प्रो. धीर समकालीन कला के विकास क्रम के साथ चलते हुए जन-जीवन को चित्रों में अभिव्यक्त करने का सफल प्रयत्न करते रहे ।

आधुनिक कला के सम्बन्ध में विचार करें तो चित्रों में गूढ़ भाव होने के कारण कला-कृतियाँ दर्शकों के लिए अबूझ होती जा रही हैं और सम्प्रेषण सही रूप में नहीं हो पा रहा है, लेकिन कला-गुरु आर. एस. धीर ने कला में क्लिष्टता को कभी स्वीकार नहीं किया; बल्कि

कला को लोगों के बीच की भावाभिव्यक्ति माना । यह अवश्य माना जा सकता है कि नये-नये माध्यमों के कारण चित्रों में प्रयोगवादी विचारों को प्रोत्साहन मिला और कला-गुरु ने आदर्श वादिता और सामान्य जीवन की मध्यस्थता के अन्तर्गत एक ऐसे पहलू को उजागर करने का प्रयास किया है जो मानसिक आधार पर एक स्तरीय कला का भाव हो । उन्होंने चित्र-संयोजनों में मनुष्य के दुविधापूर्ण भावों या मनःस्थितियों को अधिक महत्त्व न देकर सामान्य जीवन की प्रक्रिया के अन्तर्गत मानवीय संवेदनाओं को उभारा । समकालीन परिवेश में यह एक प्रकार से नवीन रचनात्मकता का अभियान और परिवर्तनशील मानसिकता का संकेत माना जा सकता है ।

कला-गुरु आर. एस. धीर के समीक्षावादी चित्रों को अगर अलग हटा दिया जाय तो उन्होंने सौन्दर्य-पक्ष को अधिक महत्त्व दिया है; क्योंकि समकालीन सौन्दर्य-बोध की परख करने पर ऐसा अभास होता है कि कलाकार विशेष रूप से सुन्दर लगने के लिए कलाकृतियों का सृजन नहीं करते बल्कि मनुष्य के उन तमाम मनोभावों का प्रदर्शन करने के लिए सामाजिक स्थितियों में व्याप्त मनुष्य के जीवन के उस अंधेरे पक्षों को दर्शाता है जो दिखायी देते हुए भी लोग देखना पसन्द नहीं करते ।

प्रो. आर. एस. धीर अपने को सामाजिक विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाने वाले समकालीन कलाकारों में से एक मानते थे । कला-गुरु के चित्रों में जीवन की उन वास्त-विकताओं की झलक मिलती है जो आज के समाज में महत्त्व रखते हैं । उनके चित्रों में जो विषय है वे जीवन के प्रतिदिन के अनुभवों से उद्धृत किये गये हैं । उनके चित्र दुःख, संवेग तथा उन्माद की स्थितियों को आभासित तो करते ही हैं, उनमें जीवन की वास्तविकता का भी दर्शन होता है । वास्तविकता शब्द को कहने का तात्पर्य यह है कि जीवन के उन यथार्थ का चित्रण करना जो साधारण लोगों से असाधारण लोगों के जीवन के मध्य यथार्थ की अभिव्यक्ति हो । कला-गुरु ने दर्शकों के विभिन्न मानसिक स्तरों के अनुकूल चित्रों का सृजन किया जो मात्र

कला-दीर्घाओं तक सीमित न हो बल्कि लोगों के बीच प्रदर्शन बने, यही उनका ध्येय रहा है; क्योंकि कई चित्र ऐसे स्थलों पर दिखे जहाँ प्रतिदिन लोगों का जमावड़ा होता है । उनके चित्रों में साधारण वर्ग और बौद्धिक वर्ग की रुचियों और सन्तुष्टि की पूर्ति होती दिखाई देती है ।

आधुनिक कला के विषय में यह माना जा सकता है कि भारतीय सामाजिक वातावरण में दो विचारधाराएँ प्रमुख रूप से जनमानस में महत्त्वपूर्ण रही हैं । प्रथम रूप में वे लोग जो परम्पराओं, संस्कारों और रूढ़ि में बँधे हैं और भौतिकवादी आधुनिकता का निर्वाह करते हैं और दूसरे रूप में वे लोग जो परम्पराओं और संस्कारों को नहीं मानते तथा रूढ़िवादी विचारों को एकदम से नकारते हुए विकास की दौड़ में सम्मिलित होकर दिखावेपन के लिए आधुनिकता को मुखौटे के रूप में लगाये रहते हैं । दोनों एक ही मानसिकता के अधीन माने जा सकते हैं । वास्तव में, बहुत कम ही ऐसे लोग हैं जो अन्दर और बाहर से आधुनिक हैं । ऐसी परिस्थिति में समकालीन परिवेश में कार्य करने वाले कलाकारों के चिन्तन में संघर्ष की भावना अधिक बलवती होती है; क्योंकि दुविधापूर्ण समाज में उन्हें अपनी अभिव्यक्ति में सामाजिक समकालीन परिवेश को दर्शाना आवश्यक होता है । ऐसे सामाजिक परिवेश में आर. एस. धीर की कला-यात्रा में समाज के समग्रता को ध्यान में रखते हुए कला सृजन होता रहा है । उनकी कला-कृतियां कालातीत की प्रतीक नहीं हैं; बल्कि अपने सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति करती हैं । उनकी कलाकृतियों को दर्शकों में विभाजित नहीं किया जा सकता । उनके लिए कला-यात्रा नवीन संसार की यात्रा करने जैसा प्रतीत होता था । चित्र बनाने की प्रक्रिया को वे मनोरंजन नहीं मानते थे और कहा करते थे कि मस्तिष्क लगातार नवीन सीमाओं की यात्रा के लिए बेचैन रहता है, जब तक कि कलाकृतियों का निर्माण न हो जाय ।

कला-गुरु आर. एस. धीर का विचार था कि कलाकार जितना अधिक सृजन करेगा उसी

अनुपात में उसकी कला-साधना में निरन्तर निखार आयेगा और नवीन से नवीन संसार को अन्तर्मूत करने में सक्षम होगा; क्योंकि कलाकार किसी क्षण अतीत की गहराइयों में कुछ खोजता है, लेकिन वर्तमान में निरन्तर कल्पनाओं को आत्मसात् करके कला-सृजन की प्रक्रिया से जुड़ता है। स्मृतियाँ कलाकार के साथ रहती हैं, जिनके आधार पर भविष्य की नींव रखी जाती है। इसप्रकार चित्रकार आर. एस. धीर की कला अपने समय की उत्कृष्ट चेतना जागृत करती है तथा अपने मूल के प्रति संलग्नता स्थापित रखने की भावना को पोषित करती है। वे अतीत के तत्त्वों या स्मृतियों को प्रत्यक्ष दृष्टि से देखते, परखते और मनन करते रहे हैं तथा वर्तमान में उनका नवीन दृष्टिकोण से प्रस्तुतीकरण करते रहे हैं।

पश्चिमी अनुकरण के प्रबल विरोधी कला-गुरु आर. एस. धीर ने भारत के कला-परम्पराओं को ही अपनी कला-विधा का प्रेरणास्रोत बनाया है। 1980 के दशक में कुछ पारम्परिक चित्रों का वाश तकनीक में निर्माण किया व प्रत्येक पद्धति में समूह-चित्रों का निर्माण करते रहे हैं। यह कहा जा सकता है कि वे जलरंग माध्यम में सिद्धहस्त थे।

●●

अध्याय प्रथम

प्रो. धीर की पारिवारिक पृष्ठभूमि एवं आरम्भिक जीवन

उत्तर प्रदेश के समकालीन कला-परिदृश्य में एक जाना-पहचाना-सा नाम श्री रघुवीर सेन धीर है । एक या अनेक कारणों से लोग इस व्यक्तित्व से परिचित जरूर हैं । वहीं इस व्यक्तित्व में समाहित कलाकार भी स्वयं अपने में एक हैं । एक इस अर्थ में कि उसने जीवन को कहीं बहुत निकट से देखा और भोगा है, जिससे उनके जीवन में सूफीपन का प्रभाव देखा जा सकता है । इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि वह चुनौतियों से जीवन जीने वाले एक मात्र पुरुष हैं । कई होंगे, सैकड़ों हजारों हो सकते हैं, लेकिन उनमें सूफीपन का प्रभाव और दर्शन भी समा जाये यह आवश्यक नहीं । यही वह बिन्दु है, जो किसी व्यक्ति की पहचान बनकर उसे भीड़ से अलग करता है । मानव स्वयं में कम विचित्र नहीं होता परन्तु जब विकट परिस्थितियाँ उसके सम्मुख चुनौतियाँ लेकर उपस्थित होती हैं, तब प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष परिणामों के फलस्वरूप या तो वह अपने सामाजिक परिवेश से जुड़ता चला जाता है अथवा एकदम विलग हो जाता है । जिस प्रकार जीवन टुकड़ों-टुकड़ों में जाने-अनजाने टापुओं पर पड़ाव लेता है, आगे बढ़ता है, ठीक वैसे ही कलाकार की कला-यात्रा में भी कई पड़ाव आते हैं ।[1]

कला-गुरु रघुवीर सेन धीर का जन्म पंजाब के नकोदर नामक गाँव में 8 मार्च, 1937 को हुआ । आपका बचपन लखनऊ में बीता । आप बाल्यकाल से ही बहुत चंचल एवं होनहार थे । आपके अन्दर चित्रकारी करने की लगन को देखकर आपके आरम्भिक गुरुजनों ने चित्रकला विद्याग्रहण करने के लिए प्रेरित किया । लखनऊ में इण्टरमीडिएट की शिक्षा ग्रहण करने के समय से ही इनका रूझान चित्रकला की ओर हो गया था । कला गुरु आर. एस. धीर ने 1957 से 1961 तक कला की शिक्षा राजकीय कला एवं शिल्प महाविद्यालय, लखनऊ से प्राप्त किया तथा 1961 से 1963 तक दो वर्षीय पोस्ट डिप्लोमा चित्रकला में प्राप्त किया । 1964 में दृश्यकला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रवक्ता पद पर कार्यभार ग्रहण किया । कला गुरु ने 1979 में एम. एफ. ए. की उपाधि काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

से स्वर्णपदक के साथ प्राप्त की । इस समय आपने अध्यापक एवं विद्यार्थी दोनों दायित्वों का निर्वाह बहुत ही सफलतापूर्वक किया । आपने एम. एफ. ए. की उपाधि प्रो. रामचन्द्र शुक्ल के निर्देशन में प्राप्त की । आपने लम्बे समय तक बी. एच. यू. में अध्यापन करते हुए 1999 में अवकाश प्राप्त किया । दृश्यकला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में चित्रकला विभाग के विभागाध्यक्ष के दायित्वों का भी निर्वाह किया ।

श्री. आर. एस. धीर उन विशिष्ट कलाकारों में से एक हैं, जिन्होंने कलाकृति की आस्था को प्रतिपादित किया । आपने अपने कला गुरुओं के निर्देशन में जो कार्य किया उन्हीं की छाप आपके व्यक्तित्व पर पड़ी । आप प्रो. बद्रीनाथ आर्य के सबसे प्रिय शिष्य थे । आपके जीवन में उन्हीं के व्यक्तित्व की सर्वाधिक छाप दिखती है ।

आपके चित्रों में आरम्भ से ही वह अद्‌भुत आकर्षण था, जिसे देखकर कोई भी व्यक्ति उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता था । यह कहा जा सकता है कि उनके चित्रों को देखने के बाद उसमें खो जाना स्वाभाविक है । आपकी कला में संवेदनशीलता एवं उल्लास परिलक्षित होता है । नित् नये-नये माध्यमों में कार्य करना उनका शौक था । आपने जीवन के विभिन्न स्वरों को कैनवास पर उतारने का सफल प्रयास किया । आपका विषय युवा आक्रोश, गरीबी, नारी उत्पीड़न, पहाड़ों का सुरम्य वातावरण, घाटिया, हिमखण्ड, झरने, वस्तुचित्रण आदि प्रमुख हैं । बनारस के घाटों का चित्रण राड़, साँड़, सीढ़ी एवं सन्यासी नामक कहावत का चित्रण भी सजीवता से किया है । त्यौहारों, देवी-देवताओं तथा गणेश के विभिन्न रूपों को विभिन्न माध्यमों में चित्रित किया गया है ।

श्री धीर के परिवार में अनेक प्रकार की कठिनाईयाँ आयी जिनका सामना आपने बड़े ही साहस और दृढ़ इच्छाशक्ति के साथ किया । जब प्रो. धीर इण्टरमीडिएट की पढ़ाई कर रहे थे, उसी समय प्रकृति इनके विपरीत हो गयी और आपके पिताजी का स्वर्गवास हो गया । इस

विषम परिस्थितियों में भी आपने अदम्य साहक का परिचय देते हुए न केवल अपने आपको बहुत संतुलित रखा; बल्कि अपनी पढ़ायी तथा कला-यात्रा को भी जारी रखा और लक्ष्य की ओर सतत् अग्रसर रहे ।

माता-पिता एवं परिवार

प्रो. आर. एस. धीर के माता-पिता एक साधारण परिवार से थे । पिता श्री टी. आर. धीर रेलवे में नौकरी करते थे । पिताजी भी एक ईमानदार तथा स्वाभिमानी व कार्य के प्रति निष्ठावान व्यक्ति थे । टी. आर. धीर ने इसी प्रकार का संस्कार अपने बच्चों को भी दिया और बच्चों ने उसे आत्मसात किया । श्री टी. आर. धीर ने अपने जीवन में अनेक आघातों को सहन किया । बहुत कम आयु में ही आपके एक पुत्र का हृदय गति रूक जाने के कारण स्वर्गवास हो गया, लेकिन इस हादसे का प्रभाव अन्य बच्चों पर न पड़े इसका पूरा प्रयास किया । आय की कमी तथा परिवार बड़ा होने के कारण आपको हमेशा आर्थिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता था । लेकिन कभी बच्चों को आर्थिक परेशानी न हो इसका हमेशा प्रयास करते रहे ।

श्री आर. एस. धीर की माता श्रीमती सत्या धीर प्यार, करुणा, कर्मठता, सहिष्णुता और त्याग की प्रतिमूर्ति थीं । यह एक कुशल गृहणी भी थीं । परिवार में आने वाले सुख-दुःख का सहज व समान भाव से सामना करती थीं । अपने ममता की छाँव में आपने सभी बच्चों को ईमानदारी, त्याग तथा अनुशासन का संस्कार दिया । विद्यालय जाने से पहले ही एक पुत्र की मृत्यु हो गयी, लेकिन इस विषम परिस्थिति में भी श्रीमती सत्या धीर ने अद्‌भुत साहस और त्याग का परिचय दिया । अपने सभी बच्चों को समाज के प्रति उत्तरदायी होने एवं विषम परिस्थितियों में भी विचलित न होने की शिक्षा दी ।

कला-गुरु आर. एस. धीर अपने चार भाई और चार बहनों में छोटे से दूसरे थे । इनसे छोटे एक भाई हैं । सबसे बड़े भाई श्री प्रेम कुमार धीर रेलवे में नौकरी करते थे । रेलवे में

नौकरी के समय इन्होंने भी वहाँ पर ईमानदारी और कार्य के प्रति समर्पण का परिचय दिया, जो एक सच्चे भारतीय में होना चाहिए । इसके बाद श्री अजीत धीर थे जो भारतीय सेना में कार्यरत रहे । एक सच्चे देशभक्त और स्वाभिमान से भरपूर श्री अजीत धीर ने सेना में देश के विभिन्न स्थानों पर विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों को सहन करते हुए हमेशा देशभक्ति और ईमानदारी का परिचय दिया । माँ द्वारा बतलाए गये अनुशासन, त्याग और देशभक्ति के पाठ को सेना में भर्ती होकर बखूबी अपने जीवन में ढाला और हमेशा उनकी बातों को याद रखा । लेकिन दुर्भाग्य से दोनों भाई संसार से विदा ले चुके हैं ।[2]

श्री धीर के एक भाई श्री पच्ची धीर थे जो असमय ही विद्यालय जाने से पहले इस संसार से विदा हो गये । यह धीर परिवार पर एक बहुत ही कठिन और दुर्भाग्य का समय था । इस दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं से पिता श्री टी. आर. धीर और माता श्रीमती सत्या धीर को गहरा आघात लगा । लेकिन कुछ समय विचलित होने के बाद उन्होंने अपने आप को सम्भाला और अन्य बच्चों पर इसका गलत प्रभाव न पड़े इसके लिये प्रयास किया ।[3]

स्नेह धीर प्रो. धीर के सबसे छोटे भाई हैं । इनका झुकाव चित्रकला की ओर श्री धीर की प्रेरणा के कारण हुआ । स्नेह धीर ने कला की पढ़ाई दृश्यकला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी से की । इन्होंने बी. एच. यू. से बी. एफ. ए. एवं एम. एफ. ए. दोनों की उपाधि व्यावहारिक कला में प्राप्त की । जब मैंने उनसे पूछा कि आपने चित्रकला में बी. एफ. ए. क्यों नहीं किया तो उन्होंने बताया कि मेरे बड़े भाई साहब श्री आर. एस. धीर चित्रकला विभाग में अध्यापन कर रहे थे; इसलिए उनके ऊपर कोई आरोप न लगे उन्होंने मुझे व्यावहारिक कला से बी. एफ. ए. करने को कहा । स्नेह धीर वर्तमान में स्मिथ इंगलिश स्कूल, सिगरा, वाराणसी में अध्यापन कार्य कर रहे हैं तथा अपनी पत्नी व दो बच्चों के साथ खोजवाँ, वाराणसी में रहते हैं ।

प्रो. धीर के परिवार में इनकी चार बहनें भी थीं । लेकिन किसी भी बहन का झुकाव कला की ओर नहीं था । सभी बहनों ने कला गुरु को आगे बढ़ने या कलाकार बनने में कभी कठिनाईयाँ पैदा नहीं की, बल्कि ये कला के क्षेत्र में उन्नति करें ऐसी कामनाओं के साथ प्रेरित करती थीं । सबसे बड़ी बहन 'आशा' थी, इनसे छोटी बहन 'शोकी' थी, इनसे छोटी बहन 'कविता' तथा सबसे छोटी बहन 'गीता' थी । इन सभी बहनों का विवाह लखनऊ में ही हुआ और वे सभी लखनऊ में ही अपना जीवन व्यतीत कर रही हैं ।[4]

प्रो. आर. एस. धीर की पत्नी श्रीमती सुदर्शन धीर हैं । सरल, सौम्य, धैर्य एवं कर्मठता इनका व्यक्तित्व है । परिवार में एक लड़का व लड़की के साथ खुशियों से दिन बीत रहा था; लेकिन 5 नवम्बर, 2002 ई. को श्री आर. एस. धीर का स्वर्गवास हो गया, जिससे उनका परिवार बहुत ही विषम परिस्थितियों के द्वार पर पहुँच गया । इस समय श्रीमती सुदर्शन धीर ने बहुत ही धैर्य व साहस का परिचय दिया । बच्चों में लड़की की शादी श्री धीर ने ही इलाहाबाद के एक अच्छे परिवार में कर दी थी, लेकिन लड़का मैनेजमेण्ट की पढ़ाई कर रहा था । श्रीमती धीर ने लड़के को हर प्रकार से संतुलित रखा और पढ़ाई में कोई बाधा नहीं उत्पन्न होने दिया । आज उसी का परिणाम है कि लड़का एक बहुराष्ट्रीय कम्पनी में कार्यरत है । श्रीमती सुदर्शन धीर यादों को समेटे हुए सुबह के समय एक पब्लिक विद्यालय में अध्यापन का कार्य करती हैं तथा उसके बाद श्री आर. एस. धीर द्वारा बनवाये गये आवास डी. 53/90, नरायन नगर, लक्सा, वाराणसी में समय व्यतीत कर रही हैं ।

प्रो. धीर विद्यार्थी के रूप में

किसी भी मनुष्य के जीवन की दिशा को निर्धारित करने में छात्र जीवन सबसे महत्त्वपूर्ण होता है । जीवन इतिहास में विद्यार्थी जीवन से ज्ञान के नये सोपानों का विस्तार होता है और

मानवीय कार्य व्यापार में नयी गति आती है । आशाओं के प्रतिफलित होने के साथ-साथ इसे मानव के चतुर्मुखी विकास के रूप में भी देखा जाता है ।

कला-गुरु आर. एस. धीर मृदुभाषी, लगनशीन तथा जिज्ञासु विद्यार्थी के रूप में जाने जाते थे । कला शिक्षा के समय से श्री धीर को बद्रीनाथ आर्य तथा नित्यानन्द महापात्र जैसे कला गुरुओं का सानिध्य प्राप्त था । इसमें विशेष रूप से श्री बद्रीनाथ आर्य का प्रभाव युवा कलाकार रघुवीर सेन धीर पर पड़ा । यह वह सयम था जब लखनऊ कला महाविद्यालय में बंगाल स्कूल का प्रभाव अधिक था । रेखाओं पर अधिक बल दिया जाता था और वाश पद्धति में चित्र रचना का प्रचलन था । प्रो. बद्रीनाथ आर्य के शिष्य के रूप में अकादमिक कला के साथ विभिन्न कला विधाओं को सीखनें का अवसर मिला । यह वह समय था जब भारतीय कला पर पाश्चात्य विधाओं का प्रभाव पूर्णरूप से पड़ चुका था । भारत की पारम्परिक कला शैलियों में चित्रण कार्य कम हो गया था । श्री धीर के गुरु श्री नित्यानन्द महापात्र विशेष रूप से भारतीय विषयों पर आधारित चित्रण करते रहे और कला प्रशिक्षुओं को भी भारतीय कला शैलियों पर आधारित चित्रों को भारतीय एवं पाश्चात्य विधाओं व तकनीकी में बनवाते थे ।

प्रो. धीर का प्रारम्भिक जीवन तथा बचपन नबाबों के शहर लखनऊ में बीता । कला गुरु की अधिकांश शिक्षा लखनऊ में हुई और लखनऊ में अपना जीवन विद्यार्थी के रूप में पूरा किया । नबाबों के शहर में रहते हुए वह इतना प्रभावित हुए कि कलाकार बनने का निश्चय कर लिया । जबकि माता-पिता इनको शिक्षा के दूसरे क्षेत्र में लाना चाहते थे और उसके लिए उन्होंने प्रयास भी किये लेकिन इनके दृढ़ निश्चय के सामने वे सफल नहीं हो पाये ।

कला-गुरु अपने विद्यार्थी जीवन में बहुत ही जिज्ञासु, कर्मठ और लगनशील विद्यार्थी थे । उनके मन में जो भी जिज्ञासा उत्पन्न होती वह उसका समाधान अपने गुरुओं बड़ों आदि से करते थे और जब तक उनकी जिज्ञासा का पूर्ण समाधान नहीं हो जाता वह बेचैन रहते थे ।

कला के प्रति इनकी रुचि प्राइमरी शिक्षा से ही दिखाई देने लगी । प्राइमरी की शिक्षा ग्रहण करते समय पत्र-पत्रिकाओं में छपे चित्रों से स्वतः प्रेरित होकर उनकी नकल करना आरम्भ कर दिया और अपने को अन्य विद्यार्थियों की तुलना में एक अलग विद्यार्थी के रूप में प्रस्तुत किया । शिक्षा के एक-एक पायदान पर अपने आपको अग्रसर करते रहे और इनका व्यक्तित्व अन्य विद्यार्थियों से अलग दिखने लगा ।

इण्टरमीडिएट की शिक्षा पूरी होते-होते अपने आपको कला के प्रति समर्पित कर चुके थे । इनकी कला यात्रा पोस्टरों के चित्रों और नबाबों के शहर लखनऊ में कला कृतियों की प्रतिकृति से शुरू होती है । यह कला के क्षेत्र में कुछ नये पहलुओं की खोज में लगे रहे । इण्टमीडिएट की शिक्षा ग्रहण करने के बाद उन्होंने अपने आप को पूर्णरूप से कला विद्यार्थी के रूप में समर्पित किया ।

प्रो. आर. एस. धीर ने माध्यमिक शिक्षा के बाद लखनऊ विश्वविद्यालय के ललित कला विभाग में पाँच वर्षीय उपाधि (बी. एफ. ए.) में प्रवेश लेकर अपना जीवन कला विद्यार्थी के रूप में आरम्भ किया ।

कला-गुरु लखनऊ में वाश शैली के प्रख्यात चित्रकार श्री बद्रीनाथ आर्य के शिष्य रहे हैं । कला-गुरु का कहना था कि उन्होंने श्री आर्य की कला शैली का प्रभाव अपनी चित्रकला पर नहीं पड़ने दिया, इसके विपरीत अपनी स्वयं की कला शैली विकसित की । उनसे जब प्रश्न किया गया कि कला के क्षेत्र में कैसे आये तो उनका कहना था कि **''मेरा दिमान नयी खोज करना चाहता है और मैंने कला में कम्प्यूटर से लेकर अनेक नये प्रयोग और खोज की, मेरा कला जीवन इसका साक्षी है ।''**[5]

विद्यार्थी जीवन से ही जिज्ञासु प्रो. धीर कहा करते थे कि विद्यार्थी जीवन में बहुत ही सम्भावनाएँ हैं । इन सम्भावनाओं को काबू में करने के लिए निरन्तर क्रियाशीलता भी बनाये

रखनी पड़ेगी । कृतियों को तैयार करने में कलाकार को कितनी दिमागी कसरत करनी पड़ती होगी इसका अनुमान लगाना सहज नहीं है ।

गुरुओं के गुरु श्री बद्रीनाथ आर्य से मिलकर मैंने पूछा कि आप अपने सभी विद्यार्थियों में श्री धीर को कहाँ और किस प्रकार अलग देखते थे, तो उनका कहना था कि **"धीर जितनी जिज्ञासा और लगन मैंने किसी अन्य विद्यार्थी में नहीं देखी । धीर को मैंने हमेशा कला में लगा हुआ पाया, यूँ कहा जा सकता है कि धीर कला के लिए बना था ।"** कक्षा में आने के बाद धीर जब तक रहता, कलाकृतियों में खोया रहता । कलाकृतियों को बनाते समय उसके मन में अनेक जिज्ञासा होती और जब तक वह उसका सही समाधान नहीं पा लेता तब तक बेचैन रहता । मुझसे तो सभी विद्यार्थी कला सीखते लेकिन मेरे द्वारा बतायी गयी वाश तकनीकी को जितने लगन से धीर ने सीखा उतना शायद किसी विद्यार्थी ने नहीं सीखा । धीर वाश को अपनी एक विशेष शैली में बनाता, दूसरे विद्यार्थी और सहपाठी उसे वाश का मास्टर मानते थे । लखनऊ में वाश-शैली में बने अनेक चित्रों पर धीर ने पुरस्कार भी प्राप्त किये ।[6]

जहाँ एक तरफ नयापन आना, वैचारिक स्तर पर विस्तार होना, नयी दिशा के द्वार खुलना निश्चय ही शुभ लक्षण है एवं सर्जना के लिए उत्साहवर्द्धक भी है । वहीं दूसरी तरफ परम्परागत अनुशासन की पकड़ विद्यार्थियों पर ढीली पड़ने से विकृतियों की अभिव्यक्ति निरंकुश होती गयी । 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' की हमारी भाव धारा ऐसी ही परिस्थितियों में धूमिल पड़ती दृष्टिगोचर होती है । आज तेजी से कुछ कलाकारों और कला-विद्यार्थियों ने अपनी कृति में विकृति, जुगुप्सा और नग्नता के यथावत् चित्रण से परहेज नहीं रखा है । उनका तर्क है कि जब इन सबका हमारे जीवन से लगाव है तो उनकी अभिव्यक्ति से परहेज क्यों?

हम वस्त्र के भीतर आवरण विहीन जरूर हैं, किन्तु बाहर आवरण विहीन होने की कल्पना नहीं कर सकते । यह एक पारम्परिक अनुशासन है और उसका होना ही भारतीय मानस को सुन्दर लगता है । आवरण सौन्दर्य ढकने के लिए नहीं सौन्दर्य वृद्धि के लिए होता है । ऐसा कहना था कला-गुरु का जो कि बी. एच. यू. में कला अध्यापक भी थे और उसी समय एम. एफ. ए. की पढ़ायी भी किये । अर्थात् उन्होंने एक साथ कला अध्यापन और कला विद्यार्थी के दायित्वों का बखूबी निर्वाह किया जो एक अलग प्रकार का अनुभव है ।[7]

कला-गुरु श्री आर. एस. धीर बी. एच. यू. कला विभाग से सेवानिवृत्त होने के बाद जब ललित कला विभाग, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ में अतिथि अध्यापक के रूप में अध्यापन कार्य करते थे, तो उस समय मैं एम. एफ. ए. की शिक्षा ग्रहण कर रहा था । उस समय मैंने उनके अन्दर एक विशेष उद्देश्य को पूरा करने की ललक देखी । एक बार हमें कला विद्यार्थियों के बारे में बताने लगे तो वे कहने लगे कि एक विद्यार्थी हम लोग थे और एक विद्यार्थी आज के ! तो मैंने पूछा कि सर आज के विद्यार्थी और आपके विद्यार्थी काल में क्या अन्तर है? तो उनका कहना था कि पहले के विद्यार्थी अनुशासित और लगनशील थे लेकिन आज के विद्यार्थी बहुत ही कम समय में प्रसिद्धि पाने के चक्कर में प्रतीक कला का सहारा ले रहे हैं जो कला के लिए शुभ संकेत नहीं है; क्योंकि जब तक कला सृजन करने के लिए हमें उसमें सृजित होने वाली वस्तुओं, मानव चित्रण, अथवा दृश्य चित्रों का सही अभ्यास नहीं होगा तब तक कला सृजन का उद्देश्य कभी भी पूरा नहीं होगा । वे विद्यार्थियों पर अभ्यास और भारतीय सभ्यता के अनुकूल कला सृजन के लिए प्रेरित करते थे जैसा उनके गुरुओं ने भी किया था ।

भारत में एक प्रसिद्ध कला आन्दोलन के प्रवर्तक और भारतीय कला पर अपनी अमिट छाप छोड़ने वाले कलाकार प्रो. रामचन्द्र शुक्ल जी से मैं उनके वर्तमान आवास इलाहाबाद में कला-गुरु के बारे में जानने के लिए मिला जो कला-गुरु आर. एस. धीर के गुरु थे । प्रो.

रामचन्द्र शुक्ल जी से मैंने जब श्री धीर के विद्यार्थी जीवन के बारे में पूछा तो उनका कहना था कि "यह सही है कि धीर ने एम. एफ. ए. मेरे निर्देशन में किया लेकिन उस समय वह भी दृश्य कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्यापक के पद पर कार्यरत थे ।" दिमाग पर जोर देकर उन्होंने बताया कि "यह बात 1970 के बाद की है और उस समय वे काफी समय तक अध्यापन कर चुके थे । उस समय मैं चित्रकला विभाग का विभागाध्यक्ष था और मैंने उस समय सलाह दी थी कि आप एम. एफ. ए. कर लें तो ठीक रहेगा ।" उस समय यह छूट थी कि जो अध्यापक है उसको केवल लघुशोध-प्रबन्ध (थीसिस) जमा करना होता था एम. एफ. ए. की उपाधि के लिए ।[8]

प्रो. रामचन्द्र शुक्ल ने कहा कि "मैंने उनको जैन चित्रकला के ऊपर अध्ययन करने के लिए दिया था । वह हमारे शिष्य जरूर थे, लेकिन अन्य विद्यार्थियों से अलग थे; क्योंकि वे एक अध्यापक भी थे । उनकी पढ़ने-लिखने में बहुत रुचि नहीं थी लेकिन जैन चित्रकला के बहुत से चित्र एकत्रित किये और अध्ययन करके लिखे जैन चित्रों की एक सीरिज भी बनायी । धीर हमें गुरु मानते थे और एक निष्ठावान शिष्य की तरह हमारी बातों को सुनते तथा हमारे द्वारा कहे कार्यों को करते थे । वे हमारे लिए एक अच्छे छात्र के रूप में थे, यद्यपि कि वे अन्य छात्रों जैसे नहीं थे; क्योंकि वे हमारे साथ अध्यापन करते थे । लेकिन एक छात्र जैसे गुरु को सम्मान देता था वह वैसा ही सम्मान हमें देते थे ।"[9] एक प्रकार से हम कह सकते हैं कि एक अच्छे विद्यार्थी में जो गुण, लगन और ईमानदारी होनी चाहिए वह सब कला-गुरु प्रो. धीर में विद्यमान थे ।

कला प्रेरणा के स्रोत

कला-गुरु आर. एस. धीर अनेक प्रसिद्ध कलाकारों का शिष्यत्व पाकर कला के मर्म को समझने में सफल अवश्य हुए लेकिन प्रकृति को अपना वास्तविक गुरु मानते थे । इस कारण

प्रकृति के रूप रंग में खोये रहते थे। उनको प्राकृतिक वातावरण के बीच रहकर कला कर्म करने में अधिक आनन्द आता था और विशेष रूप से प्रकृति को अपनी कला प्रेरणा का स्रोत मानते थे। उन्हें गाँवों के प्राकृतिक दृश्यों से विशेष लगाव था तथा दृश्य चित्रण में वहाँ के वातावरण को दर्शाने के अतिरिक्त वे चित्र संयोजनों में भी गाँव के विशेष क्रियाकलापों का चित्रण करते रहे। अपने अध्यापन काल में भी वे चुपचाप गाँव की ओर निकल जाते थे और एक ही दृश्य के विभिन्न समयों में दृश्यांकन करते थे। उनका विचार था कि सूर्य के प्रकाश के बदलते रूप को दर्शाना बहुत कठिन कार्य है। विभिन्न वातावरण को साध लिया जाय तो एक कलाकार की कला में गहन बोध उत्पन्न हो सकता है। प्रकृति में उपजे फलों और फूलों के रंगों, आकारों एवं उनके वास्तविक गुणों को वे अपनी स्टिल लाइफ चित्रों में बखूबी दर्शाते रहे हैं।

कला-गुरु ने मनुष्य और प्रकृति के आपसी सम्बन्धों को अपने चित्र संयोजनों में भी व्यक्त किया। इस कारण उन्हें प्रकृति के चितेरे कलाकार के रूप में माना जाता रहा है। इनके चित्रों में प्रकृति की प्रधानता का दर्शन होता है। इनके दृश्य चित्रों में इंगलैण्ड के उन्नीसवीं सदी के दृश्य चित्रकार 'ईयान टर्नर' के समान वातावरण की जीवन्तता विद्यमान थी; क्योंकि ईयान टर्नर ने दृश्य-चित्रण में समय की प्रतिबद्धता को दर्शाया, ठीक उसी प्रकार चित्रकार आर. एस. धीर के दृश्य-चित्रण में भी समय की प्रतिबद्धता दिखाई देती है। उन्हें प्रकृति के पास रहना इसलिए भी अच्छा लगता था; क्योंकि वे भीड़-भाड़ से हटकर स्वतन्त्र रूप से कला चिन्तन कर सकें, इसी कारण इनके चित्रों में प्रकृति का उल्लास दिखाई देता है।

कला प्रेरणा स्रोत के रूप में जैसा कि विदित होता है कि इनको लखनऊ में गोमती नदी के आस-पास के रहने वाले लोगों विशेषकर बंजारों से कला की प्रेरणा मिली है।[10] वे जब कभी-कभी उस क्षेत्र में रहने वाले बंजारों के क्रिया-कलापों को देखते थे तो उनके प्रति उनमें

प्रेरणा जगती थी और जब वे कला महाविद्यालय लखनऊ में शिक्षा ग्रहण करने के लिए भर्ती हुए तो उकी कला में प्रथम रूप से यही आकृतियाँ दिखायी देने लगी । प्रो. आर. एस. धीर का यह मानना रहा है कि **''कला की प्रेरणा अन्तःमन की प्रेरणा है जो स्वयं प्रस्फुटित होती है । कलाकार किसी बाह्य प्रेरणा से अधिक प्रभावित नहीं होता है । वे प्रकृति को अपने अन्तःमन में निहित मानते थे और उसी की प्रेरणा से अपनी कला को अन्तिम चरण तक पहुँचाया ।''**[11] वैसे उन्होंने लखनऊ कला महाविद्यालय में अपने अध्यापकों के क्रियाकलापों से भी प्रेरणा अवश्य ग्रहण की किन्तु जब भी वे कलाकृतियों का निर्माण करते थे तो उन्हें दो ही क्षेत्र अपनी ओर खींचते थे । एक गोमती के किनारे रहने वाले बंजारे और दूसरे गोमती के नीरव प्राकृति दृश्य । इसलिए वे कहा करते थे कि उनके अवचेतन मन में सदैव यही दो झाँकियां विद्यमान रहती आयी हैं जिनको ये कभी त्याग नहीं सके और कहीं न कहीं उनके चित्रों में ऐसी ही भावाभिव्यक्ति दिखाई देती रही है अर्थात् कि जब वे अपने कला कर्म की ओर अग्रसर हुए तो यही दो प्रेरणाएँ उनकी मार्गदर्शक रही जो उनके अवचेतन मन के किसी गहरे तल में विद्यमान थीं ।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि उन्होंने प्रकृति व प्रकृति के बीच रहने वाले लोगों को ही अपने चित्रों में प्रमुख स्थान दिया जो उनके आधुनिक माध्यमों, पद्धतियों, तकनीकों और भावाभिव्यक्ति में विभिन्न रूप में सदैव दिखायी देते रहे और यही उनके कला के मुख्य स्रोत भी रहे ।

किभी भी कलाकार को कलाकार बनने के लिए कहीं न कहीं से प्रेरणा अवश्य मिली होती है । प्रो. धीर बचपन से ही किताबों, पत्रिकाओं और समाचार पत्रों में प्रकृति के रूप को देखकर उसे बनाने का प्रयत्न करते । आरम्भिक शिक्षा से ही उनका मन पढ़ाई से अधिक चित्रों को बनाने में लगता था । इनकी इसी लगन को देखकर इनके प्रारम्भिक गुरुओं ने उन्हें कला

शिक्षा के लिए प्रेरित किया । कोई भी कलाकार हो उसे कला की प्रेरणा अपने गुरु, प्राकृतिक वातावरण, सामाजिक वातावरण अथवा अन्तःमन से अवश्य मिलती और यह प्रेरणा उसके प्रारम्भिक चित्रों में अवश्य दिखायी देती है ।

मनुष्य को प्रेरित करने वाली दो तरह की शक्तियाँ होती हैं— एक जिसको हम व्यवहारिक कहेंगे और दूसरी जिसको गैर-व्यवहारिक । यद्यपि यह बात अपने में पूर्णतया सत्य नहीं है किन्तु मोटे तौर पर बात को समझने के लिए लाभदायक भी हो सकती है । मैं व्यावहारिक और गैर व्यावहारिक के बीच बोधगम्यता के लिए यह भेद सामने रख रहा हूँ; क्योंकि कला मानवीय मन की एक प्रक्रिया है । वैसे 'खाना' खाना भी एक क्रिया है या अन्य कोई काम भी एक क्रिया है । किसी पर प्रहार करना या किसी को बुलाना— यह सब मनुष्य के मन की ही क्रियाएँ हैं लेकिन इतना स्पष्ट है कि कलात्मक क्रिया स्वतः अपने में एक लक्ष्य है और इससे सन्तोष मिलता है । जब आप सूर्य का उदय देखते हैं तो एक सुन्दर रूप का उदय होते देखते हैं । आप चित्रकार न भी हों तो आपके मन में इस सौन्दर्य के बारे में ऐसी भावनाएँ उत्पन्न होती हैं कि आप उस समय एक कवि, एक चित्रकार, एक सृजनात्मक व्यक्ति हो जाते हैं । आप उसका अनुशीलन शुद्ध अनुभूति के स्तर पर करते हैं । आपके अन्दर एक प्राथमिक राग की उत्पत्ति होती है और आपको संतोष मिलता है । सन्तोष के साथ-साथ वह मनुष्य के अन्दर अन्य प्रेरणाएँ भी उत्पन्न करता है ।[12]

कला की प्रक्रियाएँ कोई व्यावसायिक प्रक्रियाएँ नहीं हैं । वह अपने में एक सामाजिक संवेदनशील प्रक्रिया है जो पूर्ण रूप से व्यावहारिक होती है और किसी विशेष लक्ष्य की ओर प्रेरित होती है जो कुशलता या निपुणता पर आधारित होती है । वह लाभदायक होती है, प्रयोग में लायी जाती है । कला में हम जिस पदार्थ का उपयोग करते हैं, वह दूसरे तरह की वस्तु है । वह एक व्यक्तिगत कला का रूप धारण करती है, वह द्विआयामी या त्रिआयामी होती है जिस

पदार्थ का हम प्रयोग करते हैं, हमारी कला जिस प्रकार के रूप ग्रहण करती है, उसी प्रकार वह पदार्थ अपनी सीमाएँ आरोपित करता है । जब हम उस पदार्थ के निकट जाते हैं तो कुछ प्रेरक शक्तियाँ जागृत होती हैं । वह कलाकार का अपना व्यक्तित्व होता है, जो उस कला को पैदा करता है । वह कलाकार एक अभ्यस्त या शिक्षित कलाकार हो सकता है और उसके काम करने का एक तरीका होता है, जिसको हम शैली कहते हैं ।[13]

कलाकार की प्रेरणा शक्ति एक विमूढ़ और अत्यन्त व्यक्तिगत भाव है जिसके कारण वह संसार की सत्यता को चित्रित करने को बाध्य होता है । शायद यही कारण है कि भारत में आपात काल के दौरान समीक्षावाद प्रकाश में आया और प्रो. आर. एस. धीर ने भारतीय नेताओं के ऐसे सत्य को अपने कैनवास पर चित्रित किया । इनमें से कुछ में एक ही कैनवास में कई चेहरों को अनेक रूपों में चीथड़ों व जानवरों के शरीर के साथ भारतीय नेताओं के शरीर को दर्शाकर एक अनूठा प्रयोग किया ।

प्रकृति प्रेरणा और धीर साहब का सघन रिश्ता, कला-गुरु के काम में कई स्तरों पर प्रकट हुआ । प्राकृतिक छटां उनके चित्रों में कई बार इस तरह दिखी की वह उनके किसी स्वप्न और स्मृति का भाग हो गयी । कई बार इस प्रकार से दिखी जैसे वे हमसे मुखातिब होती हुई 'विनोद' कर रही हो या फूलकर कुप्पा हो रही है और अपनी चपलता दिखा रही हो । कई बार फूल-पत्तियों के आकार इस तरह भी आये जैसे वे मनुष्य और प्रकृति के अन्तर्सम्बन्धों की कोई स्थिति बता रहे हों ।

कला-गुरु के एक प्रिय शिष्य श्री विनय अग्रवाल जी ने बताया कि गुरु जी कहते थे कि कला के क्षेत्र में आना कोई घटना नहीं थी । लखनऊ सदियों से धर्म, दर्शन, साहित्य, कला, संस्कृत, राजनीति आदि का केन्द्र रहा है । इसलिए कला के क्षेत्र में रुचि होना कोई विशेष बात नहीं है । गुरु जी ने कहा कि जब मैं पहली कलाकृति बनाया तो मुझे बहुत अच्छा लगा ।

विनय जी ने पूछा कि बचपन में हर बच्चा चित्र बनाता है लेकिन आपने कला को कैरियर या लक्ष्य बनाने का निश्चय कैसे किया तो गुरु जी ने कहा यह सत्य है कि बचपन में प्रत्येक बच्चा कुछ न कुछ रेखांकन अवश्य करता है किन्तु प्रकृति और सामाजिक वातावरण के कारण मेरी अन्तःप्रेरणा ने मुझे अधिक प्रेरित किया ।[14]

प्रो. आर. एस. धीर के प्रेरणा स्रोत के बारे में जब मैंने प्रसिद्ध चित्रकार प्रो. रामचन्द्र शुक्ल जी से पूछा तो उनका कहना था कि वैसे तो एक कलाकार ही अपनी कला प्रेरणा स्रोत के बारे में बता सकता है लेकिन जहाँ तक मैं जानता हूँ वह एक कर्मठ कलाकार थे तथा प्रयोगवादी थे । वह जो कुछ भी देखते थे उसको एक नये रूप में बनाने का प्रयास करते । दुनिया में जो बदलाव होते थे उनसे प्रेरणा लेकर वह उसे नये रूप में प्रस्तुत करते थे । एक प्रकार से हम कह सकते हैं कि समय-समय पर कला में बदलाव के लिए अलग-अलग प्रेरणाएँ जिम्मेदार होती हैं ।[15]

कला-गुरु प्रो. आर. एस. धीर के कला प्रेरणा स्रोत के बारे में हम कह सकते हैं कि शुरू में उनकी कला प्रेरणा स्रोत प्रकृति, समाज और लखनऊ का कलामय वातावरण था परन्तु समय परिस्थितियों और सामाजिक परिवर्तनों के फलस्वरूप नये प्रयोग और कृतियों के लिए अलग-अलग प्रेरणाओं ने प्रेरित किया ।

कला-गुरु का आपकी कला पर प्रभाव

प्राचीन शिक्षा प्रणाली गुरु-शिष्य परम्परा से जुड़ी थी । गुरु की दीक्षा के साथ इसका आरम्भ होता था । गुरु-शिष्य-परम्परा के अन्तर्गत एक खतरा स्पष्ट दिखाई देता है । शिष्यगण अधिकतर गुरु का अनुकरण करते हैं और गुरु की प्रतिलिपि बनकर रह जाते हैं । इसी कारण हम देखते हैं कि इस श्रेणी के कुछेक ही प्रबुद्ध कलाकार गुरु से हटकर अपनी पहचान बना

सके हैं, अन्य गुरु की प्रतिलिपि ही बनकर रह गये हैं । भारत हो अथवा यूरोप सभी स्थानों पर कलाकारों की यही दशा है लेकिन कला गुरु प्रो. आर. एस. धीर, उन प्रबुद्ध कलाकारों में से हैं जो गुरु से हटकर अपनी पहचान बनाने में सफल रहे । ऐसा नहीं कहा जा सकता है कि कला-गुरु आर. एस. धीर पर गुरु का प्रभाव नहीं पड़ा; क्योंकि कोई भी शिष्य हो उसके ऊपर गुरु का प्रभाव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कम या अधिक पड़ता ही है । भारत जैसे देश में तो बिना गुरु के ज्ञान की कल्पना भी नहीं की जाती ।

कला-गुरु आर. एस. धीर की कला पर सबसे अधिक प्रभाव उनके गुरु श्री बद्रीनाथ आर्य का पड़ा जिनके निर्देशन में इन्होंने वाश शैली में विशेषज्ञता हासिल की । प्रो. धीर के साथ इनके अन्य सहपाठी भी थे लेकिन किसी ने भी इस क्षेत्र में महारथ नहीं हासिल की लेकिन प्रो. धीर ने अपनी प्रतिभा और लगन के बल पर वाश में महारथ हासिल की ।

कला-शिक्षा को लेकर मन मैं सदैव एक दुविधा-सी बनी रही है । कई प्रश्न उठते रहे हैं, क्या कला सिखाई जा सकती है? वे कौन-से तरीके हैं जो कला-शिक्षा के लिए अपनाये जा सकते हैं? कला स्वरूप बदलाव के साथ क्या शिक्षा के परम्परागत तरीके कारगर हो सकते हैं? ऐसे अनेकों प्रश्न हैं जिनका हल ढूँढना अनिवार्य हो जाता है, विशेषकर उन लोगों के लिए जो कला-शिक्षा से जुड़े हैं ।

हर युग में कला का स्वरूप बदलता रहा है उसी के अनुरूप कला शिक्षा में भी बदलाव होना जरूरी है । कला शिक्षा के देश भारत में आज अनेकों संस्थान मौजूद हैं । यहाँ तरह-तरह के तरीके अपनाये जाते हैं । सैद्धान्तिक शिक्षा भी दी जाती है । यदि हम पिछली शताब्दी की ओर नजर डालें जब कोलकाता, मुम्बई, चेन्नई, लखनऊ, जयपुर आदि में कला-संस्थाओं की स्थापना हुई । उस समय की शिक्षा का सृजनात्मकता से कोई लेना-देना नहीं था । हम

परम्परागत कला की समझ भी खो गये थे । प्रबुद्ध कलाकार आन्दोलनों से परे, अपनी पहचान बनाने में संलग्न थे । भारत की कला उस समय ऊहापोह की स्थिति में थी । कला शिक्षा में एक नयी दिशा की जरूरत थी । इस सन्दर्भ में अवनीन्द्रनाथ टैगोर का चिन्तन स्तुतनीय है । उन्होंने चित्रण प्रणाली का एक नया स्वरूप बनाया । उनमें कई विद्यार्थी चर्चित और कई कला संस्थानों में अध्यापन भी किये ।

बंगाल स्कूल के जनक श्री अवनीन्द्रनाथ टैगोर के शिष्यों के शिष्य प्रो. रणबीरसिंह विष्ट, प्रो. बद्रीनाथ आर्य, योगेन्द्रनाथ योगी तथा श्री नित्यानन्द महापात्र जैसे कला गुरुओं का सानिध्य व शिष्यत्व पाकर प्रो. धीर ने दृश्य चित्रकारी, वाश शैली व रेखांकन के मर्म को गहराई से जाना ।[17]

कला-गुरु प्रो. आर. एस. धीर के कला गुरुओं में सबसे प्रमुख श्री बद्रीनाथ आर्य थे । जिनसे इन्होंने वाश तकनीकी के मर्म को जाना । वाश तकनीक के पारदर्शी रंगों की स्निग्धता के लिए श्री बद्रीनाथ आर्य पारंगत रहे हैं और भारतीय जनजीवन से सम्बन्धित विषयों पर आधारित चित्र संयोजनों को महत्त्व देते रहे हैं । उन्हीं की प्रेरणा एवं प्रभाव से चित्रकार आर. एस. धीर के वाश चित्रों में रंगों की पारदर्शिता और स्निग्धता दिखाई देती रही है । गुरु से ये इतने प्रभावित रहे कि वाश तकनीकी के चित्र संयोजनों में मेहनतकश वर्ग के जीवन से सम्बन्धित विषयों पर आधारित चित्रों का निर्माण करते रहे । भारतीय आदर्शवादी चित्र शैलियों का भी इन पर प्रभाव पड़ा; क्योंकि श्री बद्रीनाथ आर्य पारम्परिक संयोजनों को अपने चित्रण का आधार मानते थे ।

कला-गुरु आर. एस. धीर मानते थे कि गुरु-शिष्य-परम्परा का कला जगत में बहुत महत्त्व है और कला के विद्यार्थियों को किसी एक चित्रण विधा में पारंगत (सिद्धहस्त) कला-

गुरु के निर्देशन में कला की शिक्षा लेनी चाहिए जिससे भारत में लुप्त हो रहे कला परम्पराओं को पीढ़ी-दर-पीढ़ी नये सोच के साथ कायम रखा जा सके । साथ ही पारम्परिक कला को कायम रखते हुए नयी तकनीक और स्वयं की कला शैली भी विकसित की जानी चाहिए ।''[18]

आज की शिक्षा-प्रणाली बदल गयी है । गुरु और शिष्य के घनिष्ठ सम्बन्ध का स्थान यन्त्रीकृत समूह शिक्षा ने ले लिया है । इसमें व्यक्तिगत पसन्द के लिए कोई स्थान नहीं रह जाता । इसमें थोड़े से समान्य ज्ञान को प्राथमिकता दी जाती है । विशेष परीक्षण का जिसके लिए साहस और दृढ़-संकल्प की आवश्यकता है, इसमें कोई महत्त्व प्राप्त नहीं होता । परिणामस्वरूप स्वयम्भू नेता स्वयं अपनी श्रेष्ठता घोषित करता रहता है । मौलिकता के विचार से अत्यन्त प्रभावित होने के कारण उसे यह ज्ञात नहीं होता है कि उसे कब और कैसे निर्देशन करना है ।

विश्व के विभिन्न लोगों में सांस्कृतिक सम्बन्धों की स्थापना के लिए प्राध्यापकों का आदान-प्रदान होता है । यह ज्ञान के स्वस्थ प्रसार और विचारों की व्यापकता की दृष्टि से किया जाता है । यद्यपि अधिकांश मामलों में अपरिचित तत्त्वों को ग्रहण करने का प्रभाव अपावनकारी प्रमाणित हुआ है । यह स्वाभाविक भी है, जब शिक्षक किसी अपरिचित प्रणाली द्वारा शिक्षा दे तो उससे क्या ज्ञान वृद्धि होगी? कलात्मक शिक्षा की नयी प्रणाली इस प्रकार है जैसे बच्चे को माँ की गोद से छीनकर नर्स की गोंद में दे दिया जाय, जो बच्चे की आदतों और स्वभाव से सर्वथा अपरिचित है । किसी आंशिक ज्ञान को समझने एवं ग्रहण करने में भी समय लगता है, किन्तु यात्रा पर आये प्राध्यापकों को निर्धारित अवधि में लौटना पड़ता है । अतः शिक्षा शुरू होने से पहले ही पूर्ण हो जाती है और ज्ञान प्राप्त करने की यह तीव्रगामी प्रणाली शिष्टाचार एवं दृश्यावलोकन तक ही सीमित होकर रह जाती ।[19]

कला-गुरुओं की कला का शिष्यों पर कितना प्रभाव पड़ता है; यह गुरु के कार्यों और व्यक्तित्व पर निर्भर करता है । हमें गुरु की सहायता पर विचार करना पड़ता है, जो अपने शिष्य से पराजय स्वीकार करने में गौरव अनुभव करता है । यदि उसका शिष्य कलात्मक अभिव्यक्ति के कौशल में वांछित स्तर तक पहुँच जाय तो उसे प्रसन्नता होती है । गुरु के मार्गदर्शन में आस्था ही शिष्य की आत्मनिर्भरता का स्रोत बन जाती है । अतीत के इस ज्ञान का आधुनिक यांत्रिक अस्तित्व की अशान्ति में विनाश हो गया है । आज के युग में गति का स्थान जल्दबाजी ने लिया है और समझ में न आने वाली कोई भी वस्तु मौलिक मान ली जाती है ।[20]

कला-गुरु आर. एस. धीर के कला जीवन में कला गुरु का कितना प्रभाव पड़ा यह जानने के लिए जब मैंने समीक्षावाद के जनक प्रो. रामचन्द्र शुक्ल जी से पूछा तो उनका कहना था कि **''किसी भी शिष्य के ऊपर उसके गुरु का प्रभाव अवश्य पड़ता है । धीर के ऊपर भी अपने गुरु का प्रभाव पड़ा, लेकिन उन्होंने गुरु की कला-यात्रा में अपने को लीन न करके उसके माध्यम से अनेक नये आयामों को जन्म दिया जो कला-जगत् में अविस्मरणीय है ।''**

कला एक दृष्टि होती है । शिक्षा का उद्देश्य इसी दृष्टि को अर्जित करना होना चाहिए । बाहरी व आन्तरिक दृष्टि को अर्जित करना व विश्लेषण कला की शिक्षा का प्रमुख ध्येय होना चाहिए । विद्यार्थी को कला दृष्टि कैसे मिले? कौन-सी शिक्षा-प्रणाली अपनायी जाय जो विद्यार्थी के मन को उद्वेलित कर सके, वह निजी रचना कर सके और किसी अन्य की छाया से मुक्ति पा सके । यह एक ज्वलन्त प्रश्न है । इसका उत्तर पाना अपेक्षित है । इस सन्दर्भ में माइकल एंजलों की यह उक्ति कि— **"I don't paint with hand, I paint with mind."** स्वीकार्य है ।

कला-गुरु आर. एस. धीर को कला-जीवन में अनेक महान कला-गुरुओं का सानिध्य प्राप्त हुआ, लेकिन इनमें सबसे ज्यादा प्रभाव श्री बद्रीनाथ आर्य का पड़ा और बंगाल शैली से उत्पन्न वाश तकनीक को इन्होंने श्री बद्रीनाथ आर्य से सीखा। लेकिन वे केवल वाश तकनीक में बँधकर कार्य करना पसन्द नहीं किये; क्योंकि श्री बद्रीनाथ आर्य ने स्वयं कहा है कि— **''मैं अपनी भावना को भौतिक रूपों में नये प्रयोगों के आधार पर अभिव्यक्त कर सकूँ। तकनीक कोई भी हो सकती है; क्योंकि वह कभी पुरानी नहीं होती। तकनीक वही होनी चाहिए जो आन्तरिक भावना को अभिव्यक्त करने में पूरी तरह समर्थ हो। मुझे वाश तकनीक अपनी भावना की अभिव्यक्ति में अधिक उपयुक्त लगती है किन्तु मैं वाश-चित्रों की परम्परा में बँधना कभी पसन्द नहीं करता।''**[21]

श्री बद्रीनाथ आर्य के उपर्युक्त विचार के कारण ही कला-गुरु श्री आर. एस. धीर, वाश शैली में महारथ हासिल होने के बाद भी हमेशा नये प्रयोग नयी तकनीक की खोज में बेचैन रहते थे व जिससे वे कला को एक नया आयाम देने में सफल रहे।

•

सन्दर्भ

1. समकालीन कला, नवम्बर 1987/मई 1988, अंक-9-10, पृ. 22
2. निजी सम्पर्क, श्री सुदर्शन धीर, वाराणसी, 9 अक्टूबर, 2005
3. निजी सम्पर्क, श्री सुदर्शन धीर, वाराणसी, 9 अक्टूबर, 2005
4. निजी सम्पर्क, श्री सुदर्शन धीर, वाराणसी, 9 अक्टूबर, 2005
5. उत्तर प्रदेश, साहित्य और संस्कृति की मासिक पत्रिका, जुलाई, 1998, पृ. 42
6. निजी सम्पर्क, आर्य श्री बद्रीनाथ, लखनऊ, 27 दिसम्बर, 2005

7. निजी सम्पर्क, धीर स्नेह, वाराणसी, 29 दिसम्बर, 2005
8. निजी सम्पर्क, शुक्ल प्रो. रामचन्द्र, इलाहाबाद, 30 दिसम्बर, 2005
9. निजी सम्पर्क, शुक्ल प्रो. रामचन्द्र, इलाहाबाद, 30 दिसम्बर, 2005
10. निजी सम्पर्क, चालम विजय जी, वाराणसी, 8 जनवरी, 2006
11. हिन्दुस्तान दैनिक समाचार पत्र ।
12. कला त्रैमासिक, जुलाई से दिसम्बर, 2001, पृ. 24
13. कला त्रैमासिक, जुलाई से दिसम्बर, 2001, पृ. 25
14. निजी सम्पर्क, अग्रवाल विनय कृष्ण, वाराणसी, 5 फरवरी, 2006
15. निजी सम्पर्क, शुक्ल प्रो. रामचन्द्र, इलाहाबाद, 30 दिसम्बर, 2005
16. कला त्रैमासिक, जुलाई से दिसम्बर, 2001, पृ. 30
17. कैटलॉक, श्रद्धांजलि, 2003
18. निजी सम्पर्क, अग्रवाल विनय कृष्ण, वाराणसी, 5 फरवरी, 2006
19. समकालीन कला, नवम्बर 1887 / मई 1988, अंक 9-10, पृ. 66
20. समकालीन कला, नवम्बर 1887 / मई 1988, अंक 9-10, पृ. 67
21. आधुनिक भारतीय चित्रकला का इतिहास, वर्मा अविनाश बहादुर, पृ. 265

●●

अध्याय द्वितीय

प्रो. धीर का व्यक्तित्व

कलाकार के रूप में

कलाकार के रूप में निरन्तर साधनारत रहने वाले कला-गुरु आर. एस. धीर चित्रों में ऐसे विषयों को चुनते थे जो सामाजिक परिवेश को दर्शाने वाले हों और उनके चित्रों में सामाजिक सरोकार दिखायी देता रहा है । कला गुरु का विचार था कि एक कलाकार जो अपने आस-पास के वातावरण से अलग सोच रखकर सृजन करता है तो वह अपना सामाजिक दायित्व पूरा नहीं कर पाता । वे एक चिन्तनशील चित्रकार थे एक समय तो अनेक चित्र संयोजनों में समाज के मेहनतकश लोगों का ही चित्रण दिखायी देता था । समाज के उन लोगों के प्रति अधिक संवेदना के कारण उनके चित्रों में ऐसे साधारण व्यक्ति और उनके क्रियाकलापों का दिखायी पड़ना स्वाभाविक रहा है । बनारस के रहन-सहन, पर्व-त्यौहार एवं बेबाकी उनकी जीवन में इतना अधिक रच-बस गयी थी कि वे अपने कला-यात्रा में बनारस के वातावरण को ही अपना कार्य-स्थल मानते रहे हैं ।

एक कलाकार के रूप में कला-गुरु अपने शान्त स्वभाव के कारण नव-उदीयमान कलाकारों के लिए प्रेरक रहे हैं । उम्र की कोई सीमा उन्हें बाधा नहीं पहुँचाती थी । एक व्यक्तिगत कलाकार के तौर पर उन्हें प्रसिद्धि की उतनी चिन्ता नहीं थी, जितनी अपनी कलाकृतियों द्वारा वे सन्तुष्टि अनुभव करते थे । एक कलाकार के समान सहृदयता रखते हुए वे कभी भी ऐसे अवसरों को तलाशते रहे जो उन्हें अपने अनुकूल मिल सके और यहाँ तक कि वे जिस भी स्थिति में हो कला साधना का अवसर नहीं गवाना चाहते थे । इसी कारण युवा पीढ़ी के कलाकार कला-गुरु से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके ।

प्रो. आर. एस. धीर अनेक माध्यमों में कार्य करने के लिए जाने जाते हैं । वे मृदुभाषी, नम्र स्वभाव और कर्मठ कलाकार के रूप में युवा पीढ़ी के कलाकारों के बीच पहचान रखने

वाले हैं । प्रो. धीर उन व्यक्तियों में से हैं, जो किसी कलाकार, कला वर्ग या कला विशेष के कलात्मक महत्त्व को समझते थे और उसके सौन्दर्य की निष्पक्ष सराहना करते थे ।

जिस देश व कला जगत में जितने अधिक ऐसे व्यक्ति होंगे वहाँ कला उतनी ही विकसित व सुदृढ़ होगी । यही वजह है कि आज लखनऊ कला विद्यालय से निकले अनेक कलाकारों में से कला गुरु आर. एस. धीर भारत के जाने-माने कलाकारों में स्थान रखते हैं ।

प्रो. धीर एक दिन में एक चित्र पूरा करने की क्षमता रखते थे । उनको मुख्यतः एकान्त और प्राकृतिक वातावरण में चित्रण करना पसन्द था । देर रात तक अपने चित्रपट पर कार्य करना उनके क्रियाकलापों में सम्मिलित था । अपने चित्रों में रंगों के माध्यम में अपने मन के अनुसार, बदलाव करते रहते थे । तैल, एक्रेलिक, जलरंग, खनिज रंग आदि अनेक माध्यमों में चित्र बनाना उन्हें अच्छा लगता था ।

प्रो. आर. एस. धीर का कला की दुनिया में दृष्टिकोण बड़ा विकसित था । उनके चित्रों में एक खास अन्दाज, आकृतियों को आँकने की सर्वथा निजी कसौटी, रंग योजना और रूप-सज्जा की प्रतीकात्मक पद्धति है । प्रो. धीर के जीवन पर लखनऊ के अनेक कला गुरुओं के व्यक्तित्व और कृतित्व का प्रभाव पड़ा । उनकी कला ने बनारस आते ही एक नया मोड़ ले लिया, जिसके कारण उनकी कला परिजन सुखाय न होकर सर्व सुखाय हो गयी । पंजाब से आने के बाद वे जीवन में कला के आरम्भ से अनेक पुरस्कार, सम्मान प्राप्त कर चुके हैं । इसके अतिरिक्त 18 से अधिक एकल प्रदर्शनियां कर चुके हैं । अनेक समूह प्रदर्शनियों में भी भाग लिया । अनेक कला संस्थानों के सम्मानित सदस्य तथा अनेकों पुरस्कारों के निर्णायक मण्डल में भी अपनी निष्पक्षता और व्यक्तित्व का परिचय दे चुके हैं ।

कला-गुरु आर. एस. धीर में इन सबके अतिरिक्त एक मुख्य गुण यह था कि वे नेक दिल इंसान थे । यही वजन है कि वे अपने शिष्यों की सहायता इस प्रकार करते थे कि उनके

शिष्यों को इसका एहसास भी नहीं होता था । इनके अनुसार रंग कला को जीवन देता है और हमारे जीवन में रंग भर देता है । कला-गुरु का जीवन भी रंगों से मिलता-जुलता था ।

कला-गुरु आर. एस. धीर के समक्ष आर्थिक और रचनात्मक चुनौतियाँ थीं, लेकिन परिवार की इच्छाओं के विरुद्ध जो रास्ता चुना, उसने उन्हें कभी निराश नहीं किया । जैसे ही उन्होंने लखनऊ कला महाविद्यालय में कदम रखा उनकी कला न केवल विषय और मूल भावना की दृष्टि से बदली बल्कि अभिव्यक्ति की तकनीक में भी एक नया मोड़ आया । यह नया मोड़ लखनऊ कला महाविद्यालय के कला गुरुओं के सानिध्य का प्रभाव था । उन्हें अपने मूल उद्देश्य का पता चल गया कि अब भारतीय जनमानस के बीच व्याप्त बुराइयों को दूर करने के लिए चित्रण कार्य करना है । जहाँ एक तरफ इन्होंने बनारस के घाटों के जीवन्त रूप को कैनवास पर उतारा तथा भारतीय राजनीतिक नेतृत्व के घिनौने चेहरे को एक प्रभावशाली ढंग से चित्रों में रूपायित किया, वहीं दूसरी तरफ प्रकृति के स्निग्ध सौन्दर्य को भी चित्रपट पर प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किये ।

कला-गुरु आर. एस. धीर लखनऊ से वाराणसी आने के बाद महसूस किये कि जैसे बनारस के जीवन की अद्‌भुत दुनिया में आ गये हैं । बनारस शहर और यहाँ के लोगों का कला गुरु ने गहरा अध्ययन किया । इन सब अनुभवों और सरोकारों ने कला गुरु को बनारस से सम्बन्धित लोगों के चित्रों का गहरा अध्ययन एक स्मरणीय अनुभव बन जाता है । उनकी इस दुनिया ने किशोर कलाकारों की मानसिकता पर गहरा प्रभाव डाला ।

कला-गुरु की कला, देशकाल की वह उन्नत कला है जिसे लोक स्वीकृति मिली हुई है । आज के युवा कलाकार आदर्श मानकर उनसे प्रेरणा ग्रहण करते हैं । उन्होंने अपनी कृति के माध्यम से अपने भावों और विचारों को दर्शकों तक पहुँचाया है । उनकी कला में एक विशेष

प्रकार का सौन्दर्य है जो एक खासतौर के प्राकृतिक सौन्दर्य बोध को लेकर चलते हैं । उनके चित्रों में बनारस के जीवन की झलकियाँ संवेदना में उभरती हुई मुखर होती हैं । इन चित्रों के चेहरों में उल्लास का गहरा प्रभाव है ।

कला-गुरु के चित्र, स्मरण मात्र से ही स्मृति-पटल पर उभर आते हैं । ये चित्र ऐसे हैं कि एक बार मूल में या अनुकृतियों में देख लिया जाय तो उसे भूलने का सवाल ही नहीं उठता । उनके चित्रों में एक विशेष प्रकार की सादगी भी है ।

जब मैंने भारतीय कला आन्दोलन 'समीक्षावाद' के प्रणेता प्रो. रामचन्द्र शुक्ल जी से श्री आर. एस. धीर के व्यक्तित्व (कलाकार के रूप में) के बारे में पूछा तो उनका कहना था कि "जब तक वे मेरे सम्पर्क में रहे उस समय तक व अध्यापन का कार्य भी करते थे । एक कलाकार में जो लगन ईमानदारी व निष्ठा होनी चाहिए वह सभी गुरु प्रो. आर. एस. धीर में विद्यमान थे । विश्वविद्यालय में वे शिक्षण कार्य से जब भी समय पाते तुरन्त चित्रण कार्य में लग जाते । विश्वविद्यालय से घर जाने के बाद भी वे चित्रण कार्य में लीन हो जाते थे । मैंने चित्रण कार्य के अतिरिक्त उनमें किसी और विशेष रुचि को नहीं देखा । कभी-कभी वे सिनेमा देखते थे और उसमें कुछ नया कलात्मक रूप ढूँढ़ने का प्रयास करते थे । वे बोलते बहुत कम थे लेकिन जब बोलते थे तो पंजाबी भाषा में बोलने लगते थे, जिसको पंजाबी के अतिरिक्त अन्य लोग पसन्द नहीं करते थे । वे पैण्ट व शर्ट पहनते थे । जब मैंने कलाकार के समय इनके भोजन के बारे में पूछा तो श्री शुक्ल जी ने बताया कि मेरी जानकारी में वे शुद्ध शाकाहारी थे ।"[1]

कलाकार के रूप में उनकी जिज्ञासा जानने की इच्छा पर प्रो. रामचन्द्र शुक्ल जी ने बताया कि जब भी कहीं वे हिन्दुस्तान में नये प्रयोगों या माध्यमों के बारे में सुनते थे तो उसको

आत्मसात करके उसमें विशेषज्ञता पाने का पूरा प्रयास करते थे । उदाहरण के रूप में उन्होंने बताया कि कम्प्यूटर पेंटिंग के बारे में यदि देखा जाय तो वे मेरी जानकारी में उत्तर प्रदेश में पहले कलाकार थे जिन्होंने कम्प्यूटर माध्यम से चित्रों का सृजन किया । इस प्रकार हमने देखा कि किसी नयी विधा या शैली के प्रति इनका मन हमेशा केन्द्रित रहता था । यही कारण है कि इनके चित्रों में विषय, शैली तथा माध्यमों की बहुत विविधता पायी जाती है । एक कलाकार के रूप में श्री धीर के समाज में क्या योगदान थे इसके उत्तर में श्री शुक्ल जी ने बताया कि वे धार्मिक, दृश्य चित्रण के साथ-साथ समाज में व्याप्त बुराइयां जैसे दहेज-प्रथा, गरीबी, अशिक्षा तथा भारतीय राजनीति का घिनौना चेहरा समाज के सामने प्रस्तुत करना चाहते थे । इसी कारण उन्होंने भारतीय कला आन्दोलन 'समीक्षावाद' में अपनी एक निजी पहचान बनायी और समाज को एक नयी दिशा देने का कार्य किया । इस प्रकार से उन्होंने बताया कि मैं इनको सृजनशील, प्रयोगवादी कलाकार के रूप में देखता हूँ ।[2]

प्रो. धीर आधुनिक प्रवाह में बह जाने वाले कलाकार नहीं थे । वे रेखा के सौन्दर्य तथा संयोजन के संतुलन को भली प्रकार समझते थे । मानववादी भावना से प्रेरित होकर वे जन-जीवन का चित्रण करते थे किन्तु सौन्दर्य के प्रति प्रेम के कारण वे गति और लय के शोभा को निरन्तर अंकित करते रहे हैं । इनकी कला में भारत के ग्रामीण जीवन का उल्लास और आनन्द मुखरित होता है ।

कुछ समय तक आपने जल रंगों में प्राकृतिक दृश्य चित्रों के अभिराम अंकन किये । ये संस्कार आपकी कला में सदैव दृशांकन के विषयों के रूप में स्थिर हो गये । पहले लखनऊ के प्राकृतिक एवं ग्रामीण दृश्य फिर वाराणसी के घाट, गलियाँ तथा वहाँ का जन-जीवन, तदोपरान्त सम्पूर्ण भारत के ग्रामीण एवं पर्वतीय दृश्य आपके चित्रण के विषय रहे हैं । इन्होंने

तैल तथा कम्प्यूटर दोनों माध्यमों में कुछ अमूर्त संयोजन भी किये हैं । ये वस्तुओं के सरलीकरण तथा अमूर्तिकरण के रूप में है । शुद्ध अमूर्त संयोजन में केवल चित्रकला के सूक्ष्म तत्त्वों का ही विचार किया गया है । प्रकृति से मिलते-जुलते रूपों का तांत्रिक विधि से मिलता-जुलता संयोजन मात्र है । इन चित्रों में लैंगिक प्रतीकों अथवा स्त्री-पुरुषों की युग्म आकृतियों का भी प्रयोग है । चित्रों के केन्द्र में एक वृक्ष के समान काल्पनिक प्रतीक अंकित है, जो सूर्य अथवा आकाश की ओर अभिमुख है । उसमें जो शाखाएँ निकलती हैं, वे कहीं पर्णों के समान, कहीं जल की लहरों या चट्टानी परतों के समान प्रतीत होती हैं और एक अतीन्द्रिय आभास देती हैं । इनकी आकृतियों में अमूर्त रूपों तथा रंगों का अद्भुत समन्वय है । इनके विन्यास में सुकुमारता और प्रभाव में पारदर्शिता है ।

कलाकार के रूप में रेखांकन की जो प्रवृत्ति बचपन से पड़ी थी वह अन्त समय तक बरकरार रही । किसी बैठक में भी यदि खाली समय मिलता तो पास में जो भी कागज होता उस पर रेखाएँ अपना रूप पाती जाती थीं किन्तु इनके रेखांकन चित्रों के निकट ले जाते थे । कैनवास पर वे सीधे ही किसी पूर्व नियोजित खाके के बगैर, काम करते थे और तब उनके अचेतन मस्तिष्क में धीरे-धीरे एक रूप विकसित हो जाता था । उसकी उपस्थिति का कैनवास पर ज्यों-ज्यों आभास स्पष्ट होता जाता था वे उसकी प्राप्ति के आनन्द में डूबते जाते थे । अपनी रचना प्रक्रिया के विषय में वे बताते थे कि— "कई बार रंगों के प्रयोग से उनके आपस में मिलने से स्वयं ही कुछ रूप सामने आ जाते हैं जो प्रभावित करते हैं और देखने में भी अच्छे लगते हैं, लेकिन मैं इस प्रकार की अचानक आकृतियों या उनके तालमेल से बनने वाले रंगों से कभी भी प्रभावित नहीं हुआ; क्योंकि मेरे चित्र अचानक किसी चीज के बन जाने वाले स्वभाव के नहीं हैं । मैंने जो कुछ कहना चाहा वह मेरे कैनवास पर एक पौधे की तरह अंकुरित

होता है । उस पर समाज, समय और मौसम का असर तो पड़ता ही था, परन्तु सन्तुष्टि तभी मिलती थी जब उस पौधे में स्वयं मैं समाहित हो जाता हूँ ।"[3]

प्रो. धीर की आकृतियाँ जीवन शक्ति से भरपूर हैं । रेखाएँ स्वतन्त्र हैं, रंग उत्तेजक एवं लयात्मक है । गतिपूर्ण आकृतियों में कोणीय अथवा वक्र शारीरिक स्थितियों एवं मुद्राओं का प्रयोग हुआ है । ऐन्द्रिकता होते हुए भी आकृतियाँ रेखात्मक हैं ।

बनारस के ग्रामीण दृश्यों के चित्रण करते समय उनके तूलिका में ग्रामीण जीवन का स्निग्ध सौन्दर्य इस प्रकार सम्मिलित था कि चित्र संयोजनों का निर्माण होने लगता । बनारस के घाटों का चित्रण करते समय उन्होंने पर्यावरण को अधिक महत्त्व दिया । उनका कहना था कि जलरंग माध्यम इन घाटों के लिए अधिक कठिन है लेकिन जलरंग को वातावरण के अनुकूल साध लेने वाला कलाकार सही अर्थ में महान उपलब्धि पा लेता है । इस कारण उन्होंने घाटों के दृश्यचित्रों को विशेष रूप से बनाया ।

कलाकार के रूप में कला-गुरु प्रो. आर. एस. धीर भारत के सबसे प्रसिद्ध और सशक्त कला आन्दोलन 'समीक्षावाद' से जुड़े रहे और अपनी कलाकृति द्वारा दर्शकों का मन मोहकर समाज को संदेश देने में सफल रहे । समीक्षावाद के कर्णधार प्रो. रामचन्द्र शुक्ल, टॉलस्टाय के कला दर्शन से विशेष रूप से प्रभावित रहे । स्मरणीय है कि टॉलस्टाय ने कला को संचार का सशक्त माध्यम माना था । उसने कला को एक मानव हृदय के विचार दूसरे मानव हृदय तक पहुँचाने का साधन बताया जिससे सामाजिक सौहार्द्र और संगठन बढ़ सके तथा मानव कल्याण हो सके । समीक्षावादी चिन्तन इस भावना से बहुत कुछ उत्प्रेरित प्रतीत होते हैं । दिल्ली में समीक्षावाद की जब पहली ऐतिहासिक प्रदर्शनी हुई तो इसमें वाराणसी के प्रो. रामचन्द्र शुक्ल, आर. एस. धीर, संतोष कुमार सिंह व वेदप्रकाश मिश्र के अतिरिक्त इलाहाबाद

से वी. डी. पाण्डेय व अलीगढ़ से गोपाल मधुकर चतुर्वेदी ने अपने समीक्षावादी चित्र प्रस्तुत किये थे ।[4] इस प्रदर्शनी में प्रदर्शित आपकी कलाकृतियाँ दर्शकों तक पहुँचाने में सफल हुई जो एक कलाकार की सबसे बड़ी उपलब्धि थी ।

इस प्रकार प्रो. धीर की कला में इतनी सरलता है कि एक साधारण दर्शक भी उसका आनन्द ले सकता है, पर वह कोई भोली-भाली या अज्ञानपूर्ण कृति नहीं है । कृतियों में पूर्ण तकनीकी सौष्ठव है । दृश्य जगत की आकृतियाँ कला गुरु की कला में एक नया रूप लेती थी । वे एक बार में एक ही विषय को लेकर ढेर सारी कृतियाँ बनाते चले जाते थे । इस कार्य में शैली और तकनीकी दृष्टि से बहुत विविधता भी रही । उनकी चिनगारी के समान आभा से युक्त कलाकृतियों ने एक विशिष्ट स्थान बना लिया है । यद्यपि वे प्रकृति से रूप लेते थे पर दर्शक उनके चित्रों में इन आकृतियों के साथ-साथ चित्र में दिखाये गये अन्य प्रभावों का भी आस्वादन करते हैं ।

शिक्षक के रूप में

प्रो. आर. एस. धीर एक नेक दिल अध्यापक थे । उन्होंने अपने कुछ शिष्यों के, जब वे कठिनाइयों से गुजर रहे थे, तो उनकी मदद के लिए बनाए हुए चित्रों को खरीद लिया, तथा उनको इसका एहसास भी नहीं होने दिया । कला गुरु कहते थे कि मैं एक विद्यार्थी की तरह कार्य करता हूँ और विद्यार्थी के साथ हमेशा रहना पसन्द करता हूँ । विद्यार्थी जब कार्य में कहीं भी गलतियाँ करते हैं तो उनको उन्हीं के चित्र पर कार्य करके गलतियों को सुधरवाते थे, जिससे छात्रों को सहजतापूर्वक त्रुटियों को सुधारने का मौका मिलता था ।

कला-गुरु कहते थे कि प्रत्येक कलाकार के कार्य करने का ढंग अलग होता है । कला गुरु शिष्यों से कहते थे कि प्रत्येक कलाकार के सोचने का तरीका अलग होता है और प्रत्येक

कलाकार अलग-अलग सोच के चित्रों का सृजन करता है । प्रसिद्ध कलाकारों के साक्षात्कार को पढ़ना चाहिए, उनसे पूछना चाहिए तथा सभी छात्रों को विचार-विमर्श करना चाहिए एवं जब भी कोई कलाकार अपने काम को देखकर कुछ बताये तो उसे ध्यान से सुनना चाहिए । कला गुरु के विचार से आज कला विद्यार्थी का भविष्य पहले से बेहतर है; क्योंकि आज विभिन्न स्थानों पर कला के उद्देश्य से अनेक कला विभाग खुल चुके हैं । वर्ष भर अलग-अलग स्थानों पर प्रदर्शनियां लगती हैं, जिन्हें देखने व समझने का मौका युवा कलाकारों को प्राप्त होता रहता है । आज के आधुनिक संचार सेवाओं के द्वारा कम्प्यूटर पर भी हमें अनेक कला-सम्बन्धी, विश्व स्तर की जानकारियाँ प्राप्त होती रहती हैं । बस जरूरत है तो मेहनत, ईमानदारी तथा धैर्यपूर्वक कार्य करने की । जल्द से जल्द पैसे प्राप्त हो जाँय अथवा जल्द से जल्द प्रसिद्धि मिल जाय, इस विचार को भुला कर अपने लक्ष्य की ओर बिना फल की चिन्ता किये हुए बढ़ते रहने की आवश्यकता है ।

कला-गुरु आर. एस. धीर अपने विद्यार्थियों के साथ कार्य करने का भी आनन्द उठाते थे । विद्यार्थियों के साथ उन्हीं के चित्रपट पर कार्य करके उनकी त्रुटियों को सुधारते तथा उनके चित्रों की प्रदर्शनियां भी लगवाते थे जिससे छात्रों तथा कला गुरु को आनन्द की अनोखी अनुभूति होती थी ।[5]

प्रो. धीर कला की विशेष नियमावली के विरुद्ध थे । उन्होंने मीडिया को दिये साक्षात्कार में कई बार कहा कि अनुशासन किसी भी संस्था के विकास के लिए विशेषकर कला विभागों को सेना नियमावली की तरह खोला या बन्द किया जायेगा तो विकास या कला में एक नयेपन की बात सोचना बिल्कुल बेइमानी होगी । खासकर अपने हृदय कला संकाय के बारे में उनका कहना था कि केवल पढ़ाई महत्त्वपूर्ण नहीं होती, सिर्फ कोर्स खत्म करने से कोई कलाकार नहीं

बन जायेगा । वे कहते थे कि इस संकाय में वार्षिक कला मेला, अध्यापकों की वार्षिक प्रदर्शनियाँ, गोष्ठियाँ, सांस्कृतिक गतिविधियाँ, छात्रों का शैक्षणिक भ्रमण एवं राष्ट्रीय स्तर पर कला शिविरों में जाना, संकाय में देश के बड़े-बड़े कलाकारों का शैक्षणिक विकास हेतु आमंत्रित करना जिसमें स्लाइड शो इत्यादि अनेक प्रकार की विकासात्मक क्रियाएँ होनी चाहिए ।

कला-गुरु का कहना था कि बड़े-बड़े सुप्रसिद्ध कलाकार भी बच्चों की दुनिया की उपेक्षा नहीं करते थे । वे कहते थे कि इस बात को ध्यान में रखते हुए मैं अपने जीवन की कला-यात्रा को आगे बढ़ा रहा हूँ । उद्देश्य के अनुसार अभिव्यक्तियाँ प्रकट होती हैं । कला-कर्म ही उनका धर्म बन गया था । उनके अनुसार चाहे जैसी भी प्रतिक्रियाएँ मिलती रहे मैं कलाकृति का सृजन करता रहता हूँ । मैं अपने विद्यार्थियों को प्रशिक्षित कर सकता हूँ, साधना करते रहना छात्र के स्वभाव पर आश्रित है और प्रतिफल मिलना ईश्वर पर, इससे अधिक मैं और क्या कह सकता हूँ । कला महाविद्यालय लखनऊ का ज्ञान लेकर आये थे तो वातावरण वह नहीं था जो आज बी. एच. यू. दृश्य कला संकाय का है । बाद की नयी पीढ़ी प्रभाव में काफी दुरुस्त दिखती है, लेकिन उनका कोई निजी कला वैशिष्ट्य क्यों नहीं उभर कर सामने आ पा रहा है, क्या यह प्राध्यापक कलाकारों की चिन्ता के ढाँचे में आ पा रहा है । यह जानने पर कि यह पीढ़ी कला में समकालीन राजनीति की चर्चा में उलझ पड़ते हैं । हालांकि इन्हें किसी मौलिक टोन की प्रतीक्षा है । कुछ तो अर्जित भी कर चुके हैं, बस प्रतीक्षा है व्यापक स्वीकार और अनुशंसा की । इन कलाकारों को एक पर्याप्त आकाश मिल रहा है, रूपकर कला को नहीं ।

कला-गुरु प्रो. धीर ने अपने कला-गुरुओं से समय-समय पर कुछ नया सीखा जिन्हें वे अपनी सरल भाषा में अपने शिष्यों को सिखाते थे । कला और कलाकार आज विश्व स्तर पर

एक दूसरे के निकट हो गये हैं और यह विज्ञान की देन है । पहले पुस्तकों और प्रदर्शनी के माध्यम से कला से परिचित होने का असर मिलता था, कला के क्षेत्र में ट्रेड के माध्यम से जो लोग विदेशों से कलाकृतियाँ लाते थे उन्हें देखकर कलाकार पश्चिम की कला से परिचित होता था लेकिन अब विदेशी कलाकृतियों को देखने के कई वैज्ञानिक माध्यम है । आज अनेक भारतीय कलाकार भी विदेशों का दौरा करते हैं, जिससे भारतीय कला का भी विश्व कला मंच पर आसानीपूर्वक प्रदर्शन हो रहा है । आज का कलाकार अत्याधुनिक संचार सुविधाओं का तेजी से प्रयोग कर रहा है । पश्चिम में आधुनिक कला का जो आन्दोलन चला वो भारत के कलाकारों को बीस वर्ष बाद पता चला लेकिन आज विश्व के किसी भी कोने में वर्तमान कला की क्रियाकलाप को कलाकार घर बैठे पलभर में जान लेता है ।

कला-गुरु का कहना था कि आज अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कलाकारों को उभरने का अवसर मिल रहा है । वर्तमान युवा पीढ़ी, उनकी कला एवं उनके भविष्य पर खुली प्रतिक्रिया जाहिर करते हुए कला गुरु आर. एस. धीर कहते थे कि – युवा कलाकारों का भविष्य बहुत अच्छा है । पहले की कला और वर्तमान कला में सबसे बड़ा अन्तर यह है कि पहले की तुलना में आज युवा कलाकार ईमानदारी से कार्य करें तो वह स्वयं को कला जगत में स्थापित कर सकता है । आज ईमेल, बेबसाइट के माध्यम से सारी दुनिया में युवा कलाकार और उसकी कला पल भर में फैल सकती है, पहले कैनवास सिमटा हुआ था । आज कला एवं कलाकारों का कलात्मक व्यक्तित्व सूर्य प्रकाश की भाँति दूर तक अपना विस्तार ले रहा है ।

कला-गुरु कहते थे कि मुझे तो भारतीय युवा कलाकारों का सुनहरा भविष्य स्पष्ट दिखाई दे रहा है । पहले प्रदर्शनी व पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से ही हम लोगों तक पहुँच सकते थे, लेकिन आज विज्ञान ने पूरे विश्व को एक कमरे में कैद कर दिया है । उनका मानना था कि

आज युवा कलाकारों में कुछ खूबियाँ हैं तो कुछ खामियाँ भी हैं । आज के युवा चाहते हैं कि थोड़े दिनों में ही हम ख्याति प्राप्त कर लें एवं हमें कला शिविरों में आमन्त्रित तथा प्रदर्शनियों में हमारी कलाकृतियाँ टँग जाँय ।

प्रो. धीर कहते थे कि हम लोग अपने समय में डरते थे । आधारभूत ज्ञान की ओर युवा बिल्कुल भी ध्यान नहीं देते थे । युवा कलाकारों में समर्पण होना चाहिए । ये बातें हमें लखनऊ कला विद्यालय में सीखने को मिली । कुछ अन्य राज्य के कलाकार भी समस्याओं से घबड़ाकर हथियार डाल देते हैं लेकिन ऐसा नहीं होना चाहिए; क्योंकि भारत के प्रख्यात कलाकार गणेश पाइन भी गरीब थे मगर संघर्ष करते रहे और सफलता की चोटी पर पहुँच गये ।

शिक्षक के रूप में इनके व्यक्तित्व को जब मैंने उनके एक शिष्य श्री चन्द्रप्रकाश मिश्रजी से पूछा तो उनका कहना था कि वे समय का बहुत ध्यान रखते तथा कक्षाओं में एकदम सही समय पर आते । कक्षाओं में जब कोई छात्र तनाव या कार्य से ऊबन महसूस करता तो हँसी, मजाक व दूसरी बातें करते व छात्रों को खुश रखते थे । चाय के बहुत ही शौकीन थे । श्री मिश्रजी ने बताया कि विद्यार्थियों को अपना मित्र मानकर कार्य सिखाते थे । छात्रों की किसी भी कमी को तब तक बताते जब तक वह उसको दूर न कर ले और अधिकांश वे उस कमी को स्वयं दूर करके बताते थे, जिसके कारण छात्र उनके ज्यादा करीब रहना चाहते थे । कोई भी उनको छोड़ना नहीं चाहता था । सभी छात्र उनको अपना आदर्श गुरु मानते थे ।[6]

कला-गुरु आर. एस. धीर ने शिक्षण के लिए एक पद्धति को अपनाया जिसमें दृश्य कला संकाय के चित्रकला विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी में अपने स्टूडियो में कार्य करते हुए विद्यार्थियों को भी अपने साथ कार्य कराते थे । जैसे यदि वाश-पद्धति के बारे में पढ़ाना होता था तो वे स्वयं भी एक रेखाचित्र का निर्माण करते थे और सर्वप्रथम विद्यार्थियों

के सामने प्रायोगिक रूप में अपने चित्रों को पूर्ण करते थे तथा इसी प्रकार विद्यार्थियों से रेखांकन कराकर वाश पद्धति में कार्य कराते थे, चित्रों में जो गलतियाँ होती थीं उन्हें विद्यार्थी प्रायोगिक रूप से दूर करने का प्रयत्न करते थे । पद्धति के कारण वाश चित्रों का निर्माण करने वाले जितने भी विद्यार्थी कला क्षेत्र में आगे आये उन्होंने वाश पद्धति में ख्याति अर्जित की । इसी प्रकार जब वे अपने स्टूडियों में कोलाज चित्रण की शिक्षा देते थे तब स्वयं भी कार्य करते थे, जिससे विद्यार्थियों में कार्य करने की क्षमता का विकास होता रहा है ।

एक दृश्य चित्रकार के रूप में वे विद्यार्थियों के साथ बनारस के गाँव-गाँव, गलियों व घाटों पर सही दृश्य की तलाश में घूमते रहते थे और स्वयं दृश्य चित्रण करते रहे । उन्होंने दृश्य चित्रण द्वारा जल रंग माध्यम से दृश्य चित्रण में विद्यार्थियों को सिद्धहस्त किया । इस प्रकार वे स्वयं कार्य करके, पहले विभिन्न पद्धतियों और तकनीक का प्रायोगिक ज्ञान विद्यार्थियों को देते थे और जिस माध्यम में कार्य करते थे, उसके विश्व प्रसिद्ध कला गुरुओं के बारे में बताते थे तथा पुस्तकालय में उनके उन विशेष कलाकृतियों को दिखाते थे । इस प्रकार एक कला गुरु के रूप में उन्होंने युवा कलाकारों के लिए प्रायोगिक शिक्षण पद्धति को महत्त्व दिया; क्योंकि इस पद्धति द्वारा छात्रों को सीखने का अच्छा अवसर मिलता है ।

मनुष्य के जीवन में अध्यापक का भाग बहुत महत्त्वपूर्ण होता है । शिष्य के जीवन में गुरु का महत्त्व मानव शरीर में रहने वाली सासों की तरह होता है । प्रो. आर. एस. धीर को कार्य के प्रति गम्भीर और ईमानदार शिष्य पसन्द थे ।[7] छात्र-छात्राओं की अनेक पेंटिंग थी जो कला-गुरु को बहुत प्रभावित करती थी । आज के शिष्यों व युवा कलाकारों के बारे में उनके विचार थे कि आज की पीढ़ी तीव्र सफलता पाना चाहती है व सबकुछ एक साथ मिल जाय ऐसा सोचते हैं । इसका दूसरा पक्ष यह भी है कि छात्र कलाकार लम्बी समय की उपलब्धि में

विश्वास नहीं करते । अच्छे अंक मिलें, चित्र चुन लिए जायँ, बिक जायँ, उपलब्धि पायें, कैम्प में उन्हें बुलाया जाय अदि सब कुछ मिल जाय अर्थात् यह एक बहुत बड़ा सत्य है कि आज के शिष्य शीघ्रता से बिना किसी मेहनत और लम्बे समय का इन्तजार किये बिना वो सब कुछ हासिल करना चाहते हैं जो कि भारत के मुख्य कलाकारों को बहुत मेहनत और लम्बे अन्तराल के बाद मिला है ।

प्रो. आर. एस. धीर एक कला-अध्यापक के रूप में एक लम्बे समय तक काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में कला-शिक्षा प्रदान करते रहे । जब ये छात्रों को कला की शिक्षा प्रदान कर रहे होते तो बाह्य जगत से सम्पर्क तोड़कर केवल कला जगत में विचरण करते थे । कला को समाज का दर्पण कहा जाता है और इस कहावत को चरितार्थ करने में आपने कोई कमी नहीं की बल्कि उनके छात्र भी ऐसी कला का निर्माण करें जो समाज को एक नयी दिशा दे सके । इस प्रयास में वे सदैव लगे रहे ।

छात्रों को सिखाने की ललक को हम इस प्रकार जान सकते हैं कि दृश्य कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से अवकाश प्राप्त करने के बाद भी युवा कलाकारों को मार्गदर्शन देने की इतनी व्याकुलता थी कि उन्होंने ललित कला विभाग, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी में अतिथि अध्यापक के रूप में अध्यापन कार्य किया । ललित कला विभाग महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ में अध्यापन के कुछ समय बाद ही छात्रों के लिए आदर्श एवं प्रेरणा के रूप में विख्यात हो गये ।

प्रो. धीर के साथ अध्यापन कार्य करने वाले कला-गुरु प्रो. रामचन्द्र शुक्ल जी से जब मैंने प्रो. धीर के शिक्षक व्यक्तित्व के बारे में पूछा तो उनका कहना था कि **''प्रो. धीर अपने विद्यार्थियों के साथ बहुत ही ईमानदारी से कार्य करते थे । वे समयबद्ध कक्षाएँ लेते**

तथा विद्यार्थियों को अधिक से अधिक जानकारी देने के लिए पूरा परिश्रम करते थे, जिसके कारण विद्यार्थी उनसे खुश रहते थे।''

प्रो. धीर की इच्छा थी कि उनके विद्यार्थी भी कला के क्षेत्र में आगे बढ़ें। जब मैंने प्रो. शुक्लजी से पूछा कि प्रो. धीर का कौन-सा कार्य छात्रों को अधिक प्रभावित करता था तो उनका कहना था कि उनका समयबद्ध होना तथा वाश-शैली छात्रों को बताने के लिए पूरा प्रयत्न करना एवं हमेशा कार्य करते रहना। एक प्रकार से उनके पूरे शिक्षण कार्यकाल को मैंने देखा तो पाया कि एक शिक्षक के अन्दर जो ईमानदारी, लगन एवं निष्ठा होनी चाहिए वह सभी कुछ श्री धीर के व्यक्तित्व में मौजूद था।[8]

कला-गुरु अपने छात्रों को हमेशा नयी तकनीक तथा नये विषयों के चुनाव के लिए प्रेरित करते रहते थे। वे छात्रों के पीछे खड़े होकर उनके कार्यों को देखते रहते तथा जहाँ भी कोई कमी नजर आती उसको बताते व कमी दूर न होने पर वे स्वयंउस कमी को दूर करके बताते थे, जिसके कारण छात्रों के बीच में उनकी लोकप्रियता अन्य अध्यापकों की अपेक्षा अधिक थी। छात्रों से स्नेहपूर्ण व्यवहार रखते तथा कला के बारे में प्रत्येक जिज्ञासा को शान्त करने का पूरा प्रयास करते थे। वे ऐसे छात्रों से चिढ़ते भी थे जो अपने कार्य के प्रति उदासीन रहते थे। इसके विपरीत ऐसे छात्रों को प्रेम करते जो सच्ची श्रद्धा, ईमानदारी तथा लगन के साथ अपने कार्यों को करते थे।

प्रो. धीर के ईमानदारी द्वारा दी गयी शिक्षा तथा प्रेरणा के द्वारा बहुत से छात्र अपने कला-जीवन के मार्ग पर सफलतापूर्वक अग्रसर होकर समाज के प्रति अपने कर्तव्यों का निर्वाह भली-भाँति कर रहे हैं। इनके प्रोत्साहन तथा प्रेरणा के कारण अनेक छात्र आज शिक्षक, कलाकार, शोध-छात्र, स्वतन्त्र कलाकार आदि रूपों में बहुत लगन के साथ क्रियाशील हैं।

●

सन्दर्भ

1. निजी सम्पर्क, शुक्ल प्रो. रामचन्द्र, इलाहाबाद, दिनांक 5 जून, 2006
2. निजी सम्पर्क, शुक्ल प्रो. रामचन्द्र, इलाहाबाद, दिनांक 5 जून, 2006
3. निजी सम्पर्क, अग्रवाल विनय कृष्ण, वाराणसी, 8 जून, 2006
4. माडर्न आर्ट और भारतीय चित्रकार, वाजपेयी डॉ. राजेन्द्र, पृ. 131-132
5. निजी सम्पर्क, पाण्डेय भारतीय (कला शिक्षक), 16 जून, 2006
6. निजी सम्पर्क, मिश्रा चन्द्रप्रकाश, चन्दौली, 20 जून, 2006
7. निजी सम्पर्क, अग्रवाल विनय कृष्ण, वाराणसी, 8 जनू, 2006
8. निजी सम्पर्क, शुक्ल प्रो. रामचन्द्र, इलाहाबाद, 5 जून, 2006

●●

श्री रघुवीर सेन धीर को मै एक प्रयोगवादी चित्रकार मानता हूँ। उनकी सारी कृतियों को अगर देखा जाय तो ये बात पूरी तरह स्पष्ट हो जाती है। उन्होंने शुरू में जल रंगों से वाश पेंटिंग बनायी। स्टिल लाईफ, पोर्ट्रेट, लैण्ड स्केप भी बनायें और बाद में आधुनिकता के प्रवाह में तरह–तरह के नये प्रयोग किये जिसमें कोलाज के अनेक रूप देखने को मिले। उन्होंने एम0एफ0ए0 मेरे निर्देशन में किया था और मेरी सलाह पर उन्होंने जैन कला का विशेष अध्ययन किया और उसके आधार पर भारतीय शैली में नये चित्र बनाए। वे समीक्षावादी कला आन्दोलन में भी शामिल थे और कई सामाजिक तथा राजनैतिक कुरीतियों पर प्रभावशाली चित्र बनाए। इस प्रकार यही लगता है कि वे कभी भी किसी कार्यशैली से बँधकर कार्य नहीं करते थे बल्कि हमेशा कुछ नया करने के फिराक में रहते थे। सबसे बड़ी बात ये है कि वे बराबर चित्र बनाते रहते थे। प्रदर्शनियों में भाग लेते रहते थे। अपने चित्रों की प्रदर्शनियां आयोजित करते रहे और समीक्षावादी कला प्रदर्शनियों में जोश खरोश के साथ सम्मिलित होते थे। वैसे उनकी विशेष रूचि लैण्ड स्केप में थी। उनको फूल पत्तों से भी विशेष रूचि थी। वे स्वयं फूलों के छोटे–छोटे पौधे लगाते रहते थे। जलरंग, तैलरंग और कम्प्यूटर के द्वारा भी बहुत सारे दृश्य चित्र बनाए। चित्रकारी उनके जीवन का प्रमुख अंग थी। उनका अधिकांश समय चित्रकारी में ही बीता। वे हनुमान जी के भक्त थे और प्रत्येक मंगलवार को दर्शन के लिये संकट मोचन जाया करते थे। उन्हें सिनेमा देखने का भी शौक था। उनके दोस्त कम ही थे। कारण ये था कि उन्हें अपनी वाणी पर नियन्त्रण नहीं था और जल्द ही दोस्तों से तकरार हो जाती थी। वे स्पष्टवादी थे। उनमें दूराव छिपाव नहीं था। जो मन में आता था सीधे–सीधे कह देते थे। वे (इमोशनल) उद्वेगी किस्म के आदमी थे। समाज में बहुत धुले–मिले नहीं रहते थे। ज्यादातर समय चित्रकारी में ही लगाते रहते थे। वे अपने विद्यार्थियों के साथ काफी परिश्रम करते थे और चित्रकला के गुण भी सिखाते रहते थे। उनका बहुत कम लोगों से मधुर रिश्ता था। मेरे साथ उनका संबंध हमेशा बहुत अच्छा रहा। वे हमारी बड़ी इज्जत करते थे और विश्वास करते थे तथा वे अपनी हर तरह की समस्याओं पर हमसे विचार विमर्श करते थे और हमारी सलाह मानते थे। कुल मिलाकर मै यही कहूँगा कि उत्तर प्रदेश के प्रमुख चित्रकारों में से वो एक थे जिनसे युवा चित्रकार प्रेरणा लेकर आगे बढ़ सकते हैं।

24.5.2006

प्रो0 राम चन्द्र शुक्ल

अध्याय तृतीय
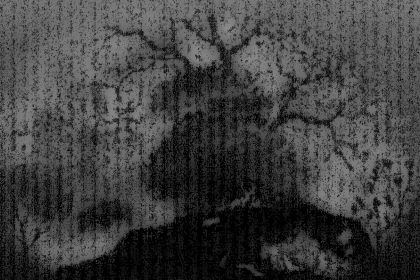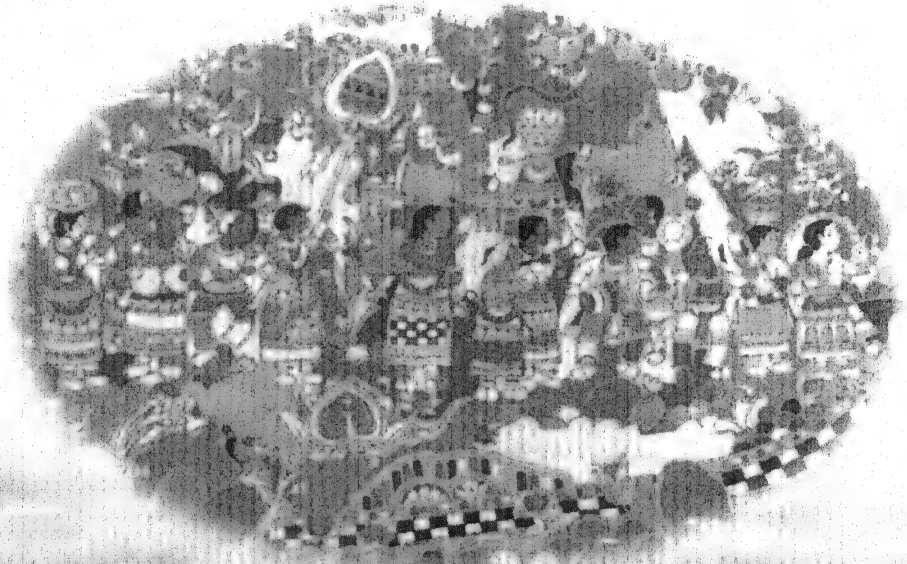
प्रो. धीर की कला की विविधता

3.1 चित्रकला (संयोजन-रेखांकन-अमूर्त चित्रण)

3.2 वाश चित्रण

3.3 साधारणीकृत चित्रण

3.4 कोलाज चित्रण

3.5 कम्प्यूटर चित्रण

जब हम कला के सम्बन्ध में बात करते हैं और उसे गहराई से समझने तथा अपने में उतारने की कोशिश करते हैं तो ऐसा लगता है कि कला इन चार गुणों का मिश्रण है— प्रतिभा, तकनीक, स्वभाव और अभिरुचि । इन चार गुणों के सुन्दर संयोजन से पाँचवाँ गुण जीवन्तता स्वयं उपजता है— जिससे कला प्राणवान हो उठती है । कला-गुरु आर. एस. धीर ने जैन, बंगाल शैली आदि कला स्वरूपों का अध्ययन किया और समय-समय पर अनेक प्रकार की स्वनिर्मित नई शैली को भारतीय रंग में डुबोकर प्रस्तुत किया ।

कला-गुरु आर. एस. धीर की कला-विविधता को लेकर हम गौरव का अनुभव करते हैं । इसमें एक ओर जहाँ लोक कलाकारों द्वारा जीवन की सीधी-सादी, अनपढ़ किन्तु सरल और पारदर्शी अभिव्यक्ति हुई वहीं दूसरी ओर शास्त्रीयता की गुरुता में उसका अपना अनुशासन भी है । इन दोनों करारों के बीच विविध रचना शैलियाँ पनपी-पसरी हैं, जिनका अलग-अलग चेहरा है, अपने-अपने रंग विधान हैं और कलाकार की अपनी सोच है । फिर भी सबके बीच एक ऐसा चारित्रिक साम्य है, जिससे भारतीयता की अलग पहचान बनती है ।[1]

चित्रकला के विविध आयाम हैं, जिनके अन्तर्गत कलाकार अपनी अभिव्यक्ति को आधार प्रदान करते हैं, विशेष परिस्थिति में कलाकार माध्यमों में परिवर्तन करते हैं । प्रो. आर. एस. धीर ने कई वर्षों तक एक ही माध्यम में कलाकृतियों के श्रृंखला चित्र चित्रित किये । साथ ही चित्रकला के विभिन्न विधाओं पर भी चित्रण कार्य किया किन्तु कुछ समय बाद उन्होंने तैल चित्रण-पद्धति में कार्य करना आरम्भ किया । वे एक विषय पर आधारित कई श्रृंखला चित्रों का चित्रण-कार्य करते रहे । इस प्रकार के तैल चित्रण में वे कई चित्रों का निर्माण कर देते थे । इन्होंने प्रयोगवादी दृष्टिकोण में जल रंग माध्यम में कार्य किया । इनके तैल चित्रों में एक समूह के अन्तर्गत प्रयोगवादी विचारधारा का होना इस बात का संकेत करता है कि कई पद्धतियों में

कभी मिश्रित रंगों का प्रयोग करते तो कभी वृहद तूलिका घात द्वारा चित्रण कार्य सम्पन्न करते थे । कला गुरु अपने अध्यापन काल में भी विद्यार्थियों को भी इसी प्रकार के प्रयोगवादी दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरणा देते थे । उनका विचार था कि एक ही विषय-वस्तु को कई नजरियों से देखने और परखने के कारण चित्रों में तकनीकी विविधता का परीक्षण किया जा सकता है । सोचने और उसे कार्यरूप में सृजित करने की मानसिकता के कारण जो चित्र संयोजित होते हैं, उनमें अभिव्यक्ति की गहराई दिखायी देती है और कलाकार की भावाभिव्यक्ति तीक्ष्ण हो जाती है ।[2]

कला की विविधता के साथ यदि हम सृजनशीलता पर विचार करें तो भारतीय कला की सर्जना या बाद में इसका रचनात्मक उत्कर्ष देश काल की परिस्थितियों के अनुकूल कलाकार के चेतना के क्रमशः निरन्तर विकास के फलस्वरूप हुआ । यहाँ ज्यादातर कलाकार अपने कला माध्यमों, रीति पद्धतियों एवं कला के वैज्ञानिक विकास के साथ कला की वैचारिक आस्था के लिए भी सतत् जागरूक रहे हैं । इस सदी के चौथे दशक से ही भारतीय कला मात्र सजावटी वस्तुओं के रूप में ही सामने नहीं आयी वरन् कहीं-कहीं यह एक वृहद् वैचारिक उन्मेष को लेकर प्रस्तुत हुई । यहाँ कलाकार प्रकृति की अछूती दृश्य चेतनाओं के साथ ही मानवीय परिस्थितियों के भी सच्चे भागीदार हुए । कला गुरु अपने मनः दृश्यों की रचना के साथ सांसारिक दृश्य और अनुभूति का सामंजस्य भी स्थापित किया । कला में यह परिवर्तन इतनी तेजी से हुआ कि सहसा यकीन नहीं हुआ कि प्रो. धीर की कला में इतना कुछ देखा जा सकता है । कला में परिवर्तन के फलस्वरूप अद्यतन प्रेक्ष्य कलाओं की ओर बौद्धिक क्षेत्र के लोगों का रूझान बढ़ा । यह इसलिए भी कि लोगों ने कला में नयी-नयी अपेक्षाओं को महसूस किया । अनुभूतियों को नये कोणों से प्रभावित करने वाली कलाओं ने जन पूर्वाग्रह को तोड़ा,

कला मात्र दृश्य वस्तु नहीं है । कला अपने प्रभावशाली दृश्यों में एक विचार भी है—एक दर्शन भी है ।

उत्तर प्रदेश के यदि समकालीन कलाकारों पर नजर दौड़ायें तो शायद ही कोई ऐसा कलाकार मिले जिसके कला-जीवन में इतनी विविधता हो । एक ओर कला-गुरु आर. एस. धीर रेखांकन संयोजन में महारथ प्राप्त करते दिखाई दिये, वहीं दूरी ओर वाश तकनीक तथा अमूर्त चित्रण में भी पीछे नहीं रहे । वाश में चित्रण करते समय कलाकार को रेखांकन एवं यथार्थ रूपाकृति में पारंगत होना बहुत ही अनिवार्य है । उसके बिना कलाकार वाश कार्यों के बारे में सोच भी नहीं सकता है । दूसरी तरफ संयोजनों में भारत के मेहनतकश लोगों को मानवीय आकृतियों में वह भाव देते हुए चित्रित किया, जो होना चाहिए । संयोजनों में मानव आकृतियों के बिना भी बहुत से संयोजन बने हैं, जिनमें प्रकृति चित्रण, मुख्य रूप से हिमालय या उसकी सुन्दर घाटियां प्रमुख हैं । कला गुरु के कला-जीवन में अमूर्त चित्रों की कमी रही । अमूर्त चित्रण कभी-कभी उन्होंने प्रयोग के रूप में किया । प्रो. धीर के कला-जीवन में अनेक साधारणीकृत चित्र हैं जो भारतीय समाज से जुड़े हैं । भारतीय समाज की बुराइयों को व्यंग्य के रूप में चित्रित किये जिसमें समीक्षावादी चित्र प्रमुख हैं । इन चित्रों में भारतीय राजनेताओं का घिनौना चेहरा दिखाया गया है, एक तरफ तो वह एकदम सीधे-साधे होते हैं, लेकिन सत्ता पाते ही पशुवत व्यवहार करने लगते हैं और दूसरी तरफ भारतीय जनता का भरपूर शोषण करते दिखाया गया है ।

पश्चिमी-कला के अन्धानुकरण का विरोध करते हुए पिछले दिनों उत्तर प्रदेश के कुछ चित्रकारों ने **'समीक्षावाद'** नाम से एक चित्र प्रदर्शनी का आयोजन दिल्ली के आल इण्डिया एण्ड क्राफ्ट सोसाइटी की गैलरी में किया । 14 जनवरी से 21 जनवरी तक चलने वाली इस

प्रदर्शनी का उद्घाटन जनता पार्टी के अध्यक्ष श्री चन्द्रशेखर जी ने किया । इस प्रदर्शनी का महत्त्व इसलिए भी है कि प्रदर्शनी में शामिल चित्रकारों ने पाश्चात्य नकल पर आधारित आधुनिक भारतीय कला को पूरी तरह नकार कर समीक्षावाद नाम से मौलिक चिंतन पर आधारित आधुनिक भारतीय कला के नये आन्दोलन की घोषणा की ।[3]

समीक्षावादी कलाकारों ने प्रतीकों के आधार पर अपनी कृतियों के भारतीयकरण का प्रयास नहीं किया है, बल्कि पाश्चात्य शैली के आकार एवं रंग संयोजनों को नकार कर सामाजिक तथ्यों को महत्त्व देते हुए, ऐसी कलाकृतियां रचने का प्रयास किया, जो भारतीय जनमानस को सरलता से ग्राह्य हो सके ।

इन चित्रकारों ने यह घोषणा भी कि है कि वे तकनीकी को द्वितीय स्थान देते हैं तथा कथ्य को प्रथम स्थान, यह बात भी उस पाश्चात्य आधुनिक कला से मेल नहीं खाती जहाँ कथ्य से ज्यादा तकनीकी व आकार का निरूपण है ।

दिल्ली में आयोजित इस समीक्षावादी प्रदर्शनी में सर्वश्री रामचन्द्र शुक्ल, गोपाल मधुकर चतुर्वेदी, बालादत्त पाण्डेय, रघुवीर सेन धीर, संतोष कुमार सिंह तथा वेदप्रकाश मिश्र आदि कलाकारों ने भाग लिया ।[4]

रेखांकन, संयोजन आदि के अतिरिक्त प्रो. धीर ने कोलाज-चित्रण में भी नयी ऊँचाइयों को छुआ है । वे कोलाज बनाते समय अनेक पत्र-पत्रिकाओं की कटिंग करते और आवश्यकतानुसार रंगों का प्रयोग करते लेकिन वे कोलाज चित्रों में ज्यादातर भारतीय किसानों तथा सांस्कृतिक नगरी काशी के घाटों का चित्रण करते । धीर साहब ने कोलाज में एक अलग प्रभाव पैदाकर कोलाज को नया आयाम दिया ।

प्रो. आर. एस. धीर ने कम्प्यूटर चित्रों के द्वारा उत्तर प्रदेश की कला में एक नये अध्याय को जन्म दिया । वे उत्तर प्रदेश में कम्प्यूटर चित्रों के जनक कहे जा सकते हैं । इन्होंने कम्प्यूटर चित्रों की एक बहुत बड़ी श्रृंखला बनाई और उसमें अपनी कल्पनाओं को मूर्त रूप प्रदान किया । कल्पनाओं में मुख्यरूप से भारतीय देवी-देवता की प्रमुखता के साथ भारतीय समाज के पिछड़े लोगों का भी समावेश था । इसके अतिरिक्त दुनिया भर में अपनी खूबसूरती के लिए प्रसिद्ध काशी के घाटों का भी माउस द्वारा स्क्रीन पर चित्रण कार्य हुआ है तथा अनेक प्रदर्शनियों के द्वारा समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया गया ।

कलाओं की दुनिया में आज भारतीय कलाकारों की एक बड़ी सृजनशील पीढ़ी अपनी समर्थअन्तर्राष्ट्रीय पहचान बनाने में सफलता प्राप्त की है । यह पहचान ज्यादातर कला दीर्घाओं में कलाकृतियों और प्रेक्षकों के बीच सीधे रिश्ते से स्थापित हुई है । इसी प्रकार यहाँ अनेक पुरानी और नयी पीढ़ी के कलाकारों की कला भी धीरे-धीरे सामंजस्य के बीच अपनी सशक्त पहचान बना चुकी है । कहीं-कहीं प्रचार माध्यमों ने अच्छी भूमिका निभाई है । हालांकि समीक्षा और आलोचना के नाम पर पिछले दो दशकों में जिन शब्द क्षेत्र के लोगों (तथाकथित अखबार नवीसों या लेखकों) की टिप्पणियाँ प्रकाश में आयीं उनमें ज्यादातर भ्रामक हैं । इसी बीच कुछ बेहतर लिखी गयी समीक्षाएँ या समालोचनाएँ समकालीन कला से हमारा सहज साक्षात्कार कराती हैं ।[5] इसी बीच कला गुरु आर. एस. धीर ने कला इतिहास और कलाकर्मी की संवेदनाओं एवं इसकी प्रक्रिया का गहरा अध्ययन किया तथा इसके लिए स्वतन्त्र चिन्तन की बुनियाद कायम की ।

प्रो. आर. एस. धीर जब लखनऊ से काशी में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्यापन के लिए नियुक्त हुए तो इनको खुलकर काम करने का अवसर मिला तथा काशी में इनके घाटों,

यहाँ की गलियों, यहाँ के जन-जीवन पर अनेक माध्यमों में अनेक विषयों पर चित्रण किये। काशी तथा लखनऊ के जीवन की झलक उनके लखनऊ और काशी के चित्रों में देखी जा सकती है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि आपकी कल्पनाशक्ति में जय-पराजय, शक्ति और शक्तिहीनता आदि का केन्द्रीय स्थान है।

एक विशिष्ट आध्यात्मिक परम्परा से भारतीय कला और संस्कृति की पहचान बनी है। इसकी महत्ता प्रवाहित रखनी है और कहना न होगा कि ललित कलाओं के सन्दर्भ में इसे खास तौर पर अक्षुण्ण रखना है लेकिन हमें अपनी परम्परा को आधुनिकता के सन्दर्भ में देखना है तथा दूसरी तरफ मानवीय आवश्यकता के बेहतर मूल्यांकन के लिए आधुनिकता की हमें अपनी परम्परा के परिप्रेक्ष्य में पड़ताल करनी है। आज की भड़कीली संस्कृति के विनिमय में हमें सर्वोत्तम मूल्यों का परित्याग नहीं करना चाहिए। बड़े आश्चर्य की बात है कि पिछले दिनों सांस्कृतिक तथा कला धाराओं व उनके प्रायोजकों की दिशा को मोड़ने का प्रयास किया गया। पश्चिमी जगत पूर्वी परम्पराओं की ओर देख रहा है जबकि पूर्वी जगत पश्चिमी पद्धतियों से होड़ लेने की कोशिश में लगा है, लेकिन प्रो. आर. एस. धीर ने कभी भी अपने चित्रों में पश्चिमी कला का कोई भी अनुकरण नहीं किया। चाहे उनकी कला में जितनी भी विविधता रही हो चाहे जितने भी माध्यम रहे हों लेकिन सबमें भारतीय कला और उनकी स्वयं की विकसित शैली ही दिखी।

प्रो. आर. एस. धीर ने कला के नये आयामों और प्रयोगों के बारे में अलग-अलग लोगों और पत्रिकाओं में अपने विचार दिये हैं। आपके चित्रों के नयेपन के बारे में कहना था कि— "मैंने कभी योजनाबद्ध तरीके से कार्य नहीं किया। न ही मैंने कभी यह सोचा कि ऐसे ही काम करना है और वैसे नहीं करना है। यह पड़ाव तो काम करते-करते स्वयं ही मिल जाता है।

मुख्यतः एक पेंटिंग ही दूसरे पेंटिंग की गाइड बनती है । **'ए ग्रुप ऑफ पेंटिंग इज लाइक ए नावेल ।'** एक पड़ाव में जो कुछ एक बार कह दिया, उसका दोहराव नहीं हो सकता । एक पड़ाव के भिन्न-भिन्न चित्र एक नावेल के भिन्न पात्रों की तरह है जो भी बात कहनी होती है वह चित्रों के माध्यम से कह दी जाती है ।''

कला का अर्थ है मौलिकता और रचनात्मकता । ऐसा कुछ कहना जो अभी तक नहीं कहा गया । जिस तरह एक मनुष्य शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक रूप में विकास करता है, भिन्न क्षेत्रों में उपलब्धियाँ प्राप्त करता है, उसी तरह पेंटिंग को भी आगे बढ़ाना चाहिए अगर ऐसा नहीं होता तो पेंटिंग में ठहराव आ जाता है । स्वयं कलाकार के मन में डर पैदा हो जाता है । वह दुविधा में फँसा सोचता है कि शायद यह काम स्वीकार होगा कि नहीं । ऐसे सोचते-सोचते वह अपना दायरा छोटा कर लेता है । कला का मुख्य कार्य है— नयेपन की खोज । पहले स्वयं को जानना, ढूँढ़ना, पहचानना और फिर एक मनुष्य की तरह दूसरे को कुरेदना । इस प्रकार निजी संवेदना में बढ़ोत्तरी होती है ।

चित्रकला (संयोजन, रेखांकन, अमूर्त चित्रण)

कला-गुरु आर. एस. धीर की कला में जितनी अधिक विविधता है, शायद उत्तर प्रदेश के कला-जगत् में किसी कलाकार के कला जीवन में इतनी विविधता नहीं थी और न है; क्योंकि आज का कलाकार अपनी एक शैली बनाकर या अनुकरण करके अपना लेता है और उसी पर अपना कला-जीवन समाप्त करने की सोचने लगता है ।[6] कला-गुरु आर. एस. धीर की कला विविधता का एक पक्ष चित्रकला में संयोजन, रेखांकन व अमूर्त चित्रण है । वैसे कला-गुरु की कला में अमूर्त चित्रण को विशेष स्थान प्राप्त नहीं है । कला गुरु अमूर्त चित्रण को समाज से दूर रहने वाली कला कहते थे । उनका मानना था कि कला समाज का दर्पण है,

कलाकार चित्रों में जो भी अभिव्यक्ति करता है, यदि समाज उस चित्र को देखकर कलाकार की अभिव्यक्ति का अनुभव नहीं कर पाता है तो वह कला बेकार है और यह बात अमूर्त चित्रण में तो बिल्कुल ही सम्भव नहीं है ।

कला-गुरु जब लखनऊ से धार्मिक नगरी काशी आये तो काशी की अद्भुत दुनिया और यहाँ के लोगों का गहरा अध्ययन किया । काशी अध्ययन के अनुभवों और सरोकारों का कला गुरु पर गहरा प्रभाव पड़ा । इस प्रभाव का असर उनकी कला में स्पष्ट दिखाई देता है । जब वे लखनऊ में कृतियों का निर्माण करते तो अपने संयोजनों में कहीं मेहनतकश वर्ग को प्राथमिकता देते तो कहीं प्रकृति चित्रण को और उस समय वे अधिक जल रंगों का प्रयोग करते थे । लेकिन काशी आने के बाद उनके संयोजनों में विशेष परिवर्तन हुआ । यहाँ तैल-चित्रों की संख्या बढ़ने लगी और चित्र संयोजनों में काशी के घाट, गलियाँ तथा धार्मिक विषयों की अधिकता होने लगी जो चित्रों को देखने से स्पष्ट हो जाता है ।

कला-गुरु की कला में एक विशेष प्रकार का सौन्दर्य व आकर्षण है । इनके चित्रों में बनारस के जीवन की झाँकियाँ संवेदना में उतरती हुई मुखर होती हैं । इनके चित्र स्मरण मात्र से स्मृत पटल पर उभर आते हैं । यह चित्र संयोजन ऐसे हैं कि एक बार मूल में या अनुकृतियों में देख लिया जाय तो उसे भुलाया नहीं जा सकता ।

कला-गुरु संयोजन या रेखांकन करने से पहले चित्र पट को ध्यान से देखते थे । अपने कला जीवन के आरम्भ में कला गुरु चित्रपट पर संयोजन बनाने से पहले एक रफ रेखांकन द्वारा ले आऊट तैयार करते थे । उसके बाद वह चित्र पट पर कार्य करना आरम्भ करते थे लेकिन बाद में बिना ले आऊट के ही सीधे चित्रपट पर कार्य करने लगे ।

कला-गुरु आर. एस. धीर की कला देश काल की उन्नत कला है, जिसे लोक स्वीकृति मिली हुई है जिसे आज के युवा कलाकार आदर्श मानकर उनसे प्रेरणा ग्रहण करते हैं । उन्होंने

अपनी कृति के माध्यम से अपने भावों और विचारों को दर्शकों तक पहुँचाया । इनकी कला में एक विशेष प्रकार का सौन्दर्य है जो कृतियों में एक अलग विशेषता को प्रदर्शित करता है । कला गुरु के चित्रों में बनारस के धार्मिक एवं सामाजिक जीवन की झाँकियाँ संवेदना में उतरती हुई मुखर होती हैं । इन चित्र संयोजनों में गहरी भावाभिव्यक्ति है ।

कला-गुरु आर. एस. धीर के चित्र संयोजन रेखांकन या अमूर्त चित्रण स्मरण मात्र से ही स्मृतिपटल पर उभर आते हैं । ये चित्र ऐसे हैं कि एक बार मूल में या अनुकृतियों में देख लिया जाय तो उसे भूलने का सवाल ही नहीं उठता । इनके चित्रों में एक खास प्रकार की सादगी है, जो अन्य कलाकारों के चित्रों से अलग करते हैं । कला गुरु मानव शरीर का रेखांकन कल्पना से नहीं वरन् शुरू में साक्षात देखकर बनाया करते थे तथा लगातार रेखांकन व अध्ययन से अपने द्वारा रचित आकृति की अलग पहचान बनाई । लाईट का प्रभाव फोटोग्राफी से अधिक होता है, चित्रकला में इसका उपयोग इतना प्रभावी नहीं बन पाता उनका मानना था कि रंगों का चयन चित्रकला की सबसे बड़ी खासियत है, उन्होंने कहा कि बहुत अधिक और भड़कीले रंगों की उतनी जरूरत नहीं है जितना दो तीन रंगों के प्रयोग से अच्छे चित्र बनाये जा सकते हैं ।[7]

अमूर्त कला के बारे में कला-गुरु के विचार थे कि अमूर्तता के घिसे-पिटे तथा चालू मुहावरों में परिवर्तन होने के बाद अन्तर्राष्ट्रीय कला जगत में आकृति फिर से महत्त्वपूर्ण हो जायेगी, वैसे कला-गुरु ने अपने कला-जीवन में बहुत ही कम अमूर्त चित्रों का निर्माण किया । वे कहते थे, यह मान लिया गया कि आकृतिमूलक कला अतीत की कला है और अमूर्त कला भविष्य की कला है जो एक भ्रम है । दक्षिण भारत ने जिन अमूर्त कलाकारों को पैदा किया वे अपने कला-जीवन में आकृति को मूल्यहीन समझते थे, लेकिन दक्षिण भारत के कला क्षेत्र में मद्रासी शैली की आकृतिमूलक कला का अपना विशिष्ट रंग है, विशिष्ट सौन्दर्य है और

विशिष्ट भावनात्मक रूप है । कला गुरु का कहना था कि **"कलाकार को परम्परागत आकृति प्रधान कला को महत्त्व प्रदान करते हुए इससे जुड़ा हुआ या बँधा हुआ नहीं रहना चाहिए, बल्कि अपनी अथक साधना से अलग पहचान बनानी चाहिए।"** लेकिन आज वर्तमान समय में अधिकांश कलाकार कला को चुनौती के रूप में न लेकर एक व्यवसाय के रूप में लेने लगे हैं । रूपहीन कथ्य और कथ्यहीन रूपाकार दोनों समान रूप से खराब अवस्थाएँ हैं । मूर्त-अमूर्त का विवाद सहज विवाद है । अमूर्त से मूर्त की ओर आना सहज प्रक्रिया है, सृजनशीलता एक अजस्त्र धारा है और इस धारा में यहाँ के कलाकारों से जो विविध आयामों और प्रवृत्तियों में सृजनरत हैं, भविष्य के प्रति या भविष्य में बहुत आशा बँधती है ।

कला-गुरु चित्र संयोजन में रेखांकन चारकोल से प्रारम्भ किये; क्योंकि चारकोल द्वारा बनी रेखाओं को सरलता से या बिना दाग के साफ किया जा सकता है । रेखांकन करने से पहले वे अनेक बार उस पर गहराई से विचार करते थे । लेकिन बाद में वे सीधे ब्रश से ही रेखांकन करते थे । संयोजनों में प्रयुक्त रंगों का आपसी तालमेल इस प्रकार है कि दर्शक मुग्ध हो जाता है । यह संयोजन विविध प्रयोग की दृष्टि से सम्बद्ध दिखते हैं ।

कला-गुरु संयोजन में विविध माध्यमों जैसे जल रंग, तैल रंग, ड्राई पेस्टल, एक्रेलिक तथा खनिज रंगों का प्रयोग माँग समय और संयोजन में प्रयोगों की दृष्टि से करते थे । कला-गुरु तूलिका के माध्यम से चित्र के विशिष्ट भाग पर रंगों के टेक्चर के विशिष्ट प्रभाव के लिए तूलिका को विशेष प्रकार से चलाते थे । कलाकृति की रचना में प्रयुक्त अनेक दृष्टिगत तत्त्वों को सुव्यवस्थित और संतुलित रूप में प्रस्तुत किये जिससे संयोजन में रमणीयता और आकर्षण उत्पन्न हो गया है ।

प्रो. आर. एस. धीर ने चित्र संयोजनों में सामयिक परिवेश के रूढ़िग्रस्त विचारों को प्रोत्साहन नहीं दिया बल्कि वे आधुनिक चिन्तन को भारतीय परिवेश में देखते थे । इस प्रकार चित्र संयोजन समयानुकूल परिस्थितियों का आभास कराते हैं । वे जलरंग एवं तैल रंग माध्यमों को माध्यम की अनिवार्यता के अन्तर्गत दर्शाते थे, लेकिन चित्र संयोजनों में सुकोमलता का दर्शन होता है जो उनके अन्तर्मन का प्रतिबिम्ब माना जा सकता है । इस प्रकार उनके चित्र संयोजनों में भावबोध दिखाई देता है ।

वाश चित्रण

प्रो. धीर की कला विविधता में वाश चित्रण का विशेष स्थान है । वाश चित्रण करने के लिए किसी भी कलाकार को रेखांकन और संयोजन में पारंगत होने के साथ-साथ रंगों की भी पूरी जानकारी का होना जरूरी है और इन सबमें उन्होंने अपने आपको साधना के द्वारा पारंगत कर लिया था । समकालीन प्रेक्ष्य कलाओं के लिए भारतीय कलाकारों की सृजनशीलता उनकी स्वयं की अन्तःप्रेरणा से दिशा पा रही है और कला प्रेमियों के प्रायः सीधे साक्षात्कार से ही यथासम्भव उनकी कला के मूल्य भी स्थापित हो रहे है । यद्यपि यह इस बात पर निर्भर करता है कि कला के लिए प्रदर्शन और प्रचार माध्यमों को किस रूप में इस्तेमाल किया गया है । यदि ऐसा नहीं होता है तब भी कला सृजन के बाद से ही अपना एक चिरंतन और शाश्वत मूल्य रखती है जिसका तत्काल कोईबड़ा भौतिक अर्थ भले न हो लेकिन अपने समय का एक दस्तावेज तो होती ही है । वैसे ज्यादातर कलाकृतियाँ सृजन के बाद कला दीर्घाओं में ही देखी जाती रही हैं जो कलाकार के लिए अब तक एक मात्र सुनियोजित प्रदर्शन माध्यम है ।

वाश चित्रण कला-गुरु के कला-जीवन की एक ऐसी विविधता है जो कलाकारों के बीच में कला-गुरु की अलग पहचान रखती है । प्रो. धीर जब लखनऊ में कला शिक्षा ग्रहण कर

रहे थे तो इनके सबसे प्रिय कला-गुरु श्री वी. एन. आर्या थे, जो वाश चित्रण में सिद्धहस्त थे । वे बंगाल शैली के संस्थापक श्री अवनीन्द्रनाथ के शिष्यों के कुशल शिष्यों में से थे । चूँकि भारत में वाश शैली का प्रारम्भ बंगाल शैली से हुआ और बद्रीनाथ आर्य भी उसी कड़ी में थे । इसलिए वाश में पारंगत होना स्वाभाविक था । बद्रीनाथ आर्य के प्रिय शिष्य श्री रघुवीर सेन धीर ने भी बंगाल स्कूल की उपज को जीवित रखा और अपने समय के सभी कला विद्यार्थियों को पीछे छोड़ते हुए वाश-चित्रण में अपनी एक अलग पहचान बनाई ।

कला-गुरु आर. एस. धीर की कला के बारे में जानने के लिए मैं लखनऊ गया और इस समय लखनऊ के जाने-माने कलाकार और कला गुरु से कला शिक्षा में एक वर्ष पीछे रहे श्री जयकृष्ण अग्रवाल से मिला तो उन्होंने कहा कि उनका नाम सुनते ही मेरे मानसपटल पर उनकी वाश पेंटिंग उभर आती है । उनका कहना था कि यदि उनके पूरे कला-जीवन की कला का विश्लेषण किया जाय तो वाश चित्रण सबसे प्रभावशाली और अलग पहचान रखने वाला होगा । लखनऊ कला विद्यालय में वे वाश कलाकार के रूप में उस समय जाने जाते थे । वाश के अनेक चित्रों पर उन्होंने पुरस्कार भी प्राप्त किये । जब मैंने श्री जयकृष्ण अग्रवाल जी से इनकी कला विविधता के बारे में पूछा तो उनका मानना था कि इनकी कला में विविधता जरूर थी लेकिन लखनऊ के कला जीवन में सभी वाश-चित्रण के आगे फीकी थी ।[8] कला-गुरु के कला जीवन का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि जब तक वे लखनऊ रहे तब तक उनकी कला में वाश चित्रण की प्रधानता अवश्य रही लेकिन जब वे लखनऊ से काशी आये तो अपने प्रयोगवादी दृष्टिकोण के कारण उनकी कला में अनेक प्रकार की विविधताएँ दिखायी देने लगीं । काशी आने के बाद अधिक समय प्रयोगवादी चित्रों के ऊपर बीतने लगा और वाश चित्रण धीरे-धीरे कम होने लगा ।

प्रो. धीर ने जब काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य शुरू किया तो वे अपने विद्यार्थियों को भी वाश-चित्रण की ओर मोड़ने का प्रयास किए । उनका मानना था कि रंग का सही ज्ञान वाश चित्रण के द्वारा ही लिया जा सकता है । वाश चित्रण के द्वारा जब रंग का सही ज्ञान हो जायेगा तब किसी माध्यम में कार्य बहुत ही आसानी से किया जा सकता है । शुरू के तो विद्यार्थी वाश चित्रण में रुचि लेने लगे लेकिन उनके अध्यापन के अन्तिम दिनों में तैल माध्यम और अमूर्तता का ऐसा प्रचलन हुआ कि युवा कला विद्यार्थी का वाश चित्रण से मन हट गया और अमूर्त कला के द्वारा वह शीघ्र प्रसिद्ध के पीछे भागने लगे ।

19वीं सदी के अन्त में अंग्रेजों ने भारतीय जनता को उसकी सांस्कृतिक विरासत से विमुख करके अंग्रेजी सभ्यता सिखाने की चेष्टा की ।[९] लेकिन वर्तमान में कलाकार को विमुख करने की जरूरत नहीं है और भारतीय कलाकार स्वयं भारतीय कला से विमुख होकर पाश्चात्य शैली का अन्धानुकरण कर रहा है । कला गुरु आर. एस. धीर ने इस युवा कलाकारों के भ्रमित विचार को तोड़ने का पूरा प्रयास किया । उनका मानना था कि जब हम रेखांकन और रंगों के विषय में पूरी तरह पारंगत हो जायेंगे तो किसी भी प्रकार का चित्रण करने के लिए सक्षम हो जायेंगे । पारम्परिक शिक्षा के साथ-साथ कलाकार को स्वयं नये और सुन्दर प्रयोगवादी चित्र बनाने चाहिए जैसा कि उनके चित्रों के अध्ययन से ज्ञात होता है ।

वाश चित्रण की परम्परा को हम नन्दलाल बोस से आरम्भ मान सकते हैं, जिनमें नन्दलाल बोस ने विशुद्ध रूप से वाश चित्रों का निर्माण किया साथ ही वाश-टेम्परा पद्धति का विकास किया । इनके चित्रों में विषय पूर्णरूप से भारतीय रहे हैं । इसी प्रकार कला गुरु आर. एस. धीर ने अपने वाश चित्रों में भारतीय विषय के चित्रों का निर्माण किया । वाश चित्रों में काशी के घाटों पर होने वाले विभिन्न धार्मिक आयोजनों, आमोद-प्रमोद आदि का बहुत सुन्दर

चित्रण किया । वाश चित्रों को आधुनिक रूप से यथार्थवादी बनाये लेकिन उनमें यथार्थवादी पारम्परिक चित्र शैलियों का प्रभाव प्रेरणा दिखायी देती है । चित्रों में जल रंगों की पारदर्शिता के साथ ही आकृतियों की भाव-भंगिमाओं में लय तथा चेहरे पर भावों का सम्प्रेषण दिखाई देता है । चित्रों में प्रकाश का स्त्रोत एक प्रकार से रेम्ब्रा के चित्रों के समान दिखाई देता है, जो गहरे अन्धकार से उत्पन्न होकर वातावरण में प्रस्फुटित होता दिखाई देता है । कला गुरु अपने वाश चित्रों में ऐसे विषयों का चयन करते रहे हैं जो हमें भारतीय लघु चित्रों में दिखाई देते हैं । इसका कारण यह माना जा सकता है कि भारतीय लघु चित्रों में जो सौन्दर्यात्मक बोध है, उससे वे प्रभावित हुए । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि वाश चित्रों में विषय को पूर्णरूप से भारतीय समाज को लिया गया है ।

साधारणीकृत चित्रण

कला मनुष्य के दैनिक जीवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है । आज कल यह यान्त्रिक जीवन के वर्तमान फैशन से सम्बद्ध हो गया है और समय की माँग पूर्ण करने के लिए इसने अपना स्वरूप तद्नुरूप ढाल दिया है । जिस मौलिकता की बार-बार दुहाई दी जाती है वह एक विक्षिप्त दौड़ है जो शहरी जीवन की तीव्रता और शोरगुल के अनुसार लगातार अपना रूप बदलती रहती है । पहले प्रसिद्धि प्राप्त करने के लिए कड़े संघर्ष की आवश्यकता थी, किन्तु अब समीक्षक के त्वरित निर्णय द्वारा यह रातों-रात प्राप्त हो जाती है । किसी भावनाशील व्यक्ति के जीवन को बनाना या बिगाड़ना अब समालोचक पर निर्भर करता है । यह एक विचित्र बात है कि शिक्षाशास्त्री का दायित्व समालोचक की सरसरी टिप्पणियों तक सीमित कर दिया जाय । इसके अतिरिक्त व्यापक प्रचार के द्वारा भी कलाकार की मान्यता में वृद्धि होती है । कलाकार की आत्मप्रचार की उत्कण्ठा गलत नहीं होती; क्योंकि कोई भी विकासशील मस्तिष्क

आन्तरिक अहं से प्रेरित होता है । यदि यही अहं गलत दिशा में अभिमुख हो जाता है तो असुखद समाप्ति और विनाश को प्राप्त होता है ।[10]

श्री आर. एस. धीर प्रसिद्धि की चिन्ता किये बगैर समाज के प्रत्येक त्यौहारों पर साधरणीकृत चित्रों द्वारा भी अपनी अदम्य कला कुशलता का परिचय देते थे । इनके साधरणीकृत चित्रों में पुस्तकों के लिए बने चित्र नववर्ष पर ग्रीटिंग कार्ड के लिए बने चित्र तथा कैलेण्डर आदि चित्र आते हैं जिनमें वे अपने कला-कौशल को दर्शाते रहे हैं । इस प्रकार के अधिकतर चित्रों को समसामयिक घटनाक्रम, विशेष आयोजनों और भेंट स्वरूप बनाते रहे हैं । इनमें से कुछ चित्र केवल रेखांकन द्वारा बनाये गये तो कुछ जलरंग आदि का प्रयोग करके बनाये गये हैं । कला-गुरु प्रत्येक नववर्ष पर बड़ी संख्या में ग्रीटिंग कार्डों के लिए कभी हाथ से तो कभी कम्प्यूटर के माध्यम से चित्रों का निर्माण करते थे । इन चित्रों में भारतीय देवी-देवता, पशु-पक्षी तथा पेड़-पौधों का आकर्षक रेखांकन व रंगाकन होता है । इसमें भी कला गुरु काशी के घाटों को नहीं भूल पाये और ग्रीटिंग व त्यौहारों पर भी काशी के प्रसिद्ध और दुनिया में अपनी अलग पहचान रखनेवाले घाटों का चित्रण बहुत ही संतुलित ढंग से किया है ।

सरलीकरण को प्रायः कलाकार की चतुराई के साथ सम्बद्ध किया जाता है । यह भी देखना पड़ता है कि माँग पूर्ण करना कोई सुगम कार्य नहीं है । सही विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि वह अत्यन्त कठिन और जटिल समस्याओं पर प्राप्त विजय का परिणाम है । किसी सुनियोजित कलाकृति को संतुलित करने में उपकरणों के सुसंगत प्रयोग में जहाँ कठोर शरीरिक एवं बौद्धिक श्रम की आवश्यकता होती है, वहाँ भावनात्मक पहलू एक सुखद प्रभाव उत्पन्न करने में सहयोगी होता है । इससे न केवल दृष्टिगत वरन मानसिक तृप्ति भी होती है और अवसादपूर्ण अस्तित्व को राहत मिलती है । अतः सरलीकरण जटिलता के स्वरूप का ही परोक्ष परिणाम है ।[11]

कला-गुरु आर. एस. धीर साधारणीकृत चित्रों में भारतीय देवी-देवताओं जिसमें धार्मिक एवं पौराणिक दोनों को अधिक महत्त्व दिया । भारतीय देवी-देवताओं को अपनी कल्पना के आधार पर ग्रीटिंग, पुस्तक चित्र एवं त्यौहार पर चित्रों को एक नये रूप में प्रस्तुत किया है । इन चित्रों में रंग-रूप, चारित्रिक विशेषताओं और यहाँ तक कि उद्वेगों को अभिव्यंजित करना उनका प्रमुख लक्ष्य था । यद्यपि उनकी रंग योजना बहुत सरल और सीमित होती थी किन्तु वे रंगों को इतनी कुशलता से मिश्रित करते थे कि चित्रों में अद्भुत प्रभाव आ जाते थे । भारतीय परम्परा को भी आधार मानकर इन्होंने अनेक नवीन प्रयोग किये हैं । उनका विचार था कि कला का सम-समायिक विकास होना चाहिए किन्तु विकास क्रमबद्ध रूप में होता रहे । क्रमबद्ध विकास परम्परा के अन्तर्गत होता है, अर्थात् हम अपनी परम्परा में कुछ जोड़ते हैं और परिमार्जित करते हैं । यही परम्परा हमारी संस्कृति बनती है और संस्कृति हमारी कला की पहचान बनती है । इस प्रकार की कला में शास्त्रीय तत्त्व निखरकर सामने आते हैं, जो सार्वभौम होते हैं । इस प्रकार की कला में अपनी संस्कृत और परम्परा के तत्त्व अधिक मिलते हैं । नये वर्षों पर ग्रीटिंग कार्डों पर भारतीय देवी-देवताओं में अधिकांश में गणेश जी का दर्शन होता है । इसमें जिस भी भारतीय देवी-देवताओं को बनाया गया है उनको अपनी कल्पना के आधार पर एक नवीन रूप प्रदान किये हैं ।

कोलाज चित्रण

कोलाज चित्रण का आविष्कार अधिकांश कला विद्वान् घनवाद के जन्मदाता पाब्लो पिकासो को मानते हैं । 1908-09 के आस-पास पिकासों ने सेजान से प्रभावित होकर केल व आर्तों में ज्यामितीय नियमबद्धता से युक्त प्रकृति चित्र बनाकर विश्लेषणात्मक घनवाद को स्पष्ट रूप से प्रारम्भ किया । इस समय उनकी कला में निग्रो कला के आवेश व सरलीकरण

का स्थान घनवादी रचनात्मकता ने ले लिया । 1912 के आस-पास कोलाज पद्धति का आविष्कार होने से घनवाद की विश्लेषणात्मक पद्धति पीछे रह गयी व संश्लेषणात्मक चित्र बनने लगे । पिकासों के कोलाज चित्रों में 'वायोलिन' 'आराम कुर्सी पर बैठी महिला', 'गिटार', 'खोपड़ी' पर्व समाचार-पत्र आदि प्रसिद्ध हैं ।[12]

श्री आर. एस. धीर कोलाज चित्र को अपनी कला यात्रा में शामिल किये । कला-गुरु का कला-जीवन जितना विविधतापूर्ण है, उसी प्रकार कोलाज चित्र भी अनेक विविधता लिए होता है । इसमें अनेक प्रकार के रंगों पत्र-पत्रिकाओं तथा बेकार पड़ी वस्तुओं का समावेश होता है । कला गुरु के कोलाज चित्रों के विषय अधिकतर गूढ़ रहे हैं और उनमें असंजारिणता एवं अमूर्तन की प्रवृत्ति दिखाई देती है । रंगीन कागजों के द्वारा बने कोलाज चित्रों में कोई भी कागज का टुकड़ा अनायास ही नहीं लगाया जाता था बल्कि एक-एक टुकड़े को लगाते समय उन्होंने बहुत सोचा-समझा है । इनके कुछ कोलाज चित्र तो पाल्वों पिकासों के कोलाज चित्रों का स्मरण कराते हैं, जिनमें त्रिआयामी आभास दिखाई देता है । इनके कोलाज चित्रों में प्लाईवुड के कटे हुए टुकड़ों का सुन्दर ढंग से प्रयोग मिलता है । इसके अतिरिक्त कोलाज चित्रों में शीशी के ढक्कनों का प्रयोग, रंगीन किताबों के पन्नों का प्रयोग तथा समय व स्थान के अनुसार अन्य वस्तुओं का प्रयोग कोलाज चित्र में नवीनता प्रदान करते हैं ।

कला-गुरु के कुछ कोलाज चित्रों में तान्त्रिक कला का प्रभाव दिखायी देता है । जिनमें प्लाईवुड लकड़ी के चौकोर फ्रेम और गोल कटे हुए सिरेमिक या रबर के पाइप दिखाई देते हैं । इस प्रकार के चित्रों से मात्र संयोजनात्मक क्षमता का ही आभास नहीं होता बल्कि पूर्ण रूप से आकारों और रंगों का समवेत प्रभाव दिखाई देता है । इस प्रकार के चित्रों को सरलीकरण व अमूर्तन की श्रेणी में रखा जा सकता है । कला गुरु अनेक चित्रों को तो रंगीन कागज के पन्नों, ढक्कनों, रबर पाइपों आदि से ही पूर्ण कर देते थे, लेकिन कुछ कोलाज चित्रों में इन सबके

प्रयोगों के बाद कहीं-कहीं रंगों का प्रयोग भी दिखाई देता है, जो एक प्रयोगवादी सोच की देन हैं ।

चित्रकार चित्र क्यों बनाते हैं? मूर्तिकार मूर्ति क्यों बनाता है? संगीतकार संगीत की धुनें क्यों बनाता है? इसलिए नहीं कि उसके पास कोई और काम नहीं हैं । वास्तव में इसके पीछे एक कारण सम्प्रेषण की व्याकुलता है । वह अपनी रचना के माध्यम से अपने अनुभवों और विचारों को सम्प्रेषित करना चाहता है । वह चाहता है कि दर्शक उसकी भावनाओं से परिचित हों । हो सके तो उसकी भावनाओं से सहमत हों और गुणगान करें । इसलिए चित्रकार अपने चित्रों की प्रदशनी भी करता है और वह यह भी चाहता है कि प्रदर्शनी में उसके कृतियों की ब्रिकी भी हो; क्योंकि चित्र बनाने से लेकर प्रदर्शनी करने तक वह जितनी धनराशि, समय और श्रम का त्याग करता है, निश्चित रूप से उसका फल भी चाहता है । वह फल उसकी प्रसिद्धि भी हो सकती है । प्रसिद्धि के लिए कलाकार नये-नये प्रयोग करने और परम्परा से हटकर सृजन करने में क्रियाशील व चिन्तनशील रहते हैं । उनका विचार था कि क्रियाशीलता ही शैली विषय और विचारों को नया मोड़ देती है, माध्यम कोई भी हो सकता है ।[13] इसी क्रियाशीलता और विचारों को नया मोड़ देते हुए प्रो. आर. एस. धीर ने विविध माध्यमों में विविध विषयों पर विशेष प्रकार से चित्रों का निर्माण किया । इसी विविधता में से एक कोलाज चित्र भी है जिसमें कुछ चित्र बिना ब्रश प्रयोग के पूर्ण किये गये जिससे कोलाज चित्रों में एक अलग प्रकार का सौन्दर्य और आकर्षण दिखाई देता है ।

कम्प्यूटर चित्र

चित्रकला की विशाल और विविधता भरी दुनिया को देखते हुए बार-बार ऐसा लगता है कि उसका एक बड़ा पक्ष उसकी प्रयोगधर्मिता है । चाहे रंग-कूची का क्षेत्र हो, चाहे उसके

टेक्चर का, चाहे उसकी कलात्मकता तथा उपकरण का, उसकी विषय-वस्तु में प्रयोगधर्मिता एक बड़ा पक्ष है जो उसके आयाम को विस्तारित करते रहे हैं । इसके विस्तार व विविधता में ही एक चित्रकार की सफलता भी छिपी हुई है । आधुनिक विकसित होती विज्ञान का प्रयोग तथा तकनीक, उसके अनुरूप अपनी चित्रकला व उसके उपकरण को विकसित करने का प्रतिदिन नया मौका मिलता है । ठीक इसी प्रकार बीसवीं शताब्दी का अन्त आते-आते दुनिया का सामाजिक, राजनीतिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक सभी प्रकार के परिदृश्य निरन्तर बदल रहे हैं । सामाजिक सरोकार व मूल्य बदल रहे हैं । नई चुनौतियां व समाज निर्माण के नये संघर्ष प्रतिदिन नया रूप ले रहे हैं । विशेष रूप से तीसरी दुनिया के देशों से ये चुनौतियाँ बड़े विकट रूप में सामने आ रही हैं; क्योंकि यहाँ अभी मनुष्य की मूलभूत समस्याओं का ही निदान नहीं हो पाया है । उसे किसी प्रकार का नागरिक अधिकार पूरी तरह प्राप्त नहीं है । वह सामान्य रूप से अपना जीवन बिता सके, इसकेलिए इस दुनिया की राजसत्ता व्यवहारिक रूप से कोई भी कारगर कदम उठाती दिखाई नहीं दे रही है । भारत में भी स्थिति ऐसी ही है और शोषण, उत्पीड़न, भूखमरी, अशिक्षा, बदहाल जिन्दगी, आदिम युगीन बर्बरता तथा इनके विरुद्ध संघर्ष और प्रतिशोध की स्थितियाँ, भारत में मौजूद है । इन्हीं स्थितियों से चित्रकारों को अपनी कला के लिए विषयवस्तु भी उपलब्ध होती है । इसीलिए एक चित्रकार को आज एक ओर तो अपने कला उपकरण नये मिल रहे हैं तो दूसरी ओर विषयवस्तु । इनके समुचित संयोजन के बिना आज कोई भी चित्रकार/कलाकार/रचनाकार कुछ महत्त्वपूर्ण दे पायेगा, ऐसा नहीं कहा जा सकता । वास्तव में आज चित्रकार के सामने यही रचनात्मक चुनौती है ।

कला क्षेत्र में प्रो. आर. एस. धीर ने अपने प्रयोगधर्मी विचारधारा को अवतरित किया है । अपने कला-जीवन में कई सौ कम्प्यूटर चित्रों का सृजन कर चुके हैं जिनकी अनेकों

प्रदर्शनियां आयोजित हो चुकी हैं जिसे कलाप्रेमियों ने सराहा भी है । कम्प्यूटर में कार्य करने वाले चित्रकार आज भारत में बहुत कम हैं; क्योंकि इसके द्वारा कार्य किये जाने की परिकल्पना और रंगों के संयोजन को लेकर ही आज सारी दुनिया के ललित कला जगत की स्थिति बहुत स्पष्ट नहीं है । कम्प्यूटर पर कलाकृतियाँ निर्मित या परिकल्पित करने की शुरूआत जापान के चित्रकारों ने की । लेकिन लगता है इसकी प्रेरणा अमेरिका के उस कला अध्याय में छिपी है, जिसके अन्तर्गत कलाकारों ने अत्याधुनिक चित्रकला के नाम पर विशाल कैनवास पर चतुर्कोणीय तथा ज्यामितीय आकारों को रंग, धागा, रेखाएँ जूट आदि से निर्मित करने का प्रयास किया है । सम्भवतः यह स्थापत्य कला में दिन-प्रतिदिन नये प्रयोगों का प्रभाव था । अमेरिकी आधुनिक चित्रकारों ने इस प्रकार विशाल कैनवास पर इस ढंग से कृतियों की रंग सज्जा को जगह दी है । इस प्रकार के अनेक कार्यों से ऐसा आभास होता था कि परिदृश्य में विशाल भवनों की जो जाँच रेखा तैयार है, चौकोर, तिरछे रेखाओं से ही निर्मित है । कई कार्य तो ऐसे भी दिखाई पड़े हैं कि विशाल कैनवास पर कोई एक रंग बहुत गाढ़ा करके पोता गया है और कहीं ऊपर एक चौकोर खिड़की खुलती दिखाई देती है । नीचे एक आयताकार दरवाजा दिख रहा है, पूरे कैनवास में एक छिद्र है, जिससे कुछ रिस रहा है या कई चौकोर आकार एक-दूसरे को काटते हुए दर्शक के ऊपर हावी होने की कोशिश कर रहे हैं । इन कार्यों को देखकर लगता है कि जैसे किसी कम्प्यूटर पर ग्राफ पेपर्स-सा इसका आभास देते हुए काम किया गया हो । जापान में कम्प्यूयर पर जो कार्य चित्रकारों ने शुरू किये उनमें प्रारम्भ में ग्राफ पेपर्स पर किये गये काम का आभास होता है । फिर निरन्तर प्रयोग और परिकल्पना से इस कार्य में बदलाव आये पर आज भी स्थिति यह है कि अधिकांश चित्रकार रंग ब्रश से ही कार्य करना ज्यादा रचनात्मक और कलात्मक मानते हैं । इसलिए कम्प्यूटर पर चित्रकला के कार्य का विकास कम हुआ दिखाई देता है ।[14]

समीक्षावाद के जनक प्रो. रामचन्द्र शुक्ल जी से जब मैं कला गुरु आर. एस. धीर की कम्प्यूटर पेंटिंग के बारे में पूछा तो उनका कहना था कि "मेरे विचार से आर. एस. धीर उत्तर प्रदेश में कम्प्यूटर कला के जनक थे; क्योंकि उनसे पहले मैंने उत्तर प्रदेश में कम्प्यूटर पेंटिंग करते या प्रदर्शित होते नहीं देखी । जब मैंने उनके कम्प्यूटर चित्रों को देखा तो मुझे लगा कि जैसी विशेषज्ञता उनके अन्दर वाश शैली की है उसी प्रकार की विशेषज्ञता कम्प्यूटर चित्रों की है । इनकी कम्प्यूटर कृतियां और उसमें किया गया संयोजन अत्यन्त आकर्षक है जो किसी भी कलाकार को कम्प्यूटर पेंटिंग के लिए प्रेरित कर सकता है । कम्प्यूटर में अधिकतर फ्लैट कलर ही होता है, लेकिन धीर उसमें भी कलर टोन अर्थात् छाया प्रकाश का प्रभाव अपनी विशेषज्ञता के बल पर उत्पन्न करने में बहुत हद तक सफल रहे ।[15]

आधुनिक कला में चित्रांकन एवं तकनीक स्तर पर आये दिन कुछ न कुछ प्रयोग हो रहे हैं । चाहे उसके पीछे कलाकार की भावना मौलिक हो अथवा न हो यह अलग बात है । इसी प्रकार एक तकनीक प्रयोग प्रो. आर. एस. धीर ने किया है कम्प्यूटर चित्रांकन करके । मार्च, 1998 को उनके ऐसे ही 36 चित्रों की कला-प्रदर्शनी सृष्टि कला दीर्घा में दस मार्च तक आयोजित की गयी थी । प्रस्तुत प्रदर्शनी का उद्घाटन प्रो. आर. एस. विष्ट ने किया । प्रो. धीर लखनऊ आर्ट कॉलेज के ही छात्र थे और उन्होंने प्रो. बी. एन. आर्य से प्रशिक्षण प्राप्त किया था । उसके बाद बी. एच. यू. ललित कला संकाय में कला गुरु एवं विभागाध्यक्ष पद पर कार्य करके सेवानिवृत्त हुए ।[16]

प्रस्तुत कला-प्रदर्शनी में निर्मित रंगीन चित्रों में श्री गणेश पर आधारित संयोजन, कई दृश्य चित्र, उनकी कला के आत्म-विश्वास को मुखरित करते हैं । सीधे-साधे सामान्य दर्शक के समझ में आने वाली उनकी कला के संयोजन तकनीक दृष्टि से चमत्कारिक हैं । दो चित्रों

को छोड़कर बाकी 34 चित्रों के रंगों के मिश्रण एवं फैलाव का कम्प्यूटरी चित्रांकन अपनी फिनीशिंग वैल्यू के कारण निश्चय ही दर्शनीय है । लखनऊ में अपने प्रकार की यह प्रथम कला प्रदर्शनी थी । इसके लिए प्रो. धीर का पूरा अतीत बहुत पीछे चला जाता है । यहाँ पर मुखरित हुई है उनकी लम्बी कला साधना ।[17]

प्रस्तुत चित्रों में जहाँ मानवीय आकृतियाँ मकान, पक्षी और श्री गणेश, शिवलिंग, ओम आदि मुखरित हुए हैं वहीं पर प्रकृति को भी विभिन्न कोणों से मुखरित किया गया है । इसमें आकाश को कई धरातलों पर रंगों के मिश्रण एवं फैलाव को अद्‌भुत परिदृश्य में दर्शाया गया है । यहाँ पर भी प्रो. धीर की प्रयोगात्मक मनोवृत्ति ने अपनी कल्पनाशीलता का परिचय दिया । बाह्य एवं आन्तरिक रेखाएँ स्पष्ट एवं सशक्त हैं । निगेटिव प्रोसेस के रंगविहीन दो चित्र रंगीन दृश्य चित्रों के ही विपरीत रूप हैं । दर्शक को यहाँ पर उन्होंने चौंकाया है । तकनीकी दृष्टि के जानकार पी. सी. लिटिल ने उनके ब्रोसर में इस तकनीक पर अच्छी जानकारी दी है ।[18]

कम्प्यूटर स्क्रीन के कैनवास पर 'माउस' की कूची से आकार लेती कलाकार की कल्पना उसकी रंग चयन व मिश्रण की परिपक्वता से कितनी खूबसूरत और अकृत्रिम हो सकती है । यह प्रो. आर. एस. धीर की कम्प्यूटर कला कृतियों का अवलोकन कर महसूस किया जा सकता है । प्रो. धीर की कलाकृतियों की प्रदर्शनी दूसरी बार भी सृष्टि कला दीर्घा में लगायी गयी थी ।

प्रदर्शनी में 34 रंग चित्र एवं दो श्याम चित्र शामिल हैं । प्रो. धीर ने कुछ नया करने की ललक में माउस का चयन किंया और रेखाओं पर नियंत्रण कर आकार रचे हैं । कलाकार ने इस भ्रम को तोड़ा कि कम्प्यूटर से बनी कृतियां केवल प्रिंट हो सकती हैं एवं इसके मशीनी होने का आभास होता है । प्रो. धीर ने इस भ्रम को तोड़ने के लिए किसी विशेष कम्प्यूटर

पैकेज का सहारा लेने के बजाय सामान्य माउस से रेखाएँ व डाट्स बनाये हैं । साथ ही इसमें रंगों को इतनी खूबसूरती से ढाला है जैसे कैनवास पर ब्रश से रंग संयोजित किये गये हों । रंगों का फ्यूजन व विविध शेड वास्तविक लगते हैं ।[19]

नव प्रयोग के दौरान प्रो. धीर ने यह प्रयास किया कि कम्प्यूटर चित्र जलरंग व तैलरंग के समान नजर आये । अपने इस प्रयोग में कलाकार ने विविध विषयों के इर्द-गिर्द 'माउस' को गति दी है । प्राकृतिक सौन्दर्य काशी के घाट भगवान गणेश के अतिरिक्त प्रो. धीर ने कुछ संयोजन भी बनाये हैं । प्रत्येक चित्र में स्पेस और आकारों का संतुलन तथा पूरी आकृति में आकारों का संयोजन प्रशंसनीय है । इस सन्तुलन में कमी की बात कहना ठीक नहीं है; क्योंकि प्रो. धीर काफी वरिष्ठ कलाकार हैं और इसका उनको खासा अनुभव है । चित्रों को संतुलित करने के लिए बनाये गये आकार चित्र को नया अर्थ देते हैं । भगवान गणेश के एक चित्र में अर्द्धचन्द्र दो शिवलिंग व एक गोलाकृति जहाँ चित्र को सन्तुलित करती है वहीं शिव व गणेश के सम्बन्ध को दर्शाती है । प्रकृति चित्रण में प्रो. धीर ने रंगों का खूबसूरत चयन किया है । पहाड़ों में लुका-छिपी करते बादलों का चित्रण करते समय कलाकार ने कृत्रिमता को कोसों दूर कर दिया है । यह लैण्डस्केप वाकई उच्चकोटि का है । हरे, पीले व नीले रंग के फ्यूजन से बने ये दृश्य-चित्रण प्रो. धीर के नव प्रयोग के सफलतम नमूने हैं । आकारों में संयोजन सामान्य से अलग हटकर नहीं है ।[20]

प्रो. आर. एस. धीर ने लीक से हटकर काम करने की कोशिश में जहाँ कुछ आकर्षक चित्रकृतियां बनायी हैं वहीं कुछ साधारण प्रभाव देती हैं । रंगों के मामले में प्रो. धीर काफी सचेत लगते हैं लेकिन चटख रंग उनकी खास पसन्द बन गये थे । वाराणसी में कला-साधना कर रहे प्रो. धीर अपने काम के विषय में कहते हैं कि कुछ नया करने के लिए उन्होंने कम्प्यूटर

को चुना । प्रचलित माध्यमों से बने रंगीन चित्रों की तरह कम्प्यूटर चित्र बनाने का उनका पहला प्रयास चार माह पहले आरम्भ हुआ । उन्होंने अब तक बहुत कृतियां बनायी जिनमें से 36 प्रदर्शनी में शामिल की गयी हैं । उनके चित्रों की अगली प्रदर्शनी बांग्ला देश में लगेगी । सृष्टि में उनकी पदर्शनी 10 मार्च तक चलेगी ।[21]

कला-गुरु प्रो. आर. एस. धीर ने कम्प्यूटर चित्रों को केवल अपने तक सीमित नहीं रखे । उसको पूरे उत्तर प्रदेश या देश में फैलाने व प्रशिक्षण देकर लोगों को विशेष रूप से युवा कलाकारों को कम्प्यूटर चित्र बनाने के लिए प्रेरित किया । इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रदेश के अनेक स्थानों पर निःशुल्क कम्प्यूटर चित्र की कार्यशालाएँ आयोजित करते थे । उनका मानना था कि आज कम्प्यूटर युग है तो हम भी उसी युग के एक हिस्से के रूप में हैं । साथ में हम अपनी सभ्यता व संस्कृति को भी कम्प्यूटर से प्रदर्शित कर पूरे विश्व स्तर पर भारतीय कला व संस्कृति का परचम लहरायेंगे । कार्यशाला के बारे में कहते थे कि नवीन तकनीक होने के कारण युवा-कलाकारों में इसके प्रति विशेष रुचि देखने को मिली और लगन व धैर्य के साथ युवा-कलाकार कला सीखते हैं ।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के पूर्व संकायाध्यक्ष व वाराणसी के प्रख्यात चित्रकार प्रो. आर. एस. धीर ने कम्प्यूटर स्क्रीन के कैनवास पर माउस की कूँची से लाजवाब चित्रकृतियां उतारी हैं, जिन्हें देखने वाला बस देखता ही रह जाता है । माउस से आकार लेती उनकी कल्पना रंग चयन व मिश्रण की परिपक्वता बड़े वास्तविक लगते हैं । कला क्षेत्र में प्रो. आर. एस. धीर ने अनेक प्रयोगधर्मी विचारधारा को अवतरित किया । अब तक अनेकों कम्प्यूटर चित्रों का निर्माण कर चुके हैं ।

कम्प्यूटर चित्रों के बारे में प्रो. धीर ने सम्वाददाता सम्मेलन में बताया कि कम्प्यूटर पर काम करने वाले चित्रकार आज भारत में बहुत कम हैं; क्योंकि इसके द्वारा काम किये जाने की

परिकल्पना और रंगों के संयोजन को लेकर ही आज सारी दुनिया के ललित कला जगत की स्थिति बहुत स्पष्ट नहीं है । कम्प्यूटर पर चित्रकृतियां निर्मित करने या परिकल्पित करने की शुरूआत जापान के चित्रकारों ने की । उन कलाकारों के काम को देखने से ऐसा आभास होता था कि वे ग्राफ पेपर्स पर किये गये हैं । इस वजह से आज भी अधिकांश चित्रकार रंग ब्रश से ही काम करना ज्यादा रचनात्मक और कलात्मक मानते हैं । इसलिए कम्प्यूटर पर चित्रकला के काम का विकास कम दिखाई देता है । इसीलिए उन्होंने कम्प्यूटर का प्रयोग व्यावहारिक कला में विशेष रूप से किया है ।[22]

प्रो. धीर ने बताया कि वे गहरे चिन्तन और आस्तिक मन से भारतीय देवी-देवताओं, पौराणिक मिथकों, घाटों, मंदिरों के चित्र उकेरे हैं । इसलिए ऐसे चित्रों के मशीनी होने का आभास नहीं होता । इसलिए वे माउस से रेखाएँ व डाट्स बनाते हैं । इन चित्रों में रंगों को इतनी खूबसूरती से ढाला गया है जैसे कैनवास पर ब्रश से रंग संयोजित किये गये हों । रंगों के फ्यूजन व विविध शेड वास्तविक लगते हैं । कला गुरु बताते हैं कि कुछ कम्प्यूटर चित्र जल रंग व तैल रंग के समान नजर आते हैं । वे विविध विषयों के इर्द-गिर्द माउस चलाते हैं । संयोजन, स्पेस, आकार आदि का सन्तुलन चित्र को नया अर्थ देता है । रंगों के मामले में वे चटख रंगों को ज्यादा महत्त्व देते है । अब वे आगामी दिनों ढाका (बंगला देश) में अपने कम्प्यूटर चित्र कृतियों की प्रदर्शनी लगायेंगे ।[23]

श्री धीर ने बताया कि राज्य सरकार एक आर्ट गैलरी डॉ. राजेन्द्र प्रसाद घाट के आस-पास खोलने पर विचार कर रही है । इस क्षेत्र में कला से जुड़े आयुक्त स्तर का एक अधिकारी आकर जगह आदि खोज चुका है ऐसा सुनने में आया है । उन्होंने बताया कि कम्प्यूटर चित्रों के प्रति रुचि जागृत करने के लिए हैपी होम इंग्लिश स्कूल, मकबूल आलम रोड, खजुरी

तिराहा में दो माह की पेंटिंग प्रशिक्षण कार्यशाला दो मई से प्रारम्भ होगी । इस कार्यशाला में सिर्फ छात्राएँ ही भाग लेगी और वाटर कलर आयल पेंटिंग रेखांकन व चित्रांकन का उन्हें प्रशिक्षण दिया जायेगा । इन दिनों उनके चित्रों की एक प्रदर्शनी इस विद्यालय परिसर में लगायी गयी है । इस सम्बन्ध में श्री विनय कृष्ण अग्रवाल ने भी प्रशिक्षण के सम्बन्ध में पत्रकारों को जानकारियाँ दीं ।[24]

कला गुरु प्रो. आर. एस. धीर द्वारा कम्प्यूटर प्रशिक्षण के बारे में अनेक समाचार-पत्रों ने अपनी-अपनी लेखन शैली में लिपिबद्ध किया है । कला गुरु के सबसे प्रिय शिष्य और कम्प्यूटर कला में प्रो. धीर के साथ रहने वाले श्री विनय कृष्ण ने कार्यशाला के बारे में पत्रकारों को बताया कि— "कला क्षेत्र में प्रो. धीर ने अपने प्रयोगधर्मी विचारधारा को अवतरित किया है । आज तक कला गुरु कई सौ चित्रों का निर्माण करके अनेक प्रदर्शनियां आयोजित कर चुके हैं, जिसे कला प्रेमियों ने सराहा भी है ।"[25]

श्री विनय कृष्ण अग्रवाल के अनुसार प्रो. आर. एस. धीर इन दोनों प्रक्रियाओं से गुजरते हुए इनफार्मेटिक्स कम्प्यूटर इन्स्टीट्यूट, वाराणसी केन्द्र पर अपने कार्यों को रूप देते हैं । प्रो. धीर बहुत गहरे चिन्तन एवं आस्तिक मन के चित्रकार हैं और भारतीय देवी-देवताओं, पौराणिक मिथकों, घाटों, मंदिरों आदि में उनकी गहरी रुचि है । उनके अन्तःमन और मस्तिष्क में ये रूप पड़े हुए हैं, जिनका प्रभाव उनके यहाँ प्रदर्शित कई कार्यों में दिखाई देता है । वह स्वीकारते हैं कि उन्होंने बहुत सोचकर ये धार्मिक चेतना के चित्र नहीं बनाये हैं लेकिन उनके अन्दर यह चेतना बसी हुई है । इसलिए शायद उसके प्रभाव यहाँ आ गये हैं । इस कार्यशाला का सबसे ज्यादा लाभ उन छात्राओं को होगा जो कि कला में रुचि रखती हैं साथ ही कम्प्यूटर का ज्ञान भी अर्जित करना चाहती हैं ।[26]

वाराणसी के मकबूल आलम रोड पर स्थित इन्फार्मेटिक्स कम्प्यूटर इन्स्टीट्यूट के संचालक विनय कृष्ण अग्रवाल ने कला गुरु के साथ पत्रकारों से बात करते हुए बताया कि मधुबनी घराने के जैन मिनियेचर आर्ट वाटिक आदि कलाकृतियों की अब तक अनेक प्रदर्शनियां हो चुकी हैं ।

उन्होंने बताया कि कम्प्यूटर पर कूची की जगह माउस से चित्र बनाना एक अनोखा अनुभव है, परन्तु गहन चिन्तन और आस्तिक मन के चलते उन्हें कोई परेशानी नहीं होती । अपने इसी ज्ञान को वे बाँटेंगे । वाराणसी में यह कार्य पहली बार होगा जबकि देश के कुछ शहरों में इसके प्रशिक्षण की व्यवस्था है जो कि बहुत मँहगी है । कम्प्यूटर पर माउस से उकेरे गये चित्रों में तैल व जल रंगों का आभास होता है और चित्र पूर्णतः प्राकृतिक लगता है । चटख रंगों के नियंत्रित प्रयोग रंगों का फ्यूजन व विवध शेड उन्हें नया आयाम देते हैं ।

एक प्रश्न के उत्तर में प्रो. धीर ने बताया कि हिन्दू देवी-देवताओं के चित्रकार मकबूल फिदा हुसैन के विवादास्पद चित्रण को सस्ती लोकप्रियता का प्रयास बताते हुए कहा कि कलाकारों को ऐसी नौटंकी करने की कोई जरूरत नहीं है । सुर्खियों में रहने के लिए हुसैन साहब दिन-प्रतिदिन अशोभनीय हरकतें किया करते हैं ।[27]

कम्प्यूटर चित्रों के बारे में मैंने कला-गुरु प्रो. आर. एस. धीर द्वारा लिखित एक लेख पाया जिसमें उन्होंने अपने विचार लिखे हैं जो इस प्रकार हैं— "पिछले एकाधिक दशकों के दौरान मैंने वैज्ञानिकों द्वारा जनित विकसित विधा जिसको संगणक (कम्प्यूटर) के नाम से जाना जाता है और जो सारे विश्व में देखते-ही-देखते जीवन के सभी पहलुओं में छा गयी उससे अपने को निरन्तर आकर्षित पाया । प्रायः मन में खयालों के ताने-बाने बुने कि काश इस विशिष्ट विधा को मैं तूलिका या चाकू की तरह अपने चित्रों का माध्यम बना सकता । जिस

सहजता से खयाली ताने-बाने बुने जाते उसी शीघ्रता से सामयिक परिवेश, सीमित संसाधनों, कोर्स, सेलेबस, रूल्स के बंधनों की मार खाकर मस्तिष्क उनको नकार देता । इसी ऊहापोह में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के दृश्य कला संकाय में मेरा 30 वर्ष का लम्बा अन्तराल शत-शत विद्यार्थियों को चित्रकला की बहुआयामी बारीकियां सिखाने में कब बीत गया पता ही नहीं चला । संगणक का प्रयोग चित्रकला में माध्यम के रूप में मूर्त रूप तो मेरा अध्यापक चित्रकार कभी न दे पाया । फिर भी संगणक के प्रति मेरे चित्रकार का आकर्षण कम नहीं हुआ । 1997 में संकाय से अवकाश पाकर और उपरोक्त बन्धनों से मुक्त होकर मैंने अपने चित्रकार को संगणक के आकर्षण में पूरी छूट दी है । अपने बचे-खुचे आर्थिक संसाधनों को इस दिशा में समर्पित कर कुछ काले, रंगीन व सफेद चित्र बनाये हैं ।[28]

संगणक विधा में रंगों के संयोजन की तकनीक सम्भावना इसी बीच मेरे प्रयत्नों में महती रूप से कैटेलेटिक बन पड़ी है जो भी गिने-चुने सीमित आकार के रंगीन संगणक चित्र मैंने स्वान्तः सुखाय बनाये अपनी रचनात्मकता को नये आयामों में ढालने सँवारने के लिए उनकी प्रदर्शनी, समाचार-पत्रों, संचार माध्यमों द्वारा प्रशंसा, पसन्दगी व स्वीकृत पाकर पिछले अनेक महीनों में नये उत्साह, नयी उमंगों, युवा स्पंदनों से अपने को आह्लादित पाया और इस दिशा में कुछ विशिष्ट कर पाने का मन बनाया है । विधा नहीं है उसमें अपार सम्भावनाएँ हैं । शैली में भी आवश्यक परिमार्जन दिखा है पर विषयवस्तु व प्रतीक आम लोगों के बीच काशी की धार्मिक तांत्रिक आध्यात्मिक परिप्रेक्ष्य के ही हैं । चित्रकार पर दशकों के अनुभव की छाप है । संगणक विधा के नयेपन से एक आधुनिक सामयिक संतुलन चित्रों में स्पष्ट है । मैं अपने प्रयोगों में पाता हूँ प्राचीन व नवीन का समागम ।[29]

मेरा प्रयोग भारत में ही नहीं विश्व स्तर पर विशिष्ट है । पहले कभी संगणक द्वारा यथार्थवादी शैली में दृश्यचित्रण या धार्मिक तांत्रिक प्रतीकों के संयोजन किसी ने नहीं बनाये हैं । चित्रों में आम आदमी के लिए संदेश के साथ सम्मोहन जैसा तात्कालिक चुम्बकत्व है, जो बरबस ही दर्शकों को अपनी ओर खींच लेता है, एक नये लोक के आह्लाद में उसके सामयिक तनावों समस्याओं से बहुत दूर । प्रयोगों को और बढ़ाने के लिए मुझे स्वयं के कुछ विशिष्ट रूट वर्स से सज्जित संगणक की अविलम्ब जबरदस्त आवश्यकता है और एक एयरकंडीशनर प्रयोगशाला की अपने निवास पर चित्रों के अच्छे आकार के पेंटिंग बनाने के लिए कम से कम 8 से 10 हजार रुपये मासिक की आवश्यकता है । ऐसा भी विचार है कि निकट भविष्य में बच्चों को इस विधा में प्रशिक्षित किया जा सके । संगणक के आविष्कार उपयोग के पहले ग्राफिक्स विधा जो एक मशीनी विधा है, को चित्रकला में व्यापक स्वीकृति मिली है । मुझे पूरा विश्वास है कि शीघ्र ही संगणक विधा का चित्रकला में प्रत्येक स्तर पर प्रयोग को और अधिक स्वीकृति मिलेगी ।[30]

श्री आर. एस. धीर अनेक प्रकार की कठिन और चुनौती भरे समय में भी कम्प्यूटर कार्यों को करते रहे । एक लम्बे अन्तराल के बाद लखनऊ में उनकी कोई एकल प्रदर्शनी आयोजित हुई है और इस प्रदर्शनी में बिल्कुल नये माध्यम में किये गये उनके काम प्रदर्शित हो रहे थे । वरिष्ठ चित्रकार आर. एस. विष्ट ने इस प्रदर्शनी का उद्घाटन किया ।

आज के कुछ साल पहले जयपुर हाऊस, नई दिल्ली में 'नव कला दीर्घा' की ओर से कम्प्यूटर द्वारा तैयार किए गये चित्रकला के कुछ कार्यों का प्रदर्शन किया गया पर चित्रकला की दुनिया में यह प्रयोग और उत्सुकता की प्रदर्शनी होकर ही रह गयी और तमाम नये चित्रकारों ने भी इसमें कोई विशेष रुचि नहीं दिखाई । कुछ काम कम्प्यूटर पर पटना में भी हुए

थे और उसकी एक प्रदर्शनी लगाने की योजना थी पर वह कहाँ तक पहुँचा इसकी कोई निश्चित जानकारी मुझे नहीं है । आज यह भी स्पष्ट नहीं है कि भारत के विभिन्न कला-केन्द्रों तथा कला-नगरों में कम्प्यूटर पर कितने चित्रकार काम कर रहे हैं । इन तमाम स्थितियों व आशंकाओं तथा मशीनी काम की अवधारणा के बावजूद यह सत्य है कि कम्प्यूटर का विकास और उसमें किये जाने वाले विविध प्रयोगों का विकास बहुत तेजी से हो रहा है, तभी तो कहा जा रहा है कि 'आज कायुग कम्प्यूटर का युग है ।' यही कारण है कि अभी कुछ समय पहले एक कम्प्यूटर पर सादे काम (ब्लैक एण्ड ह्वाइट) ही हुआ करते थे पर आज उससे रंगों के लिए एक आकर्षक और नये प्रयोग को उकसाने वाली दशा का निर्माण करता है । इस नये कार्य तकनीकी को एक चुनौती की तरह लेते हैं । आर. एस. धीर एक प्रयोगधर्मी चित्रकार हैं; इसलिए बहुत स्वाभाविक था कि उन्हें यह चुनौती स्वीकार होती । इस चुनौती का ही परिणाम है कि पिछले कुछ समय से वह कम्प्यूटर पर चित्रकला का काम कर रहे हैं और यहाँ उनके 38 काम इस दिशा में उनकी महारथ की ओर इशारा करते हैं । कम्प्यूटर में होता है एक माउस (हम उसे चूहा कह लें) दबा-दबा कर स्क्रीन पर कमांड किया जाता है और अपनी परिकल्पना के उतारने के लिए चित्रकार के मन में कोई विषय-वस्तु भी होनी चाहिए जिसके आधार पर वह अपने काम को आकार दे ।

कला-गुरु प्रो. आर. एस. धीर के कम्प्यूटर चित्रों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है, पहली श्रेणी में वे चित्र हैं, जिनमें भू-दृश्यों और प्राकृतिक दृश्यों को चित्रित किया गया है । इसमें रंग-संयोजन तथा रंगों की गहराई के कारण श्री धीर के ये काम आकर्षित करते हैं । ये सुन्दर व मनोहर काम हैं । विशेष रूप से कुछ काम तो बहुत सुरुचि सम्पन्नता व रंगों के मनोहर संयोजन के उदाहरण हैं । इन कार्यों में अधिकांश शीर्षक विहीन हैं । वास्तव में कला-गुरु के कम्प्यूटर चित्रों की ये उपलब्धियाँ हैं ।

दूसरी श्रेणी के चित्रों में उनकी धार्मिक आस्था के चित्र हैं, जिसमें शिवलिंग शालिग्राम, पिण्ड, विभिन्न सूढ़ों वाले गणेश, मंदिर, ध्वजाएँ, घाट, शिवजी का बैल, गणेश का मूषक, पूजा के लिए तैयार महिला व कुछ फूल, त्रिशूल व कमल का फूल आदि बड़ी प्रमुखता से दिखाई देते हैं ।

उत्तर भारत में काम कर रहे अधिसंख्य नये-पुराने चित्रकारों के साथ एक विचित्र बात यह है कि वे देवी-देवताओं, पौराणिक व धार्मिक मिथकों हिन्दूवादी भावनाओं व आस्थों के इर्द-गिर्द घूमते दिखाई देते हैं या इन्हीं विषयों को अपने काम का विषय बनाकर अपनी कला साधना को जारी रखते हैं । इससे होता यह है कि ऐसे चित्रकार नित परिवर्तित होते समाज, विडम्बनाओं, तनाओं व नये मूल्यों में विकसित होते समाज को न देखकर पुरातन पंथी दिशा में ही अपने को केन्द्रित किये दिखाई देते हैं । इससे उनके सामाजिक सरोकारों और चिन्ताओं का भी पता चलता है कि वे अभी पुराने गहवर में ही पड़े हैं और नये परिवर्तनों, मूल्यों पर उनका कोई ध्यान नहीं है । रचनात्मकता के क्षेत्र में यह पिछड़े विचारों के वर्चस्व का एक स्वरूप भी दिखता है । लेकिन प्रयोगवादी धीर कहते हैं कि उनका कम्प्यूटर माउस उन्हें जहाँ ले गया वहाँ वे चले भी गये हैं, जैसे गणेश की सूड़ बनाते समय छोटे-बड़े, ऊपर-नीचे जो भी आकार उनके चूहे ने दिया वे उसकी तरफ बढ़ते गये और एक के बाद एक कम्प्यूटर चित्र बनाते गये ।[31]

प्रो. धीर यह भी स्वीकारते हैं कि मानस में जो कुछ भरा होता है वह काम में आने लगता है और फिर उन्हें रोकना मुश्किल हो जाता है । (माउस एक चित्रकार पर हावी हो जाता है और सबसे ऊपर चित्रकार का मानसिक रचाव) । पर श्री धीर यह भी कहते हैं कि यहाँ के कामों में जो भी दिखाई देता है, उनमें अनेकों रूप हैं ।

●

सन्दर्भ

1. समकालीन कला, नवम्बर 1987 / मई1988, अंक 9-10, पृ. 34
2. समकालीन कला, नवम्बर 1987 / मई1988, अंक 3-4, पृ. 34
3. धर्मयुग, 18 मार्च, 1979, पृष्ठ 30, 'रामचन्द्रशुक्ल' ।
4. धर्मयुग, 18 मार्च, 1979, पृष्ठ 30, 'रामचन्द्रशुक्ल' ।
5. समकालीन कला, नवम्बर 1987/मई1988, अंक 9-10, पृ. 20
6. निजी सम्पर्क, शुक्ल प्रो. रामचन्द्र शुक्ल, इलाहाबाद, 5 जून, 2006
7. पारिभाषिक कला कोष, बांथम रूपनारायण, पृ. 24
8. निजी सम्पर्क, अग्रलवा जयकृष्ण, लखनऊ, 25 जून, 2006
9. आधुनिक भारतीय चित्रकला, अग्रवाल गिर्राज किशोर, पृ. 28
10. समकालीन कला, नवम्बर 1987 / मई1988, अंक 9-10, पृ. 67
11. समकालीन कला, नवम्बर 1987 / मई1988, अंक 9-10, पृ. 67
12. आधुनिक चित्रकला का इतिहास, साखलकर रवि, पृ. 168
13. उत्तर प्रदेश साहित्य और संस्कृति की मासिक पत्रिका, जुलाई, 1998, पृ. 42
14. श्री आर. एस. धीर द्वारा कम्प्यूटर कार्यशाला में दिया गया वक्तव्य, सौजन्य से— अग्रवाल विनय कृष्ण, 8 जून, 2006 ।
15. निजी सम्पर्क, शुक्ल प्रो. रामचन्द्र शुक्ल, इलाहाबाद, 5 जून, 2006
16. 'आज' दैनिक समाचार पत्र, लखनऊ, 3 मार्च, 1998
17. 'आज' दैनिक समाचार पत्र, लखनऊ, 3 मार्च, 1998
18. 'आज' दैनिक समाचार पत्र, लखनऊ, 3 मार्च, 1998
19. 'राष्ट्रीय सहारा', लखनऊ, मंगलवार, 3 मार्च, 1998, पृ. 5
20. 'राष्ट्रीय सहारा', लखनऊ, मंगलवार, 3 मार्च, 1998, पृ. 5
21. 'राष्ट्रीय सहारा', लखनऊ, मंगलवार, 3 मार्च, 1998, पृ. 5
22. 'दैनिक जागरण', वाराणसी (इलाहाबाद), 23 अप्रैल, 1998
23. 'दैनिक जागरण', वाराणसी (इलाहाबाद), 23 अप्रैल, 1998

24. 'दैनिक जागरण', वाराणसी (इलाहाबाद), 23 अप्रैल, 1998
25. 'सन्मार्ग', वाराणसी, 24 अप्रैल, 1998, पृ. 2
26. 'सन्मार्ग', वाराणसी, 24 अप्रैल, 1998, पृ. 2
27. 'गाण्डीव', वाराणसी, 25 अप्रैल, 1998, पृ. 5
28. प्रो. आर. एस. धीर द्वारा लिखे गये लेख से प्राप्त ।
29. प्रो. आर. एस. धीर द्वारा लिखे गये लेख से प्राप्त ।
30. प्रो. आर. एस. धीर द्वारा लिखे गये लेख से प्राप्त ।
31. 'अमर उजाला', लखनऊ, 10 अप्रैल, 1998

•

अध्याय चतुर्थ
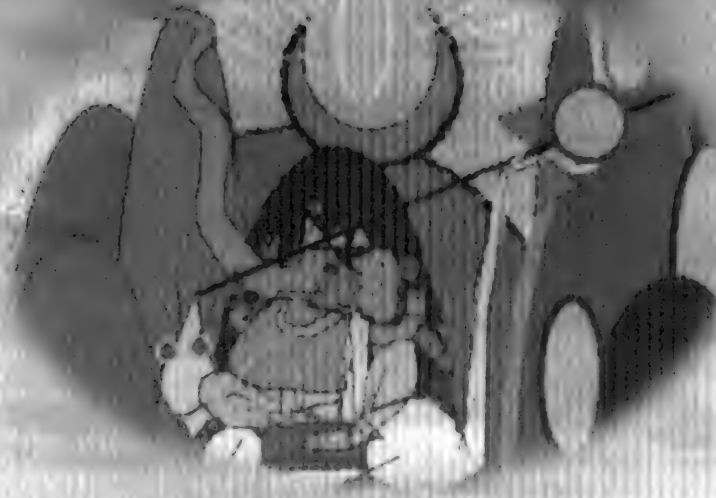
चित्र-साधना का विषयगत स्वरूप

4.1 धार्मिक एवं पौराणिक चित्र

4.2 सामाजिक चित्र

4.3 दृश्य चित्र

4.4 वस्तु चित्र

4.5 अन्य चित्र

प्रो. धीर के चित्रों में तकनीक की जितनी विविधता है उतनी ही विविधता उनके चित्रों के विषय में भी है; क्योंकि आपने कभी भी एक विषय को लेकर कार्य नहीं किया है । आपके चित्रों में विविध प्रकार के विषयों का समायोजन है । धार्मिक, पौराणिक, राजनैतिक, जैन, व्यंग्य चित्र, वाराणसी के घाट तो कभी प्रकृति को विषय के रूप में चुने तथा अपने अनुभव के आधार पर विविध विषयों को समाज के समक्ष रखा ।

एक गुण-सम्पन्न, आत्मविश्वासी तथा सुचिन्तक कलाकार का अन्तःस्थल जब समस्त रूप से कैनवास, रंग-तूलिका के माध्यम से प्रदर्शित होता है तब उसको समझने के लिए, स्वीकार करने के लिए दर्शकों को कुछ समय तो लगेगा ही । परन्तु उन कलाकृतियों को देखकर कोई भी दर्शक अपने आपको समझ जाता है कि चित्र शास्त्र की जो भाषा, जो व्याकरण है, उसको एक कैनवास के टुकड़ों पर रेखा, आकार रंग-पेस्टल, क्रेयॉन, लकड़ी का कोयला, मसि-लेखनी, जलरंग, तैल रंग आदि का नियंत्रित प्रयोग करने के साथ प्रति अंग का पारस्परिक समन्वय स्थापित करके मानविकी अभिव्यक्ति या अनुभूति को जागृत करने की क्षमता उन्हें स्वयं ईश्वर ने दी है ।

कलाकार के चित्रों का पूर्ण आनन्द लेने के लिए विषय व उसका ज्ञान पृष्ठभूमि आदि सभी की जानकारी होना आवश्यक है । वस्तुतः इनके आकारों, अन्तराल, रूप रंग आदि से खिलवाड़ मात्र नहीं है । अपितु गहन संवेदशील और परिष्कृतश्व छिपा रहा है जो चित्रों को और अर्थपूर्ण बना देता है । श्री आर. एस. धीर के आधारभूत विषय पर चर्चा करने के लिए हमें लखनऊ और वाराणसी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर दृष्टि रखनी होगी; क्योंकि आपकी कला का शिक्षण लखनऊ में हुआ किन्तु काशी में आने के बाद उसका विस्तार एक वट वृक्ष के समान हुआ । लखनऊ और वाराणसी को मिलाकर देखा जाय तो यहाँ सम्पूर्ण भारत का

मानव बसता है । यहाँ सभी राज्यां से, सभी स्थानों से, विभिन्न जाति, भाषा धर्म तथा परम्परा के लोग आकर बस गये हैं और साथ में संजोकर लाये हैं, अपनी कला व संस्कृति पर यहाँ आकर एक नवीन सर्वभारतीय कला और संस्कृत रूप में पनपी हैं ।[1] इसका अपना एक अलग ही अंदाज है । यह मिश्रित कला और संस्कृति यहाँ रहने वाले कलाकार को प्रभावित नहीं करे, ऐसा हो ही नहीं सकता है ।

आपके चित्रों में यहाँ के परिवेश का प्रभाव है । एक ओर लखनऊ के गोमती तट पर रहने वाले बंजारे, तो दूसरी तरफ मेहनतकश मजदूर, एक ओर धार्मिक पौराणिक चित्र तो दूसरी ओर वाराणसी के खूबसूरत घाटों का चित्रण है । समाज पर व्यंग्य करते हुए भारतीय राजनेताओं के घिनौने चेहरों को अपनी कल्पना के आधार पर एक नवीन रूप में समाज के सामने प्रस्तुत किया ।

श्री आर. एस. धीर का मानना था कि कला-जीवन की परिभाषा संस्कार है । चित्रकला का ध्येय आनन्द की उपलब्धि और परमानन्द की प्राप्ति है । वह लौकिक विषय नहीं अलौकिक विषय है । वह बहिर्जगत का व्यापार नहीं, अन्तरजगत का विषय है । जैसे सौन्दर्य उपासक रूप की साधना से रसमयी सिद्धि लेकर आनन्द तक पहुँचता है और आनन्द से परमानन्द का सामीप्य ग्रहण करता है । उनके शब्दों में चित्रकला का यह संक्षिप्त परिचय है वही उनका कहना है कि प्रत्येक मानव चित्रकार है । अनेकों चित्रों के रूप में वह प्रकृति के दर्शन करता है, उस पर मुग्ध होता है । इस चित्रमय जगत में वह स्वयं चित्र भी है और चित्रकार भी है ।

कला की कमनीयता और उसकी परख में ढले एक स्थापित और सजग कलासर्जक कलाकार आर. एस. धीर ने अपनी कला के माध्यम से जीवन के अस्तित्व, उसका विकास

और मृत्यु की प्रक्रिया जैसे गूढ़ विषयों की अभिव्यक्ति दी है । उनका 'जीवन-चक्र' इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है । सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को समझने के लिए उन्होंने लिंग, त्रिशूल, मंदिर, सर्प आदि प्रतीकों को पीछे छोड़कर उन्हें अलग ही अभिव्यक्त किया है ।

अपने परिवेश के प्रति संवेदनशील होना एक कलाकार की सबसे बड़ी विशेषता होती है । कला के द्वारा मनुष्य की मृत प्राय संवेदनाएँ जगाना कलाकार की सफलता को प्रकट करता है । सुप्रसिद्ध कलाकार आर. एस. धीर की कृतियां इन विशेषताओं पर खरी उतरती है । उनके चित्रों में एक ओर धार्मिकता एवं प्रकृति है तो दूसरी ओर समाज में व्याप्त बुराइयों के लिए लोगों की संवेदनाएँ जगाने वाले विषय चित्र हैं । आपके चित्रों में विषय की विविधता रही है, जिसमें धार्मिक, सामाजिक, वस्तु चित्रण (Still Life) दृश्य-चित्रण, अमूर्त-चित्रण आदि है ।

धार्मिक और पौराणिक चित्र

किसी भी देश की संस्कृति उसकी अपनी आत्मा होती है, जो उसकी सम्पूर्ण मानसिक निधि को सूचित करती है । यह किसी एक व्यक्ति के सुकृत्यों का परिणाम मात्र नहीं होती अपितु अनगिनत ज्ञात एवं अज्ञात व्यक्तियों के निरन्तर चिन्तन एवं दर्शन का परिणाम होती है । किसी भी देश की काया संस्कृति के आत्मिक बल पर ही जीवित रह पाती है ।[2]

भारतीय संस्कृति पुरातनता, धर्मपरकता, आध्यात्मिकता, दार्शनिकता वेद परायणता, एकीकरण और समन्वय, अविच्छिन्नता, सर्वजन हिताय एवं सर्वजन सुखाय के मौलिक सूत्रों में पिरोयी हुई एक मुक्ता माला के समान है । भारतीय कला भी इन्हीं संस्कृति के आदर्शों का साकार रूप है । भारतीय कला ने किसी भी युग एवं स्थान पर कोई भी शैली एवं प्रविधि का

अभ्युदय एवं विकास किया हो पर उसने संस्कृति के इन मूल तत्त्वों को स्वाहा नहीं होने दिया । प्रागैतिहासिक, अजन्ता, अपभ्रंश, मुगल राजपूत एवं स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय की राष्ट्रीय कलाओं में विभिन्न शैलियों का दिग्दर्शन होता है ।

कला-गुरु ने धार्मिक एवं पौराणिक नगरी काशी की संस्कृति को भी अपने चित्रों के विषय के रूप में लिया है । कला-गुरु ने यथार्थ को अपना विषय बनाया । इनके चित्रों में जहाँ एक ओर बनारस के आकर्षक घाट हैं वहीं इनकी पहचान बन चुकी घाटों पर लगी छतरी फ्रेम में कैद किया गया है । तैल माध्यम तथा मिश्रित माध्यम द्वारा उन्होंने घाटों के साथ ही यहाँ की पूरी संस्कृति को भी उकेरा है ।

बनारस के सांस्कृतिक धार्मिक आध्यात्मिक और कलात्मक भावों को उभारने के लिए चित्रकार घाटों पर अपनी कला साधना करते हैं, जिनकी कृतियों में इन घाटों के गम्भीर चिन्तन को मुखरित होते देखा जा सकता है । कला गुरु ने यहाँ के धार्मिक विश्वासों को महत्व दिया । बनारस के घाटों पर विचरने वाले साधु-संन्यासियों और साधना में लीन संतों को विशेष रूप से दर्शाया है । घाटों पर स्नान करती महिलाओं को अनावृत्त रूप में भी दर्शाया है । जो गंगा में स्नान करती हुई उन बालाओं के समान स्वच्छ और निर्मल हृदय से अपनी माता के सामने अनावृत्त होने में लज्जा का अनुभव नहीं करती हैं । कला गुरु ने घाटों का चित्रण करते समय विशेषतौर से अपनी कल्पना द्वारा रंगों का प्रयोग किए हैं । इनके चित्रण में साधारण विषय-वस्तु का गहन विचार के साथ अभिव्यक्ति के साथ सादृश्यता का अभास होता है ।

घाट पूजा करने जाना एक साधारण-सी प्रक्रिया है, पर इनके चित्रों में जिस प्रकार एक महिला को घाट के किनारे पर वृक्ष की पूजा करते दिखाया गया है तथा उसके चबूतरे पर एक साधु ध्यान में लीन है पूरी भारतीय संस्कृति को प्रस्तुत करता है । इन चित्रों में आस्था की भी

झलक है । वट वृक्ष की पूजा करती महिला की आकृति में वृक्ष में बँधे रंगीन धागों के साथ नीले चटख रंग की साड़ी में लिपटी महिला ने पूरी संस्कृति को दर्शाया है । ध्यान में लीन साधु के शरीर पर सफेद रंग की धोती लिपटी है । चबूतरे पर दो लाल रंग के झण्डे तथा एक झण्डा वट वृक्ष के ऊपर लगा है । पृष्ठ भाग में गंगा जी हैं, जिसमें दो नावें हैं । एक नाव पर आदमी है तथा गंगा के ऊपर कुछ पक्षी विचरण कर रहे हैं । (चित्र सं. 3-4)

धार्मिक व पौराणिक नगरी काशी की पहचान एक दूसरे चित्र में घाटों की छतरिया गंगा तट पर बने फर्श के ऊपर बैठा साधु मंदिर पेड़, झण्डे तथा गली में एक साँड़ विचरण कर रहा है इसमें नाव को भी दिखाया गया है । एक नीले रंग की साड़ी में लाल रंग की ब्लाउज पहने महिला हाथ में पूजा थाल लिए पूजा करके वापस जा रही है और उड़ते हुए पक्षी तथा उगता हुआ सूर्य इस चित्र में चार चाँद लगा देता है । इस पूरे चित्र में सपाट रंगों का प्रयोग है । (चित्र सं. 7-8) इसी प्रकार के अन्य चित्र भी घाटों और काशी की संस्कृति तथा पूरे भारत की धार्मिक व पौराणिक मान्यताओं को दर्शाते हैं । (चित्र सं. 9-13)

भारतीय संस्कृति ने स्तर भेद के साथ अनेक रूपों में उस दिशा का अनुसरण किया है और भावी मानव संस्कृति को व्यावहारिक रूपाकार प्रदान किया है । कला के क्षेत्र में यह आवश्यक नहीं रहा कि वह साधनात्मक ही हो । वह अनुभवात्मक हो तथा नयी दिशा में गतिशील हो सके यही उसकी प्रमाणिकता के लिए पर्याप्त होता है । कला-गुरु का कहना था कि कलाकार के रूप में मैं संस्कृति को निरन्तर अन्वेषणशील मानता हूँ । संस्कृति कोई जड़ वस्तु नहीं है, जिसका केवल अनुसरण होता है । वस्तुतः संस्कृति भी मनुष्य की तरह सृजनधर्मी और सृजनकर्मी होती है, तभी वह जीवन के लिए प्रेरक हो पाती है । यदि धर्म

समाज और साहित्य तीनों को संस्कृति के किसी एक बिन्दु पर लाना है तो प्रेरणा ही उसका आधार हो सकती है ।

संस्कृति में प्रेरणा और प्रवृत्ति दोनों सन्दर्भ में एकाकार हो जाते हैं; इसलिए वह जीवनव्यापी प्रभाव दे पाती है और युगान्तरकारी हो जाती है । मेरी दृष्टि में इतिहास ही कला और साहित्य का नियामक नहीं होता वरन् यह दोनों भी उसका नियमन करते हैं; क्योंकि इसके बिना इतिहास का बोध भी नहीं होता ।

जब कोई कलाकार पौराणिक चित्रों की रचना करने के लिए कल्पना करता है तो पौराणिक देवता शिव जरूर उसके चित्रों में प्रत्यक्ष या प्रतीक रूप में शामिल होते हैं । कला गुरु ने भी पौराणिक चित्र सं. 16-17 में शिवलिंग को अनेक रूपों में प्रस्तुत किये हैं । शिवलिंग के ऊपर सर्प लिपटे हैं, कभी शिवलिंग हरे रंग से तो कभी काले रंग से बनाया गया है । शिवलिंग में दण्ड लाल रंग से एवं ऊपर का भाग तृतीया के चन्द्रमा की तरह काले रंग से दिखाया गया है । शिवलिंग पर तीन धारियां भी बनायी गयी हैं । चित्रों को देखने के बाद किसी भी व्यक्ति का आध्यात्म की ओर झुकाव होना स्वाभाविक है ।

भारतीय धार्मिक मान्यता के अनुसार जब कोई कार्य शुरू किया जाता है तो धार्मिक व पौराणिक देवता भगवान् गणेश जी की पूजा से शुरू किया जाता है तो वह किसी कलाकार की कल्पना से कैसे छूट सकते हैं । कला गुरु आर. एस. धीर ने कम्प्यूटर चित्र बनाते समय भगवान् श्री गणेश की बहुत बड़ी शृंखला बनायी जो अपने आप में एक अलग पहचान रखती है । इसी प्रकार के एक चित्र जिसमें श्री गणेश जी को एक हाथ में त्रिशूल एक हाथ में पुष्प तथा तीसरे हाथ में एक आयुध तथा चौथे हाथ में एक बहुत बड़े सर्प को पकड़े हैं सर्प की पूँछ पृष्ठ भाग में बने शिवलिंग को लपेटे हुए हैं । इसमें गणेश जी पीले रंग की धोती पहने हैं,

माथे पर लाल रंग का तिलक लगाये तथा सर के ऊपर चन्द्रमा विराजमान हैं । वहीं बगल में एक दूसरा शिवलिंग नीले रंग का है जिसमें सफेद रेखाओं से धन बनाया गया है तथा चारों ओर तांत्रिक प्रतीक की तरह चिह्न बने हैं । यह चित्र बरबस ही दर्शक को आध्यात्म की सैर करता है । (चित्र संख्या 18)

कला-गुरु ने इसी प्रकार की एक धार्मिक कल्पना के बल पर गणेश जी का विश्व भ्रमण नामक चित्र में भगवान गणेश को अपने वाहन चूहे पर बैठकर पूरी पृथ्वी का चक्कर लगाते हुए दिखाए हैं । इसमें भी गणेश जी एक हाथ में सर्प लिए तथा अन्य में आयुध व पुष्प लिए हैं । पृष्ठ भाग में नीले रंग से आकाश व सफेद रंग के प्रयोग द्वारा पहाड़ों का आभास दिया गया है । (चित्र सं. 19) इसी प्रकार की धार्मिक व पौराणिक विषय पर कला गुरु की अनेक प्रकार की कल्पना को अनेक रूपों में चित्र संख्या 20 से 32 तक देखा जा सकता है ।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि कला-गुरु के कला-जीवन में धार्मिक व पौराणिक विषयों का एक अलग महत्त्व तथा योगदान है जो भारतीय सभ्यता व संस्कृति की एक उत्कृष्ट झलक प्रस्तुत करते हैं ।

सामाजिक चित्र (व्यंग्य चित्र)

मनुष्य में अन्तरव्याप्त अजस्त्र रचनाधर्मिता जिस सृष्टिव्यापी शाश्वत उर्वरता को महानाश की अदम्य शक्ति से वरीयता देती है, वह जीवन तत्त्व ही उसकी मूल चेतना का संवाहक है । जीवन रूप में उसकी सत्ता परिष्कृत न होकर स्वयंभू है, अर्थात् उसकी मान्यता के लिए किसी परत प्रमाण की अपेक्षा नहीं होती । मनुष्य अपने अस्तित्व को निषेध करके किसी निरपेक्ष सत्ता के रूप में स्वीकार्य नहीं हो सकता है ।

कला को समाज का दर्पण कहा जाता है, ऐसी स्थिति में यदि कोई कलाकार अपने जीवन में सामाजिक विषय का चुनाव न करे ऐसा हो ही नहीं सकता । कलाकार की नजर अपने आस-पास के सामाजिक वातावरण, अपने प्रदेश अथवा देश का सामाजिक वातावरण और वर्तमान में संचार क्रान्ति के युग में पूरे विश्व का सामाजिक वातावरण प्रभावित कर रहा है । समाज में व्याप्त बुराइयों को समाज के सामने प्रस्तुत करके कलाकार समाज में सुधार का एक प्रयत्न करता है । पूरे विश्व की किसी भी घटना पर उसकी निगाहें रहती हैं और महत्त्वपूर्ण विषयों पर वह कला की भाषा द्वारा अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है ।

प्रत्येक कलाकृति कुछ न कुछ कहती है । कभी-कभी शब्द नहीं सिर्फ एक इमेज ही सब कुछ कह जाती है । प्रत्येक अच्छी कलाकृति मनुष्य को ऊपर उठाती है, 'प्रवोक' करती है, हो सकता है वह आज के बारे में कुछ न कह रही हो, पर वह आने वाले समय के बारे में भविष्य में होने वाली अदृश्य घटनाओं के बारे में कोई संकेत कर रही हो या आपके विचारों को उद्वेलित कर रही हो । कला का अस्तित्व अपने-आप में स्वतन्त्र है । यह मनुष्य और समाज को आनन्द की अनुभूति कराती है । शास्त्रीय गायन या संगीत मनुष्य या समाज में परिवर्तन नहीं ले आता । वे तो केवल हमें 'एलीवेट' करते हैं । हाँ यदि सुधार या दिशा देने का कार्य कला द्वारा होता है तो वह बहुत सूक्ष्म और सहज ढंग से होता है ।

सृजन कार्य के लिए यह आवश्यक है कि वह वास्तविकता को 'डिसप्लेस' करे और रीप्लेस भी करे । कला का अर्थ है मौलिकता, एक परदे को परदे के रूप में नहीं बल्कि मौलिक रूप में उसे चित्रित करना । कला हमारी यादों की तहों में जन्म लेती है । इसका जन्म हमारे विभिन्न अनुभवों के आधार पर होता है । कला कलाकार के आंतरिक संसार के बारे में भी बात करती है ।

आज का युग समत्व पर बहुत बल देता है; क्योंकि वह आंतरिक रूप से विषमता से नितान्त आक्रान्त है । प्राचीन और मध्यकालीन धार्मिक युगों की ही नहीं वरन् आधुनिक युग की सामाजिक आर्थिक विषमता भी उसे चैन से बैठने नहीं देती । कलाकार हमेशा इस विषमता को दूर करने के लिए अपने चित्रपट का भी प्रयोग करता है । कलाकार की प्रेरणा शक्ति एक विमूढ़ और अत्यन्त व्यक्तिगत विवशता है, जिसके कारण वह संसार की सत्यता को चित्रित करने को बाध्य होता है । कला गुरु आर. एस. धीर की मानवीय सत्तात्मक सृजनात्मक शक्ति उन्हें यह सोचने के लिए बाध्य करती है कि मानव शरीर में भावनात्मक विचार के रूप में यह शक्ति विद्यमान रहती है तथा उसे सृजन की प्रेरणा प्रदान करती है ।

श्री आर. एस. धीर का सामाजिक विषय के चित्रों पर विचार था कि— जड़ता अथवा सामाजिक गिरावट अपने आप में बहुत अर्थपूर्ण विषय है, पर मैं किसी एक अर्थ से जुड़ा नहीं रह सकता । यह दर्शक पर निर्भर करता है कि वह किसी विषय को कैसे और किस दृष्टि या विचार से देखता है । मैंने किसी व्यक्ति या पुस्तक से प्रभावित होकर न तो पेंटिंग बनायी है और न ही कोई विचार पहले से निर्धारित किया है । भारतीय दर्शन के बारे में सभी जानते हैं और इसके अन्तर्गत जीवन और प्रकृति के आपसी सम्बन्धों के बारे में काफी कुछ कहा गया है । सामाजिक विषय का चुनांव करते समय मेरे मन में सामाजिक सम्बन्धों की चिन्ता ही प्रमुख है, जिसको मैं अपने चित्रों में दर्शाता हूँ ।

सामाजिक चित्रों के अन्तर्गत वे चित्र आते हैं जो समाज में घट रही घटनाओं पर या समाज की अनुभूतियों को कलाकार जब अपनी भावनाओं या विचारों द्वारा चित्रों में अभिव्यक्त करता है । कला-गुरु आर. एस. धीर के सामाजिक विषय के चित्रों में ग्रामीण जीवन नामक चित्र है जिसमें एक गरीब महिला रात में लालटेन के प्रकाश में दरवाजे की ओर देख रही है ।

ऊपर फूँस की झोपड़ी तथा एक भैंस है । इस चित्र में आपने गरीब आदमी का जीवन अंधकारमय होता है और प्रकाश की आस में रहता है कि उसकी गरीबी मिट जाय एक ऐसी किरण की खोज में रहता है (चित्र सं.-35) यह वाश तकनीक द्वारा बना है । ऐसा ही एक दूसरा चित्र जिसमें आज भारतीय समाज की सबसे बड़ी कुरीति दहेज पर बना है इसमें एक ऐसी लड़की को बनाया गया जिसका विवाह दहेज के अभाव में नहीं हो रहा है और वह कुण्ठित मानसिकता के लिए अपने भाग्य को देख रही है । इस चित्र को देखने के बाद कोई भी दर्शक सहज रूप से उस लड़की की पीड़ा को समझ जायेगा (चित्र सं.-36 'दहेज') यह चित्र कोलाज-पद्धति से बना है ।

भारतीय समाज में तिरस्कृत या निम्न स्तर से देखी जाने वाली विधवाओं पर भी कला-गुरु ने 'राड़-साढ़-सीढ़ी संन्यासी' नामक काशी में प्रचलित कहावत पर भी चित्र बनाये । इसमें दो विधवाओं को बहुत ही दयनीय स्थिति में बनाया है । उनके पृष्ठ भाग में जीवन के उथल-पुथल रूप को विभिन्न प्रकार के संयोजन और टूटे-फूटे घर के रूप में दिखाया गया है । एक महिला अधीरता से खड़ी है और दूसरी एक हाथ उठाकर समाज को अपनी स्थिति बयान कर समाज के नग्न रूप को प्रस्तुत करती है । (चित्र सं.-125) यह चित्र तैलरंग में बना है इसमें चरवाहे के जीवन का सजीव चित्रण दिखाई देता है । चरवाहे के हाथ में एक छड़ी है और बकरियाँ चर रही हैं पृष्ठ भाग रमणीय और सुन्दर है । (चित्र सं.-89)

प्रो. धीर का कहना था कि बीच में एक समय ऐसा भी आया था जब उन्होंने सामाजिक दायित्वों को महत्त्व दिया और ब्रश को हथियार की तरह उपयोग किया । इसके बारे में उनका मानना है कि मैंने राजनीतिक चेतना के साथ जो चित्र बनाये थे उनमें किसी प्रकार की 'झंडेबाजी' व 'स्लोगन' नहीं थे । इस प्रकार के बने चित्रों ने भारतीय कला के ऐतिहासिक

आन्दोलन 'समीक्षावाद' में अपनी मजबूत और धमाकेदार उपस्थिति दर्ज कराई । इस प्रकार के व्यंग्य चित्रों में एक चित्र जिसमें किसानों को खेतों तक जल पहुँचाने के लिए किस प्रकार भारतीय नेता राजनीति करते हैं इसको दिखाया गया है इसमें ऊपर एक बाध से पानी आ रहा है, लेकिन वह जल किसानों तक नहीं पहुँच रहा है । मछलियाँ व्याकुल हैं, एक स्त्री जल के लिए प्रार्थना कर रही है । बगल में नेताजी हाथ उठाकर आश्वासन दे रहे हैं । एक किसान जिसने धान की रोपाई कर ली है, खेतों में दरारे आ गयी और दूसरे रोपाई का प्रयास कर रहे हैं । एक किसान बाल्टी द्वारा कुएँ से जल प्रवाहित कर रहा है । यह चित्र भारतीय राजनीति की घटिया मनःस्थिति को बखूबी दर्शाता है । (चित्र सं.-38)

इसी प्रकार के चित्र 'चीरहरण' है जिसमें इन्दिरा गाँधी द्वारा लगाये गये आपातकाल के ऊपर है, इसमें इन्दिरा गाँधी को एक वृक्ष पर बैठा दिखाया गया है तथा नीचे सभी भारतीय नेता हैं, जिनके कपड़े वह खींचकर उनको नंगा कर दी और कपड़ों को पेड़ पर टाँग दी । ऊपर कुछ नेता कपड़े के लिए विनती कर रहे हैं नीचे दो नेता आपस में मन्त्रणा कर रहे हैं, छज्जे के ऊपर मोर बैठा है तथा पेड़ के पीछे गाय को दिखाया गया है । यह चित्र भारतीय राजनीति पर एक करारा तमाचा है । (चित्र सं.-82) इसी प्रकार के एक अन्य चित्र में कला-गुरु ने अध्यापकों के ऊपर भी व्यंग्य चित्र का निर्माण किए जिसमें दिखाया गया है कि किस प्रकार आज के अध्यापक अपने कर्तव्यों से मुँह मोड़ रहे हैं (चित्र सं.-39), जबकि कला गुरु स्वयं भी एक अध्यापक थे ।

इस प्रकार यह देखा जा सकता है समाज के प्रति एक कलाकार के कर्त्तव्य को बिना किसी भेदभाव के और समाज के प्रत्येक स्तर पर अपनी नजर और सोच के अनुसार लगभग सभी विषयों को चुना है ।

दृश्य चित्रण

मानव आदिकाल से ही प्रकृति प्रेमी रहा है । प्रकृति मानव की चिर सहचरी रही है एवं उसके आकर्षण का केन्द्र है । सरिता सिन्धु की बाहों में समा जाने के लिए व्याकुल दौड़ती चली जाती है । रूपहली चाँदनी और सुनहरी रश्मियां सरिता की अल्हड़ लहरों पर थिरक-थिरक उसको मोहित करना चाहती हैं । प्रकृति के इस अद्भुत सौन्दर्य को देखकर कलाकार के हृदय से सुकोमल मधुर कलाओं का जन्म होना स्वभाविक है ।

कला-गुरु आर. एस. धीर के सबसे प्रिय विषयों में 'दृश्य-चित्रण' है । जैसा कि सबको ज्ञात है कि चित्रण की यह धारा भी स्वतन्त्र रूप में आधुनिक विचारधारा की ही देन है । कलाकार अपनी रुचि और मनःस्थिति के अनुरूप प्रकृति के विभिन्न दृश्य, अदृश्य और रहस्यात्मक सौन्दर्य को अपने चित्र तल पर उतारने का प्रयास करता है । उत्तर प्रदेश की चित्रकला में कला गुरु को पुनः इस विधा का प्रणेता माना जा सकता है । वैसे तो उन्होंने हिमालय, कुल्लू मनाली और वाराणसी के घाटों के किनारे के दृश्यों का पूर्ण विशेषता लिए चित्रण किया है, जो अत्यन्त जीवन्त है । गाढ़े रंगों को चाकू या तूलिका द्वारा लगाये गये टुकड़ों में गुञ्जयमान से होने लगते हैं, किन्तु उनके दृश्य चित्रों में उत्तर प्रदेश के साधारण ग्रामीण दृश्य भी प्रमुख रूप से हैं । इन दृश्यों में मिट्टी और गोबर की दीवारों से बने घर, हरे-भरे खेत, उनके आस-पास पानी के तालाब, कोमल सुखपूर्ण रंगों और टेक्चर से भरपूर है तथा द्रष्टा को रमणीय आनन्द से भर देता है । कलाकार में अत्यधिक साधारण दृश्यों को सौन्दर्य के प्रभावीकरण से भर देने की योग्यता है । कला-गुरु ने कुछ वृक्षों की कतारों, झोपड़ियों और पानी पर उनके धुधले प्रतिबिम्ब व आकाश में उड़ते हुए बादलों द्वारा गहन विश्रामपूर्ण चित्र निर्माण करने में कुशलता थी । इन्होंने अपने दृश्यचित्रों द्वारा संसार भर के कलाकारों को उत्तर प्रदेश के शान्तिपूर्ण ग्रामीण दृश्यों से परिचय कराया है ।

प्रो. धीर ने अपने चारो ओर के प्राकृतिक दृश्यों के चित्रण की जो परम्परा डाली थी वह आज एक वेगवती धारा के रूप में गतिमान है। दृश्य चित्रण के लिए अधिकतर रमणीय दृश्यों-पर्वत मालाओं, सागर, झीलों बादलों को उचित माना जाता रहा है। यहाँ तक कि फ्रांस के वारविजोन स्कूल और प्रभाववादी कलाकार पेरिस की नगरी से दूर प्रकृति की गोद में दृश्य चित्रण करने जाते थे किन्तु कला गुरु से प्रेरणा लेकर उत्तर प्रदेश विशेषकर लखनऊ और बनारस के कलाकारों ने अपने चारों ओर के साधारण दृश्यों को अपनी कला द्वारा रमणीय बना दिया। कला-गुरु की छत्रछाया में कई श्रेष्ठ कलाकारों का निर्माण हुआ, जिन्होंने उत्तर प्रदेश की कला में दृश्य चित्रण को आगे बढ़ाया।

जिस प्रकार से श्री आर. एस. धीर के गुरु श्री नित्यानन्द महापात्र जी ने जलरंगों में अपने मूल निवास-स्थान उड़ीसा के तटों की उन्मुक्त लहरों और खुले आकाश में उड़ते बादलों व पक्षियों का चित्रण कर प्रकृति की असीमता का आभास दिलाया है। साथ ही उन्होंने अपने आस-पास के दृश्यों विशेषकर कला महाविद्यालय के प्रांगण का रुचिकर दृश्य चित्रण वृक्षों के मध्य घूमती हुई बकरियों और लकड़ी बीनती हुई स्त्रियाँ व चरवाहे और हवा में झूमते हुए वृक्षों के रूप में किया है।[3] उसी प्रकार का प्रभाव आर. एस. धीर के दृश्य चित्रों में देखा जा सकता है।

जलरंग, तैलरंग तथा कम्प्यूटर माध्यम से बने हिमालय तथा ग्रामीण क्षेत्रों के दृश्यचित्र में पृष्ठभूमि में चित्रतल के अधिकतर भाग को आच्छादित करती नीले, बैंगनी तथा सफेद रंग की पर्वत श्रेणी के आगे हरे-भरे या पीली सरसों के लहलहाते हुए खेत दर्शक को अपूर्व आनन्द से भर देते हैं। इस प्रकार के चित्र कलाकार के मानस में बसे उन दृश्यों के प्रतिबिम्ब है जो लम्बे समय से उनके जीवन के भाग थे।

दृश्य-चित्रण को एक नवीन रूप देने में श्री धीर के एक दूसरे गुरु श्री रणवीर सिंह विष्ट के चित्र महत्त्वपूर्ण हैं । लैण्डडाउन गढ़वाल में जन्में इस कलाकार को प्रकृति से प्रेम होना स्वाभाविक था । इसी से उन्होंने पर्वतों का बहुत गतिशील और आन्तरिक भव्यता के साथ चित्रण किया है । धीरे-धीरे उनके पर्वतीय दृश्य चमकदार रंगों, सीमित चौड़े शक्तिशाली तूलिका घाटों में बदल गये । इसके बाद केवल हिममण्डित पर्वत श्रेणियाँ प्रातः या सूर्यास्त के समय अलौकिक प्रकाश का प्रतिबिम्ब बन गयी है । उनके यह पर्वतीय श्रेणी क्रम चित्र अत्यन्त उत्कृष्ट कृतियाँ हैं और केवल उनकी ही नहीं बल्कि उत्तर प्रदेश में दृश्य-चित्रण का शीर्ष बन गयी हैं ।[4]

कला-गुरुओं की दृश्य-चित्रण तकनीक से प्रेरणा पाकर प्रो. आर. एस. धीर ने दृश्य-चित्रण का एक अनोखा रूप हमें अपने चित्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया । उन्होंने प्राचीन ऐतिहासिक-सांस्कृतिक काशी की गलियों और घाटों को अपने चित्रण का विषय बनाया है । इन चित्रों द्वारा कला-गुरु वाराणसी के लुप्त होते हुए ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और प्राकृतिक सौन्दर्य के प्रति अपनी व्यथा दिखाने का प्रयास किये हैं । इस प्रकार की चित्र सं. 4, 7, 9, 10 में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है, जिसमें काशी के घाट, वहाँ की गलियाँ और वहाँ के साँड़ तथा मलिन होती गंगा को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है; जिसमें किस प्रकार काशी की पहचान गंगा और गंगा के घाट गंदे हो रहे हैं और कोई ध्यान नहीं दे रहा है । इसको दिखाने का प्रयास किया गया है । चित्र सं.-124 जो एक बहुत ही मार्मिक दृश्य चित्र है, इसमें मानव किस प्रकार प्रकृति को असंतुलित कर रहा है उसको दिखाया गया है । धरातल पर हल्की हरी घास तो है लेकिन बगल में एक वृक्ष है जो सूख चुका है और नीचे दो आकारों में दो पक्षी अपना अपना घोंसला न बना पाने की अधीरता स्पष्ट रूप से प्रकट करते हैं । यह एक

वास्तविक दृश्य-चित्र है जो किसी भी दर्शक को प्रकृति के बारे में सोचने के लिए मजबूर कर सकता है । इसमें कला-गुरु की कला-कुशलता को बखूबी देखा जा सकता है ।

फ्रान्स के आधुनिक दृश्य चित्रण का जनक क्वाद गैरी लोरा को माना जाता है । उस समय ब्रिटिश के दो प्रमुख चित्रकार कांस्टेबिल और टर्नर थे । जो आज विश्व के सर्वश्रेष्ठ दृश्य चित्रकार माने जाते हैं । उस समय रहस्यात्मक प्रवृत्ति में दो कला धराएँ विकसित हुई— एक प्रकृत्याश्रित, जिसका विकास कांस्टेबिल की कला में हुआ और दूसरी दिव्य-दृष्टि आश्रित जिसे टर्नर की आश्चर्यप्रद योजनाओं में अभिव्यक्ति मिली है ।[5] कला गुरु आर. एस. धीर के दृश्य चित्र भी कभी-कभी इन दोनों कलाकारों की यादों को ताजा कर देते हैं लेकिन कला-गुरु ने दृश्य चित्रण किसी एक माध्यम में न करके बल्कि अनेक माध्यमों में किये; क्योंकि वे प्रयोगवादी कलाकार थे । कला गुरु तो मिश्रित माध्यमों में भी दृश्य चित्र बनाये हैं जो अपने आप में एक अलग प्रभाव पैदा करते हैं ।

दृश्य-चित्रण में कला-गुरु का सबसे प्रिय विषय हिमालय की वादियां थीं । कला-गुरु के हिमालय-चित्रण के विषय यथार्थ रूप में है । आज तक किसी चित्रकार ने हिमालय का चित्रण इतनी पटुता, इतनी गहनदृष्टि और विशेषता के साथ नहीं किया । जिस समय हम इतने विस्तृत भूखण्ड तथा आकाश मण्डल के बहुसंख्यक चित्र देखते हैं उस समय हमारे भीतर मानों हिमांचल की आत्मा प्रवेश करने लगती है और हम उसे देखते हुए तन्मय हो जाते हैं । इन विशाल प्राकृतिक दृश्यों को देखकर हमारे मन में यज्ञों और किन्नरों की क्रीड़ा-भूमि की सहज कल्पना जागृति होती है । इस प्रकार का प्रभाव हम कला-गुरु के हिमालय सीरीज के कुछ चित्र संख्या 40 से 45 में ब्रश व नाइफ स्ट्रोक के साथ देखे जा सकते हैं ।

कला-गुरु ने एक लम्बे समय तक दृश्य-चित्रण को भी अपने कला जीवन में शामिल कर उस क्षेत्र में अपनी कुशल कला का परिचय दिया जो आज युवा कलाकारों के लिए प्रेरणा का विषय रहा है । दृश्य चित्रों में शायद ही कोई विषय उनसे अछूता रहा हो ।

वस्तु-चित्रण

निर्जीव वस्तु के चित्रण को स्टिल लाइफ वस्तु-चित्रण कहते हैं । विभिन्न जड़-वस्तुओं के भिन्न-भिन्न आकारों का चित्रण जिसमें उस वस्तु विशेष का आकार, रंग, रूप कठोरता या कोमलता इत्यादि को जो भी उस वस्तु के गुण हैं, ये सुसज्जित ढंग से संयोजन करते रहे । पाश्चात्य कलाकार सेजा ने सर्वप्रथम आधुनिक चित्रकला में स्टिल लाइफ बनाने की शुरूआत की थी ।[6]

भौतिक सृष्टि की हर वस्तु के आकार सौन्दर्य व उसके आंतरिक स्थायी तत्त्वों का दर्शन करने में सेजा की कला को जो सफलता मिली, वह आधुनिक कला में किसी को नहीं मिली । सेजा की कृतियों में सहज ज्ञान से समस्या को हल करने की सामर्थ्य है । सेजा की चित्रित वस्तुओं में ज्यामितीयता होते हुए वे स्वाभाविक दिखाई देती है । आधुनिक चित्रकारों में सेजा की महानता इसमें है कि उन्होंने सर्वप्रथम नैसर्गिक आकारों के यथार्थ व सम्पूर्ण दृष्टिज्ञान के पीछे जो तर्क शुद्धता है । उसका अविरल परिश्रम व निश्चय के साथ आविष्कार किया । सेजॉ की कला से हम नैसर्गिक आकारों के सौन्दर्य से परिचित होते हैं । इन रहस्यों को हम केवल आँखों से देखकर नहीं जान सकते । इसके लिए सौन्दर्य, प्रेम एवं संवेदन क्षमता के अतिरिक्त तर्क शुद्ध दृष्टिकोण एवं सहज ज्ञान की भी आवश्यकता है ।[7]

सेजॉ के वस्तु-चित्रण की विशेषता के साथ-साथ कला-गुरु आर. एस. धीर के वस्तु-चित्रण में एक नयापन और अलग विशेषता दिखाई देती है । घनरूप को वस्तु पट की समतल

पृष्ठभूमि पर चित्रित करने में क्या विसंगति है इसको कला-गुरु ने सर्वप्रथम अनुभव किया । उन्होंने देखा कि ज्यामितीय दूर दृश्यलघुता के नियमों का पालन करके वस्तु का किसी विशिष्ट दृष्टिकोण से प्रतिरूप बनाया जा सकता है, किन्तु उससे वस्तुकी आकार विशेषताओं का परिचय साक्षात्कार नहीं होता । उन्होंने चित्रों पर मंथन किया कि पट की रूप के बंधन में रहकर कैसे चित्रण किया जाय जिससे वस्तु के सम्पूर्ण आकार का सत्य ज्ञान केवल चित्र को देखने से हो सके । उन्होंने वस्तुकी स्वाभाविक आकार विशेषताओं की रक्षा करते हुए उसको लचीलापन देकर चित्रित करने का निश्चय किया । उन्होंने देखा कि छाया प्रकाश की अपेक्षा, वस्तु की बाह्य सतह की वक्रता का विचार करके रंगों की हल्की व गहरी घटाओं को चुनकर, वक्रता की अनुकूल दिशा में तूलिका से रंगों को थपथपाया जाये तो वस्तु के स्वाभाविक घनत्व का परिणाम दिखाया जा सकता है । चिन्तन के बाद यह ज्ञात हुआ कि इसके लिए सर्वप्रथम वस्तु के सरलीकृत आकार का ज्यामितीय प्रतिरूप देखना चाहिए । वस्तु के आकार को ज्यामितीय रूप देने की आवश्यकता को समझते हुए उन्होंने वस्तु चित्रों को ज्यामितीय रूपों से भी बनाए । जो अपनी एक अलग पहचान रखते हैं ।

जैसे कोई मूर्तिकार छेनी से काटकर पत्थर की प्रतिमा बनाता है, उसी प्रकार कला-गुरु तूलिका के नियंत्रित चापों से रंगों की घटाओं में परिवर्तन करते हुए एकाग्रचित होकर वस्तु को ठोस रूप में चित्रित करते । उनके वस्तु चित्रों में मूर्तियों के समान ठोसपन है, उसका यही कारण है । कला-गुरु का मानना था कि चल वस्तुओं की अपेक्षा अचल वस्तुओं का चित्रण करते समय अधिक एकाग्रता रहती है; क्योंकि अचल वस्तुएँ न कभी थकती न हलचल करती, न अपनी बातों से चित्रकार की एकाग्रता में बाधा डालती है, जिससे कलाकार आकार सम्बन्धी समस्याओं का तूलिका द्वारा हल करने में एकाग्रचित होकर लगा रहता है । कला-गुरु की कला

में निरीक्षण व बौद्धिक विश्लेषण का सफल समन्वय होने से दर्शक दृश्य प्रभाव व रूपतत्त्व दोनों जो उतनी ही तीव्रता से अनुभव कर लेता है । इनकी कला में वस्तु के नैसर्गिक आकर्षण व विशुद्ध आकार-सौन्दर्य के बीच उचित सन्तुलन है । वस्तु के आकार सौन्दर्य के दर्शन पर ध्यान केन्द्रित होते हुए प्रो. धीर ने छाया प्रकाश के प्रभाव को पूर्णरूप से त्यागा नहीं ।

प्रो. धीर के वस्तु चित्रों को देखकर रोकोको शैली के प्रमुख वस्तु चित्रकार शार्दि की भी याद आ जाती है । कलाकार शार्दि ने दैनिक जीवन के उपकरणों जैसे घरेलू पात्र, फल और तरकारियां, टोकरी, मछली, खेल की वस्तुएँ तथा अपने पड़ोसियों का स्थिर जीवन आदि अत्यन्त सामान्य वस्तुओं का चित्रण किया, किन्तु उन्हें बड़े यथार्थवादी ढंग से चित्रित किया है । इसमें उसने जो तकनीक कुशलता दिखाई उससे इसमें अपूर्व सौन्दर्य उत्पन्न हो गया । उसका मन एक बालक समान था जो जीवन की साधारण वस्तुओं में सुन्दरता का अनुभव कर सकता था ।[8]

कला गुरु के वस्तु चित्रों को देखकर सेजॉ और शार्दि के याद के साथ-साथ उसमें एक नयापन भी दिखता है । चित्र सं.-49 में एक मेज के दो तरफ कुर्सिया बनी हैं । मेज सफेद रंग का तथा कुर्सिया काले व ब्राउन रंग में बनी हैं । मेज के ऊपर तीन फल व फल के बगल में एक आकर्षक काँच का गिलास तथा तीन अन्य गिलास अलग-अलग स्थानों पर रखे हैं । दो गिलासों के नीचे प्लेट रखे हैं । मेज पर दो शराब की बोतलें रखी हैं तथा मेज के कोने में एक बहुत ही खूबसूरत फूलों का गुलदस्ता रखा है । यह पूरा एक शराब गृह का दृश्य है । इसमें छाया प्रकाश का भी उत्तम समावेश है । चित्र सं.-50 में वस्तु को बहुत हद तक ज्यामितीय रूप देने का प्रयास किया गया है । इसमें दो बोतलें तथा गोल गमले में कुछ पुष्प बने हैं । इसमें भी छाया को बखूबी दिखाया गया है ।

चित्र सं.-55 में कला-गुरु ने सभी वस्तुओं को ज्यामितीय रूपों में बनाया है । एक मेज, मेज के सामने एक कुर्सी, कुर्सी पर एक छड़ी है तथा कुर्सी के कोने पर नेताओं की टोपी टँगी है । मेज पर एक गुलदस्ता है जिसमें टहनियाँ तो हैं, लेकिन उसमें न तो पत्ते हैं और न ही फूल हैं । यहाँ भी कला गुरु ने समाज को ध्यान में रखा है । मेज के एक कोने में प्लेट में फल रखा है । मेज पर कुछ बोतल गिरी तथा एक जग भी है । पीछे दीवार पर एक दृश्य चित्र टँगा है । इसको देखकर लगता है कि यह किसी भारतीय नेता का घर है । यहाँ एक व्यंग्य भी है कि नेताओं के घर में गुलदस्ते के फूल भी सूख जाते हैं । चित्र. सं.-51 में कला-गुरु का एक प्रयोगवादी विचार देखने को मिलता है । इसमें पूरे चित्र को चार भागों में बाँटकर बनाया गया है । दो भाग बड़े तथा दो छोटे हैं । पाँच बोतलें खड़ी एक गिरी तथा चार फल मेज पर हैं । कला गुरु के वस्तु-चित्रों के नये प्रयोग उनके विचार और रंगों को हम चित्र सं.-52 से 65 को देखकर समझ और सोच सकते हैं । कला-गुरु ने वस्तु-चित्रण के क्षेत्र में भी अपनी उत्तम सोच और कार्य-कुशलता का परिचय दिया है ।

अन्य

प्रो. धीर के कला-जीवन को यदि देखा जाय तो शायद ही कोई ऐसा विषय होगा जो उनकी आँखों से बच पाया हो । इनके कला-जीवन में जितनी तकनीक की विविधता है उससे कहीं ज्यादा विषयों की विविधता है । धार्मिक पौराणिक सामाजिक-चित्र, दृश्य-चित्र, वस्तु-चित्र प्रुमख विषय क्षेत्र रहे हैं, लेकिन इसके अतिरिक्त जैन चित्र संयोजन, घाट सीरीज तथा धार्मिक प्रतीकों के चिह्न प्रमुख हैं ।

श्री आर. एस. धीर जब एम. एफ. ए. की पढ़ाई कर रहे थे, उस समय वे अध्यापन-कार्य भी कर रहे थे । एम. एफ. ए. की पढ़ाई प्रसिद्ध शिक्षक प्रो. रामचन्द्र शुक्ल के देख-

रेख में पूरा किए । जब मैं कलाकार प्रो. रामचन्द्र शुक्ल जी से मिला तो उन्होंने कला-गुरु के बारे में बताया कि एम. एफ. ए. में मैंने उनको चित्रण का विषय 'जैन-चित्र' दिया था । उन्होंने बताया कि मेरी आशाओं के अनुरूप उन्होंने जैन-चित्र को बहुत मनोयोग से बनाया और वे चित्र उनकी यात्रा का एक प्रमुख अंग बन गये ।

चित्र सं.-66 जो एक जैन तकनीकी चित्र हैं, इसका अवलोकन किया जाय तो हम देखेंगे कि कला-गुरु ने किस बारीकी से चित्रों का संयोजन किया है । प्रमुख विषय को चित्र के मध्य में रखकर बनाये हैं तथा सबसे प्रमुख आकृति को बड़े में बनाए हैं । नाव को एक पत्ती का रूप दिया गया है । इसके आगे एक छोटी नाव पर दो सीट पर दो लोगों को बैठे बनाया गया है । पीछे दो छोटी-छोटी नावें हैं । एक पर एक आदमी बैठा है तथा दूसरे पर कई आदमी बैठे दर्शक दीर्घा में अनेक प्रकार के अनेक आदमी बैठे हैं तथा दूसरे पर कई आदमी बैठे दर्शक दीर्घा में अनेक प्रकार के अनेक आदमी बैठे हैं । यहाँ भी वे काशी के घाटों की छाप छतरी को नहीं छोड़ पाए और इसमें भी घाटों की छतरियों को यथास्थान समायोजित किये हैं । रंग सज्जा बहुत ही रमणीय और आकर्षक है जो किसी भी दर्शक को बरबस ही अपनी ओर खींच लेती है ।

इसी प्रकार चित्र सं.-67 भी एक प्रमुख जैन तकनीकी चित्र है इसमें महिला और पुरुष को लोक-चित्रों की तरह बनाया गया है । इसमें जैन-धर्म के झण्डे को विभिन्न स्थानों पर समायोजित किया गया है । अनेक प्रकार जैन-धर्म के आयुध भी प्रतीकों के रूप में विभिन्न स्थान पर समायोजित किया गया है । चित्रों में बहुत सूक्ष्म रेखांकन बड़ी कुशलतापूर्वक बनाया गया है । इसमें मिश्रित माध्यम का एक बहुत ही उत्कृष्ट नमूना देखा जा सकता है ।

इसी प्रकार प्रो. धीर ने क्षेत्रीय मान्यताओं पर आधारित पर्व का भी चित्रण-कार्य किया। इस प्रकार के सबसे प्रमुख चित्र 'बुढ़वा मंगल' है। इस बुढ़वा मंगल का काशी में बहुत ही महत्त्व है और इस समय होने वाले समारोहों की सभी झाँकियों को मिलाकर एक उत्कृष्ट चित्र बनाया (चि. सं.-71)। इस चित्र में घाटों की पहचान वहाँ की छतरी को भी बनाया गया है। यह चित्र वाश तकनीक में बना है।

इसके अतिरिक्त श्री धीर के चित्रण विषयों में समाज में व्याप्त बुराइयों, समाज के धनिक वर्ग द्वारा किस प्रकार कमजोर वर्ग का शोषण किया जाता है। समाज में विधवाओं की दयनीय स्थिति प्राकृतिक असन्तुलन तथा धार्मिक प्रतीक भी कला गुरु के चित्रों का विषय रह चुके हैं। धार्मिक प्रतीक में शिव लिंग केवल सर्प त्रिशूल मंत्र स्वास्तिक आदि प्रकार के हैं।

●

सन्दर्भ

1. समकालीन कला, नवम्बर 1987 / मई1988, अंक 9-10, पृ. 59
2. कला विलास, अग्रवाल आर. ए., पृ. 1
3. स्वातन्त्रोत्तर कला, उत्तर प्रदेश के विशेष सन्दर्भ में, पृ. 39
4. स्वातन्त्रोत्तर कला, उत्तर प्रदेश के विशेष सन्दर्भ में, पृ. 40
5. परिचम की चित्रकला, अशोक, पृ. 225
6. कला सैद्धान्तिक, नायक लक्ष्मीनारायण, पृ. 16
7. आधुनिक चित्रकला का इतिहास, शाखलकर रवि, पृ. 88
8. पश्चिम की चित्रकला, अशोक, पृ. 202

●●

अध्याय पंचम

प्रो. धीर के चित्रों का कला पक्ष/ तकनीकी

5.1 वाश की तकनीकी

5.2 कोलाज तकनीकी

5.3 टेम्परा तकनीकी

5.4 जलरंग तकनीकी

5.5 मिश्रित तकनीकी

चित्रकला में तकनीक का अपना एक अलग ही महत्त्व है । विश्व के अनेक कलाकारों ने नयी-नयी तकनीक की खोज की और उसको अपने चित्रों में प्रयोग में लाये । चित्रण के लिए अनेक प्रकार के चित्रपट, माध्यम और नयी-नयी तकनीक का प्रयोग होता रहा है । प्रो. आर. एस. धीर ने भी अनेक माध्यमों और तकनीकों का प्रयोग किया । जो आज के युवा कलाकारों को उत्प्रेरित कर रहा है । कला-गुरु रेखांकन शुरू करने से पहले अपने चित्रपट को ध्यान से देखते तथा बाद में रेखांकन आरम्भ करते थे । अपने कला मार्ग के आरम्भ में एक रेखांकन बनाते थे अर्थात् चित्र शुरू करने से पहले एक छोटा ले आऊट तैयार कर लेते थे । उसके बाद चित्रपट पर कार्य करना आरम्भ करते थे । अपने कला-जीवन के अन्तिम समय में कभी-कभी बिना ले आऊट के भी चित्रण करते रहे । उन्होंने मानव-शरीर का जो रेखांकन किया है, वो कल्पना से नहीं वरन् साक्षात् देखकर बनाया तथा लगातार रेखांकन व अध्ययन से अपने द्वारा रचित आकृति की अलग पहचान बनाई है । वे कहते थे कि प्रकाश का प्रभाव फोटोग्राफी से अधिक होता है, चित्रकला में इसका उपयोग उतना प्रभावी नहीं बन पाता है । रंगों का चयन चित्रकला की सबसे बड़ी विशेषता है वे कहते थे कि बहुत अधिक तथा भड़कीले रंगों की उतनी जरूरत नहीं है, दो-तीन रंगों के प्रयोग से भी अच्छे चित्र बनाये जा सकते हैं ।

श्री आर. एस. धीर कैनवास पर रेखांकन चारकोल से करते थे; क्योंकि चारकोल द्वारा बनी रेखाओं को सरलता से बिना दाग या गंदगी के साफ किया जा सकता है । इसी प्रकार वाश के लिए रेखांकन हल्की पेंसिल द्वारा करते तथा कभी-कभी बिना रेखांकन किए ही रंगों का प्रयोग भी करते थे । रेखांकन करने की शुरूआत से अन्त तक कला-गुरु अनेक बार अपने द्वारा बनायी गयी आकृति पर गहराई से विचार करते थे, यदि उनके मन में बदलने की इच्छा

होती थी तो उसे बिना संकोच बदल देते थे । उनकी रेखाओं की दक्षता और शरीर रचना शास्त्र की समझ से कला प्रेमी बहुत प्रभावित हुए । कला गुरु अपने चित्रों में प्रयुक्त विभिन्न रंगों का आपसी तालमेल इस प्रकार करते थे कि देखने वाला दंग रह जाता था । उनके चित्रों में प्रयुक्त विविध रंग प्रयोग की दृष्टि से सम्बद्ध दिखते हैं ।

प्रो. आर. एस. धीर अपने चित्रों में रंगों के हल्के व गहरे प्रयोग द्वारा वस्तुओं में त्रिआयामी व स्थान की दूरी का आभास कराने का सफल प्रयास कर चुके हैं । इसे एरियल पर्सपेक्टिव भी कहते हैं । उन्होंने अपने दृश्य-चित्रों में आगे के भाग में गहरे रंग लगाकर व शेष उसके पीछे के भाग में उस प्रयुक्त रंग से पतले व हल्के रंग लगाकर दृश्य को इस प्रकार चित्रित करते थे कि चित्रित दृश्य इतना सजीव लगता कि देखने वाले को सचमुच उसके होने का भ्रम हो जाता है ।

कला-गुरु जल-रंग, तैल-रंग, ड्राई पेस्टल, एक्रेलिक, खनिज रंग आदि अनेक माध्यमों तथा तकनीक में कार्य अपनी इच्छा तथा समय की माँग के अनुसार करते थे । जैसे कि कम समय में अधिक चित्र बनाने के लिए एक्रेलिक रंग का प्रयोग करते; क्योंकि ये जल्दी सूख जाते तथा इन्हें जल-रंग व तैल-रंग दोनों प्रकार के भाव व गुण दिखाने के लिए प्रयोग करते थे । उसी प्रकार खनिज रंगों आदि का प्रयोग किया ।

श्री धीर अपनी तूलिका की सहायता से चित्र के विशिष्ट भाग पर रंग या टेक्चर के विशिष्ट प्रभाव के लिए तूलिका या नाइफ को असाधारण ढंग से चलाते थे जिससे कृति में उस क्षेत्र का प्रभाव तूलिका के परम्परागत व अपरम्परागत प्रयोग के कारण समस्त कलाकृति के प्रभाव को बढ़ा देता था, वे प्रायः कलाकृति के गुणों में वृद्धि के लिए ऐसा करते थे । आपने

प्रायः अपने चित्रों में छाया तथा प्रकाश के सन्तुलन अपनी चित्र योजना में सफलता के सन्दर्भ में करते थे; क्योंकि चित्रों में छाया तथा प्रकाश द्वारा नाटकीय व समयानुकूल प्रभाव पैदा करने में सहायता मिलती है । दृश्य चित्रण करते समय वे कहते थे कि मुझे प्रकाश से खेलना पसन्द है, इसलिए मैं चित्र प्रकाश के अनुसार बनाता हूँ । बदलते हुए प्रकाश की चमक और रंग के अध्ययन पर कला गुरु विशेष बल देते थे ।

कलाकृति की रचना में प्रयुक्त अनेक दृष्टिगत तत्त्वों को सुव्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करना भी एक कला है जो उनके चित्रों में देखा जा सकता है । संयोजन के द्वारा उनकी कला के अंकन में प्रभाव व रमणीयता उत्पन्न होती है तथा उनकी आकृति में सन्तुलन का गुण उत्पन्न हो जाता है । चित्रों के प्रमुख भागांशों पर अधिक चमकदार रंगों का प्रयोग कर चित्रण करते थे, प्रायः यह चित्र के उन्हीं भागों पर चित्रण करते थे जहाँ चित्रित वस्तु की सतह प्रकाश का शोषण नहीं करती और प्रकाश वहाँ से परावर्तित होता था । तैल चित्रों में उन्होंने यह कार्य नाइफ द्वारा रंग के पैच लगाकर किए हैं । कला गुरु बदलते हुए प्रकाश की चमक और रंग के अध्ययन पर विशेष बल देते थे और कभी-कभी अकेले में संगीत के साथ दिन व रात दोनों समय चित्रण करते । इस कारण उन्हें प्रकाश व रंगों की विभिन्न विशेषताओं और प्रभावों का बहुत अच्छा ज्ञान था ।

प्रो. धीर की कलाकृतियों में एक प्रकार का आकर्षण है, जो दर्शक को अपनी ओर खींचता है । कला-गुरु जब कार्य शुरू करते तो उसका छोटा ले आऊट बनाकर देखते, उसमें भली-भाँति सब नियंत्रित करते । चित्रपट पर कार्य करते हुए कुछ गलत हुआ तो हार नहीं मानते और दूसरा बनाते थे । हमेशा धैर्य और मेहनत से कार्य किया । आकार को तोड़कर

उसकी पुर्नरचना करना अपने आप में एक कठिन कला-शैली है । इस कार्य को इन्होंने बड़े आत्मविश्वास के साथ किया, इसकी वजह से चित्रों में एक अद्‌भुत वातावरण का निर्माण होता है और यही उनके चित्रों की मूल शक्ति बन गयी ।

श्री धीर का सपना जन-साधारण को कला के उच्च स्तर तक उठाने तथा उसमें सौन्दर्य दृष्टि उत्पन्न करने का था, जिसके अभाव में न भावनात्मक अध्ययन हो सकता है और न आनन्द की प्राप्ति हो सकती है । इसके अभाव में शारीरिक और मानसिक विकार भी उत्पन्न हो सकते हैं ।

कला-गुरु इस वाक्य **'कला कला के लिए है'** के विरोधी रहे । वे अपने आपको किसी प्रकार की छूट देने के आदी नहीं थे । इनमें अहंकार का नाम नहीं था । अपनी कलाकृति को नाम देने के लिए उन्होंने कोई सिद्धान्त या नियम नहीं बनाये । इस पथ पर आगे बढ़ते हुए लगातार ऊँचाइयों को छूते हुए बिना विश्राम किये आगे बढ़ते रहे । आज कला-गुरु के चित्र बहुत लोकप्रिय हो चुके हैं; क्योंकि उनकी कला सभी लोगों के भावों से मिलती-जुलती है जो कि धार्मिक व आस-पास के विषयों से सम्बन्धित है ।

वाश की तकनीक

उत्तर प्रदेश की कला में वाश-शैली में चित्रण उसकी प्रमुख पहचान है । स्वतन्त्रता पूर्व जब असित कुमार हाल्दार लखनऊ कला महाविद्यालय के प्राचार्य बने, तब से उत्तर प्रदेश में वाश शैली की नींव पड़ी थी । इनके शिष्य बद्रीनाथ आर्य और सुखवीर सिंह सिंघल ने इस शैली का इतना विकास किया कि आज उनके चित्र उत्तर प्रदेश की चित्रकला का प्रतिनिधित्व

करते हैं । इन कलाकारों ने अधिकतर मानवीय आकृतियों के निरूपण द्वारा ही अभिव्यक्त की है ।[1]

बंगाल से इस प्रकार एक नवीन कला जागरण की लहर तो फैली परन्तु इसकी कदाचित कल्पना नहीं की जा सकती थी कि इतने कम समय में इसका इतना विस्तार होगा । इस नवीन जागरण के साथ ही भारतीयता और नितान्त भारतीयता पर अधिक बल दिया जाने लगा जो सदैव आलोचना का एक विषय रहा । परन्तु ज्यों-ज्यों देश में कला विद्यालयों की स्थापना होती गयी त्यों-त्यों इस शैली का प्रचार-प्रसार होता गया । इस स्कूल को श्री हैवेल के कारण अंग्रेजी सरकार ने भी प्रोत्साहन और संरक्षण प्रदान किया । अंग्रेजी सरकार ने बंगाल स्कूल के कई चित्रकारों को प्राचार्य या शिक्षक नियुक्त करके विभिन्न प्रान्तों के आर्ट स्कूलों में भेजा । जहाँ-जहाँ बंगाल स्कूल के चित्रकार पहुँचे वहाँ-वहाँ अपना कार्य क्षेत्र बनाते गये । बंगाल स्कूल के जो चित्रकार इधर-उधर गये उनमें कुछ चित्रकारों के नाम उल्लेखनीय हैं । स्व. नन्दलाल वसु शान्ति निकेतन में कला विभाग के अध्यक्ष रहे । स्व. असित कुमार हाल्दार और सामेन्द्र नाथ गुप्त ने क्रमशः लखनऊ और लाहौर के सरकारी आर्ट स्कूलों में अध्यक्ष पद को ग्रहण किया । वेंकटप्पा मैसूर और शैलेन्द्रनाथ डे जयपुर कला विद्यालयों में स्थापित हुये । इसी प्रकार देवी प्रसाद राय चौधरी मद्रास के सरकारी आर्ट स्कूल में अध्यक्ष बने । स्व. शारदा चरण उकील ने दिल्ली में शिक्षण आरम्भ कर दिया और क्षितेन्द्र मजूमदार इलाहाबाद विश्व-विद्यालय की 'रुचिकर' कक्षा में चित्रकला का प्रशिक्षण करते रहे ।[2]

लखनऊ कला महाविद्यालय में जब स्व. असित कुमार हाल्दार प्राचार्य बनकर आये तो वहाँ भी पश्चिम की कलाओं की नकल पर आधारित कला शिक्षा चल रही थी । इन्होंने वहाँ

आकर एक नयी और भारतीयता से ओत-प्रोत तथा वाश तकनीकी में सिद्धहस्त शिष्य-मण्डली का निर्माण किया जिसमें से एक प्रमुख शिष्य भी बद्रीनाथ आर्य भी थे । असित कुमार हाल्दार के जाने के बाद श्री बद्रीनाथ आर्य अध्यापन कार्य के लिए लखनऊ कला महाविद्यालय में नियुक्त हुए ।

श्री ब्रदीनाथ आर्य ने भी वाश तकनीक को अपने से आगे के युवा कलाकारों के बीच लोकप्रिय बनाने का कार्य किया । इनके शिष्य भी वाश तकनीकों में पारंगत हुये । लेकिन इस तकनीक को सबसे अधिक और व्यवस्थित ढंग से जो कलाकार आगे बढ़ाया और वाश तकनीकी के क्षेत्र में अपने आप को स्थापित किया उस कलाकार का नाम श्री रघुवीर सेन धीर (आर. एस. धीर) है । कला गुरु धीर ने वाश की बारीकियों को अपने गुरु श्री बद्रीनाथ आर्य से सीखकर उसको एक विशिष्ट स्थान उत्तर प्रदेश में दिलाया । इस वाश तकनीक में कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व कागज पर हल्का रेखांकन कर लेते थे इसके बाद कागज को पानी में भिगोकर समतल बोर्ड या पटरे पर सुखाकर चित्र की सीमा रेखाओं को स्थायी बना लेते थे । इस प्रकार सीमा के स्थायीकरण के पश्चात् चित्रकार चित्र के अनेक भागों में रंग भर लेते थे । फिर कागज को पुनः पानी में डुबोकर सपाट पटरे पर सुखाकर चित्र के रंग को स्थायी कर लेते जिससे कि ऊपर से रंग की सपाट वाश लगाने पर यह रंग कागज से छूट न जाय । इस क्रिया के पश्चात् इच्छित वातावरण उत्पन्न करने के लिए एक या अनेक रंगों को सम्पूर्ण चित्र के ऊपर पारदर्शी ढंग से बहा देते थे या वाश लगा देते थे । इससे सम्पूर्ण चित्र में चिकनापन, धुँधलापन और रंग का एक-सा प्रभाव आ जाता था । परन्तु चित्र में ग्रे रंगत (टोन) आ जाती थी । इसके पश्चात् चित्र की आकृतियों को उभारने के लिए रेखांकन को पुनः कत्थई या किसी

अन्य रंग से उभार देते थे । साथ ही चित्र के किसी भाग को पारदर्शी या सफेद मिश्रित अपारदर्शी (ओपेक) रंग के प्रयोग से आवश्यकतानुसार उभार देते थे । यह प्रयोग कम ही किया गया है । High Light देने के लिए रंग को नुकीले उपकरण से खुरचा करते थे ।

श्री आर. एस. धीर के एक सबसे प्रिय शिष्य श्री विनय अग्रवाल जी से जब मैंने कला-गुरु की वाश तकनीकी के बारे में पूछा तो उन्होने इस प्रकार बताया— "गुरु जी वाश करते समय सबसे पहले कागज (हैंडमेट, ह्वाटमैन, कैण्ट इत्यादि) पर हल्के रेखाचित्र बनाकर उसे पानी में डुबाकर करीब आधा घण्टे तक छोड़ देते थे ताकि पूर्णरूपेण कागज गीला हो जाय । इसके बाद कागज को पानी से उठाकर ड्राइंगबोर्ड की ऊपरी सतह पर चिपका देते और इस बात का ध्यान रखते थे कि कागज और बोर्ड के बीच हवा का कोई अंश न रह जाय । चित्रित कागज के चारों ओर गोंद लगा हुआ कागज का फीता लगाकर ऊपरी सतह का पानी सूख जाने के लिए कुछ समय छोड़ देते । पूर्णतः पानी सूखने के बाद (लेकिन कागज में नमी बनी रहती थी) चित्र के अनुकूल उपयुक्त रंगों को रंगसाज में रखकर अलग-अलग घोल बनाकर मुलायम बालों से निर्मित चौड़ी तूलिका से रंग लगाते । रंगों को सूखने के बाद पुनः चित्र को पानी के बर्तन में डूबाकर तूलिका को हल्के-हल्के ब्रश संचालन से धीरे-धीरे रंगों को धो डालते थे । रंगों के मोटे अंश पानी में धोने से निकल जाते थे । बारीक या सूक्ष्म रंग के अंश को कागज सोखकर रख लेता था । पुनः आवश्यकतानुसार रंग लगाते और उसी प्रकार धोते थे । इस प्रकार तब तक करते थे जब तक वातावरण (सुबह, दोपहर, शाम व रात) तथा मौसम के कोमल प्रवाह प्रस्फुटित नहीं हो जाते थे । कागज सूखने पर उन्हीं रंगों से पतली तूलिका की हल्की व बारीक रेखाओं से चित्र को पूर्ण करते थे ।"[3]

कलाकार गुरु आर. एस. धीर अपने प्रयोगवादी प्रवृत्ति के कारण वाश तकनीकी में भी हल्के-फुल्के प्रयोग करते थे । इनकी इस वाश-शैली की दक्षता को हम उनके चित्रों में देख सकते हैं । चित्र सं.-69 जो एक वाश तकनीकी पर बना चित्र है, यह वाराणसी के घाट का बहुत ही रमणीय दृश्य है ।

इसमें नाक और मुख तथा आँखों की सीमा रेखा कत्थई रंग से तूलिका द्वारा पूर्ण की गयी है । आँखों की रचना में विशेष रूप से आकर्षण उत्पन्न किया गया है जो भारी प्रविधि के अनुरूप होते हुए भी भाव अभिव्यक्ति में विशेषता प्रदान करता है । इसमें बालों को कत्थई तथा भूरे रंग से बनाया गया है । इस चित्र में एक पंडित जी दो लोगों को उपदेश दे रहे हैं जिसमें रेखा रंग दोनों का समायोजन है । लकड़ी का चबूतरा जिस पर साधु बैठा है यथार्थ है । जिस पर ऊपर दो बाँस की छतरियाँ हैं, जिसमें सुन्दर रंग और रेखांकन है । वह यथार्थ भाव प्रकट करती है । दूसरी ओर चबूतरे पर बैठी महिला श्रृंगार कर रही है । वह चबूतरा ईंट की भट्ठों पर टिका है तथा वहाँ भी एक छतरी है । छतरी के ऊपर सफेद रंग के दो पक्षी ऐसे बैठे हैं जैसे वे आपस में बातें कर रहे हैं तथा उनका रंग और रेखांकन एकदम वास्तविक है । गंगा में श्रद्धालुगण डुबकियाँ लगा रहे हैं । दूर एक नाव है । इस पूरे चित्र को एक नजर में ही देखकर कलाकार की वाश-शैली की दक्षता को जाना जा सकता है । इसी प्रकार चित्र सं.-71, 72, 73 तथा 74 का अवलोकन कर उनके प्रयोगवादी विचार, कला-गुरु के रंग की विशेषज्ञता तथा रेखांकन की दक्षता के साथ-साथ वाश-शैली पर उनके एकाधिकार को भी देखा जा सकता है ।

वाश– 'काँटा निकालती नारी' पुरस्कृत

इस चित्र में वाश तकनीक की विशेषताओं को यथासम्भव देखा जा सकता है । इसके चित्रों में वाश के रंग अन्दर से झाँकते से लगते हैं, जिससे पूर्ण गोलाई व घनत्व का आभास होता है तथा नियामिक प्रभाव भी आ जाता है । आप चित्र रचना के समय नीचे के रंगों की आभा का विशेष ध्यान रखते थे और सही अर्थ में यही वाश तकनीक की विशेषता भी है ।

श्री आर. एस. धीर ने चीन, जापान से निकलने वाली और भारत में प्रचलित होने वाली वाश पद्धति को अपने व्यक्तिगत प्रयास से उत्तर प्रदेश में जीवित कर उच्च स्तर पर पहुँचाया है । यह उनके जीवन की सर्वोत्तम उपलब्धि है ।[4]

कोलाज तकनीक

कलाकार आर. एस. धीर हमेशा नयी तकनीकी की खोज में लगे रहते थे और नित नये प्रयाग भी करते थे । अन्य तकनीकी की तरह कोलाज तकनीकी में एक विशेष प्रकार की सोच रखते हुए कोलाज चित्रण करते थे । आधुनिक चित्र कला के इतिहास में कोलाज तकनीकी का आविष्कार घनवाद से माना जाता है ।

ब्राक व पिकासो के चित्रों में समतल आकारों का महत्त्व बढ़ते ही वस्तु सादृश्य समाप्त-सा हो गया । 1911 ई. में ब्राक ने चित्र रचना में अक्षरों को समाविष्ट करना शुरू किया । गोथिक चित्रकला, चीनी चित्रकला एवं भारतीय जैन-पुस्तक-शैली में चित्र क्षेत्र के अन्तर्गत अक्षरों को अंकित करने की प्रथा थी । पेरिस के जलपान गृहों की खिड़कियों के काँचों पर लिखे हुए अक्षरों के आकार सामर्थ्य को देखकर ब्राक को इस दिशा में प्रयोग करने की

प्रेरणा मिली । अक्षरों के चित्र रचना में स्थान दिये जाने से मानव निर्मित आकारों का वास्तविक आकारों से समन्वय होकर, चित्रकला विशुद्ध सर्जन के ध्येय की ओर एक चरण आगे बढ़ी । कल्पित व अकल्पित आकारों के संयोग से चित्र में अति-यथार्थ का भाव पैदा हुआ । इसके पश्चात् लकड़ी या संगमरमर के बाह्य सतहों का अनुकरण, समाचार-पत्रों के शीर्षकों का चित्र में समावेश वगैरह चित्रांतर्गत प्रयोग स्वाभाविक क्रम में ही थे । वस्तु के सम्पूर्ण आकार का चित्रण करने के बजाय उसके किसी अंग को प्रतीक रूप में चित्रित किया जाने लगा जिसके फलस्वरूप चित्रकला वास्तविक बंधन से मुक्त होकर, चित्र रचना में सर्जनात्मक सरलता का प्रभाव देने लगी । कलाकृति द्वारा मस्तिष्क में निर्माण किया गया वस्तु का सूचक रूप प्रत्यक्ष रूप से विविध व भावपूर्ण होकर आत्मीय व प्रभावी होता है । 1912 ई. में घनवादी कलाकारों ने कपड़ा, दीवार, कागज, समाचार-पत्र, तास बेत की जाली, माचिस आदि वस्तुओं के टुकड़ों को चित्र क्षेत्र में चिपकाकर ऊपर से सांकेतिक रेखाओं व रंगों की सहायता से चित्र रचनाएँ शुरू की जिसे आधुनिक कला में 'कोलाज-पद्धति' का जन्म हुअ । पिकासों के चित्र वेत की कुर्सी व वस्तु समूह (1912) घनवाद की प्रथम कोलाज कृति है । उसी साल ब्राक ने भी चित्रपट पर कागजों को चिपकाकर अपना चित्र 'फलों की थाली' व 'गिलास' पूर्ण किया । कागज पर लकड़ी के रेसों का परिणाम दिखाया है व परम्परागत पद्धति में मेज का हूबहू चित्रण करने के बजाय उसका सूचक रूप से उल्लेख किया है । इस प्रकार वस्तु को प्रत्यक्ष रूप से चित्र में समाविष्ट करके कोलाज कृतियों द्वारा घनवादी चित्रकार अधिक वस्तुनिष्ठ बन गये । कोलाज पद्धति से पृष्ठभूमि की बनावट को कलात्मक महत्त्व प्राप्त हुआ ।[5]

कलाकार आर. एस. धीर भी कोलाज चित्रण-कार्य में बहुत ही दक्ष थे और कोलाज में भी नये-नये प्रयोग करते थे । कोलाज चित्रण करते समय आप चित्रपट का चुनाव करते थे उनके चित्रपट कभी कैनवास, कभी हार्डबोर्ड व प्लाईउड के टुकड़े होते थे । पहले इस पर हल्की पेंसिल से रेखांकन करते थे और तत्पश्चात् रंगीन पत्रिकाओं के पृष्ठों को एकत्रित कर लेते थे और रेखांकन को बहुत ध्यानपूर्वक देखते थे और उसके बाद काटकर टुकड़ों को चित्रपट पर यथास्थान चिपकाते रहते थे और चित्र पूरा हो जाता था । चित्र पूरे होने के बाद यदि कहीं बदलाव की जरूरत पड़ती थी तो वे बिना किसी संकोच के बदल देते थे । आरम्भ के चित्रों को केवल रंगीन पत्रिकाओं के कागज के टुकड़ों से पूरा कर देते थे । लेकिन धीरे-धीरे रस्सी, कागज, माचिस लकड़ी को जलाकर तथा दवाइयों की शीशियों के बेकार पड़े ढक्कन का प्रयोग भी बहुत ही कुशलतापूर्वक चित्रों में किया है । इसके बाद वे इन रद्दी वस्तुओं के प्रयोग के अतिरिक्त आवश्यकतानुसार अनेक प्रकार के रंगों का प्रयोग की किया । कभी चित्रपट को यथास्थान पर जला देते थे जो अपने आप में एक अलग प्रकार का प्रभाव तथा आकर्षण पैदा करता था ।[6] आरम्भ में कोलाज में यथार्थ रेखांकन किया और मानव आकृतियों, प्रकृति तथा पशुओं का मूर्त रूप में रेखांकन करते थे, लेकिन अंतिम चरण के कोलाज चित्रों में अमूर्तन का व्यापक प्रभाव दिखाई देने लगा । इनके कोलाज चित्रों के विषय मुख्य रूप से समाज के परिश्रमी व्यक्ति, विधवाएँ होती थीं । इन्होंने समाज में व्याप्त बुराइयों को भी चित्रित किया ।

श्री धीर के कोलाज चित्रों की दक्षता चित्र सं. 36 में देख सकते हैं । यह कोलाज चित्र दहेज के ऊपर बना है । इसमें एक महिला को मानसिक अवसादग्रस्त दिखाया गया है । एक गरीब घर की लड़की जो दहेज के अभाव में व्याह नहीं कर पाती और अन्त में मानसिक

अवसाद से ग्रस्त हो जाती है । उसके चेहरे पर नीले रंग का कागज का टुकड़ा मानसिक अवसाद का प्रतीक है । चित्र में बहुत ही संतुलित तरीके से कागज के टुकड़ों को लगाया गया है । ये टुकड़े यूँ ही नहीं लगाये गये बल्कि उनके लगाने का कोई न कोई अर्थ है । इस चित्र को देखकर कोलाज तकनीक की विशेषज्ञता का ज्ञान भलीभाँति हो जाता है ।

चित्र सं.-75 कोलाज का एक प्रयोगवादी चित्र है जिसमें प्लाईवुड का टुकड़ा दवा के ढक्कन तथा रंगों का भी प्रयोग किया गया है । यह एक प्रतीकात्मक कोलाज चित्र है । चित्र सं.-76 भी एक प्रयोगवादी कोलाज चित्र है । इसमें रंगों का प्रयोग अधिक है । नीचे तांत्रिक चिह्न है जो रंगों से बनाये गये हैं । ऊपर एक विशेष प्रकार का प्रभाव उत्पन्न करने के लिए ढक्कनों तथा लकड़ियों का प्रयोग है । चित्र सं. 81 केवल प्लाईवुड को जलाकर तथा कहीं-कहीं रंग लगाकर बनाया गया है ।

कोलाज चित्रों में एक समतल क्षेत्र में रंगीन कागजों के द्वारा उभार दर्शाने का प्रयास किया है । किन्तु आपका विचार रहा है कि कोलाज पद्धति में जब पट पर अन्य वस्तुओं को लगाया जाता है तो उनका अन्य वस्तुओं के साथ सकारात्मक सम्बन्ध होना चाहिए । एक तैल चित्र या जल-रंग चित्र से कोलाज अधिक दुरूह कार्य है । कोलाज चित्रण सम्पूर्ण रूप से एक चित्र में कई उभार को एक ही पट पर दर्शाता है । उन्होंने अगर रंगीन कागज के छोटे-बड़े टुकड़ों को लगाया तो आपसी सम्बन्धों को महत्व दिया । हार्डबोर्ड पर रेखांकन करने के बाद वे इस प्रकार से रंगीन कागजों, प्लाईवुड के टुकड़ों धागों और अन्य वस्तुओं को चिपकाकर कोलाज चित्रों का निर्माण करते थे जो चित्रों में रिलिफ मूर्ति के समान उभार उत्पन्न करते थे ।

इस प्रकार कला गुरु ने कोलाज चित्रों में भी अपनी एक महत्त्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज कराई जो युवा कलाकारों के लिए प्रेरणा का विषय है ।

टेम्परा

टेम्परा चित्रण की उस विधि को कहते हैं जिसमें माध्यम के रूप में किसी पायस (इमल्सन) का उपयोग किया जाय । इस नाम का अशुद्ध प्रयोग अपारदर्शी जलरंगों जैसे पोस्टर रंग के लिए भी किया जाता है । इस माध्यम की विशेषता यह है कि यह पानी में घुल जाता है, परन्तु सूखने के बाद इतना अघुलनशील हो जाता है कि उस पर टेम्परा अथवा तैल माध्यम से चित्रण पूर्ण किया जा सकता है । परन्तु पोस्टर रंगों से चित्र बनाने पर उस पर दोबारा रंग करने पर नीचे का रंग घुल जाता है । टेम्परा के रंगों की चमक न तो जलरंगों में सम्भव है और न ही तैल रंगों में । जब टेम्परा चित्र अछूता होता है तो उसमें चमकहीन मधुर प्रकाशमान धरातल रहता है । ग्लेजिंग द्वारा इस सतह को और अधिक सुन्दर बनाया जा सकता है ।[7]

अण्डे की जर्दी तथा रंग या रंगने के किसी पदार्थ के मेल से गारा बनाकर, पानी को वाहक के रूप में (पतला बनाने वाला) माध्यम बनाकर अण्डे की टेम्परा बनाते हैं । पानी में घुलनशील अनेक प्रकार के माध्यम को टेम्परा कहते हैं । रंगों के बंधावट (चिपकने) तथा रंगों को स्थायी रखने के लिए रंग में गोद, सरेस, लाख या अण्डे की जर्दी मिलाकर प्रयोग किया जाता है जिससे रंग में टेम्पर आ जाता है । इसी कारण इस माध्यम का नाम टेम्परा हुआ । लोहा को गर्म कर ठण्डे जल से टेम्पर किया जाता है । इस विधि में अनेकानेक विधियों का जन्म हुआ ।[8]

प्रो. धीर छात्रों को बताते थे कि टेम्परा विधि मध्य युग से अपनायी जा रही है । टेम्परा की प्रधान विशेषता इसके हल्के रंग के प्रभाव की है । इस विधि में बहुत ज्यादा गीले रंग का प्रयोग करना कठिन होता है । साथ ही चित्रण कार्य जल्दी करना पड़ता है । इसमें छाया प्रकाश दिखाना कठिन कार्य है ।

टेम्परा माध्यम की विशेषता उसका पायस होता है । पायस जलीय तरल में तैलीय अथवा मोम पदार्थ का मिश्रण होता है । दूध पायस का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है । सूख जाने पर यह पायस पर दर्शक झिल्ली का निर्माण करते है । प्रारम्भ में टेम्परा में अण्डे की जर्दी का प्रयोग करते थे; क्योंकि अण्डे की प्रकृति को सर्वश्रेष्ठ पायस मानते थे जो चित्रण माध्यम में अत्यन्त सफल रहा । कभी-कभी वे सम्पूर्ण अण्डा तथा कभी-कभी केवल सफेदी का प्रयोग करते थे । गोंद ग्लिसरीन तथा किंचित अलसी के तेल के मिश्रण से भी एक अच्छा पायस बनाते थे जिसे गोंद टेम्परा कहते थे । इसी प्रकार टेम्परा की अनेकानेक पायस, मिश्रण विधि द्वारा कला गुरु ने अपने अनुभव के आधार पर खोजी है ।

कलाकार श्री आर. एस. धीर टेम्परा करने के लिए अनेक प्रकार की चित्र भूमि का प्रयोग करते थे । आवश्यकता के अनुसार लकड़ी, हार्डबोर्ड अथवा पेस बोर्ड पर मुख्य रूप से तैयार किये गये गैसोपट को सर्वश्रेष्ठ माध्यम मानते थे । कभी-कभी कला-गुरु कागज के बोर्ड पर भी कार्य नये प्रयोग के उद्देश्य से करते थे । अण्डे की जर्दी वाले टेम्परा को तैल-रंग के लिए अनुपयुक्त कैनवास पर भी प्रयोग करते थे । कला-गुरु गैसोपट बनाने के लिए खड़िया मिट्टी अथवा मृत प्लास्टर ऑफ पेरिस को पानी में गाढ़ी क्रीम जैसा घोल लेते थे इसमें सरेस अथवा ग्लू का पतला घोल डालकर चलाते रहते थे, पतली क्रीम जैसा हो जाने पर इसे हार्डबोर्ड

अथवा लकड़ी के पट पर एक-सा फैला देते थे । मोबीगोल जैसे ग्लू में तैयार किया गया गैसो कैनवास के कपड़े पर भी प्रयुक्त करते थे; क्योंकि इसमें पर्याप्त लचक रहती थी ।

प्रो. धीर की चित्रण विधि (जो टेम्परा में प्रयोग करते थे) को जब मैंने उनके शिष्य श्री विनय अग्रवाल जी से पूछा तो उन्होंने बताया कि गुरुजी कहते थे कि टेम्परा चित्रण का रहस्य रंग की सतह लगाने में निहित है । यद्यपि इस माध्यम से स्वतन्त्रता पूर्वक कार्य करने की छूट है इसलिए किसी निश्चित विधि से बाँधना सम्भव नहीं है और न ही उचित; तथापि देखने मात्र से टेम्परा तथा अन्य माध्यमों को पहचाना जा सकता है । गुरु जी की विधि को किसी एक नियम में बाँधना सम्भव नहीं है; क्योंकि वे हमेशा नया प्रयोग करते थे लेकिन जिस विधि में सबसे ज्यादा चित्र बनाये उसमें सबसे पहले चित्र के गैसोपट पर अनुरेखन (ट्रेसिंग) करके रंगों की पतली सतह लगाते थे जिससे सफेद पृष्ठभूमि के कारण चित्र में एक विशेष चमक पैदा हो जाती थी । रंगों के उतार-चढ़ाव के लिए हैचिंग विधि का प्रयोग करते थे तथा तैल व जल रंग की तरह रंगों का मिश्रण नहीं करते थे । इस विधि में साधारणतया ग्लेजिंग नहीं करते और गहरे रंगों का आरम्भ से ही प्रयोग करते । कभी-कभी टेम्परा चित्रों को अण्डर पेंटिंग रूप में प्रेषण करते थे जिसको तैल-चित्रण से पूर्ण करते थे । इतने के बाद गुरु जी कहते थे कि टेम्परा का प्रयोग अभ्यास व अनुभव पर निर्भर करता है । इसलिश्जितना बनायेंगे उतना ही अच्छा होगा ।[१]

श्री धीर बताते थे कि मुख्य रंगों में सफेदी मिलाकर ओपेक (अपारदर्शक) रंग से टेम्परा-विधि का कार्य किया जाता है । रंग के सूखने पर इसमें कोई चमक नहीं होती । अण्डे के माध्यम से बने टेम्परा तथा गोंद के माध्यम से बने टेम्परा के प्रभाव में फर्क है । गोंद के माध्यम

से बने टेम्परा का रंग फीका तथा खल्ली की तरह सूखा दिखता है, परन्तु अण्डे के माध्यम से बने टेम्परा के रंग में चमक के साथ मुलायम प्रभाव होता है । रंग टिकाऊ तथा मजबूत होता है जिसे आसानी से छुड़ाया नहीं जा सकता । रंग जल्दी सूखता और अण्डे की जर्दी में शीघ्रता से फैलने का गुण होता है । अण्डे की पीले तथा सादे दोनों भाग को मिलाने पर रंग में पीलापन आ जाता है । अण्डे की जर्दी से पालिस की तरह का प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है । यह माध्यम रेखीय आकार के पेंटिंग बनाने में अत्यधिक उपयोगी होता है । रंगों के तान के प्रभाव को एक सतह के नीचे दूसरी सतह क्रमशः लगाकर हल्का से गहरा रंग प्रभाव उत्पन्न कर सकते हैं ।

मध्य युग के कलाकार अण्डे की जर्दी के टेम्परा का उपयोग लकड़ी के ऊपर जिस प्रकार करते थे उसी प्रकार आपने भी प्रयोग किये । लकड़ी के सुन्दर रेसे में रंग ठीक से चिपकता है साथ ही लकड़ी रंग की नमी से न सिकुड़ती है न फैलती है । कपड़ों के रेशे (टेक्चर) में यह माध्यम काफी उपयोगी है । टेम्परा बनाने की सतह चित्रपट पर गैसों का प्राइमर कोटा भी लगाते हैं, जिससे रंग ज्यों का त्यों रहता है । यह गैसों का एक बहुत पतला गारा होता है जो चाक तथा सरेस या कभी-कभी खरहा-चर्म-सरेस द्वारा बनाया जाता है । प्राइमर की सतह सूखने पर कड़ी तथा चिकनी बन जाती है । यह लकड़ी की सतह एवं कागज या कैनवास में भी लगाया जाता है ।

कला-गुरु के टेम्परा चित्रों को देखकर सहज ही उनके कलात्मक दक्षता का पता चलता है और कला-गुरु के टेम्परा चित्र अपनी एक अलग छाप छोड़ चुके हैं ।

जल रंग

जल में घुलनशील रंग को जल रंग कहते हैं तथा जलरंग में निर्मित चित्र को जल रंग चित्र कहते हैं । विश्व की सबसे प्राचीनतम तकनीक जल रंग है । आदिकाल में मानव धुओं के जमने से कालिख एकत्रित कर पानी में घोलकर उसको हाथ के छापे या चित्रण के लिए प्रयोग करते थे । खनिज मिट्टियों से भी रंग प्राप्त किया जाता था जो एक प्रकार से जल रंग ही होता था । जल रंग प्राचीन काल से चित्रण विधा की सबसे लोकप्रिय तकनीक या माध्यम है ।

आज बाजार में अनेक रूपों में जल रंग उपलब्ध है, जिसमें केक जल रंग टॉफी के जैसा बना कड़ा होता है । यह सूखा रंग है जो विभिन्न रंगतों में पाया जाता है । रंग प्लेट में थोड़ा पानी लेकर केक रंग को पानी के साथ धीरे-धीरे घिसने से रंग पानी में घुल जाता है । दूसरा ट्यूब रंग टीन के पतले ट्यूब के अन्दर भरा हुआ रहता है । यह रंग गीला होता है । ट्यूब जल रंग को कलर प्लेट में लेकर पानी मिलाकर रंग का घोल तैयार कर लेते हैं । केक तथा ट्यूब रंग के अतिरिक्त एक प्रकार का और रंग है जिसे पोस्टर रंग कहते हैं । यह रंग शीशी के अन्दर गीले रूप में होता है । यह रंग चमकदार तथा तीव्र होता है । इस रंग का अधिक प्रयोग कामर्शियल काम में किया जाता है । जैसे पोस्टर बनाना, चार्ट बनाना, लेटर लिखना आदि पोस्टल रंग ओपेक होता है अर्थात् इसके आर-पार दिखाई नहीं पड़ता । परन्तु ट्यूब जल रंग पारदर्शक गुण के लिए होता है । चित्रकार हमेशा ट्यूब जल रंग का ही प्रयोग करते हैं ।[10]

कलाकार आर. एस. धीर ने चित्रकला का आरम्भ ही जल रंगों से ही किया था; क्योंकि जल रंग, चित्रकारी सीखने के लिए सबसे उत्तम माध्यम है । यह तुरन्त सूख भी जाता है तथा कुछ समय बाद ही हमें परिणाम मिल जाता है । आपका कहना है कि अच्छे परिणाम के लिए रंगों तथा उसके प्रभाव का ज्ञान होना अति आवश्यक है ।

जल रंग चित्रण के लिए सबसे प्रमुख बात चित्र भूमि है । जल रंग में मुख्य रूप से चित्र भूमि के लिए कागज का ही प्रयोग किया जाता है । कागज बाजार में कई नाम और गुणों में मिलते हैं । आजकल मुख्यतः हाथ का बना कागज जल रंग के लिए उत्तम होता है । यह साधारणतया तीन श्रेणी में मिलता है । चिकना, मध्यम तथा मोटा । श्री धीर कहते थे कि अच्छे कागज को पहचानना उपयोग के किये बिना बहुत कठिन होता है । परन्तु यदि कागज पानी सोखता है तो यह उसका दुर्गुण है । कुछ कागजों को श्वेत बनाने के लिए अधिक ब्लीच कर दिया जाता है । इससे कागज के रासायनिक गुण बदल जाते हैं और रंग कागज पर लगने पर अपनी रंगत बदल देते हैं । कागज का भार और पुष्टता ऊँचा-नीचा हो जाता है और इस प्रकार रंगों के बहाव को नियंत्रित नहीं किया जा सकता है । इसलिए कभी-कभी कला-गुरु कागज को बोर्ड पर चिपका देते थे । कागज को गीला करके किनारों पर गोंद अथवा गोंद लगी पट्टी द्वारा ड्राइंग बोर्ड पर चिपका देते थे जिससे कागज कैनवास की तरह खींच जाता था और रंग लगाने पर ऊँच-नीच नहीं होता था । कागज की सतह का खुरदरापन कलाकार की रुचि, अनभुव और कार्य विशेष की आवश्यकता पर भिन्न-भिन्न प्रभाव उत्पन्न करते थे ।

प्रो. धीर का मानना था कि जलरंग चित्रण का दूसरा महत्त्वपूर्ण भाग तूलिका है । जल रंग चित्रण के लिए वे हमेशा सेवल हेयर की तूलिका प्रयागे करते थे; क्योंकि वे इसको

सर्वश्रेष्ठ मानते थे। इसके बालों में पाया जाने वाला लचीलापन जल रंग के लिए अत्यन्त उपयुक्त रहता है। ये गोल तथा चपटी आकृति में मिलते हैं। साधारण रूप में बारीक कार्य करने के लिए चपटी आकृति की तूलिका उपयुक्त रहती है। वे कहते थे कि जल रंग चित्रण में तूलिका का जितना महत्त्व है अन्य चित्रण माध्यम में नहीं। अतः जहाँ तक सम्भव हो सर्वश्रेष्ठ तूलिका ही प्रयोग करनी चाहिए।

जल-रंग में चित्रण आरम्भ करते समय सबसे पहले ड्राइंग बोर्ड के ऊपर कागज रखकर चारों कोनों में ड्राइंग बोर्ड पिन लगता हैं, ताकि कागज हिल-डुल न सकें। पेंसिल से हल्का रेखांकन बनाते। रेखांकित पर लगाने वाले रंगों को रंग साज में रखते। रंग में आवश्यकतानुसार जल मिलाकर अलग-अलग घोल बना लेते। चित्र फलक के रेखाचित्र पर पहले हल्के रंग फिर क्रमशः गाढ़े रंग को मुलायम बालों से बनी तूलिका से लगाते तथा तूलिका को बार-बार पानी में नहीं धोते। रंग लगाते समय रंग में पानी मिलाने की मात्रा का अन्दाजा तथा रंगों के मिश्रण कर मनोकूल रंग तैयार करना वे कलाकार की कुशलता मानते थे। कभी-कभी रंगों में विशेष प्रभाव उत्पन्न करने के लिए रंग का समुचित फैलाव तथा रंगों की ठीक से सोखने (खींचने के लिए) कागज में हर दम नमी बनाये रखते थे, जिससे रंगों का दाग तूलिका के संचालन से उत्पन्न न हो जाय अतः कागज पर रेखाचित्र बनाने के बाद उसे पानी में डुबाकर पानी से निकालकर ड्राइंगबोर्ड की सतह पर फैला देते और इस बात का ध्यान रखते थे कि कागज और बोर्ड के बीच हवा का कोई अंश न रह जाय। जब कागज की ऊपरी सतह का पानी कागज से सूख जाता तब तूलिका को रंग में सरोबार कर चित्र फलक पर रंग लगाते। अन्त में रंगों के हल्के गहरे तानों के धब्बेदार निशान द्वारा या रंगों की गतिशील लयदार,

लोचदार रेखाओं से आकारों के भावों को दर्शाते थे, जिससे चित्रों में मधुर मिश्रण प्रभाव उत्पन्न हो जाता था ।

चित्र सं.-77 एक जल रंग तकनीकी द्वारा बना चित्र है इसमें पर्वतीय भाग जो हिम खण्डों से आच्छादित है उसको बहुत ही सुन्दर और कुशलतापूर्वक बनाया गया है । पत्थर गड्ढे तथा नजदीक के वृक्ष और दूर के वृक्षों में रंगों की तकनीकी कुशलता को बखूबी देखा जा सकता है । इसमें रंगों का चयन, तूलिका का संचालन कलाकार की जल रंग में दक्षता को बखूबी दर्शाता है । इसी प्रकार कलाकार आर. एस. धीर के किसी भी जलरंग माध्यम के चित्र को देखकर उनकी तकनीकी कुशलता का अन्दाजा लगाया जा सकता है ।

जल-रंग के अन्तर्गत वाश तकनीक और साधारण जल रंग तकनीक को मिलाकर भी चित्रण-कार्य किया । इस प्रकार उन्होंने जल रंग तकनीक पर अपनी पूरी पकड़ बनायी थी । अपने अनुभव और ज्ञान के बल पर उत्तर प्रदेश ही नहीं वरन् भारत के जल रंग कलाकारों में अपनी एक अलग पहचान बनायी है ।

मिश्रित माध्यम

मिश्रित माध्यम जैसा कि शीर्षक से ज्ञात होता है कि मिला हुआ माध्यम अर्थात् जब कई तकनीकी और माध्यम को मिलाकर चित्रण कार्य किया जाता है तो उसे मिश्रित माध्यम कहते हैं । आज अनेक कलाकार किसी एक माध्यम तथा तकनीकी को न अपनाकर मिश्रित माध्यम में कार्य कर रहे हैं । कलाकार श्री आर. एस. धीर ने भी अपनी कला-यात्रा में मिश्रित माध्यम को अपनाया । मिश्रित माध्यम की चर्चा से पहले आपने तैल तथा पेस्टल माध्यमों में कार्य किये ।

तैल में घुलने वाले रंग को तैल रंग कहते हैं । इसमें पाउडर रंग को अलसी तेल में घोलकर तैल रंग बनाते हैं । अलसी तेल में चिपचिपापन रहता है अतः यह रंग किसी भी सतह में आसानी से चिपक जाता है या रंग पानी में नहीं घुलता तथा सूखने के बाद पक्का हो जाता है । रंग को असली या तारपीन के तेल से पतला कर लेते हैं ।[11] इसके लिए चित्र भूमि के रूप में कला गुरु आयल पेपर, कैनवास तथा कैनवास बोर्ड प्रयोग करते थे । इस चित्रण को करने के लिए सूअर के बालों की तूलिका प्रयोग करते तथा साथ में छूरी (Knife) का प्रयोग भी करते थे । चाकू अनेक आकार-प्रकार के होते हैं । नाइफ का आकार लम्बा होता है, जो लचीला टेम्पर लोहे से बना होता है इससे रंग मिलाते हैं, जिसे पैलेट नाइफ कहते हैं । एक नाइफ से उठाकर रंग लगाते हैं जिसे पेंटिंग नाइफ कहते हैं ।

प्रो. धीर तैल चित्रण करते समय कैनवास, कैनवास बोर्ड आदि को चित्राधार पर रखकर हल्के चारकोल से स्केच बनाते । तैल रंग की साज के ऊपर तैल रंगों को रख लेते । उसमें आवश्यकतानुसार अलसी या तारपीन का तेल मिला लेते तथा चित्र फलक पर चित्र के प्रकाशकीय प्रभाव से छाया-प्रकाश, आयतन घनत्व व भार को दर्शाते । यह प्रभाव तूलिका संचालन के चिह्नों द्वारा या चित्रण छूरी के धब्बेदार छोटे-छोटे सतहों द्वारा लाते थे । तैल चित्रण में कोई एक निश्चित विधि नहीं है इसकी तकनीक तथा परिणाम कलाकार के अनुभव पर आधारित होता है । इसमें आपने कभी हल्के तान से गहरे तान की ओर रंग लगाते थे तो कभी गहरी शेड से हल्के शेड लगाते थे, उनको दोनों प्रकार से कार्य करने की कुशलता प्राप्त थी । मुख्य रूप से इसमें तीन टच करते थे एक सतह लगाने के बाद कुछ सूखने पर दूसरे दिन दूसरी सतह तथा उसको कुछ सूखने पर तीसरी सतह द्वारा चित्र को अन्तिम रूप में पहुँचाते थे,

लेकिन कभी-कभी नाइफ के माध्यम या ब्रश से चित्र को अपने अनुभवों के बल पर एक ही बार में पूरा कर देते थे । आज के समय में यह तैल चित्रण तकनीकी बहुत ही लोकप्रिय है । कला गुरु के अनुभवों को आज के युवा कलाकार प्रेरणा ग्रहण कर प्रगति के मार्ग पर अग्रसर हैं ।

इस माध्यम में बने चित्र सं. 78 एक पहाड़ी चित्र है । चित्र सं. 79 से 82 भी इसी माध्यम में विभिन्न विषयों पर बना चित्र है । इसके अतिरिक्त वस्तु चित्रों में भी इस तकनीकी को कुशलता का परिचय कला गुरु ने ब्रश तथा नाइफ चलाकर दी है ।

कलाकार श्री धीर ने पेस्टल द्वारा भी चित्रण कार्य किया। पेस्टल सर्वशुद्ध और साधारण चित्रण माध्यम है । पेस्टल में माध्यम के अभाव के कारण रंगतों का स्थायित्व बढ़ जाता है और रंगत बहुत समय तक तक खराब नहीं होती परन्तु इसका दुर्गुण इतना है कि इसका रख-रखाव बहुत कठिन है । रंगत की तान कल्पना और स्वतन्त्रता को सीमित कर देती है । इसलिए इन्होंने इस माध्यम में अधिक कार्य नहीं किया । इस प्रकार के चित्रण के लिए खुरदरेपन की विभिन्न श्रेणियों में तैयार किये गये विशेष कागज का प्रयोग किया जाता है । कागज का रूआ इस प्रकार का होता है कि वह पेस्टल की बत्ती से रंग छुड़ा लेता है और कागज के ऊपर से गिरने नहीं देता ।

पेस्टल की तकनीकी इनकी व्यक्तिगत तकनीकी थी । तान के मधुर मिश्रण से लेकर मोटे-मोटे आघात तक सभी प्रभाव दिये हैं । वर्ण मिश्रण के लिए अंगुली अथवा कागज की बनी बती का प्रयोग करते थे । इस माध्यम से कला गुरु ने बहुत ही कम चित्रों का निर्माण किया है ! फिर भी उतने में ही अपनी कलात्मक दक्षता का परिचय दे दिये ।

कलाकार श्री आर. एस. धीर ने इन सब माध्यमों के अतिरिक्त प्रयोगवादी दृष्टि रखते हुए मिश्रित माध्यम में भी अपनी अमिट छाप छोड़ चुके हैं । वे मिश्रित माध्यम में कार्य करते हुए किसी निश्चित विधि को नहीं अपनाते थे और न ही किसी निश्चित चित्रपट का प्रयोग करते थे ।

प्रो. धीर मिश्रित माध्यम का कार्य करने के लिए कभी हार्डबोर्ड, कैनवास, प्लाईवुड आदि को चित्रपट बनाते थे तो कभी कपड़ा, लकड़ी आदि को भी चित्रपट के लिए प्रयोग किये हैं । मिश्रित माध्यम में कार्य करते समय वे तैल रंग, जल रंग, खनिज रंग तथा कोलाज में प्रयोग होने वाली सामग्री भी अपने पास रखते थे । उनका कहना था कि मिश्रित माध्यम का कार्य करते समय चित्र में कब और कहाँ कौन-सा माध्यम सटीक बैठेगा । इसकी कोई जानकारी पहले से नहीं दी जा सकती । मिश्रित माध्यम में कला गुरु ने एक नवीनतम तकनीकी माध्यम एक्रेलिक कलर को बहुत ही अच्छी तरह समायोजित किया है । एक्रेलिक रंग एक ऐसा माध्यम है जो जल के साथ तो घुल जाता है लेकिन चित्रपट पर लगने के बाद पानी से नहीं छूटता । कला गुरु अपने कलात्मक ब्रश संचालन द्वारा एक्रेलिक रंग को लगाते थे तो वह पूर्ण रूप से तैलरंग का प्रभाव देता था । इन्होंने कुछ चित्र केवल एक्रेलिक रंग द्वारा ही पूर्ण किए हैं जिसको देखने के बाद तैल रंग चित्र और एक्रेलिक रंग चित्र में अन्तर करना बड़ा कठिन हो जाता है । ऐसा कला गुरु की कुशल और अनुभवी ब्रश संचालन व रंगों के अच्छे ज्ञान के कारण ही हो पाता था । चित्र सं. 75 व 81 में इस प्रकार मिश्रित माध्यम का प्रयोग देख सकते हैं । कला-गुरु के दो जैन तकनीकी चित्र सं. 66 व 67 हैं । इसमें भी कुछ मिश्रित माध्यम को देखकर उकी कुशलता को पहचाना जा सकता है ।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि कलाकार श्री आर. एस. धीर का तकनीकी पक्ष बहुत ही विस्तृत है और शायद कोई ऐसी पुरानी तथा नयी तकनीकी नहीं थी जिसका प्रयोग इन्होंने नहीं किया बल्कि सभी तकनीकी को अपनी कला यात्रा में बखूबी शामिल किया जो आज के युवा कलाकारों तथा आने वाले कलाकारों के लिए सदैव प्रेरणादायक होगी ।

●

सन्दर्भ

1. स्वातन्त्रोत्तर कला, उत्तर प्रदेश के विशेष सन्दर्भ में, पृ. 42
2. आधुनिक भारतीय चित्रकला का इतिहास, वर्मा अविनाश बहादुर, पृ. 273
3. निजी सम्पर्क, अग्रवाल विनय कृष्ण, वाराणसी, 13 अगस्त, 2006
4. निजी सम्पर्क, अग्रवाल विनय कृष्ण, वाराणसी, 13 अगस्त, 2006
5. आधुनिक भारतीय चित्रकला का इतिहास, वर्मा अविनाश बहादुर, पृ. 154-55
6. निजी सम्पर्क, शुक्ल प्रो. रामचन्द्र, 5 जून, 2006
7. [illegible]प्रद कला के मूलाधार, शर्मा, अग्रवाल, पृ. 96
8. कला सैद्धान्तिक, नायक लक्ष्मी नारायण, पृ. 19
9. निजी सम्पर्क, अग्रवाल विनय कृष्ण, वाराणसी, 13 अगस्त, 2007
10. कला सैद्धान्तिक, नायक लक्ष्मीनारायण, पृ. 18
11. कला सैद्धान्तिक, नायक लक्ष्मीनारायण, पृ. 22

●●

अध्याय षष्ठम्
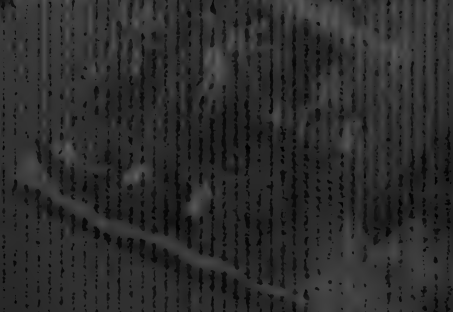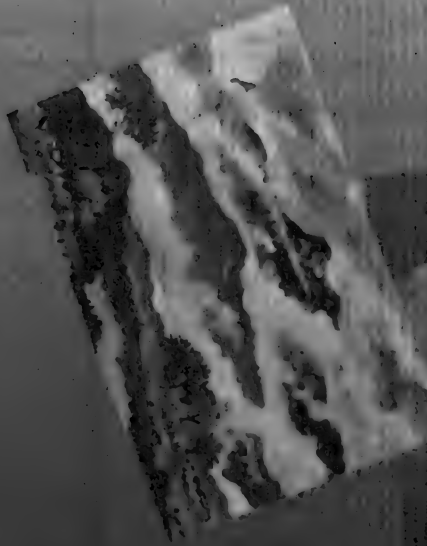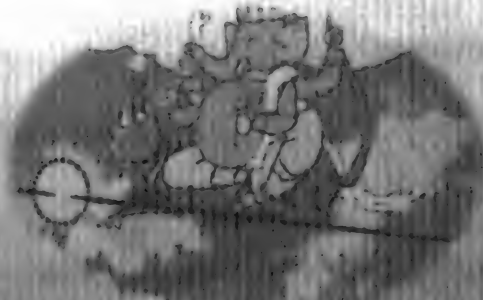
प्रो. धीर के कतिपय प्रमुख चित्रों का कलात्मक विश्लेषण एवं भावनात्मक महत्त्व

भावनात्मक अभिव्यक्ति के लिए कलाकार को एक माध्यम का चुनाव करना पड़ता है । ऐसा माध्यम जो उसकी अनोखी संवेदनशीलता को इतनी गहराई से आत्मसात कर ले कि स्वयं उसके साथ दर्शक के लिए उन दोनों को अलग-अलग ढूँढ़ पाना असम्भव प्रतीत होने लगे, बिल्कुल उसी प्रकार जैसे जलरंग चित्र में जल व रंग को तैल रंग चित्र में तैल व रंग को अलग-अलग देख पाना असम्भव होता है । इक्कीसवीं सदी में मनुष्य की सर्जन-यात्रा में सर्जन के अनेक रूप सामने आये हैं । आज की कलाकार अपनी अभिव्यक्ति हेतु नित नवीन तकनीकों को स्वीकार करते हुए कला-यात्रा को आगे बढ़ाने में अपना योगदान दे रहा है ।

रूप, बिम्ब, आकार, कल्पना के मनोभावों में चित्रण कार्य के प्रारूप से कला-व्याकरण के सिद्धान्त व आधुनिक कलाकरों के सम्दृष्टि से शैलियों के निरन्तर नूतनता से परिचय की अमिट छाप, मन-मस्तिष्क-पटल में जब हमारे सामने ऐसे किसी कला निस्तारण के बारे में जानने की इच्छा शक्ति जागृत होती है तो कला गुरु आर. एस. धीर का नाम सर्वप्रथम मेरे किया-कलापों के अनुसंगत में विद्यमान हो उठता है ।

कला वह चाहे किसी देश की हो वह अपनी सरहदों को पार कर 'अन्तर्राष्ट्रीय' बन चुकी है । सच्चे अर्थों में 'विश्वबन्धुत्व' को वह बढ़ावा दे रही है । शायद इसलिए भी कि 'कला' किसी लिपि के बंधनों से ऊपर आत्मानुभूति का स्वरूप है, जो सिर्फ मानवतावाद का प्रतिनिधित्व करती है और कलाकार इस वाद की एक महत्त्वपूर्ण इकाई बन गया है ।[1]

विश्व की संस्कृतियों में मानव के विकास के साथ ही उनकी कला में भी समय-समय पर परिवर्तन आते रहे हैं और आते रहेंगे । यह एकचक्रीय स्वरूप है । अपनी कला और संस्कृति को एक दूसरे देशों में प्रदर्शित करने का जो सिलसिला आज चल निकला, वह

संस्कृत आमेलन की सहज प्रक्रिया है । सोवियत रूस में भारत महोत्सव के बाद इस दिशा में भारत में आयोजित सोवियत महोत्सव भारत-सोवियत मैत्री को और प्रगाढ़ करता है ।[2]

कला ही एकमात्र ऐसी भाषा है जो विश्व का प्रत्येक मानव बहुत ही आसानी से समझ सकता है । चाहे व किसी भी धर्म व भाषा को जानने वाला हो । आदिकाल से ही कला को भाषा के रूप में प्रयोग किया जा रहा है । इसका प्रमाण गुफाओं में मिले चित्रों से चलता है । कोई भी कलाकार जब चित्र रचना करता है तो उस चित्र के अन्दर कोई न कोई कलात्मक तथा भावनात्मक पहलू जुड़ा होता है ।

जिसकी बाहें अपने घुटनों तक लम्बी है जिसका माथा प्रशस्त और ललाट सुन्दर है, जिसकी आँखें विशाल और कानों तक लम्बी है, जिसकी भौंहें धनुष की प्रत्यंचा (डोरी) की तरह बनी हुई जिसकी छाती किवाड़ों जैसी और कंधे बैल की तरह सुदृढ़ हों, जिसके होठों के कोने बोलने से पहले किंचित मुस्कुरा उठते हैं (अर्थात् मुस्कान इसकी सूचना देती है कि वे अब कुछ बोलने वाले हैं) जिनकी ग्रीवा शंख जैसी और होठ पाटल (गुलाब) की पंखुड़ियों जैसे हैं, जिनकी ठुड्डी पर एक खम है और जिनके मृदु हास से गालों पर किसी गहरी बातचीत का संकेत देने वाले फूल जैसे गड्ढे पड़ जाते हैं, ऐसे रूप वाले राम नाम के व्यक्ति को कौन नहीं जानता जो इक्ष्वाकु वंश में पैदा हुआ है— वाल्मीकी रामायण ।

ऐसी मान्यता है कि दुनिया की भाषा में सबसे पहला पोर्ट्रेट (आकृति चित्र) आदि कवि वाल्मीकि ने बनाया है । लगता है कि हम किसी को साक्षात् देख रहे हैं । जैसे कैमरे से खींचे हुए एक फोटोग्राफ या फिर एक पेंटिंग में जैसे किसी को उभारते हुए देख रहे हों । यह वर्णन मूर्ति कला जैसा चतुरायामी है । भाषा में चित्र बनाने की सम्भावनाओं का यह द्वार महाकवि

वाल्मीकी ने पहली बार खोला है । भाषा में चित्र बनाना और चित्र में कविता बनाना, दोनों काम एक साथ शब्दों के सार्थक चयन से सम्भव हुए । प्रत्येक शब्द के पीछे और शब्दों के बीच छिपी हुई रिक्ति कैनवास का काम कर रही है । किसी भी मंहगे रंग और ब्रश अथवा कैमरे का प्रयोग इसमें नहीं हुआ है । भाषा के अलावा अन्य कोई भी भौतिक पदार्थ इसमें शामिल नहीं किया गया है । भाषा के भौतिक तत्त्वों और निरीक्षण से उत्पन्न अद्‌भुत अनुभव-दृष्टि से ही कवि ने सारा कार्य किया है । यह भाषा और दृष्टि खरीदने से नहीं मिलती है, यह खुद को अनुभव के हाथों गंवा कर कमानी पड़ती है । यह निःशुल्क उपादान जीवन और रक्त की एक-एक बूँद की कीमत पर मिलता है । यहाँ कवि ने जिस समय यह पोट्रेट (व्यक्ति चित्र और व्यक्तित्व चित्र) बनाया होगा, उस समय के अन्न जल और उनके द्वारा ली गयी साँसों का भी, इस चित्र भाषा की रचना में अप्रत्यक्ष योगदान रहा है । कोई भी चित्रकार रचना करते हुए भाषा और स्थितियों का अन्वेषण करता है । यह नहीं हो सकता कि लेखक पहले भाषा ढूँढ़े फिर स्थितियों का निर्माण कर उनसे तारतम्य बिठाए । रचना इतने यांत्रिक ढंग से नहीं हो सकती ।

आज के समय में कवि और लेखक स्थितियों और पात्रों के पोट्रेट बनाना भूलते जा रहे हैं । किसी भी पात्र के हुलिए का लेखन और स्थितियों का मार्मिक वर्णन भी कम होता जा रहा है यथार्थ और यथार्थवादी वर्णन जितना देख रहे हैं, वहीं तक सीमित रह जाता है । भाषा में जो चित्रकारी व कैमरे को मात देने वाला गुण होता था वह विरल होता जा रहा है । भाषा में नक्कासी और पच्चीकारी अगर जरूरत से ज्यादा हो तो अनुभव निष्प्राण हो जाता है, लेकिन अगर ये तत्त्व थोड़ी मात्रा में भी न हो तो भाषा और अनुभव दोनों निष्प्राण लगने लगते हैं । अनुभव को विश्लेषणों से बचाना बहुत जरूरी है और तब भी वहाँ भाषा व अभिव्यक्ति के सारे

विस्मृत गुण मौजूद हो या नये स्मरणीय गुण उत्पन्न हो गये हों तो निश्चय ही कवियों और लेखकों को इस बात की दाद देनी चाहिए कि वह उपमा और प्रतीक आदि से अपनी अभिव्यक्ति को बचाकर भी सार्थक और सुन्दर बना सके ।

पात्र और अनुभव की स्थानीय उपस्थिति से चित्रमयी भाषा, शक्ति व रस ग्रहण करती है । काव्य-तत्त्व की शक्ति और कथा दृष्टि का रस उसे सम्प्रेषणीय और ग्राह्य बनाता है । पात्रों के चहरे मोहरे और उनकी कठ काठी का वर्णन भी बहुत से अंधविश्वासों को तोड़ता है । कानी आँख को निराला ने जिस तरह रोते हुए देखा और पुराणों में पोलियोग्रस्त अष्टावक्र को जिस प्रकार जीवन और जगत की नयी व्याख्या करते हुए दिखाया गया है । दोनों ही पोट्रेट निर्माण की कला के उदाहरण हैं । अब तो लगता है कि पात्रों के हाव-भाव और उनकी स्थानीय परिस्थिति दिखाना जैसे कलाकारों और फोटोग्राफरों का कार्य है । भाषा को हर विधा और हर माध्यम का विकल्प बनना है और यह वर्णन से ही सम्भव होगा । वर्णन की शक्ति जितनी भाषा में है, उतनी दूसरी किसी विधा में नहीं है और इसके लिए सबसे उत्तम व सरल भाषा चित्रकला है जो प्रत्येक वर्ग, भाषा और धर्म के लोग समझ सकते हैं ।

किभी भी चित्र का कलात्मक विश्लेषण करने तथा उसको पूरी तरह से समझने के लिए हमें कला के तत्त्व को जानना अति आवश्यक है । यह तत्त्व इसलिए भी जानना आवश्यक है; क्योंकि इसको जानने के बाद दर्शक चित्र की बारीकियों को भलीभाँति समझ सकता है । कला में सबसे पहला तत्त्व रेखा है ।

रेखा दो बिन्दुओं या दो सीमाओं के बीच की दूरी है, जो बहुत सूक्ष्म होती है और गति की दिशा-निर्देश करती है । कला पक्ष के अन्तर्गत रेखा का प्रतीकात्मक महत्त्व है और वह रूप

की अभिव्यक्ति व प्रवाह को अंकित करती है । अतः साधारण सीमांत व ज्यामितीय रेखाएं चित्र संयोजन में प्रयुक्त रेखाओं से भिन्न होती है । इस प्रकार कलात्मक रेखा किसी भी आकार की गति एवं शक्ति का प्रतीकात्मक रेखांकन है जिसका रसास्वादन नेत्रजनित गतिज दिशा में होता है ।[3] रेखाचित्र का विशेष गुण है । पूर्वी कला में इसका खुलकर प्रयोग किया गया है और आधुनिक कला के विकास में तो इसका अभूतपूर्व सहयोग रहा है । सीधी व वक्र रेखाओं के भिन्न-भिन्न प्रभाव होते हैं । रेखा की प्रखरता व चमक में जहाँ अस्पष्टता, दृढ़ता एवं सामीप्य प्रकट होता है वहाँ कोमल एवं मध्यम रेखाएँ सुकुमारता, मृदुता एवं दूरी को प्रकट करती है तथा दूसरी ओर अस्पष्ट एवं टूटी-फूटी रेखाएँ कमजोरी तथा अति दूरी का भाव लिए रहती है ।[4]

कला के तत्त्व में रूप भी अपना प्रमुख स्थान रखता है । रूप वह क्षेत्र या स्थान है जिसका अपना निश्चित आकार तथा वर्ण होता है, साधारणतया वस्तु की आकृति को रूप कहते हैं । इसको यदि और स्पष्ट करें तो रूप किसी भी पदार्थ का चित्र भूमि पर प्रथम दृश्य प्रत्यक्षीकरण है । रूप का विभाजन बाह्य आकृति के आधार अथवा गुणों के आधार पर विभाजित किया जा सकता है । पूर्व वर्णित सक्रिय तथा सहायक रूप में विभाजन वैज्ञानिक है तथा कला पक्ष में उसका व्यवहार सुविधाजनक है ।

वर्ण कला-तत्त्व का सबसे महत्त्वपूर्ण भाग है इसका स्थान चित्रकला में भी सर्वोच्च है । मानव जीवन में वर्ण का महत्त्वपूर्ण स्थान है । प्रत्येक वस्तु कोई न कोई रंग लिए होती है । वस्तुओं के धरातल में रंग होने के कारण ही वह हमें दिखाई देती है । धरातलों पर प्रकाश की मात्रा कम अथवा अधिक होने से एक ही रंग की वस्तुएँ अलग-अलग दिखाई देती हैं । एक

ही वस्तु बंद कमरे में, धूप में तथा विभिन्न ऋतुओं में अथवा विभिन्न स्थानों पर प्रकाश की मात्रा तथा वातावरण के कारण रंग व्यवस्था की एक ही रंगत के होते हुए भी भिन्न दिखाई देती है । रंगों के प्रति मानव का आकर्षण कभी घटा नहीं है । इसीलिए तो आदिम गुहावासियों से लेकर आधुनिक मानव तक ने सौन्दर्य के विकास में वर्ण का सहारा लिया है । कमरे की रंग व्यवस्था से लेकर बाग-बगीचों में, फूल-पौधों की रंग योजना तक में उसने अपना हस्तक्षेप किया है; क्योंकि रंगों का अपना एक प्रभाव होता है जो मानव की मानसिक भावनाओं को उद्वेलित करने की शक्ति रखता है ।[5] वर्ण प्रकाश का गुण है, कोई स्थूल वस्तु नहीं है । इसका कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है, बल्कि अक्ष पटल द्वारा मस्तिष्क पर पड़ने वाला एक प्रभाव है । प्रकाश किरणों द्वारा ही हम वस्तु के रंग को देखते हैं । रंगों में तरंग गति का अपना महत्त्व है । जितनी अधिक तरंगों की लम्बाई होती है उतनी ही उनकी चाल शीघ्र होती है । तरंगों की लम्बाई के कारण ही उसमें प्रखरता तथा उष्मा का भास होता है ।

तान का भी चित्रों में अपना एक अलग महत्त्व है । तान रंगत के हल्के व गहरेपन को कहते हैं । यह रंगत में सफेद तथा काले के परिणाम का द्योतक है । किसी वर्ण में सफेद व काले की मात्रा के अन्तर से उसके अनेक तान प्राप्त किये जा सकते हैं । तान किसी भी चित्र में प्रयुक्त वर्ण आयोजन की जान है । किसी भी एक वर्ण की सतह पर प्रकाश के एक समान भाव के अभाव में भी उस वर्ण के विभिन्न तान प्रस्तुत हो जाते हैं । इसके विपरीत प्रकाश के एक समान प्रभाव के होते हुए भी वस्तु के एक तलीय न होने पर भी उसके वर्ण के विभिन्न तान प्रस्तुत हो जाते हैं ।

चित्रकला में पोत (टेक्चर) अपनी अलग पहचान बनाये हुए है । किसी भी वस्तु के धरातल का गुण ही पोत (टेक्चर) कहलाता है । इस भौतिक जगत में उस परम शक्ति ने अनेक वस्तुओं का निर्माण किया है । विभिन्न प्रकार के पत्थर, लकड़ियों के रेशे, प्रवाह, वर्ण तथा धरातल फूल पत्तियों की मृदुता का आस्वादन दर्शक को सुखद अनुभूति प्रदान करता है । इसी प्रकार मानव निर्मित अनेक वस्तुओं में विभिन्न प्रकार के धरातलों का निर्माण हुआ । कला तत्त्वों में पोत का विशेष महत्त्व है, अतः चित्रकार को इसके प्रयोग में विशेष कुशलता प्राप्त करना अनिवार्य है । कला गुरु इस कार्य में बहुत ही पारंगत थे ।

अन्तराल चित्र का वह तत्त्व है जिसके अभाव में संयोजन असम्भव है । द्वि-आयामी चित्रभूमि ही चित्र का अन्तराल है । अन्तराल का संकुचित अथवा शाब्दिक अर्थ व्यावहारिक नहीं होगा; क्योंकि कला की भाषा में भूमि का विभक्तीकरण व व्यवस्था अन्तराल के अन्तर्गत आते हैं । प्राचीन भारतीय शिल्प शास्त्रों में भी इसके महत्त्व का वर्णन है । समरांगण सूत्रधार में भूमि बंधन, अभिलाषितार्थ चिन्तामणि में 'स्थान निरूपण' तथा विष्णु धमोत्तर पुराण में स्थान की संज्ञा दी गयी है ।

चित्रकार जिस चित्र भूमि पर अंकन कार्य करता है वह स्पष्टतया द्विआयामी होती है । यही अन्तराल अथवा स्थान होता है । यही चित्रकार का वह क्षेत्र है जिस पर वह रूप का निर्माण करता है । चित्रभूमि का वह क्षेत्र परिमित होने पर भी चित्रकार इस पर असीम अनुभवों को नन्दकित अभिव्यक्ति प्रदान करता है । अक्षत भूमि सभी सम्भावनाओं के लिए खुली है ।

यह कला के तत्त्व थे जिसकी सहायता से दर्शक किसी भी चित्र के कलात्मक पक्ष को जान सकता है । इसके साथ ही कुछ संयोजन के सिद्धान्त हैं जैसे सहयोग, सामंजस्य, सन्तुलन, प्रभाविता, प्रवाह तथा प्रमाण है । सहयोग वह है जो चित्र संयोजन के विभिन्न तत्त्वों में अनुभूत एकता समानता तथा एक प्रकार का सम्बन्ध, जो समस्त संयोजन को एकता के सूत्र में पिरोये रहता है । सामंजस्य कला सृजन का वह सिद्धान्त है जिसके अनुसार चित्रण के सभी तत्त्व यथा— वर्ण, तान एवं रूप आदि एक-दूसरे के साथ मेल खाते हुए प्रतीत हो तथा चित्र में निरर्थक विकर्षण तत्त्व न आने पाये । संतुलन संयोजन का वह सिद्धान्त है, जिसके अनुसार चित्रण के सभी तत्त्व इस प्रकार व्यवस्थित हों कि उनका भार (आकर्षण) समस्त चित्र तल पर समुचित रूप से वितरित रहे ।[6] चित्र में प्रभाविता का तात्पर्य उस सिद्धान्त से है जिसके द्वारा दृष्टि संयाजन के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व पर सर्वप्रथम पड़ती है तथा उसके पश्चात् महत्त्व के क्रमानुसार अन्य तत्त्वों पर तथा अन्य व्याख्याओं पर जाती है । प्रवाह का अर्थ चित्र भूमि पर दृष्टि का स्वतन्त्र अबाध एवं मधुर विचरण अथवा गति होता है ।

संयोजन के महत्त्वपूर्ण भाग प्रमाण को 'सम्बद्धता का सिद्धान्त' भी कहा जाता है । यह आकृतियों का अपना प्रमाण (लम्बाई, चौड़ाई का सम्बन्ध) तथा सभी आकृतियों का एक-दूसरे के सम्बन्ध और सभी आकृतियों, तान तथा वर्ण इत्यादि का चित्रभूमि से सम्बन्ध निश्चित करता है ।

कला-गुरु आर. एस. धीर के सभी चित्र कला तत्त्व तथा संयोजन के सभी सिद्धान्तों पर खरे देखे जा सकते हैं । कला-गुरु समकालीन युग में ख्याति प्राप्त एक लब्ध-प्रतिष्ठित चित्रकारिता जगत के स्तम्भ हैं । आप चित्रों में मानवीय आकृतियों, दृश्य चित्रों, भूखण्ड चित्रों

आदि को विभिन्न माध्यमों से समय की धारा में शैलियों का निमंजन करते हुए क्रमिक विकास की ओर अग्रसर थे । उच्चकोटि का रेखांकन तैल रंगों की निपुणता यथार्थवादी शैलियों के पूँजीभूत अर्जन को अत्याधुनिकता से जोड़ते हुए प्रचलित सीमाओं के संकीर्णता से ऊपर विभिन्न प्रयोगों द्वारा अपनी विशिष्टता को खोजने में संलग्न रहे । निःसन्देह सुन्दर रंगाकार है, चित्रों में रंग गहरे चटख एवं प्रखर हैं । कला गुरु के कुछ प्रमुख चित्रों का कलात्मक विश्लेषण व भावनात्मक महत्त्व इस प्रकार है ।

चित्र सं.-3 'वट पूजा' है ।[10] इसमें एक स्त्री वट वृक्ष की पूजा कर रही है । चबूतरे पर एक साधु ध्यान में लीन है तथा नदी में नावें हैं । यह चित्र भी कम्प्यूटर चित्र है । इसमें रेखाओं का कम प्रयोग है जो भी रेखाएँ हैं वह बहुत ही सशक्त हैं । नाव पर कहीं-कहीं, वृक्ष पर कहीं-कहीं तथा स्त्री व साधु के ऊपर कहीं-कहीं काली रंग की रेखाओं का प्रयोग है । चित्र में रूप बहुत साफ नहीं है, लेकिन कलाकार की भावनाओं को प्रेषित करने में पूरी तरह सफल है । इसमें मुख्य रूप से हरा, नीला तथा पीले रंग की प्रधानता है । इसमें तान तथा पोत का सुन्दर समायोजन हैं । नदी के ऊपर कुछ पक्षी बनाकर चित्र के अन्तराल को समायोजित किया गया है । चित्र में पूरी तरह से सामंजस्य है तथा प्रमाण का पूरी तरह ध्यान रखा गया है । चित्र भावनात्मक रूप से धार्मिकता को ओर मोड़ता है । इसमें दर्शक की धार्मिक भावनाएँ जुड़ी हैं ।

चित्र सं.-19 यदि इस चित्र को देखा जाय तो यह हमें पूरी तरह से अध्यात्म की दुनिया में ले जाता है । 'गणेश जी का विश्व भ्रमण' नामक यह चित्र कम्प्यूटर से बना है ।[10] इस चित्र की रेखाएँ भी कम्प्यूटर के माउस से खींची गयी हैं । जिस प्रकार रूप को माउस से बनाया गया है यह कलाकार की कुशलता को दर्शाता है । लगता है कि रेखाएँ ब्रश से खींची गयी

हैं । इसमें चमकदार तथा सुन्दर रंगों का प्रयोग है । चित्र में तान का प्रयोग माउस द्वारा ऐसे किया गया है जैसे लगता है कि ब्रश द्वारा किया गया है । चित्र में पोत (टेक्चर) देखते ही बनता है । ऐसे लगता है कि पोत के लिए कलाकार ने अलग से विशेषज्ञता हासिल की थी । पोत चित्र को बहुत ही आकर्षक तथा सुन्दर बना रहा है । चित्र में अन्तराल का ध्यान बखूबी रखा गया है । एक काले रंग की रेखा जिसके अग्र भाग पर सूर्य के समान चमकदार वृत्त है, चित्र के अन्तराल को ठीक करती है । एक काले रंग की रेखा जो पहाड़ों के ऊपर है, वह भी चित्र के अन्तराल को संयोजित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं । चित्र की रेखाएँ रूप, रंग तथा टेक्चर एक-दूसरे को सहयोग करके चित्र को एकता के सूत्र में बाँधते हैं । चित्र को देखने के बाद सन्तुलन का ज्ञान बखूबी प्राप्त किया जा सकता है । चित्र को यदि एक नजर देखा जाय तो चित्र पहली ही दृष्टि में दर्शक को पूरी तरह से प्रभावित करता है । चित्र में प्रमाण का पूरा ध्यान रखा गया है । इसमें नीले रंग की प्रधानता है । इसके अतिरिक्त चित्र में लाल, पीला तथा भूरे रंग का भी प्रयोग दिखाई देता है । चित्र को यदि भावनात्मक रूप से देखें तो यह धार्मिक भावना से जुड़ा तथा कम्प्यूटर युग का चित्र है । दर्शक इसको देखकर अपने आपको धार्मिकता की दुनिया में पाता है ।

चित्र सं.-36 दहेज के ऊपर बना एक कोलाज चित्र है । इसमें ब्रश अथवा रंगों से रेखाएँ न होकर कागज के टुकड़ों के किनारे से ही बनती है । इस चित्रों में स्त्री के चेहरे की रेखा, गर्दन की रेखा, कन्धे तथा कपड़े की रेखा एवं अन्य रेखाएँ इस प्रकार प्रतीत होती हैं, जैसे वे पेंसिल या ब्रश से खींची गयी हैं । इसमें रूप का प्रयोग बहुत ही सुन्दर ढंग से किया गया, रूप अपने आप दर्शक को मोड़ता है । इसमें किसी रंग का प्रयोग नहीं है, किन्तु पेपर

कटिंग कर पेपर के रंग से ही पूरा चित्र बनाया गया है । पेपर के रंग ही कटिंग कर इस प्रकार से लगाये गये हैं जैसे लगता है कि ब्रश द्वारा चित्र पूर्ण किया गया है । चित्र में तान (छाया प्रकाश) का भी समुचित ढंग से प्रयोग किया गया है । चेहरे का ललाट प्रकाशमान तथा चेहरे के एक हिस्से पर छाया तथा दूसरे भाग पर उससे ज्यादा प्रकाश दिखाई देता है । चित्र में कागज चिपकाने से पोत (टेक्चर) अपने आप एक विशेष प्रकार का मंत्र-मुग्ध कर देने वाला प्रभाव छोड़ रहा है । चित्र में स्थान का भी विभाजन किया गया । स्त्री का चित्रण एकदम किनारे, ऊपर गोल आकार बनाकर, तो कहीं-कहीं चित्र तल को विभाजित करके अन्तराल को संयोजित किया गया है । चित्र का प्रत्येक भाग तथा रंग सहयोगात्मक प्रतीत होता है । चित्र में रंग, रेखा, तान तथा पोत का सामंजस्य कुशलतापूर्वक किया गया है । चित्र को कागज के अनेक रंगीन टुकड़ों द्वारा संतुलित किया गया है । एक साथ देखने के बाद दर्शक की नजर चित्र के प्रमुख विषय पर सबसे पहले जाती है; क्योंकि इसको प्रकाश में करके अन्य भागों को थोड़ा छाया का प्रभाव लिये बनाया गया है । चित्र में रेखाएँ प्रवाहमान दिखाई देती हैं तथा प्रमाण का ध्यान आकृति के सृजन में रखा गया है । यह चित्र समाज की बुराई के ऊपर बना है । अतः समाज का प्रत्येक वर्ग इस चित्र की मूल भावना के साथ पहली ही नजर में जुड़ जाता है जो इस चित्र की सबसे बड़ी सफलता है ।

चित्र सं.-40 यह हिमालय का दृश्य चित्र है । इसमें हिमालय को सजीव रूप से बनाया गया है । चित्र में रेखाएँ बहुत कम हैं । यह भी माउस द्वारा बनाया गया है । इसमें हिमालय का वास्तविक रूप बनाया गया है । इसमें नीले हरे तथा सफेद रंगों का प्रयोग अधिक है । तान तथा पोत चित्र को पूर्णता की चरमसीमा तक पहुँचाने में पूरा सहयोग देते हैं । चित्र में रंगों,

पोतों तथा तान आदि का समांजस्य बहुत ही सुन्दर है । चित्र में रंगों का प्रवाह देखते ही बनता है । इस चित्र को देखकर दर्शक भावनात्मक रूप से हिमालय से जुड़ जाता है ।

चित्र सं.-55 यह एक वस्तु-चित्र है । इसमें अनेक प्रकार की वस्तुओं का संयोजन किया गया है । इस चित्र की रेखाएँ ज्यामितीय रूप में प्रयोग की गयी हैं । दो रेखाओं द्वारा चित्र चार भागों में बँटा है । इसमें वस्तुओं को बनाते समय रेखाओं को बहुत ही सरल रूप में प्रयोग किया गया है । इसमें रूप को देखा जाय तो घनवादी प्रभाव दिखाई देता है । लेकिन रूप को आसानी से पहचाना जा सकता है । इसमें रंगों का अधिक प्रयोग नहीं है लेकिन बहुत कम रंगों में भी चित्र अपनी पूरी बात कहने में सक्षम है । दीवार पर लगे दृश्य चित्र के रंग हों, कुर्सी के रंग हों, बोतल में रखे सूखे पौधे का रंग हो, विभिन्न पात्रों का रंग हो, सभी रंग एक कुशल कलाकार की ओर संकेत करते हैं । इसमें छाया प्रकाश का भी प्रयोग दिखाया गया है । पोत (टेक्चर) का प्रयोग भी इसके कलात्मक सौन्दर्य में चार चाँद लगाता है । चित्र में स्थान या अन्तराल का पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है, दो रेखाओं द्वारा चित्र चार भागों में विभाजित नहीं होता तो चित्र उतना सुन्दर नहीं लगता । चित्र में कुर्सी, छड़ी तथा अन्य वस्तुएँ एक-दूसरे का सहयोग करती प्रतीत होती हैं । पूरे चित्र में एक समुचित समांजस्य दिखाई देता है । चित्र का प्रत्येक भाग चित्र को कहीं न कहीं से सन्तुलित कर रहा है । चित्र का मुख्य भाग जो टेबल पर रखे गये वस्तु समूह है उस पर सबसे पहले नजर दौड़ती है । इसके बाद क्रमशः अन्य स्थानों पर घूमती है । रेखा तथा रंगों में प्रवाह है । पूरा चित्र प्रमाण के अनुसार बना है, जो इसके पूरे कलात्मक महत्त्व को दर्शाता है । इस चित्र के बोतल में सूखे पौधों को देखकर तथा दीवार पर टंगा दृश्य चित्र देखकर दर्शक पर्यावरण से भावनात्मक रूप से जुड़ता है और सूखे पौधे के स्थान पर हरे पौधे लगाने के बारे में सोचेगा ।

चित्र सं.-66 जैन तकनीकी पर बना है । इसमें लखनऊ व काशी की संस्कृति का समन्वय है ।[8] इसमें रेखाएँ बहुत ही बारीक और प्रभावशाली है । इस चित्र में रेखांकन देखकर लगता है कि इसका रेखांकन किसी कुशल कलाकार ने ही किया है । चित्र की मानवाकृतियों, धरातल तथा अलंकरण में रेखांकन बहुत बारीक तथा मार्मिक है । चित्र को यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो लगता है कि रेखाओं का प्रभाव चित्र में नवीनता के साथ जीवन्तता भर देता है । इस चित्र में रूप भी बहुत मार्मिक ढंग से बनाया गया है । मानवाकृतियों का रूप कुछ-कुछ लोक चित्रों से मिलता है । अलंकरण तथा अन्य वस्तुएँ भी लोक-कला से मिलती लगती हैं, किन्तु रूपों का समायोजन बहुत सुन्दर है । इस चित्र में अत्यधिक रंगतों का प्रयोग किया गया है । यहाँ तक कि काले तथा सफेद रंगों का प्रयोग भी बड़ी सावधानी पूर्वक किया गया है । लाल रंगत की प्रधानता है । साथ ही हरे, पीले, नीले आदि अत्यधिक रंगतों का प्रयोग मिलता है, लेकिन कलाकार की कुशलता के कारण चित्र में कोई भी रंग दृष्टि में खटकता नहीं है । इसमें छाया प्रकाश का प्रयोग बहुत ही कम है । चित्र में पोत (टेक्चर) का बहुत प्रयोग किया गया है जो चित्र को सुन्दरता के साथ-साथ आकर्षक भी बनाता है । चित्र में अन्तराल (स्पेस) का बहुत सुन्दर ढंग से विभाजन किया गया है । एक काले व सफेद रंग की पट्टी ऊपर तथा एक नीचे है जो चित्र में एक सुन्दर स्पेस को दर्शाती है । चित्रों का अन्तराल इस प्रकार है कि दर्शक देखकर प्रफुल्लित हो जाता है तथा चित्र को एकटक देखता रहता । चित्र का प्रत्येक अलंकरण, रेखाएँ, मानवाकृतियां तथा मध्य में ऊपर श्री गणेश तथा भगवान सूर्य आदि सभी आकृतियां चित्र में सहयोग करती दिखाई देती हैं । चित्र में रंगों, रेखाओं, तान, पोत आदि का बहुत ही सुन्दर सामंजस्य दिखाई देता है जो बहुत ही कम कलाकार कर पाते हैं । चित्र के विभिन्न भागों को संतुलित करने के लिए अलंकरण, नाव आदि बनाया गया है । इस चित्र में

चित्र का कोई एक भाग विशेष प्रभावित न करके पूरे चित्र पर नजर एक साथ पहुँचती है । यह भी कलाकार की दक्षता के कारण है । चित्र में प्रवाह तथा प्रमाण का भी समुचित ध्यान रखा गया है । इस चित्र को यदि हम भावनात्मक रूप में देखें तो हमें इस चित्र में आध्यात्मिकता दिखाई देती है ।

चित्र सं.-71 यह चित्र काशी की सांस्कृतिक परम्परा 'बुढ़वा मंगल' पर वाश शैली में बना है ।[7] इसके कलात्मक पक्ष का अध्ययन करने पर यह हमको लगता है कि इस चित्र में रेखाएँ बहुत मार्मिक सुन्दर तथा दर्शक को सम्मोहन में बाँधने के लिए पर्याप्त है । चाहे वह रेखा घाट की छतरी की हो, लालटेन की, नाव की तथा नाव के ऊपर लगी सीढ़ी की, वस्त्रों की अथवा वह रेखा नर्तकी की भाव-भंगिमा की हो । इन सभी में जीवन्तता दिखाई देती है । इस चित्र में रूप को भी महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है अर्थात् कला गुरु ने इसमें रूप का समुचित ध्यान रखा है । चित्र को यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो इसके रंग किसी भी दर्शक को अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं । चाहे वह पत्थर का चबूतरा हो, नाव के ऊपर घर तथा उसका दरवाजा हो अथवा घर की ऊपर की रेलिंग हो, घाट की पहचान छतरी हो अथवा इसमें चित्रित व्यक्ति व नर्तकी हो सभी में रंगों का प्रयोग बहुत ही कलात्मक और आकर्षक ढंग से किया गया है । इसमें रंगों के ही माध्यम से लालटेन के प्रकाश को भलीभाँति दिखाया गया है । इस चित्र में छाया तथा प्रकाश का भी समुचित ध्यान रखा गया है तथा उचित स्थान पर इसको दिखाया गया है । इसमें बहुत ही कुशलतापूर्वक पोत का भी प्रयोग किया गया है जो चित्र की शोभा को बढ़ा देते हैं । इस चित्र में अन्तराल का ध्यान भी बहुत सावधानी तथा कलात्मक ढंग से किया गया है । चित्र को देखने पर पूरा चित्र एकता के सूत्र में बँधा लगता है । प्रत्येक आकृति

एक दूसरे का सहयोग करती प्रतीत होती है । चित्र में वर्ण, तान, पोत आदि में सामंजस्य है । कला गुरु ने चित्र को पूरी तरह संतुलित किया है । इसमें चित्र का मुख्य आकर्षण नर्तकी तथा उसके आस-पस बैठे व्यक्तियों का समूह केन्द्र बिन्दु में है । इसमें रेखा का प्रवाह तथा प्रमाण को भी पूरी तरह से ध्यान में रखा गया है । इस चित्र को काशी की सांस्कृतिक परम्परा से जोड़कर बनाया गया है । इसलिए वहाँ के लोगों की भावनाओं का पूरा ध्यान रखा गया है तथा अन्य दर्शकों की अपेक्षा वहाँ के लोग इस चित्र से अधिक भावनात्मक रूप से जुड़े हैं ।

चित्र सं.-72 यह चित्र एक धार्मिक चित्र है । इसमें गंगाजी के तट पर एक साधु द्वारा ज्ञान की बात बतायी जा रही है । प्रस्तुत चित्र का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि इसमें रेखाओं की कोमलता पर विशेष बल दिया गया है और जहाँ पर जिस प्रकार की रेखा की आवश्यकता है वहाँ उसी प्रकार का रेखांकन है । चाहे साधु की मुद्रा रेखा हो या ज्ञान की बात सुनने वाले पुरुष, महिला या बच्चों की । घाट पर लगी छतरी, लकड़ी के बने चबूतरे या बाँस की सभी रेखाएँ अपनी एक अलग विशेषता लिये है जो कलाकार की रेखांकन में दक्षता को दर्शाती है । इसमें रूप का भी पूरा ध्यान रखा गया है । यदि साधु है तो वह देखने में लग रहा है कि साधु है दर्शक या श्रोता भी दर्शक के रूप में हैं तथा निर्जीव वस्तुएँ लकड़ी का चबूतरा या छतरी भी अपने रूप में है । इस चित्र में रंगों का बहुत आकर्षक प्रयोग है, लकड़ी का रंग, बालू का रंग, शरीर पर पड़े वस्त्र में रंगों का प्रभाव, गंगा नदी में नजदीक से लेकर दूर तक के पानी का रंग या गंगाजी के उस पार बालू के टीलों का रंग हो सभी स्थानों पर रंगों का यथार्थ और कलात्मक प्रयोग हुआ है । इसमें छाया प्रकाश को भी समुचित स्थान है । लकड़ी का नजदीक सिरा गहरी तान या छाया में तथा दूर का प्रकाश में है, जिससे उसका अपना

अलग महत्त्व है । इसी प्रकार छाया प्रकाश का पूरे चित्र में ध्यान रखा गया है । इसमें पोत (टेक्चर) को भी भलीभाँति प्रयोग किया गया है । छतरी में टेक्चर को देखकर कलाकार की कुशलता को जाना जा सकता है । चित्र में अन्तराल अथवा स्थान का भी विभाजन पूरी कुशलतापूर्वक किया गया है । चित्र की प्रत्येक आकृति एक-दूसरे के सहयोग द्वारा एकसूत्र में बँधी है । चित्र को देखकर लगता है कि चित्र में प्रयुक्त रंग, पोत, तान आदि का सामंजस्य पूर्ण चित्रण है । चित्र को पूरी तरह से संतुलित बनाया गया है । चाहे वह छतरी हो, नाव हो, बालू के टीले हो या जूते चप्पल सभी चित्र में संतुलन के अंग हैं । चित्र देखने पर सबसे पहले दृष्टि साधु पर जाती है उसके बाद श्रोता और क्रमशः अन्य स्थानों पर जो चित्र की कलात्मक दक्षता को दर्शाता है । चित्र में रेखाओं और रंगों का प्रवाह समय और परिस्थिति के अनुसार है । चित्र पूरी तरह से प्रमाण को ध्यान में रखकर बनाया गया है । इस चित्र के साथ हिन्दू धर्म को मानने वाले सभी लोगों की भावना जुड़ी है; क्योंकि यह एक धार्मिक चित्र है और चित्र पूरी तरह से सजीव लग रहा है, जिसके कारण दर्शक पहली नजर में ही धार्मिक भावना से जुड़ जाता है ।

चित्र सं.-80 जो एक चित्र संयोजन है । आज के आधुनिक समाज के ऊपर महिलाओं की स्थिति को दर्शाता है । आज की महिलाएँ किस प्रकार आधुनिकता की दौड़ में गलत रास्ते पर जा रही हैं । इस चित्र में भी अधिकांश रेखाओं को ज्यामितीय आकार में बनाया गया है । सरल आकर्षण तथा कोमल रेखाओं का सुन्दर ढंग से प्रयोग है । इसमें रूप को भी सरलीकरण करके बनाया गया है, लेकिन रूप को देखने के बाद कलाकार द्वारा प्रेषित संदेश दर्शक तक बहुत अच्छी प्रकार से पहुँच जाता है । चित्र में रंगों का प्रयोग सीमित है । फिर भी चित्र में कहीं

से किसी भी प्रकार के रंग की कमी नहीं दिखायी देती है । चित्र में मुख्य रूप से लाल तथा नीले रंगों का प्रयोग है । इसमें छाया तथा प्रकाश का प्रभाव बहुत ही सुन्दर ढंग से किया गया है । मेज के ऊपर रखे फल, बोतलों, गमलों तथा गिलासों के पास छाया प्रकाश का बहुत ही सुन्दर प्रयोग देखा जा सकता है । चित्र में पोत (टेक्चर) का प्रयोग चित्र की सुन्दरता को कई गुना बढ़ा देता है । मेज पर रखे केले तथा गुलदस्ते के फूल में इसका प्रयोग कलाकार की कुशलता को दर्शाता है । चित्र में अन्तराल (स्पेस) को बखूबी बाँटा गया है । चित्र को ध्यानपूर्वक देखा जाय तो लगता है कि चित्र का अन्तराल बहुत सोच-समझकर दिया गया है । चित्र की प्रत्येक आकृति चित्र को एकता के सूत्र में सहयोग द्वारा पिरोने का कार्य करती है । चित्र का यदि ध्यानपूर्वक अवलोकन किया जाय तो लगता है कि रंग, रेखा, रूप तथा पोत सभी एक-दूसरे के साथ सामंजस्य बिठाने में समर्पित हैं । चित्र प्रत्येक दृष्टि से पूरी तरह संतुलित है । चित्र की प्रमुख विषय-वस्तु महिला व शराब पर सबसे पहली दृष्टि जाती है । चित्र में हर रंगों तथा रेखाओं का प्रवाह समुचित है तथा चित्र एक दम नपा तुला बना है । चित्र के यदि भावनात्मक पक्ष की ओर ध्यान दे तो लगता है कि महिलाओं की नशे के प्रति बढ़ता झुकाव इस चित्र में प्रमुख है । मेज पर रखी शराब की बोतलें महिलाओं की गलत भावनाओं की ओर दर्शक को मोड़ देती है ।

चित्र संख्या-38 व 82 दोनों ही चित्र सामाजिक व्यंग्य चित्र हैं । यह दोनों चित्र भारतीय कला के प्रमुख कला आन्दोलन 'समीक्षावाद' से जुड़े हुए हैं । चित्र सं.-38 में भारतीय नेताओं को आपातकाल के दौरान श्रीमती इन्दिरा गाँधी द्वारा अनावृत्त किया गया तथा चित्र सं.-82 में सूखे के समय बाँधों से पानी तो छोड़ा जाता है, लेकिन वह किसानों के खेतों तक नहीं पहुँच

पाता है ।[9] इन दोनों चित्रों में रेखांकन बहुत ही सरल है । दोनों चित्रों की रेखाएँ ज्यामितीय आकार में बनायी गयी हैं । इन चित्रों में बहुत ही कम रेखाओं द्वारा चित्र पूरा किया गया है लेकिन रेखाएँ बहुत ही सशक्त हैं, जो चित्र के आकर्षण को बढ़ाती हैं । चाहे वह वृक्ष या वृक्षों की पत्तियों की रेखा हो, कुआँ, नहर, मछली तथा पक्षियों की रेखा हो या चित्र में मानवाकृतियों की रेखा हो सभी बहुत ही सुन्दर रूप में खींची गयी हैं । चित्र में रूपों का तो सरलीकरण किया गया है, लेकिन यह सभी रूप कलाकार की अभिव्यक्ति को दर्शक तक पहुँचाने में सफल है । चाहे वह रूप पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, धरातल, नेताओं आदि के हों सभी कलाकार की अभिव्यक्ति को दर्शक तक सफलतापूर्वक पहुँचाते हैं । दोनों ही चित्रों में रंगों का प्रयोग लगभग एक ही जैसा है । चित्र सं.-38 में लाल तथा भूरे रंग की प्रधानता है । दोनों चित्रों में सपाट रंगों का प्रयोग किया है । चित्रों के रंग दर्शक को कलाकार की अभिव्यक्ति के साथ जोड़ने का सफल प्रयास करते हैं । दोनों चित्रों में छाया प्रकाश का अभाव है । हाँ इतना जरूर है कि एक रंग का प्रयोग गहरी तथा हल्की रंगत में किया गया है, लेकिन सभी सपाट रूप में लगाये गये हैं । चित्र में पोत का प्रयोग भी किया गया है जैसे चित्र सं.-38 में नेताओं के वस्त्रों, वृक्ष के पत्तों तथा पत्तियों आदि में चित्र सं.-82 में कुँआ, खेत, ट्रैक्टर, नहर तथा बाँध आदि में पोत (टेक्चर) को बहुत ही सुन्दर ढंग से दिखाया गया है । चित्र सं.-38 में यदि अन्तराल को देखा जाय तो लगता है जैसे अन्तराल बहुत ही बारीकियों को ध्यान में रखकर किया गया है । चित्र के बायें कोने में सूर्य व साँड़ को बनाकर स्थान का विभाजन सुन्दर ढंग से किया गया है । ऊपर भूरे रंग की झालर की तरह लटकती हुई पट्टी द्वारा स्थान को ध्यान में रखा गया है । चित्र सं.-82 में भी चित्र को कई भागों में विभाजित करके अन्तराल का

भरपूर ध्यान रखा गया है । दोनों चित्रों की आकृतियां, वृक्ष रंग आदि एक-दूसरे को सहयोग कर पूरे चित्र को एक सूत्र में पिरोने का कार्य करती हैं । दोनों चित्रों के रंग, तान, रेखांकन आदि का एक-दूसरे के साथ बहुत ही बढ़िया सामंजस्य है । दोनों चित्रों को देखा जाय तो चित्र अपने आप में बहुत ही सन्तुलित लगते हैं । चित्र सं.-82 में इन्दिरा गाँधी प्रमुख विषय के रूप में वृक्ष के ऊपर बैठी हैं और उस पर सबसे पहले दृष्टि जाती है । चित्र सं.-82 में एक किसान कुएँ से पानी खींचकर खेत में छोड़ रहा है । उस पर सबसे पहले दृष्टि जाती है । चित्रों के प्रमुख विषय दर्शक को तुरन्त अपनी ओर खींच लेते हैं । रंगों तथा रेखाओं का प्रवाह सुन्दर है । चित्र में प्रमाण को ध्यान में रखकर कलात्मकता का परिचय दिया गया है । चित्र सं.-38 में भारतीय नेताओं द्वारा जनता की भावनाओं से खिलवाड़ करते हुए एक-दूसरे के साथ प्रतिशोध की भावना को बहुत ही सुन्दर ढंग से दिखाया गया है । चित्र सं.-82 में नेताओं के द्वारा घोटालों को दिखाया गया है, जिसमें बाँध से पानी चलकर खेतों तक नहीं पहुँचता है इसमें भारतीय नेता जनता को झूठा आश्वासन देकर उनकी भावनाओं के साथ मजाक कर रहे हैं । इस प्रकार दोनों चित्र भारतीय जनमानस की भावनाओं के साथ जुड़ा है ।

चित्र संख्या-83 एक प्रतीकात्मक संयोजन है । इसमें शिवलिंग से सम्बन्धित अनेक पहलुओं को प्रतीक रूप में दर्शाया गया है । रेखांकन व्यंग्यात्मक तथा सीधा दोनों प्रकार का है । बीच में दो रेखाओं द्वारा चित्र तीन भागों में विभाजित है । चित्र में सभी रूपों को प्रतीक रूप में दिखाया गया है । जैसे त्रिशूल, सर्प एवं धरातल आदि । इसमें रंगों का प्रयोग बहुत ही संतुलित ढंग से किया गया है । अधिकांश गहरी रंगतों का प्रयोग किया गया है । काले तथा नीले रंगों की प्रधानता है । चित्र में तान का प्रयोग भी बहुत ही मार्मिक ढंग से किया गया है ।

नीले रंग के शिवलिंग में ऊपर नीला रंग हल्के तान तथा नीले नीले गहरे रंगत में लगाया गया है । चित्र में पोत का प्रयोग भी है । सबसे नीचे धरातल जो नीले रंग की गहरी रंगत में बनाया गया है । इसमें पोत का प्रयोग चित्र की सुन्दरता को बढ़ा देता है । चित्र में अन्तराल का ध्यान बहुत ही अच्छी प्रकार से रखा गया । चित्र को अनेक रेखाओं द्वारा विभाजित करके अन्तराल को अच्छी प्रकार समायोजित किया गया है । चित्र में शिवलिंग, धरातल, त्रिशूल आदि एक-दूसरे को सहयोग करके चित्र में एकरूपता लाते हैं । चित्र में रेखाओं, रूपों, पोत, तान तथा रंगों का सामंजस्य बहुत ही सुन्दर ढंग से किया गया है । अनेक प्रकार के शिवलिंग तथा प्रतीकों द्वारा चित्र को पूर्णरूप से संतुलित किया गया है । एक दृष्टि में देखने पर सबसे पहली दृष्टि बड़े शिव लिंग पर जाती है । तत्पश्चात् चित्र के अन्य भागों में विभाजित होती है । चित्र में रंग तथा रेखाएँ प्रवाहमान हैं तथा चित्रांकन में प्रमाण का ध्यान रखा गया है । इस चित्र को देखकर दर्शक तुरन्त आध्यात्मिक दुनिया में प्रवेश कर जाता है । यह संयोजन एक पौराणिक देवता शिव को लेकर बनाया गया है । इसलिए दर्शक की भावनाएँ तुरन्त आध्यात्मिकता से जुड़ जाती हैं । इस प्रकार यह एक धार्मिक भावनात्मक चित्र है जो दर्शन को आध्यात्मिकता की ओर ले जाता है ।

चित्र सं.-84 जो लोक कला से प्रभावित चित्र है । इस चित्र में संगीत व नर्तकी के जीवन को लोक-शैली में दर्शाया गया है । इस चित्र की रेखाएँ बहुत ही सरल तथा अधिकांश वृत्त चाप में खींची गयी हैं और चित्रों में रेखाएँ लय रूप में हैं । रेखाओं को देखकर ही इसमें लोक-कला का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है । चित्रों के रूपों पर लोक-जीवन शैली का प्रभाव है । इस चित्र में रंगों का प्रभाव देखा जाय तो वे भी लोक शैली की ओर इंगित करती हैं । रंग बहुत

सीमित मात्रा में है और रंगों का चयन लोक-कला से मिलता-जुलता है । लाल और नीले रंग का प्रयोग कम है, लेकिन उनको इस प्रकार से लगाया गया है कि वे आँखों को कहीं से भी बाधक नहीं बन रहे हैं । रंगों में तान का प्रयोग नहीं के बराबर है । चित्र में पोत (टेक्चर) का बहुत ही सुन्दर प्रयोग पृष्ठभूमि पर देखा जा सकता है । चित्र को कई भागों में बाँटकर चित्र में अन्तराल को ध्यान में रखा गया है । चित्र के सभी भाग एक होने का दम्भ भरते हैं । चित्रों में सभी प्रकार का सामंजस्य दिखायी देता है । चित्र में रंग रेखा तथा अन्य भाग चित्र को पूरी तरह सन्तुलित किये हुए हैं । चित्र में मुख्य आकृति बड़ी तथा अन्य आकृतियाँ छोटी व धुँधली हैं । एक प्रकार से देखा जाय तो चित्र पूरी तरह लोक शैली पर आधारित हैं । इस चित्र को यदि भावनात्मक रूप से देखा जाय तो यह दर्शक को लोक-शैली की भावनाओं से जोड़ देता है ।

चित्र संख्या-85 'सब्जी बेचने वाली' में ग्रामीण जीवन का एक सुन्दर चित्रण है ।[11] इसमें एक महिला सर के ऊपर सब्जी रखकर जा रही है तथा पृष्ठ भाग में खेत को दिखाया गया है जो हरा-भरा है तथा बीच में कहीं-कहीं वृक्ष है । चित्र में रेखाओं का प्रयोग बहुत कम है । इसको भी कम्प्यूटर के माउस से बनाया गया है । चित्र में हरे तथा भूरे रंग का प्रयोग अधिक है । चित्र में तान का तथा पोत का प्रयोग भी सुन्दर ढंग से किया गया है । बादलों तथा पेड़ की पत्तियों पर पोत का प्रयोग बहुत ही कलात्मक ढंग से किया गया है । चित्र सन्तुलित तथा सामंजस्यपूर्ण है । प्रत्येक भाग चित्र को पूर्ण बनाने में अपना सहयोग कर रहा है । बादलों में रंगों का प्रभाव देखते ही बनता है । चित्र को दर्शक देखकर ग्रामीण जीवन की भावनाओं से जुड़ जाता है जो इस चित्र की सफलता को दर्शाता है ।

चित्र संख्या-112 जो एक प्राकृतिक दृश्य-चित्र है । इसमें पर्यावरण को ध्यान में रखकर बनाया है । चित्र की रेखाएँ जो वृक्ष की टहनियाँ हैं । एकदम वास्तविक प्रतीत होती हैं । इसमें वृक्षों का रूप हमें प्रकृति की ओर खींचता है । चित्र में हरे तथा पीले रंग का अधिक प्रयोग तथा कहीं-कहीं नीले रंग का प्रयोग है । चित्र में टेक्चर देखकर लगता है कि कलाकार ने चित्र को केवल टेक्चर से ही पूर्ण किया है जो अपने आप में एक नवीन प्रयोग है । इतना बढ़िया टेक्चर शायद ही किसी कलाकार की कृतियों में देखने को मिलता है । चित्र संतुलित तथा रंगों का प्रवाह बहुत ही सुन्दर है । इस चित्र में सूखते पर्यावरण की ओर ध्यान खींचा गया है । सामने कुछ छोटे-छोटे वृक्ष हरे तथा पृष्ठभूमि में एक सूखा पेड़ बहुत बड़ा बनाया गया है जो दर्शक की भावनाओं को पर्यावरण से जोड़ देता है ।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि कला गुरु आर. एस. धीर के सभी चित्रों में कला तत्त्वों तथा संयोजन के सभी सिद्धान्तों का भरपूर ध्यान रखा गया है, जो उनको कलाकारों की दुनिया में शीर्ष पर ले जाने के लिए पर्याप्त है । चित्र पूर्णरूप से कलात्मक तथा सौन्दर्य की पराकाष्ठा है । प्रो. धीर के चित्र को दर्शक देखकर इनकी भावनाओं को तुरन्त समझ जाता है । अर्थात् कला गुरु के सभी चित्र उनके द्वारा दिये गये संदेश को दर्शक तक पहुँचाने में सफल हैं जो कलाकार की सबसे बड़ी सफलता है ।

शोषण, उत्पीड़न, भूखमरी, अशिक्षा, बदहाल जिन्दगी आदिम युगीन बर्बरता तथा इन सबसे विरुद्ध संघर्ष तथा प्रतिशोध की परिस्थितियाँ भारत में मौजूद हैं । इन्हीं परिस्थितियों से चित्रकारों को अपनी कला के लिए विषय-वस्तु भी उपलब्ध होती है । कलाकार समुचित संयोजन के बिना आज कुछ महत्त्वपूर्ण दे पायेगा ऐसा नहीं कहा जा सकता । वास्तव में आज एक चित्रकार के सामने यही रचनात्मक चुनौती है, जिसको कला-गुरु आर. एस. धीर ने

चुनौती के रूप में स्वीकार कर सफलता प्राप्त की । रंग और आकारों के बिम्ब में विधाओं की भिन्नता से पृष्ठभूमि पर कृतियां अंकित हैं । आकृतियों में जीवन धार है यही आधार हमें विस्तृत स्पष्टतावाद की ओर इंगित करता है ।

कला-गुरु की कृतियों में कलाकार के मानसिक पटल, रचनात्मक सहयोग, गुणात्मक परिवर्तन, अन्तरजगत के सम्बन्ध की धर्मिता सम्पूर्णता की सूचक है । सशक्त अभिव्यक्ति विश्वजनित प्रकृति के गुण उनके असाधारण व्यक्तित्व के आभूषण हैं, जिनका चमत्कार अनगिनत शिष्यों के प्रति स्नेह का पुरस्कार है । इस पुरस्कार के उच्छिष्ट वांछित भाग का मैं भी आकांक्षी हूँ ।

●

सन्दर्भ

1. समकालीन कला, नवम्बर 1987 / मई 1988, अंक 9-10, सम्पादकीय ।
2. समकालीन कला, नवम्बर 1987 / मई 1988, अंक 9-10, सम्पादकीय ।
3. रूपप्रद कला के मूलाधार, शर्मा-अग्रवाल, पृ. 13
4. रूपप्रद कला के मूलाधार, शर्मा-अग्रवाल, पृ. 14
5. रूपप्रद कला के मूलाधार, शर्मा-अग्रवाल, पृ. 28
6. रूपप्रद कला के मूलाधार, शर्मा-अग्रवाल, पृ. 64
7. 'हिन्दुस्तान' दैनिक समाचार-पत्र, वाराणसी, गुरुवार, 4 अप्रैल, 2002
8. निजी सम्पर्क, शुक्ल प्रो. रामचन्द्र, 5 जून, 2006
9. निजी सम्पर्क, शुक्ल प्रो. रामचन्द्र, 5 जून, 2006
10. निजी सम्पर्क, अग्रवाल विनय कृष्ण, 10 जून, 2007
11. निजी सम्पर्क, अग्रवाल विनय कृष्ण, 10 जून, 2007

●●

अध्याय सप्तम
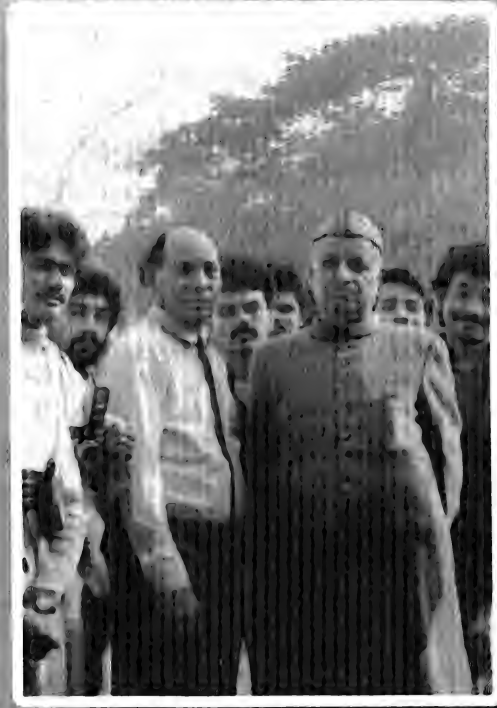
उपसंहार

7.1 प्रो. धीर की कला-शैली का विवेचन

7.2 प्रो. धीर का लखनऊ एवं बनारस के कलाकारों में स्थान एवं योगदान

7.3 प्रो. धीर का राष्ट्रीय कला जगत में स्थान एवं योगदान

प्रो. आर. एस. धीर के चित्रों को देखकर रस-ग्राहकों को उनकी कला के सम्मोहन से उबर पाना अत्यन्त कठिन होता है । उन्होंने भारतीय कला वाश के बेजोड़ कलाकार बी. एन. आर्य से विशेष प्रेरणा ग्रहण की । प्रारम्भ से ही उनके वाश चित्रों ने कला-प्रेमियों का ध्यान आकर्षित किया । बड़ी संख्या में दर्शकों ने उनके वाश चित्रों को खरीद कर उन्हें वाश चित्रण करने के लिए प्रोत्साहित किया । उनके वाश चित्र देश के अनेक संग्रहालयों की शोभा बढ़ा रहे हैं । इनके अनेक चित्र विशिष्ट कला-प्रेमियों के संग्रहों में भी है । समाज के प्रत्येक वर्ग के लोगों के प्रति उनकी सहानुभूति थी । वह अपने को सच्चा मानव पहले मानते थे और कलाकार बाद में । वे अपनी कला द्वारा जन-जीवन में निखार लाना चाहते थे, यही कारण है कि वे अपने चित्रों में जीवन और धरती का मोह नहीं त्याग पाये । चित्रों में वे विषयों को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करते । यहीं पर उनके वाश चित्र परम्परागत वाश चित्रों से अलग हो जाते हैं, उन्होंने अपने चित्रों में ग्रामीण पहलुओं से लेकर नगर के विभिन्न स्तर के जीवन की झाँकियाँ प्रस्तुत की है ।

प्रो. धीर के चित्रों में तकनीकी आधार तथा विषय दोनों में अनेक प्रकार की विभिन्नता पायी जाती है, यह विभिन्नता उनके प्रयोगवादी विचारधारा के कारण है । रंगों के माध्यम तथा आकृतियों की दृष्टि से प्रकाश का प्रभाव, लाल रंग व लयात्मक गुण उनकी कलाकृतियों का मुख्य आकर्षण बना हुआ है, जिसके द्वारा उनकी एक अलग पहचान हुई । मुझे कला गुरु के चित्रों के विषय बहुत ही प्रभावित तथा उनके जीवन का संघर्ष मुझे बहुत प्रेरित करता है । वे एक मध्यमवर्गीय परिवार से सम्बन्धित विलक्षण प्रतिभा के कलाकार थे, जिन्होंने अपनी प्रतिभा को इतना अधिक विकसित किया कि स्वयं को भारत के जाने-माने कलाकारों में सम्मिलित

किये । प्रत्येक कलाकार की अपनी एक तकनीक होती है । कृतियों के कठिन सार के होते हुए भी मैं विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि उनका चित्रण विधान अपने आप में सरलतम है, जिसमें बहुत से चित्र यादाश्त के आधार पर व कुछ कल्पनाओं तथा कुछ स्कैच के आधार पर बने हुए हैं ।

कला-जीवन की लम्बी साधना में श्री आर. एस. धीर ने अनेक उतार चढ़ाव देखे हैं । कला गुरु की कला कई मोड़ों से होकर गुजरी है, लेकिन सबसे ज्यादा उल्लेखनीय बात यह है कि इस लम्बी साधना में कभी भी अपने कार्यों को विराम नहीं दिया । चित्रांकन करने के इस अटूट सिलसिले में यह धारणा बनी की कला-गुरु अपने चित्रों की दुनिया में खोये रहते हैं तथा उनकी प्रत्येक प्रदर्शनी उनके पिछले कार्यों की याद दिलाती है ।

कला के जीवन में कदम रखना बहुत आसान है पर उस जीवन में लगातार आगे बढ़ते रहना कठिन है । कला के उच्च शिखर तक पहुँचने के लिए मेहनत और लगन की आवश्यकता होती है जिको कला-गुरु ने साहस और धैर्य के साथ पूरा किया । नवाबों के शहर लखनऊ में जन्में, पले तथा आगे चलकर लखनऊ कला महाविद्यालय से कला की कलात्मक बारीकियों व सूक्ष्म चिन्तन की कला रूप निधि को अंगीकार कर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्राध्यापक के तौर पर लम्बे समय तक कार्य किये ।

प्रो. धीर के कैनवास के आस-पास जो भी एक बार घूमता वो हमेशा के लिए उनका चहेता बन जाता । कुछ इस प्रकार का उनका व्यक्तित्व व कैनवासी कलात्मक जादू था । गहरी अन्तर्दृष्टि अर्थात् संवेदना और अटूट धीरज से ही उन्होंने बराबर चित्रण किया । उनकी कला इस प्रकार की है कि जो तत्काल में हमें अपनी ओर खींचकर हमेशा के लिए देखने को प्रेरित

करती है । वे कृतियों में अपनी उपस्थिति का अहसास कराते हैं । इनकी कला की दुनिया एक जीवन्त पहेली है जो अपने आप प्रकट हो जाती है तथा हमें तलाशने के लिए प्रेरित करती है ।

श्री धीर न कभी थकने वाले, न कभी क्रोधित होने वाले तथा चिन्तामुक्त स्वभाव के थे । वे सदैव हँसमुख रहते तथा धन और यश के विकार से मुक्त थे । व्यक्ति चित्रों में इन्होंने चित्रित व्यक्ति का स्वभाव भी उतार दिया है । ये अपने चारों ओर के तत्काल के वातावरण और लोगों का भी अकंन करते थे । उन्होंने गरीब जनता तथा प्रकृति के मनोरम दृश्य का भी चित्रण किया । उनमें निराशावादिता व मनोवैज्ञानिक दबाव तथा कुण्ठा का नामों-निशान नहीं था । मानवाकृतियों में वे गति पर अधिक ध्यान देते तथा संयोजन में स्थितियों और मुद्राओं का जीवन को स्पन्दन के साथ लयात्मक रूप में अंकित करते थे । प्रो. धीर ने मानवाकृतियों में सुकोमलता तथा अपार मोहकता भर दी । इन्होंने मनुष्यों के मन, स्थितियों तथा मुद्राओं की सूक्ष्मता को बड़ी कुशलता से चित्रों में स्थान दिया है ।

प्रो. धीर ने सर्वत्र तकनीकी की सरलता का ध्यान रखा है । सुकुमारता व मधुरता उनकी कला के प्रधान गुण हैं । इनकी रेखाओं में स्पष्टता तथा कोमलतायुक्त सौन्दर्य दिखाई देता है । भावपूर्ण कल्पना, लय, सुकोमल, रेखांकन तथा कोमल रंग योजना इन सबका उनकी कला में बहुत ही सुन्दर समन्वय हुआ है । इन्होंने सदैव कला के उत्थान मार्ग पर चलकर कला-कृतियों को भावपूर्ण बनाया है । इनकी कला आकृति रचना से प्रेरित है जिनमें भावानुभूति की गहराई पर अधिक बल दिया गया है । ये अपने कला गुरु श्री बद्रीनाथ आर्य के प्रति पूर्णतः

समर्पित होकर भी उनकी कला-शैली की अनुकृति नहीं की अपितु एक मौलिक शैली की उद्भावना की ।

कलाकार धीर की आकृतियाँ शास्त्रीय परम्परागत रूपों पर आधारित न होकर भारतीय लोक-जीवन से प्रेरित है । चमकदार कोमल रंगों के साथ अन्य रंगों का समावेश करके चित्रों में संगीतमय वातावरण का सृजन करते थे । कला गुरु का रेखांकन अद्वितीय है । छाया प्रकाश पर अधिक ध्यान, रंगों का विभिन्न बलों में विभाजन, प्रकाश के प्रभावों को ध्यान में रखकर किया गया है । जल रंग के अतिरिक्त तैल, एक्रेलिक रंग, पेस्टल रंग तथा खनिज आदि में बहुत से चित्रण कार्य किए । प्राचीन तथा कुछ परम्परागत विषयों के साथ-साथ उन्होंने समकालीन जीवन से प्रेरणा लेकर अधिक चित्रांकन किया है ।

दृश्य चित्र तथा सामाजिक विषयों के चित्र एक समान प्रभावशाली हैं । इन्होंने अपने चित्रों में आकृतियाँ वास्तविक शारीरिक अनुपातों आदि को ध्यान में रखकर बनायी है । इन्होंने अपने गुरुओं तथा उनकी वाणी पर पूरा विश्वास किया । उनकी बतायी गयी शिक्षा को जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया । इन्होंने अपने जीवन का अधिक समय कलाकृतियों के सृजन में लगाया । चित्र के माध्यम से अपने विचारों की भाषा को चित्रपट पर चित्रित किया और दर्शकों ने उसे भलीभाँति आसानी से पढ़ा जिसके कारण प्रो. धीर का नाम उत्तर प्रदेश के प्रसिद्ध चित्रकारों के साथ सम्मान से लिया जाता है । श्री धीर अपनी सृजनशीलता व कलात्मकता के द्वारा चित्र में ऐसा वातावरण उत्पन्न किए जैसा एक चित्र में दर्शक खोजा करता है । चित्रों को देखकर दर्शक चित्र के वातावरण में पूरी तरह से खो जाता है जो उस चित्र की सफलता को दर्शाता है ।

श्री धीर रंगों को सरस बनाकर ज्योतिर्मय आवरण से आच्छादित कर देते हैं । प्रत्येक तत्त्व का निजी महत्त्व होता है और उसका कुशलतापूर्वक प्रयोग कलाकार की कुशलता को दर्शाता है । कला गुरु चित्रों में मौलिकता के सृजन के लिए विभिन्न प्रकार के रूपों का प्रयोग करते जो एक-दूसरे से पृथक् होते । प्रत्येक चित्रों में सौन्दर्य तथा एक निश्चित भाव होता है, जिसे दर्शक अपने अनुभव ज्ञान, तथा भावनाओं के आधार पर पहचान सकता है । रूपों तथा आकृतियों की विभिन्नता ही एक कलाकार के चित्रों को दूसरे कलाकार के चित्रों से अलग करके कलाकार की पहचान बनाती हैं । श्री धीर प्रारम्भ से ही आत्मिक संवेदनाओं के आधार पर प्रकृति के बाह्य रूपों से प्रेरणा लेकर अपनी विशिष्ट शैली के माध्यम से उसे मौलिक रूप में परिणित किये । इनकी प्रत्येक रेखा में प्राणों का स्पन्दन है । यही कारण है कि उनकी प्रत्येक कोमल रेखा ने उनके द्वारा बनाये गये आकारों तथा चित्रों में प्राणों का संचार कर दिया । इस प्रकार बंगाल स्कूल से प्रभावित सभी कलाकारों ने रेखाओं की नयी अभिव्यक्ति को खोजकर अपने आपको भारतीय कला में एक महत्त्वपूर्ण स्थान पर स्थापित किया ।

ब्रश तथा नाइफ का प्रयोग बहुत ही स्वाभाविक और कुशलतापूर्वक करते थे । चित्रों को देखने से लगता है कि कोई वस्तु या फार्म तेजी के साथ निकल रहा है । कला गुरु ब्रश तथा नाइफ द्वारा रंग के माध्यम से चित्र में एकरसता उत्पन्न करते थे । उनकी कृतियों में कभी-कभी घनवाद तथा भविष्यवाद का बहुत ही व्यापक प्रभाव दिखाई देता है । लोगों की आस्था और विश्वास को अभिव्यक्त करने में वे प्रत्येक क्षण उन घटनाओं को पकड़ने की चेष्टा करते थे जो सामने प्रकट होते हैं । इनके चित्रों में लोक-जीवन की गतिविधियाँ दिखाई देती हैं, जैसे लोग बनारस आतें हैं और गंगा में स्नान, पूजा, अर्चना करते हैं और इस प्रकार तृप्त हो जाते हैं जैसे

उन्हें जीवन का सब सुख मिल गया हो । इनके चित्रों में रंगों को भी महत्त्व दिया गया है; क्योंकि रंगों में अपना व्यक्तित्व और आत्मा झलकती है तथा ताजगी भी दिखाई देती है ।

इनके चित्रों में अधिकांशतः उल्लसित रंग ही देखने को मिलते हैं । कृतियों में उदासी नाम की कोई जगह नहीं है । उसमें एक प्रकार का आश्चर्य और नाटकीय प्रकाश भी देखने को मिलता है । इन सबके प्रभाव से कृतियों में आकर्षण पैदा हो जाता है । इनकी कृतियों में काफी निर्भीक गति होती है जो आज के वर्तमान जीवन से उत्पन्न गति का परिचायक है ।

कुछ प्रयोगात्मक कृतियों में इतने ज्यादा रंग हैं कि दृष्टि चारों ओर घूमती है और साथ ही एक रंग में बने चित्र भी बड़े मोहक लगते हैं । रंगों के इन भावनात्मक गुणों के कारण ही हमें एक विशेष प्रकार की उत्तेजना का संचार करते हुए आनन्द की अनुभूति प्रदान करती है । चित्रों में प्रयुक्त रंगों से यही सीख मिलती है कि मनुष्य को हर हाल में खुश रहना चाहिए । चित्रों में प्रतीकात्मक भाव न देकर सरल और गम्भीर भाव को अभिव्यक्त करते हैं । चित्रों के अधिकांश विषय परम्परागत तौर पर होते हैं, लेकिन उनकी शैली आधुनिक है जैसे लगता है कि उनके चित्र परम्परा व आधुनिकता की समन्वय प्रस्तुति है ।

श्री आर. एस. धीर की कला पर बंगाल शैली का प्रभाव मुखरित होता है । जो वर्तमान के भटकती हुई जगत में एक ठहराव स्वरूप परिलक्षित होती है । इनके चित्रों में विषयवस्तु आम आदमी के बहुत करीब है । दुःख और सुख को देखने का अपना अलग नजरिया रखते थे । उनके अनुसार कलाकार की कला को लोग तभी जानेंगे जब वह अपनी कला को लेकर विभिन्न मंचों पर उपस्थित होगा । कलात्मक विषयों पर समय-समय पर सामूहिक विचार-विमर्श भी आवश्यक है । इसके लिए भ्रमण करना आवश्यक है । विभिन्न सामाजिक बदलाव

और राष्ट्र निर्माण में कला का योगदान महत्त्वपूर्ण है । यदि समाज के साथ कला व कलाकार का अन्तः सम्बन्ध विकसित न हो पाये तो वह कला एवं कलात्मक शिक्षा दोनों व्यर्थ है ।

प्रो. धीर ने अधिकांश आकृति चित्रण की आधारभूमि को बनाये रखते हुए भारतीय आधुनिक कला की मूल विचारधाराओं को आत्मसात् किया तथा अपनी शैली का विकास करते हुए अपनी कला शैली में क्रमशः परिवर्तन भी किये । यह परिवर्तन इनकी निजी मानसिकता तथा अनुभवों के आधार पर थी । कला-गुरु आरम्भ से ही कला और कला क्षेत्रों की कलात्मक प्रतिभा के विकास में लगे रहे । चित्रों को कैनवास के अनुसार संयोजित करते कोई स्थान दबे न, चित्र प्रत्येक स्थान पर आकर्षण लगे, कभी कोई कमी न रहे इसका हमेशा ध्यान रखते थे । चित्र कैनवास पर रेखांकन से लेकर रंग लगाकर पूर्व में कई बदलाव कभी-कभी आवश्यकता के अनुसार करते थे ।

कभी-कभी सीमित रंगों के माध्यम से ही चित्र को पूर्ण कर देते थे, जो दर्शकों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए पर्याप्त था । नाईफ द्वारा शीघ्रता से लगाये गये रंग चित्रों में विशेष आकर्षण पैदा कर देते जो बरबस ही दर्शकों का ध्यान आकर्षण करते हैं । चित्र में टेक्चर के कारण चित्र की आकृतियाँ ही नहीं वरन् सम्पूर्ण धरातल ही सजीव प्रतीत होता है । इन्होंने आकृतियों की रचना में पूर्णतः भारतीय प्रमाण को महत्त्व दिया है । वह पूर्णतः मौलिक, ताजगी व शक्ति से परिपूर्ण व लययुक्त है । अतः इनकी कला को पूर्णरूप से भारतीय कहा जा सकता है ।

अपने छात्रों के प्रति भी उनका व्यवहार स्नेहपूर्ण था । ये उनको अपनी मौलिकता का विकास करने के लिए सदैव प्रोत्साहित करते रहे । आदर्श कला के कारण इनकी कला को

लोक स्वीकृत मिली हुई है । इन्होंने ब्रश नाईफ के प्रयोग द्वारा चित्र के विशिष्ट भाग पर टेक्चर के विशिष्ट प्रभाव के लिए ब्रश का असाधारण ढंग से संचालन करते थे जिससे कृतियों का सौन्दर्य कई गुना बढ़ जाता था । प्रायः यह कार्य चित्रण के अंतिम चरण में विशिष्टता के लिए करते थे ।

अपने अध्ययन काल से ही प्रकृति के अत्यन्त समीप रहे । इन्होंने सदैव के लिए समर्पित होते रंग रूप, जीवों का प्रकृति के साथ सामंजस्य, रेगिस्तानों, सिलाखणों, झरनों, सागर की लहरों का उफान, बादलों आदि के साथ तथा मौसम, ॠतुओं के साथ सामंजस्य को आत्मसात कर लिया । इनकी दृष्टि सधी हुई अंगुलियों से तूलिका का संचालन करते हुए उस समय आकारों व स्वाभाविक अंकन एवं वर्णों का प्रवाहपूर्ण प्रयोग करती थी । सीमित वर्णों के प्रयोग से प्रकृति की लावण्यमयी छटा को अपने चित्रों के छोटे धरातल पर स्वाभाविक रूप से साकार करने में सिद्धहस्त कला गुरु रघुवीर सेन धीर जी की प्रारम्भिक शिक्षा लखनऊ कला एवं शिल्प महाविद्यालय में तात्कालकि वर्चस्व प्राप्त शैली 'वाश' में विशेष रूप से हुई जिसमें विशेषता प्राप्त कर ग्राफिक, ग्वास, टैम्परा व तैल माध्यम आदि में उल्लेखनीय कार्य करते हुए कोलाज विधा में लोकप्रियता प्राप्त कर, स्टिल लाइफ को आधुनिक तरीके से प्रस्तुत किया । स्टिल लाइफ रचना के समय उसी शैली में ही निम्न विषयों तथा दैनिक जीवन धार्मिक अनुष्ठान, पौराणिक व आध्यात्मिक इत्यादि पर कार्य करते हुए आपकी कला-यात्रा में एक विराम आया जिसके उपरान्त आपके चित्रों की नवीनतम शैली जो मधुवनी लोक कला से प्रभावित डिजाइन एवं अमूर्त दोनों के समक्ष प्रस्तुत हुई ।

विषयों के अनुसार अपने चित्रों का सहजीकरण कर कला को और भी संग्राह्य व सफल बनाने का प्रयास किया जिसमें एक चश्म चेहरे वाली आकृतियाँ जो भारतीय वेशभूषा से सुसज्जित हैं। संयोजन में पृष्ठभूमि व आकारों के समांजस्य को ध्यान में रखते हुए परिपक्व वर्णो को एक अलग ही महत्त्व प्रदान किये हैं।

यदि हम इनकी कला यात्रा में जल रंग चित्रों पर दृष्टिपात करें तो लगता है कि अब तक अविस्मृत समस्त शैलियों से पूर्णतः पृथक् प्रभाव सम्पन्न भव्य सृजन है, जिसमें जल रंगों की पारदर्शिता बहाव और तूलिका संचालन आपके प्रौढ़ अनुभव, पैनीदृष्टि और प्रकृति के विभिन्न आकारों पर अंगुलियों की विशेष पकड़ परिलक्षित होती है, जिसका लखनऊ से कई बार प्रसारण होने के कारण उत्तर प्रदेश के कला प्रेमी भरपूर रस प्राप्त कर चुके हैं। वाश शृंखला के कुछ चित्र तो महत्त्वपूर्ण प्रदर्शनियों में प्रदर्शित हो चुके हैं तथा बहुत बड़ी संख्या में चित्र व्यक्तिगत कला विथिका में ससम्मान संग्रहित हैं।

देश-विदेश में दर्जनों एकल, अनेकों सामूहिक कला-प्रदर्शनी, राष्ट्र पर, राष्ट्र की अनेकों विशिष्ट कला-प्रदर्शनियों में भागीदारी तथा भारत के अनेक प्रान्तों की महत्त्वपूर्ण प्रदर्शनियों में पुरस्कृत कला-गुरु आर. एस. धीर का कहना था कि कला-कृतियों के माध्यम से जन-जन तक पहुँच कर मेरे शिष्य विश्व की समकालीन-कला की मुख्य धारा से सम्बद्ध होकर विशिष्ट स्थान प्राप्त करे यही मेरी आकांक्षा है।

प्रो. धीर का लखनऊ व बनारस के कलाकारों में स्थान व योगदान

स्वतन्त्रता से पूर्व देश के अन्य भागों की तरह उत्तर प्रदेश में भी पाश्चात्य यथार्थवादी शैली, भारतीय पुनर्जागरण शैली एवं परम्परागत कला शैली में कलात्मक गतिविधियाँ चल

रही थीं । स्वतन्त्रता के बाद कलाकारों ने भारतीय परम्परागत कला के रूढ़िगत पक्षों को अस्वीकार कर उन्हें समकालीन चेतना के अनुरूप एक नया रूप प्रदान किया । सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तनों के साथ-साथ कला के क्षेत्र में भी आजादी के लगभग 54 वर्षों से प्रयोगात्मकता एवं प्रगतिशीलता के मार्ग को ही अपना लक्ष्य चुना । चित्रकला मूर्तिकला, ग्राफ़िक आदि अनेक विधाओं में ऐसे अनेक कलाकार उभरकर सामने आये जिन्होंने राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ठ्रीय स्तर पर नये मापदण्ड स्थापित किए तथा अपनी पहचान बनायी । युवा कलाकारों ने वैचारिक स्वतन्त्रता, स्वच्छन्दता, अभिव्यक्ति की तीव्रता प्रस्तुतीकरण के नये-नये तरीकों एवं विभिन्न तकनीकों के प्रति अपनी रुचि प्रकट करते हुए उसका प्रदर्शन किया । कलाकारों ने अपनी कृतियों में वैचारिक विभिन्नता को महत्त्व दिया । कला में अतीत वर्तमान की समीक्षा भविष्य की कल्पना तथा आत्म-विश्लेषण की भावना को प्रधानता देने का प्रयास किया ।[1]

20वीं सदी के प्रारम्भ में उत्तर प्रदेश की कला की स्थिति अत्यन्त सोचनीय व निराशा-जनक थी । सन् 1907 ई. में औद्योगिक सम्मेलन के अनुसार उत्तर प्रदेश में कला एवं शिल्प को प्रोत्साहित करने के लिए सन् 1911 ई. में लखनऊ में राजकीय कला एवं शिल्प विद्यालय की स्थापना की गयी, जिसमें श्री नेसियलहर्ड को प्राचार्य के रूप में नियुक्त किया गया । इस कला एवं शिल्प विद्यालय में भारतीय कला शैलियों के स्थान पर पाश्चात्य ब्रिटिश यथार्थवादी शैली में शिक्षण प्रारम्भ किया गया । एल. एम. सेन इस विद्यालय की यथार्थ शैली के एक मात्र प्रतिनिधि कलाकार उत्पन्न हुए ।[2]

सन् 1925 ई. में अवनीन्द्रनाथ के शिष्य श्री हसित कुमार हाल्दार को लखनऊ कला विद्यालय के प्रथम भारतीय प्राचार्य के रूप में नियुक्त किया गया । श्री हाल्दार ने यहाँ पर

पाश्चात्य यथार्थवादी शैली के साथ-साथ भारतीय कला शैली में भी शिक्षा एवं प्रशिक्षण का कार्य प्रारम्भ किया । असित कुमार हाल्दार के साथ-साथ वीरेश्वर सेन, हिरण्यमय राय चौधरी तथा अन्य लोगों ने मिलकर स्वस्थ शिक्षा एवं शिक्षण का वातावरण बनाकर कला शिक्षण कार्य किया । सन् 1925 ई. के बाद से उत्तर प्रदेश में विभिन्न स्थानों पर परम्परागत कला के स्थान पर भारतीय पुनर्जागरण शैली का प्रभाव एवं आधुनिक कला के लक्षण देखने को मिलने लगे । इलाहाबाद में क्षितीन्द्रनाथ मजूमदार, वाराणसी में रणदा उकील तथा देहरादून में सुधीर रंजन खास्तगीर ने भारतीय कला शैली को प्रोत्साहित किया ।[3]

आजादी के बाद उत्तर प्रदेश का समकालीन कला परिदृश्य देश के अन्य राज्यों की तरह ही नये रूप में सामने आने लगा । आजादी के बाद से आज तक की स्थिति एकदम भिन्न है । इन बीच के वर्षों में प्रदेश के कलाकारों की कला विषयक जागरूकता एवं निज की पहचान बनाने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहने के फलस्वरूप, चित्रकला, मूर्तिकला, ग्राफ़िक आदि विभिन्न क्षेत्रों में अनेक ऐसे नाम उभरकर सामने आये जिन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बनायी तथा अन्तर्राष्ट्रीय गतिविधियों में भी अपनी भागीदारी निभायी है । कलाकार राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय एवं अखिल भारतीय स्तर की प्रमुख कला प्रदर्शनियों में न केवल भाग लेते रहे हैं, वरन् कई कलाकारों को उनकी कृतियों के लिए पुरस्कृत कर सम्मानित किया गया है । इस प्रकार के प्रमुख कलाकारों में से एक कला-गुरु रघुवीर सेन धीर हैं ।

कलाकार आर. एस. धीर अपनी रचनात्मक प्रतिभा के आधार पर उत्तर प्रदेश व भारत सरकार की छात्रवृत्ति प्राप्त कर चुके हैं । इसके अतिरिक्त प्रदेश व देश में समय-समय पर सरकारी आमन्त्रण पर अध्यापन व भ्रमण कर चुके हैं । इस समय देश के अन्य महानगरों एवं

राज्यों के कलाकारों की तरह उत्तर प्रदेश के कलाकार भी आधुनिक कला से प्रभावित होने लगे थे । पारम्परिक कला शैली के स्थान पर वैचारिक स्वतन्त्रता एवं अभिव्यक्ति के क्षेत्र में माध्यमों एवं शैलीगत विधि सम्भावनाओं के कारण आधुनिक कला के प्रति कलाकार स्वाभाविक रूप से आकर्षित होने लगे तथा कला-गुरु के प्रयास से यह आकर्षण युवा कलाकारों के बीच बढ़ता चला गया । इस दौरान आधुनिक कलाकारों ने कई वर्ग बनाये लेकिन कला गुरु किसी एक वर्ग में बँधकर कार्य नहीं किए बल्कि सभी वर्गों की गतिविधियों में भागीदारी करते हुए अनेक प्रयोग किए । यह यथार्थवादी तथा भारतीय परम्परागत शैली में नवीनता के साथ कार्य करते रहे । अपने कला जीवन के शुरू से अन्त तक अनेक कलात्मक माध्यमों एवं शैलियों के क्षेत्र में पारम्परिक प्रचलित माध्यमों के अलावा कई नये माध्य एवं शैलियों की खोज किये ।

चित्रकला में वाश शैली, लोक शैली और यथार्थ चित्रण शैली को विशिष्ट अर्थ सौंपने वाले उत्तर प्रदेश के वरिष्ठ चित्रकार आर. एस. धीर को केन्द्रीय संस्कृति विभाग के दो वर्ष की सीनियर फेलोशिप प्रदान की । चित्रकला की वाश शैली के लिए देश भर में विख्यात लखनऊ आर्ट कॉलेज और फिर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से दीक्षित श्री धीर का कहना था कि पहले चार दशकों में वाश पेंटिंग शैली को विशिष्ट अर्थ देने की जो गौरवमयी परम्परा विकसित हुई थी व अक्षुण्ण होते हुए भी आज शिथिल हुई है ।[4]

कुछ समय तक बड़े कैनवास पर व्यंग्य चित्र की शृंखला पट में कार्य किए । श्री धीर ने चार दशकों में विभिन्न रूपाकारों के अनुशासन में कार्य किया । एक ओर उन्होंने जहाँ वाश, जल रंग और तैल रंगों में यथार्थ धर्मी कार्य किए वहीं मधुवनी लोक कला से आगे निकलकर लोकधर्मी कला विशिष्टताओं को भिन्न आयाम सौंपे । काशी के घाट उनके कैनवास पर दृश्य

चित्रण के तौर पर भी है और अमूर्तन में भी । प्रायः पाँच से आठ फुट के कैनवास पर काम करने वाले कला-गुरु आर. एस. धीर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से सेवा निवृत्त होने के बाद महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ के ललित कला संकाय में विजिटिंग प्रोफेसर भी रहे । सुधीर खस्तगीर के समय में लखनऊ आर्ट्स कॉलेज तथा फिर कुलकर्णी के समय में दृश्य कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में पढ़े कला-गुरु आर. एस. धीर साठ और नब्बे के दशक में कला सीखने-सिखाने के स्तर पर काफी फर्क पाते हैं । वे बताते थे श्री खस्तगीर और ए. एन. रा जैसे शिक्षकों ने भी मुझे कला की प्रेरणा दी है ।

बद्रीनाथ आर्य जैसे वाश-शैली के गुरुओं ने मुझमें लगन का बोध कराया । जब वे रियलिस्टिक से अमूर्तन की ओर गये तो अमूर्तन भी अर्थवान हुआ । आज के विद्यार्थी कलाकार सीधे अमूर्तन से शुरू होते हैं । इसी कारण कला और कला वातावरण के प्रति कला-प्रेमियों की निष्ठा संदिग्ध हुई है ।

वाश-शैली मे रची कला-गुरु की एक प्रसिद्ध कृति 'बुढ़वा मंगल' तथा पिछले तीस-चालीस वर्षों में रची उनकी बहु प्रशंसित व पुरस्कृत कृतियों को समाने रखा जाय तो लगता है कि एक प्रकार से मौलिक परम्परा की थाती को सामने रखा गया है । उनके कमरे की दीवारों पर टंगी अमूर्त व जलरंग, तैल रंगों, लैण्डस्केप के बीच लगी लोक शैली की कृति को देखते ही पहले मधुबनी शैली का एहसास होता है, फिर तथ्य खुलता है कि यह शैली यहाँ महज आधार भर है, कला-गुरु ने इसे बिल्कुल मौलिक, भिन्न और अनूठी शैली में विकसित किया है ।

उत्तर प्रदेश की कला के विकास में जिन कलाकारों का सहयोग रहा है उनको मोटे तौर पर तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है । पहले श्रेणी में वे कलाकार आते हैं, जो उत्तर प्रदेश में शिक्षा प्राप्त कर देश की राजधानी दिल्ली तथा देश के अन्य राज्यों में जाकर कलात्मक गतिविधियाँ कर रहे हैं तथा उत्तर प्रदेश की कलात्मक गतिविधियों से जुड़े हैं । दूसरे वर्ग में वे कलाकार हैं जो देश के अन्य राज्यों से कला प्रशिक्षण प्राप्त कर यहाँ पर आये तथा कलात्मक गतिविधियों अथवा कला प्रशिक्षण कार्य पर राज्य की कला के विकास में सहयोग देकर उत्तर प्रदेश की कला गतिविधिों से जुड़े हुए हैं ।

तीसरे वर्ग में वे कलाकार हैं जो उत्तर प्रदेश के विभिन्न कला संस्थानों/विद्यालयों से प्रशिक्षण प्राप्त कर यहीं पर रहकर कलात्मक गतिविधियों व विभिन्न अनुशासनों का सृजन कर रहे हैं तथा कला प्रदर्शनियां लगा रहे हैं । आजादी के बाद से चित्र मूर्ति तथा ग्राफ़िक आदि कलाओं के क्षेत्र में उत्तर प्रदेश के अनेक कलाकार ललित कला अकादमी, नई दिल्ली की राष्ट्रीय कला प्रदर्शनी के पुरस्कारों से सम्मानित किये जा चुके हैं । इस प्रकार के प्रमुख कलाकारों में एक जाना-पहचाना-सा नाम कला-गुरु आर. एस. धीर का है, जिन्होंने अपनी प्रतिभा के बल पर अनेक पुरस्कार, अनेक विश्वविद्यालयों में निर्णायक के रूप में तथा विश्वविद्यालयीय परीक्षा लेने के लिए बुलाये जा चुके हैं ।

प्रो. आर. एस. धीर को उत्तर प्रदेश के कलाकारों में शीर्ष पर पहुँचाने तथा उत्तर प्रदेश की कला में उनका प्रमुख योगदान वाश व कम्प्यूटर पेंटिंग हैं । कम्प्यूटर चित्र उत्तर प्रदेश में सर्वप्रथम कला-गुरु आर. एस. धीर ने शुरू किया था ।

क्रियाशीलता के चलते कला-गुरु ने अपनी कला रचनात्मकता को कम्प्यूटर से जोड़ दिया । इस प्रकार से चित्रों का निर्माण करके कला-गुरु ने जल रंग, तैल रंग, ब्रश एवं कैनवास को ताक पर रख दिया था । श्री पी. सी. लिटिल ने प्रदर्शनी के परिचय में लिखा था— "**जब कैमरे का आविष्कार हुआ तो बर्नाड शॉ ने पेंसिल, रंग और ब्रश की भूमिका को समाप्त प्राय मान लिया था पर इन साधनों की भूमिका अभी भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण बनी हुई है । चित्र विभिन्न वादों और शैलियों से गुजरते हुए सैकड़ों वर्षों के बाद भी आज अपना अस्तित्व बनाये हुये है ।**"[5] कलाकार विभिन्न प्रयोग करते हुए आज पूरा बटन युग में प्रवेश कर गया है और यहाँ आकर बर्नाड शॉ के कथन की वास्तविकता कैमरा तो नहीं, कप्यूटर के रूप में चरितार्थ होती लगती है । इसको चरितार्थ किया है कला-गुरु आर. एस. धीर ने । उनके कम्प्यूटर से निर्मित चित्रों की प्रदर्शनी करने का श्रेय नगर की सृष्टि आर्ट गैलरी को गया है । कम्प्यूटर चित्र बनाने में ब्रश और चित्रपट क्या होता है? इसको भी समझना पड़ेगा ।

वैसा देखा जाय तो 12 से 15 वर्ष पूर्व कम्प्यूटर पर चित्रों की रचना करने के लिए सूचना भारतवर्ष में आ चुकी थी और उस पर छिटपुट चर्चाएँ आपस में हुई थीं । परन्तु उसे किसी ने इतनी गम्भीरता से नहीं लिया था; क्योंकि तब भारत ने कम्प्यूटर युग में प्रवेश नहीं किया था । कम्प्यूटर शब्द अंग्रेजी के आठ शब्दों के पहले अक्षरों को मिलाकर बनाया गया है । यह शब्द है— "**कामन आपरेटिंग मशीन पार्टीकुलरी यूज फॉर ट्रेड एजुकेशन एण्ड रिसर्च ।**" इसमें प्लास्टिक के एक चूहे को हाथ में पकड़कर पैड पर चलाया जाता है जिसे माउस कहते हैं । यही माउस ब्रश का कार्य करता है । कला गुरु ने बहुत परिश्रम से इस

माउस पर अधिकार जमाया और इच्छित आकार-प्रकार की रेखाएँ और रंगों का संसार सृजित किया ।

यह विचारणीय बात है कि कला-गुरु ने जिस प्रकार की चित्र रचना की है, उसमें उनके हस्ताक्षर पहचाने जा सकते हैं । अर्थात् उन्होंने जिस प्रकार के पेपर कोलाज किये थे या स्टिल लाइफ के चित्र तैल रंगों से सृजित किये थे अथवा वाराणसी के घाट के प्रतीकों का इस्तेमाल जिस ढंग से अपने चित्रों में करते आयें थे वे सब कुछ परिवर्तित स्वरूप में कम्प्यूटर के चित्रों में उपस्थित थे और वे दूर से ही 'धीर का चित्र' होने का दम्भ भरते थे । यह कला-गुरु की बहुत बड़ी सफलता है । इन चित्रों में जल रंग व तैल रंग जैसी संवेदनशीलता तो थी ही रंगों के हल्के और गाढ़े प्रभाव के साथ ही उसमें छाया प्रकाश की भी अद्‌भुत उपस्थिति थी जो दृश्य चित्रों में विशेष रूप से दिखाई देती हैं ।

जिस प्रकार से व्यक्तियों के रंग की पसन्द के आधार पर उनकी रुचि और स्वभाव की परिकल्पना कर ली जाती है, वैसे ही चित्रों को देखकर समझकर कलाकार की मानसिक स्थिति और उसकी रुचियों और आस्थाओं को जाना जा सकता है । कला-गुरु के चित्रों को देखकर उनके भीतर छिपी आस्था का पता लगता है । यह आस्था उनके जीवन का मेरुदण्ड हो सकती है; क्योंकि गणेश, जो भगवान् शिव, श्रीकृष्ण, गंगा और वहाँ के घाट उनके प्रारम्भ के चित्रों में भी स्थान पाते रहे हैं और उनकी उपस्थिति उनके चित्रों में निरन्तर बनी हुई है । वह अपने चित्रों के माध्यम से अपनी आस्था को ही सम्प्रेषित करना चाहते हैं या हो सकता है वे इन विषयों के जो आकार गढ़े हैं वह उन आकारों को छोड़ना नहीं चाहते लेकिन यह आकार और उनके संयोजन कला-गुरु की पहचान अवश्य बने हुए हैं ।

अपनी प्रतिभा और लगन के बल पर कला-गुरु आर. एस. धीर उत्तर प्रदेश के दस शीर्ष कलाकारों में अपना स्थान बनाये हुए हैं तथा उत्तर प्रदेश की कला में वह अपनी प्रयोगवादी सोच के कारण वाश तथा कम्प्यूटर चित्र बनाकर यहाँ की कला को एक नया आयाम दिया तथा उत्तर प्रदेश की कला की इक्कीसवीं सदी की ओर ले जाने में अगुवाई किए। आज के युवा कलाकार इनसे प्रेरित होकर उत्तर प्रदेश की कला को भारत ही नहीं विश्व में स्थान अवश्य दिलायेंगे।

प्रो. धीर का राष्ट्रीय कला जगत में स्थान व योगदान

उत्तर प्रदेश में चित्रकला की एक सुदीर्घ परम्परा रही है और भारतीय चित्रकला के विकास में इस प्रदेश का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। प्रागैतिहासिक काल से लेकर आधुनिक या समसामयिक चित्रकला तक के सभी मील के पत्थर इसी प्रदेश में देखे जा सकते हैं। प्रागैतिहासिक चित्र सर्वप्रथम उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर क्षेत्र में अर्चिवल कार्लाइल तथा जान काक वर्न ने 1880 में खोज निकाले थे, जिनका विस्तृत विवरण डॉ. जगदीश गुप्त की पुस्तक 'प्रागैतिहासिक चित्रकला' में दिखाई पड़ता है।[6]

आधुनिक भारतीय-चित्रकला के विकास में उत्तर प्रदेश का विशेष योगदान रहा है। अवीन्द्रनाथ टैगोर के नेतृत्व में जब आधुनिक भारतीय चित्रकला का पुनर्जागरण हो रहा था उस समय लखनऊ और वाराणसी के बंगाली परिवारों के साथ अन्य लोगों ने इस शैली के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। अवनीन्द्र बाबू के शिष्य असित कुमार हाल्दार कला एवं शिल्प विद्यालय लखनऊ के प्राचार्य होकर लखनऊ में आये तो उनके शिष्य श्री बद्रीनाथ आर्य तथा इनके सबसे प्रिय शिष्य कला गुरु आर. एस. धीर ने लखनऊ से शिक्षा लेकर जब काशी हिन्दू

विश्वविद्यालय, वाराणसी में आये तो इन्होंने भारतीय पुनर्जागरण को प्रदेशव्यापी बनाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया ।

कला की आधुनिक धारा, जिसे मार्डन आर्ट के रूप से संज्ञापित किया गया उसमें कला गुरु ने विशेष रुचि दिखाई और नित-नवीन प्रयोग कर तथा भारतीय विचारधारा को इससे जोड़कर महत्त्वपूर्ण कार्य करते हुए वाराणसी और लखनऊ के कलाकारों के बीच अपनी अमिट छाप छोड़ दी ।

यदि यह विचार किया जाय कि किसी रचना का सांस्कृतिक चरित्र कैसे बनता है, किस आधार पर भारतीय कलाकृतियों की पहचान बनी है तो हमें श्री आर. एस. धीर की कलाकृतियों का अवलोकन करना अनिवार्य हो जाता है । प्रत्येक संस्कृति का अपना अलग-अलग स्वरूप होता है, उसकी अलग वैचारिकता होती है । सामाजिक सम्बन्धों के द्वारा आर. एस. धीर ने इसको चित्रपट पर गढ़ने का सफल प्रयास किया । दूसरे शब्दों में समाज विशेष के अन्तरंग सम्बन्ध, संस्कार तथा विचार अपनाये बगैर किसी देश की संस्कृति व्यक्त नहीं हो सकती । इस बात को अन्य कलाकारों की अपेक्षा कला गुरु ने अधिक समझा ।

उत्तर प्रदेश ही नहीं वरन् सम्पूर्ण आधुनिक भारतीय चित्रकला के लिए 'बंगाल स्कूल' का बहुत महत्त्व है । यह भारतीय आधुनिक कला की आधार भूमि है । वस्तुतः यह भारत की कला का नवीनीकरण था जिसे पुनर्जागरण के नाम से अभिहित किया गया । बंगाल में इस आन्दोलन के जन्मदाता आचार्य अवनीन्द्रनाथ टैगोर थे । उन्होंने भारत के नवोदित कलाकारों को प्रेरित किया कि वे पाश्चात्य कला का अंधानुकरण करने के बजाय अपनी परम्परागत प्राचीन शैलियों को आदर्श मानकर उनका अध्ययन करके समकालीन विषयों का चित्रण करें ।

यह एक क्रान्तिकारी विचार था, जो हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन से जुड़कर और मुखर हो उठा। इस कला आन्दोलन को भी कला-गुरु आर. एस. धीर ने सहयोग प्रदान करते हुए इसका विकास कर नवोदित कलाकारों को इसके विचार से अवगत कराया।

आज भारतीय कलाकारों के समाने सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि वह किस रास्ते से आगे बढ़े, उसके सामने यह सबसे बड़ी समस्या है। जिसका हल सरल नहीं है, लेकिन यह समस्या क्यों है? यदि कलाकार अपने आप में ईमानदार है और अपनी अन्तःप्रेरणा से प्रेरित होकर सृजन करता है तो उसके सम्मुख यह समस्या नहीं होगी यह बात कला-गुरु अपने विद्यार्थियों से कहा करते थे।

कलाकार अनुभव कहाँ से प्राप्त करता है जिसे वह अपनी कलाकृति में व्यक्त करता है। निश्चय ही प्रत्येक मानव का अनुभव अलग-अलग होता है लेकिन यह सर्वमान्य है उसका प्रथम अनुभव अपने घर-परिवार से ही परिपुष्ट होता है। वाश पद्धति पर जो प्रयोग कला गुरु आर. एस. धीर ने किये और जिस ढंग से वाश-पद्धति को परम्परा और समकालीनता से जोड़ा, वह एक बड़ी मिसाल की उपलब्धि है। उन्होंने वाश पद्धति में रंगों के प्रयोग से उसकी तकनीकी को उत्तर प्रदेश के सन्दर्भ में बदला। यदि हम उनके चित्रों को देखेंगे तो पायेंगे उत्तर प्रदेश की लोक-कला व जनजाति-कला विशेष रूप से उत्तरांचल के प्रभावों को भी लिया है।

प्रो. आर. एस. धीर की अनुभूति प्रक्रिया, व वैचारिक प्रेषणीयता की तात्विक प्रस्तुति ही है जिसको उत्तर प्रदेश के कलाकारों के मन-प्राण से लिया है। यह समकालीन कला का मूल मन्त्र बन चुका है। स्वतन्त्रोत्तर भारतीय कला के लोक तत्त्वों में आभासित सौन्दर्य शिखरों के स्पर्श ने भी जीवन और जगत के अधुनातन रचना सौन्दर्य में प्राण फूकें हैं। आधुनिक कला

में लोक और नागर शैली के अद्भुत बिम्बों का स्पुन्जन कलाकारों के स्वतन्त्र चिन्तन एवं कला-गुरु की महती प्रतिभा का परिचायक है ।

प्रयोगवादी कलाकार के रूप में आर. एस. धीर ने मूर्त या आकृति मूलक, अमूर्त या आंशिक अमूर्त अंकन, जन जीवन के उतार-चढ़ावों से जुड़ा है । सम्पूर्ण राष्ट्र के साथ उत्तर प्रदेश का कलाकार भी तकनीकी विधा, कम्प्यूटर, पर्यावरण, उद्योग और वैश्वीकरण के साथ आतंकवाद, जातिवाद, सम्प्रदायवाद, अशिक्षा, नारी शोषण जैसी समाजव्यापी वस्तुस्थिति से उद्वेलित होते रहे हैं । इस वस्तुस्थिति के साथ कलाकारों की अद्भुत सृजनात्मकता के नये तेवर, उनकी परिकल्पना और मौलिक उद्भावना की उच्चाशयता के प्रतीक हैं, जिन्होंने अधुनातन संयंत्रों के साथ कला गुरु की कृतियां जनमन की विसंगतियों से संवाद करती है ।

उत्तर प्रदेश की स्वातन्त्रयोत्तर चित्रकला का एक अतिसूक्ष्म सर्वेक्षण से स्पष्ट होता है कि यहाँ का परिदृश्य बहुमूर्तिदर्शी है । आज के विश्वजनीत वातावरण, विज्ञान और शिल्पगत अगणित आविष्कारों, सूचना और प्रसारण के त्वरित माध्यमों, चित्रण के विविध उपादनों की उपलब्धि और कलाकार की स्वतन्त्रता के कारण किसी भी प्रदेश की कला को और साथ ही कला-गुरु की कला को किसी भी सीमा में नहीं बाधा जा सकता फिर भी भारत के प्रत्येक प्रदेश की कला दृश्य-चित्रण और वाश-शैली में दिखायी देती है ।[7]

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारतीय सांस्कृतिक जगत में जो उथल-पुथल, वैचारिकता के सम-विषम दृष्टिकोण, पूर्व और पश्चिम के कला बिम्बों के अभिप्रेषण का अन्तरद्वन्द्व और आपसी तक-वितर्क के टकराओं का दौर प्रारम्भ हुआ, उसने आधुनिकता का बाना पहनकर कला के सांस्कृतिक वर्चस्व को एक नये रूप में टालने की प्रक्रिया प्रारम्भ की । ब्रिटिश सत्ता

की नवीन शिक्षा पद्धति, भौतिकतावाद और तात्कालिक वैज्ञानिक उपलब्धियों ने भारतीय संस्कृति की प्राचीन गरिमा का गहरा प्रहार किया किन्तु उन्हें अपने उद्देश्य में जो हल्की सफलता मिली थी उसको कला गुरु आर. एस. धीर के साथ अन्य कलाकारों ने मिलकर भारत की सांस्कृतिक विरासत और आधुनिकता के प्रति अपना मौलिक दृष्टिकोण सुरक्षित रखा ।

एक तरफ श्री धीर के चित्रों में जहाँ बंगाल शैली में अधिकतर पारम्परिक विषयों पर चित्रण हुआ वहीं साथ-साथ नवीन रूपों व विषयों का सृजन कर इस शैली में नवीन प्रयोग किये हैं । स्व-अभिव्यंजना की स्वतन्त्रता पाकर कला-गुरु ने अपने चित्रीय माध्यमों और शैली की अभिव्यंजनात्मक क्षमता का अधिक विकास किया । इसी से सीमित समझे जाने वाली इस वाश शैली में कला-गुरु ने असीमित प्रयोग किया ।

अपनी पूर्ण व्यक्तिगत शैली और रूपों में आकृति संयोजन कला-गुरु ने किया । उनका मानना था कि कलाकार अपने चारों ओर के वातावरण से नहीं बच सकता । इसी से उन्होंने जन-साधारण का चित्रण अति अभिव्यंजनात्मक रंगों और शैली में किया है । उन्होंने सामाजिक यथार्थ को मौलिकता और मानवीय चिन्तन के साथ प्रस्तुत किया है । इनके कुछ चित्र मनुष्य के निषेधों, प्रलोभनों, उसकी विकृतियों या विद्रोहात्मक प्रवृत्तियों को अभिव्यक्त करते हैं ।

आकृति संयोजन में इनका नाम प्रमुख है । तैल व जलरंग आदि से सरल और तरल रूपों में अपने चारों ओर के जीवन का श्रेष्ठ रेखांकन और चित्रण करते हैं । इन्होंने वाराणसी के घाटों के साधु-संन्यासी, वार्तालाप में निमग्न महिलाएँ मंदिरों के सामने की गलियों के दृश्य आदि अपने औपचारिक क्षणों में चित्रित किये गये हैं । इन सभी कृतियों में सृजन का आनन्द दिखाई देता है ।

प्रो. धीर के प्रयास से ही उत्तर प्रदेश में चित्रकला की गतिविधियाँ तीव्र हो गयीं व एक दिशा में होने लगीं । काशी के चित्रकार भी कला-गुरु के साथ अपनी अभिव्यक्ति तीव्र व शक्तिशाली रेखाओं द्वारा करने लगे व अनेक प्रयोग भी आरम्भ हुए । इस प्रकार रचनात्मक रुचि के चित्र काशी व लखनऊ में बनने लगे एवं प्रदेश में आधुनिक चित्रकला का ज्ञान तथा विकास का नवीन दृष्टिकोण प्रारम्भ हुआ । यह नवीन दृष्टिकोण माध्यम व विधि में भी दिखने लगा तथा कलाकार कला की ओर अधिक जागरूक हो गये साथ ही अपने व्यक्तित्व की खोज में प्रयोगशील हो गये जिसके फलस्वरूप चित्रों व ग्राफ़िक में अनेक उन कलाकारों के नाम उभर कर सामने आने लगे जिन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर अपने को स्थापित किया । इसमें कला-गुरु का नाम भी बहुत सम्मान के साथ लिया जाता है ।

भारतीय चित्रकला के इतिहास का एक प्रमुख कला आन्दोलन जिसको पूरी दुनिया में 'समीक्षावाद' के नाम से जाना जाता है । इस कला आन्दोलन के संस्थापक प्रो. रामचन्द्र शुक्ल जी रहे लेकिन कला-गुरु आर. एस. धीर ने इस कला आन्दोलन की एक मजबूत कड़ी के रूप में अपने आप को प्रस्तुत किया । इस समय की उनकी कृतियां समाज में शोषण, अत्याचार, मनुष्य को अपने कर्मों के प्रति संवेदनहीन होना आदि को बहुत ही मार्मिक और सजीव रूप में प्रस्तुत किया है । इस समय के चित्र कला गुरु को राष्ट्रीय जगत में एक विशेष स्थान दिलाने में सफल हुए ।

इन सबके अतिरिक्त कला-गुरु ने राष्ट्रीय कला-जगत् में अनेक कलाकार शिविरों, राष्ट्रीय प्रदर्शनियों, कला सेमिनार, विश्वविद्यालय में निर्णायक तथा अनेक कला-अकादमियों के सदस्य बनकर भारतीय कला-जगत् में एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त करके, राष्ट्रीय कला-जगत् में अविस्मरणीय योगदान दिया ।

आज भी अपनी परम्परा एवं देश की गुण-गरिमा को कला गुरु की प्रेरणा से यथावत बनाये रखते हुए उत्तर प्रदेश के बहुत से कलाकार अनुपम कृतियों की रचना में संलग्न हैं, जो पाश्चात्य विलक्षणवादी कृतियों से कहीं अधिक श्रेष्ठ हैं।

विश्वव्यापी सद्य ज्ञान और असीम अनन्त परिकल्पना को अपने में भर लेने की लालसा ही कलाकार के संस्कार हैं । आर्थिक विषमता की बढ़ती त्रासदी ने कलाकारों की सोच को किसी सीमा तक व्यावसायिकता से जोड़ा है, किन्तु अल्प साधनों में भी रूप, अरूप, पाप आर्ट, आप आर्ट और अमूर्त प्रयोगों से ऊपर उठकर भारतीय कला सौष्ठव को विश्व मंच पर स्थापित करने में उत्तर प्रदेश का कलाकार सजग व सतर्क है ।[8] यह सजगता चाहे वह कला शिक्षण की हो अथवा प्रयोगधर्मी कलाजिज्ञासु की, उत्तर प्रदेश के कलाकारों की सौन्दर्य-सर्जना को राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित करने में कला-गुरु की कला सफल हुई ।

●

सन्दर्भ

1. स्वातन्त्रोत्तर कला, उत्तर प्रदेश की विशेष सन्दर्भ में, पृ. 56
2. स्वातन्त्रोत्तर कला, उत्तर प्रदेश की विशेष सन्दर्भ में, पृ. 57
3. स्वातन्त्रोत्तर कला, उत्तर प्रदेश की विशेष सन्दर्भ में, पृ. 57
4. 'सहारा' दैनिक समाचार-पत्र, 14 जनवरी, वाराणसी ।
5. उत्तर प्रदेश, साहित्य व संस्कृति की मासिक पत्रिका, जुलाई, 1998, पृ. 42
6. स्वातन्त्रोत्तर कला, उत्तर प्रदेश के विशेष सन्दर्भ में, पृ. 17
7. स्वातन्त्रोत्तर कला, उत्तर प्रदेश के विशेष सन्दर्भ में, पृ. 46
8. स्वातन्त्रोत्तर कला, उत्तर प्रदेश के विशेष सन्दर्भ में, पृ. 32

●●

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची

1. आधुनिक भारतीय चित्रकला	: अग्रवाल गिरीराज किशोर	संजय पब्लिकेशन्स, आगरा
2. माडर्न आर्ट और भारतीय चित्रकार	: वाजपेयी डॉ. राजेन्द्र	साहित्य निकेतन, कानपुर
3. समीक्षावाद	: शुक्ल रामचन्द्र	
4. भारतीय कला और कलाकार	: स्वामी ई. कुमारिल	प्रकाशन विभाग, भारत सरकार
5. भारतीय चित्रकला	: गैरोला वाचस्पति	
6. भारतीय चित्रकला का इतिहास	: वर्मा अविनाश बहादुर	प्रकाश बुक डिपो, बरेली
7. आधुनिक चित्रकला का इतिहास	: साखलकर र. वि.	राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
8. कला सैद्धान्तिक	: नायक लक्ष्मी नारायण	श्रीमती भादूदेवी प्रकाशन, बोकारो
9. पारिभाषिक कला कोष	: बाथम रूपनारायण	
10. पश्चिम की चित्रकला	: अशोक	ललितकला प्रकाशन, अलीगढ़
11. 'कला विलास' भारतीय चित्रकला का विवेचन	: अग्रवाल आर. ए.	इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ
12. कला और काल	: कौशिक दिनकर	
13. रूपप्रद कला के मूलाधार	: शर्मा एस. के., अग्रवाल आर. ए.	इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ

14. कला सौन्दर्य और समीक्षाशास्त्र	: अशोक	संजय पब्लिकेशन्स, आगरा
15. मध्यकालीन भारतीय मूर्तिकला	: तिवारी डॉ. मारुतिनन्दन गिरि डॉ. कमल	विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी
16. सौन्दर्य	: वाजपेयी डॉ. राजेन्द्र	मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
17. नवीन भारतीय चित्रकला	: शुक्ल रामचन्द्र	किताब महल, इलाहाबाद
18. भारत की चित्रकला	: दास राय कृष्ण	नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी
19. भारतीय चित्रकला	: हाल्दार असित कुमार	चन्द्रलोक प्रकाशन, इलाहाबाद
20. प्रागैतिहासिक भारतीय चित्रकला	: गुप्त डॉ. जगदीश	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली
21. अजन्ता के चित्रकूट	: राय आनन्द कृष्ण	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
22. कला-दर्शन	: गुर्टू सचीरानी	साहनी प्रकाशन, दिल्ली
23. भारतीय चित्रकला का सिंहावलोकन	: वसु नन्दलाल	
24. प्राचीन भारतीय परम्परा और इतिहास	: रांगेय राघव	
25. भारतीय चित्रकला	: काला सतीश चन्द्र	वैलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद

कला-सम्बन्धी पत्रिकाएँ

1. 'कला वृत्त', त्रैमासिक पत्रिका, नई दिल्ली ।
2. 'कला संगम', त्रैमासिक पत्रिका, नई दिल्ली ।
3. 'कला संवाद', राज्य ललितकला एकेडमी, लखनऊ ।
4. 'कला दीर्घा', उत्कृष्ट प्रतिष्ठान, लखनऊ ।

5. 'समकालीन कला', ललितकला एकेडमी, नई दिल्ली ।

6. 'उत्तर प्रदेश' साहित्य और संस्कृति की मासिक पत्रिका, राज्य ललितकला एकेडमी, लखनऊ ।

7. 'कला त्रैमासिक' राज्य ललित कला एकेडमी, लखनऊ ।

8. 'स्वातन्त्रोत्तर कला', उत्तर प्रदेश के विशेष सन्दर्भ में, राज्य ललित कला, एकेडमी, लखनऊ ।

9. 'धर्मयुग', नई दिल्ली ।

पत्र-पत्रिकाएँ

1. कादम्बनी

2. नवनीत

3. साप्ताहिक हिन्दुस्तान

4. इण्डिया टूडे

दैनिक समाचार-पत्र

1. 'दैनिक जागरण', वाराणसी से प्रकाशित ।

2. 'आज', वाराणसी से प्रकाशित ।

3. 'अमर उजाला', वाराणसी से प्रकाशित ।

4. 'हिन्दुस्तान', वाराणसी से प्रकाशित ।

5. 'सहारा समय', साप्ताहिक समाचार पत्र, लखनऊ ।

6. 'आज', लखनऊ से प्रकाशित ।

7. 'राष्ट्रीय सहारा', लखनऊ से प्रकाशित ।

8. 'सन्मार्ग', वाराणसी से प्रकाशित ।

9. 'गाण्डीव', वाराणसी से प्रकाशित ।

10. 'अमर उजाला', लखनऊ से प्रकाशित ।

11. 'सहारा समय', लखनऊ से प्रकाशित ।

12. 'टाइम्स ऑफ इण्डिया', नई दिल्ली से प्रकाशित ।

13. 'जनसत्तश', नई दिल्ली से प्रकाशित ।

निजी सम्पर्क

1. आर्य प्रो. बद्रीनाथ	लखनऊ
2. शुक्ल प्रो. रामचन्द्र	इलाहाबाद
3. अग्रवाल जयकृष्ण	लखनऊ
4. धीर सुदर्शन	वाराणसी
5. धीर स्नेह	वाराणसी
6. चालम विजय	वाराणसी
7. अग्रवाल विनय कृष्ण	वाराणसी
8. पाण्डेय भारतीय	रेनुकूट
9. मिश्रा चन्द्रप्रकाश	चन्दौली
10. जायसवाल विजय जी	वाराणसी

●●
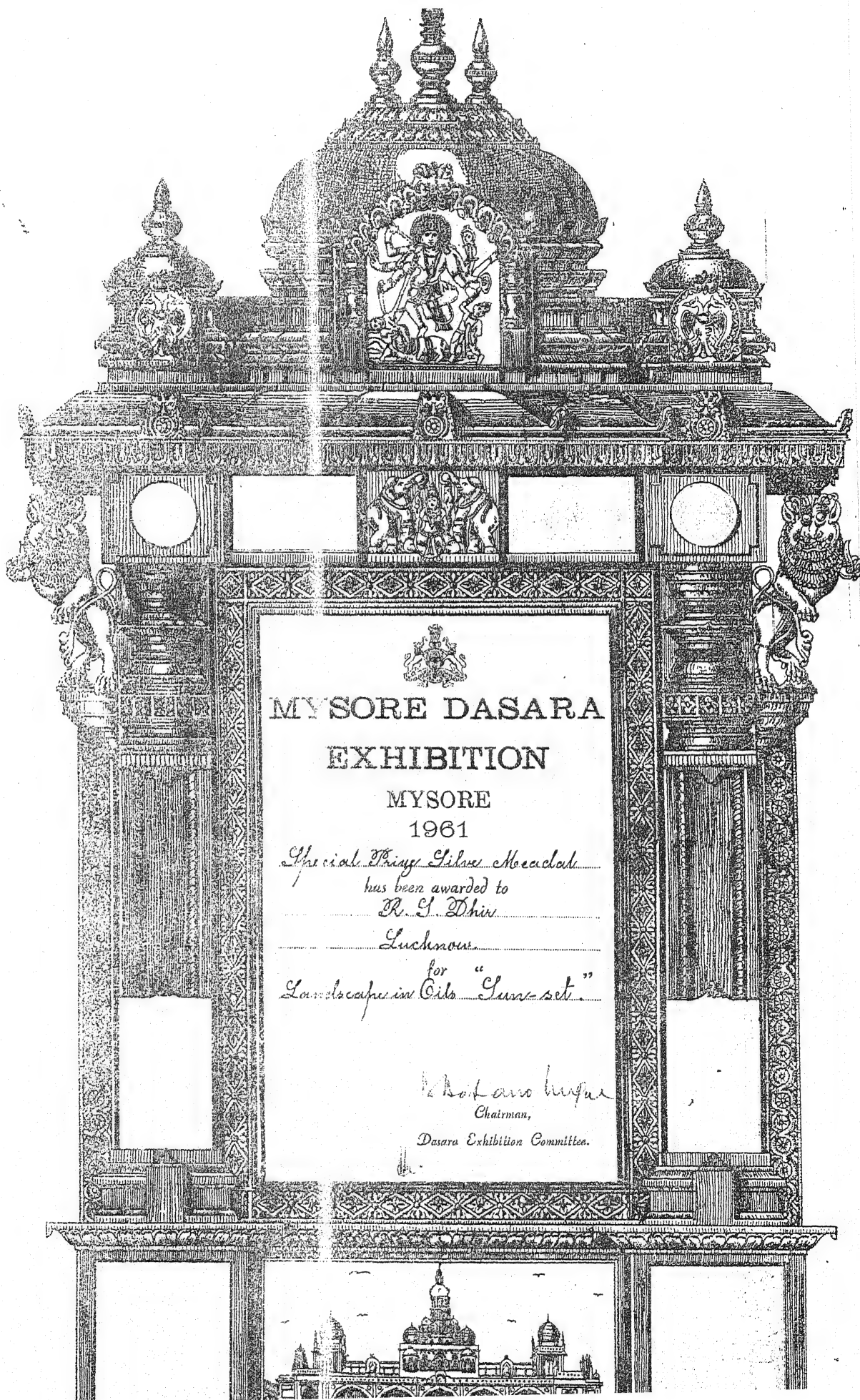
MYSORE DASARA
EXHIBITION
MYSORE
1961

Special Prize Silver Medal
has been awarded to
R. S. Dhir
Lucknow
for
Landscape in Oils "Sun-set"

Chairman,
Dasara Exhibition Committee.

DEPARTMENT OF CULTURAL AFFAIRS AND SCIENTIFIC RESEARCH, UTTAR PRADESH.

Roll.No. 2. Diploma No.143.

DIPLOMA
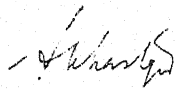
GOVT. COLLEGE OF ART AND CRAFT, LUCKNOW

Certified that Raghubir Sen Dhir born on January 1, 1937 son of Sri J. R. Dhir has regularly attended five years' course of instruction in the Fine Art class of this institution and that he was placed in the Second Division, in the final examination of 1961
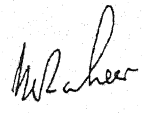
SUBJECTS

1 Drawing from Life in pencil & Charcoal (Drapped or Undrapped)
2 Portrait Painting from Life in Oil
3 Landscape Painting in Water Colour or Oil
4 Still Life Painting in any Media
5 Traditional Drawing (Copy from Paintings of Old Indian Masters)
6 Design (in Indian Style in Water Colour)
7 Clay Modelling

Principal
Govt. College of Art & Craft

R. S. Dhir
Students Signature

Director
Cultural Affairs & Scientific Research

Printed by the Bureau of Agricultural Information, Deptt. of Agriculture, U. P.
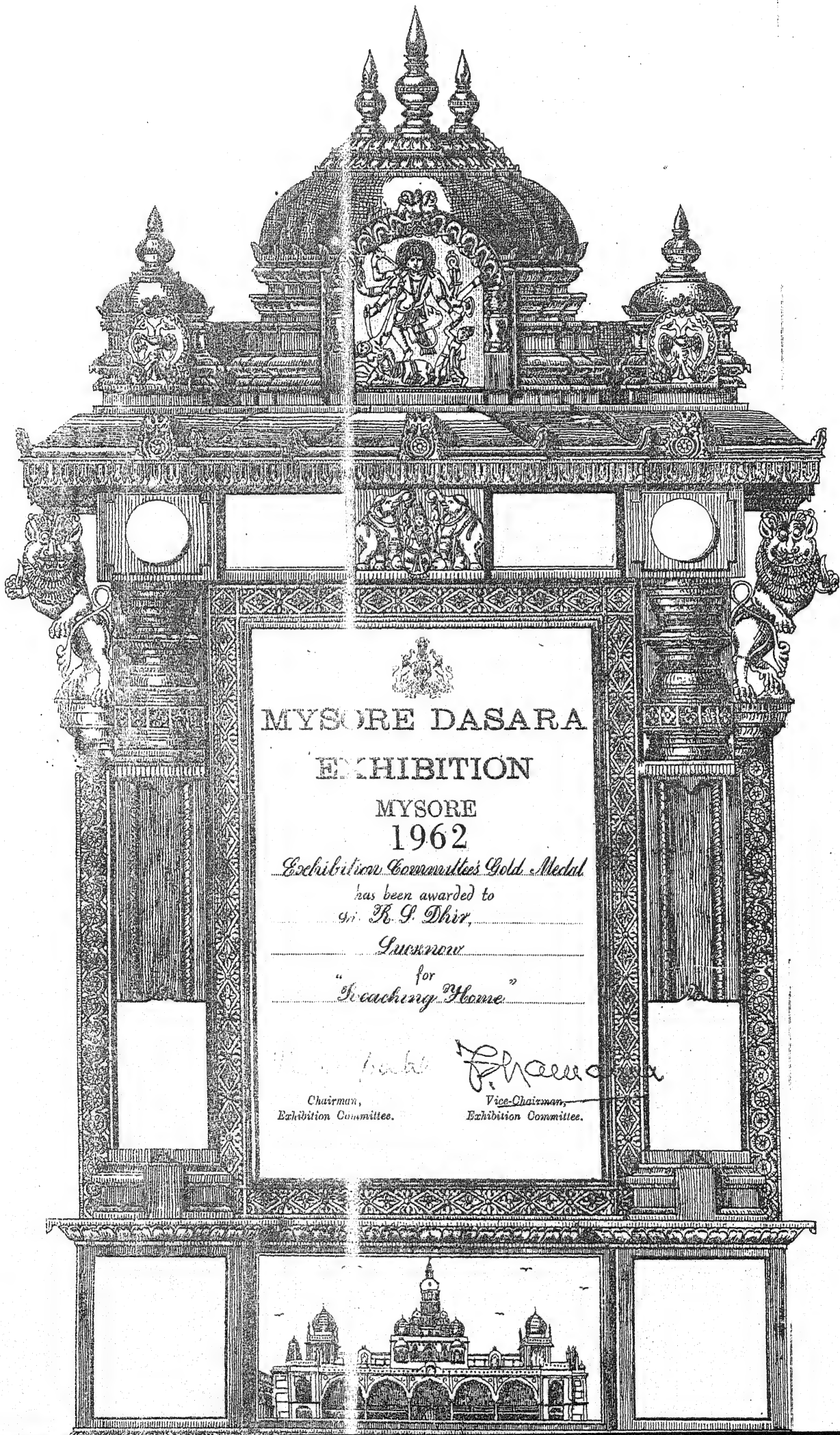
MYSORE DASARA

EXHIBITION

MYSORE

1962

Exhibition Committee's Gold Medal

has been awarded to

Sri R. S. Dhir,

Lucknow

for

"Reaching Home"

Chairman,
Exhibition Committee.

Vice-Chairman,
Exhibition Committee.

Govt. College of Arts and Crafts
LUCKNOW.

May.11, 1964.

I have great pleasure in testifying to the skill and ability of Shri R. S. Dhir who was a student of this College for five years and took his Diploma in Fine Arts with credit in 1961. After obtaining his Diploma in Fine Arts he joined Post-Diploma and worked for one year under my direct supervision. He also worked as pupil teacher for one year and took classes in painting.His performance as a pupil teacher was very satisfactory and his students were much satisfied with him.

Shri Dhir has specialised in water and Oil-Colour techniques though he has a fairly good command over the other fields of painting. He imperessed all very remarkably as a student of painting. His skilled and talented touches as a painter forecast for him a future of an great artist. I am happy to note that he has painted some very good paintings and ane of them has won for him a Gold Medal in the all India Mysore Deshera Exhibition in the year 1962.

Shri Dhir is a youngman of fine character; he is sincere well-Behaved and amiable. I am sure he would be able to acquit himself well of any duty which required the skill of a teacher and the talent of an artist.

(H . L. MERH)
Principal,
Govt. College of Arts and Crafts
LUCKNOW.
PRINCIPAL
Govt. College of Art & Craft
Lucknow

Post Diploma Certificate

अखिल भारतीय चित्रकला प्रदर्शनी

सन् १९६५ ई०

~~कुमारी~~ ~~श्रीमती~~ श्री आर० एस० धीर, वाराणसी

को चित्रकला के लिये विशेष पुरस्कार

प्रदान कर सम्मानित किया जाता है।

व० मु० कृष्णन्
सचिव
मध्य प्रदेश कला परिषद्

नरसिंहराव दीक्षित
अध्यक्ष
मध्य प्रदेश कला परिषद्

उत्तर प्रदेश कलाकार संघ की वार्षिक प्रदर्शनी **१९६७** में

श्री आर० एस० धीर की कृति **गली** (ग्राफिक) पुरस्कृत
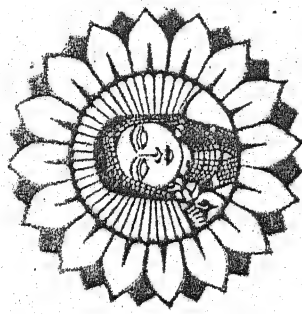
हुई। इन्हें संघ का पदक तथा एक प्रमाण पत्र

प्रदान किया जाता है।

दिनांक २७ अप्रैल '६८

अध्यक्ष

उ० प्र० कलाकार संघ

INDIAN ACADEMY OF FINE ARTS, AMRITSAR
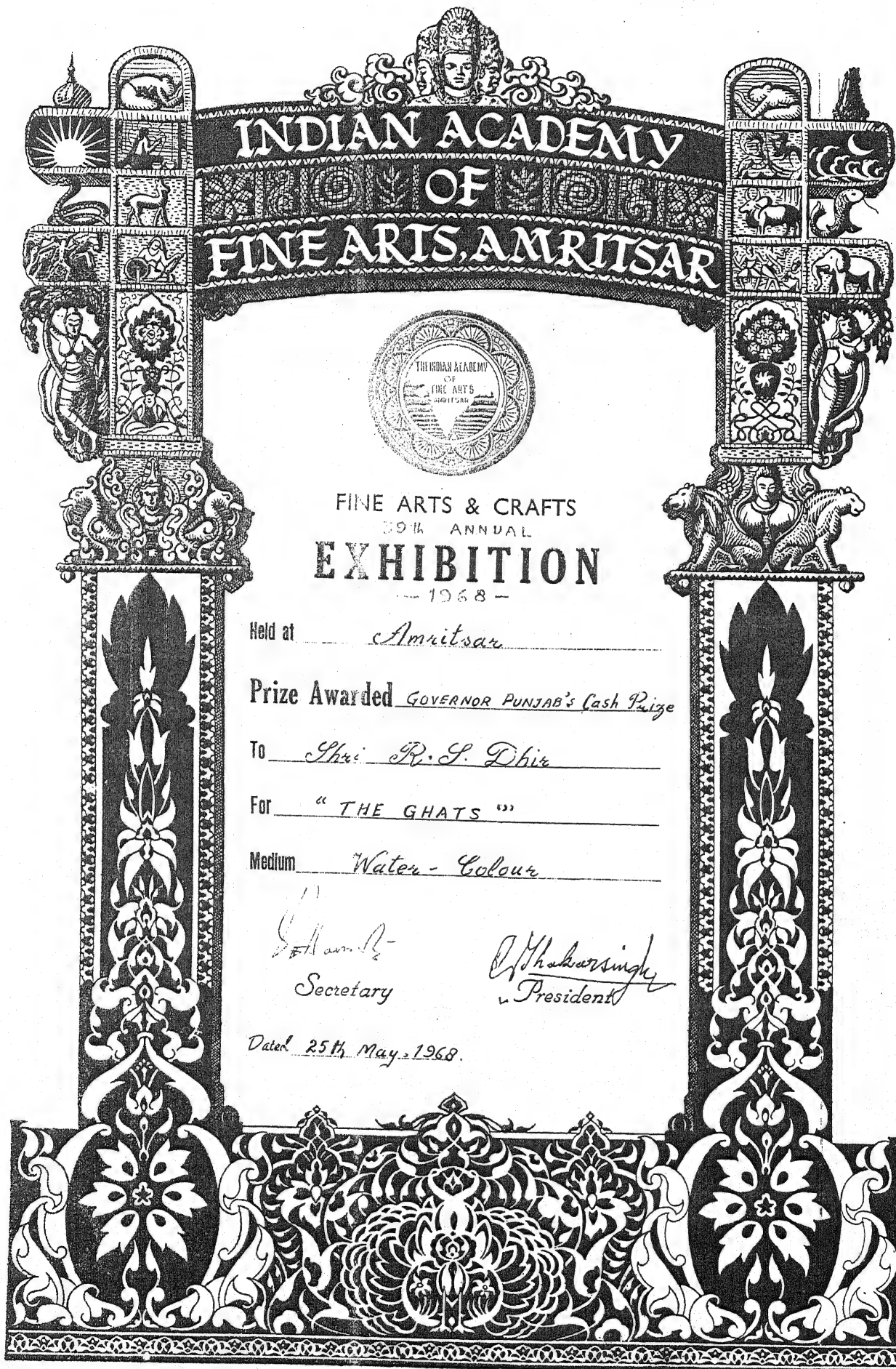
THE INDIAN ACADEMY OF FINE ARTS AMRITSAR

FINE ARTS & CRAFTS
39th ANNUAL
EXHIBITION
— 1968 —

Held at *Amritsar*

Prize Awarded GOVERNOR PUNJAB's Cash Prize

To *Shri R. S. Dhir*

For " THE GHATS "

Medium *Water-Colour*

Secretary   President

Dated 25th May, 1968.

ALL INDIA SEQUENTIAL AUTUMN SCHOOL FOR ART TEACHERS 1970

This is to certify that

R. S. Dhir

has participated in the First All India Sequential Autumn School for Art Teachers organised under the auspices of Ministry of Education and Youth Services Government of India, and Indian Society for Technical Education, New Delhi and held at the Sir J. J. Institute of Applied Art, Bombay from 19th October 1970 to 28th November 1970.

V. R. Amberkar
Co-ordinator
(Prof. V. R. Amberkar)

TELEPHONE : 44-4205
TELEGRAMS : "FINEARTS"

ACADEMY OF FINE ARTS

CATHEDRAL ROAD,
CALCUTTA-16.
Estd. 1933

Sri R. S. Dhir,
College of Fine Arts
Benaras Hindu
University,
Varanasi-5.

REGISTERED WITH A/D

The 20th December 1971

Re: 36th Annual All India Fine Arts Exhibition
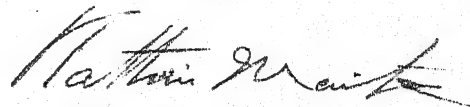
Dear Sir,

We are glad to inform you that the Academy has been pleased to honour you with the Academy's award for your exhibit in the above exhibition.

We are sending you herewith our cheque for Rs. 200/- which represents the above award. Kindly acknowledge receipt.

Assuring you best of luck and all success.

Yours faithfully,

Jt. Hony. Secretary.

Enclo: 1.

INDIAN ACADEMY OF FINE ARTS, AMRITSAR
THE INDIAN ACADEMY OF FINE ARTS AMRITSAR
FINE ARTS & CRAFTS
42nd ANNUAL
EXHIBITION
- 1971 -
Held at Amritsar
Prize Awarded "GOVERNOR PUNJAB'S" Cash Prize
To R. S. Dhir
For "HE WILL COME"
Medium Water-Colour
Secretary
President
Dated Dec. 5, 1971
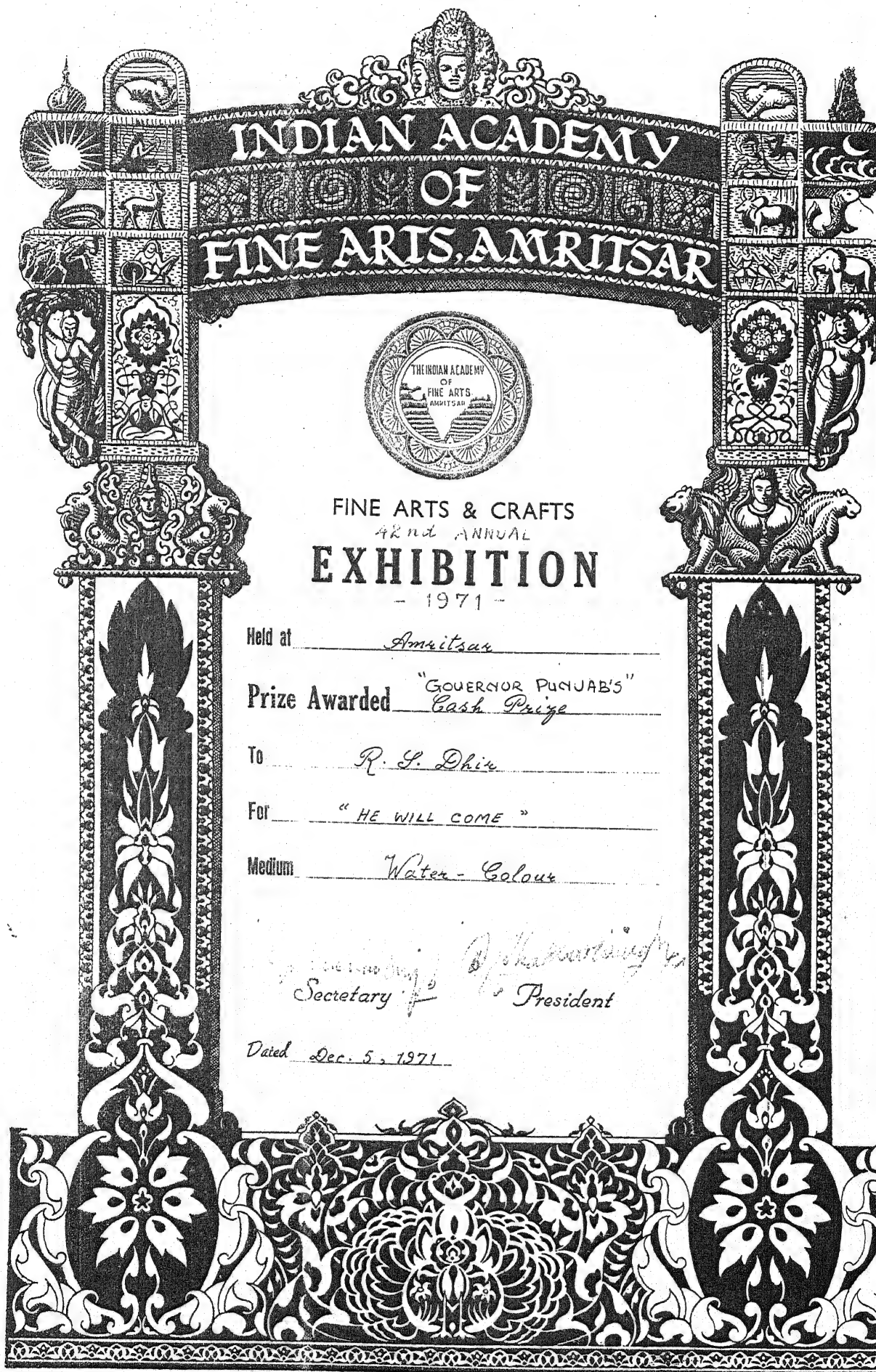
The State Lalit Kala Akademi

Uttar Pradesh

Certificate of Award

Given this award of

Rupees Five Hundred

for outstanding merit to

Sri R.S. Dhir

for exhibit no 40 *entitled*

Godess Durga (Painting)

entered in the

Annual Exhibition of Art, 1971

Organised by the

State Lalit Kala Akademi, Uttar Pradesh

Secretary

Chairman

Dated Feb. 6, 1972

Damerla Rama Rao Memorial Art Gallery and School, Rajahmundry

1974.

ALL-INDIA ART EXHIBITION

This is to certify that R. S. Dhir

Prize

has been awarded for the best Exhibit

for his/her exhibit "THE RAIN IN NIGHT"

Secretary

President

S. R. P. WORKS

महाकोशल कला परिषद्, रायपुर
द्वारा आयोजित

अखिल भारतीय चित्र एवं मूर्ति
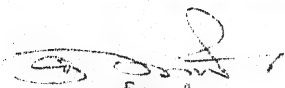
कला प्रदर्शनी

१९७६-७७
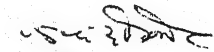
प्रवीणता-प्रमाण-पत्र

श्री/~~श्रीमती/कुमारी~~ रघुवीर सिंह धीर (वाराणसी) प्रदर्शनी के
वर्ष का सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार स्वर्ण मंजूषा (रनिंग) एवं १००० रु. नगद
चित्रकला/मूर्तिकला शाखा में प्रस्तुत श्री मूड्स

के लिए सहर्ष प्रदत्त.

सचिव	अध्यक्ष	संरक्षक
के० पी० आर्य	आर० पी० मिश्र	जे० पी० दीक्षित

रायपुर (म. प्र.)

मास्टर ऑफ़ फाइन आर्ट्स

(पेन्टिंग)

श्री रघुवीर सैन धीर

अस्य विश्वविद्यालयस्य २०३६ शततमे संवत्सरे परीक्षायां प्रथम श्रेण्यां समुत्तीर्य **मास्टर ऑफ़ फाइन आर्ट्स** (पेन्टिंग) पदवीं प्राप्तवानिति प्रमाणयति ।

प्रमाणित किया जाता है कि श्री रघुवीर सैन धीर ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की सन् १९७८ की परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होकर **मास्टर ऑफ़ फाइन आर्ट्स** (पेन्टिंग) उपाधि प्राप्त की ।

दिनाङ्क फरवरी १५, १९८९ / १९७

कुलपति

VC/4-56/777

कुलपति
VICE-CHANCELLOR

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी-२२१००५
Banaras Hindu University
VARANASI-221005

September 18. 1979.
19.
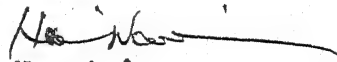
Dear Shri Bhir,

It is gratifying to know that on the occasion of the Golden Jubilee of the Indian Academy of Fine Arts held at Amritsar you have been awarded a cash Prize of Rs.1,000/- for the best painting. This distinction is well deserved and has brought credit to the University. apart from yourself.

I hope, you will continue earning distinctions and bring name to the University.

With best wishes,
Yours sincerely,

Hari Narain
(Hari Narain)

Shri R.S.Bhir,
Lecturer,
Faculty of Visual Arts,
B.H.U.

ESTD : 1928

Indian Academy of Fine Arts

AMRITSAR.

GOLDEN JUBILEE

ALL INDIA EXHIBITION

CASH PRIZE OF RS. 1000/=

Awarded To Shri R. S. Dhir, Varanasi.

For "BROKEN PITCHER"

Medium Water-Colour

President Secretary Chairman

DATED 20th Sept., '79

Railway Station :-Varanasi Cantt.

Post & Tele. Office :-Banaras Hindu University

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी—२२१००५
BANARAS HINDU UNIVERSITY
VARANASI—221005

Ref. No.................

Dated......August 24, 1979

TO WHOM IT MAYCONCERN

Shri R.S. Dhir is one of the well known painters of the younger generation in Uttar Pradesh, who have made a mark in the field of Contemporary Indian Art. He is also one of the senior teachers of the Faculty of Visual Arts, B.H.U. and has quite a long experience of Art teaching.. He has held exhibitions of his works in some of the important cities of the country and has participated in several All India Fine Art annual shows. He has been honoured, appreciated and awarded by several of the well known art organisations in the country. He is one of the seven U.P. artists who participated in the first exhibition of "Samikshavad", the first India born movement of Modern Art, organised at Delhi last January.

His recent works which are being exhibited include some of his experiments based on past Indian art. As a Samikshavadi painter he does not like to follow the footsteps of the degenerated Modern Art of the West. He wants to create an art which belongs to the people of India at large and expresses their contemporary asperations, wishes and problems. His works can be appreciated from this point of view. I am quite confident, his new experiments will be appreciated.

(R. C. Shukla)
Dean
Faculty of Visual Arts.

BANARAS HINDU UNIVERSITY

Transcript of M. F. A. (Painting/Applied Arts/Plastic Arts) Examination of 1979.

Year........1979................................

Degree......M.F.A...............................

Major.......Painting............................

Home Address..D 53/90 Narayan Nagar...

..........Luxa,.....................

..........Varanasi.................

Name of Student......Sri Raghubir San Dhir..

University Enrolment Number.......146705...........................Examination Roll No.....6.....

Assignment	M. F. A. (Previous)		M. F. A. (Final)		Final Review	
	Theory	Practical	Theory	Practical	Theory	Practical
	A	B	B	A		
	A	A	B	A		
	A	A	A	A		A
	A	A	A	A		
	A	A	A	A		

Total number of grade : A= 17
B= 3
C
A & B

Passed in.....First..........Class/OR Failed

Date.......19.2.1980..

B.H.U. Press 01 8.11.75

Controller of Examinations

ESTD : 1928

Indian Academy of Fine Arts

AMRITSAR.

ZONAL EXHIBITION

CASH PRIZE OF RS. 501/-

Awarded To Sh. R. S. Dhir

For "The Birds Market"

Medium Water Colour

President

Secretary

Chairman

I.A.S.

DATED Dec. 6th 1980.

PROFORMA FOR ASSESSMENT UNDER MERIT PROMOTION SCHEME :

BANARAS HINDU UNIVERSITY

INSTITUTE/FACULTY/COLLEGE: OF VISUAL ARTS

DEPARTMENT : PAINTING.

1. Name of teacher in full (in Block letters) RAGHUBIR SEN DHIR

2. Nature of post held: READER/LECTURER w.e.f. Lecturer 1965.

3. Present Salary : Rs. 1350/-

4. Date of birth :

5. Date of joining service in the University MARCH 1964.

6. Scholarships and Fellowships held with details: Merit Scholarship IInd year. (Govt College of Arts. Lko.) IIIrd year. ~~IVth year~~. Merit Scholarship. one year for Post Diploma 1964. (Lucknow University)

7. Educational Qualifications:

University Examinations	Year of passing	Division
i) M.F.A.	1979	A 1st Class 1st with Gold Medal.
ii)		
iii)		
iv)		
v)		

N.B. Attested copies of certificates in support of the above mentioned qualifications must be attached with this application.

8. Field of specialization: Painting. (water Colour)

9. (a) Teaching Experience: 17 years.

   1. Post-graduate classes 6 Years / Months
   2. Graduate classes 17 Years / Months

   (b) Experience of guiding Research:

   Period / Years / Months

10. Research Experience : M.F.A. Thesis. "CREATIVE COMPOSITION BASED ON JAIN MINIATURE PAINTING Pages 40.

(Topic of the Papers published indicating the name of the Journal, Volume No. and year of publications) Reprints of important papers should be enclosed with the application.

Cont.....2)

.....2)

11. No. of Ph.D.s produced: \

(In case any Ph.D. Thesis has been published, a reference to that effect may also be made.

12. Academic distinctions achieved during his/her tenure at this University — M.F.A. with Gold Medal (B.H.U.)

13. Any other information not covered under the above columns, pertaining particularly to the contribution to co-curricular, extra-curricular and Managerial activities in the University. — Please see enclosure.

Date: 1?.1.83

(SIGNATURE)

NOTE : Separate sheets/lists may be appended wherever necessary.

FORWARDED BY :

(HEAD OF THE DEPARTMENT)

Enclosures No. i.
No.1. Bio-Data -
No2. Gold Medal Certificate of M.F.A.
No3. Degree.
No4. Deploma.
No5 Post Deploma.
No6. Certificate of A School Bombay.
No7. Press Cutting.
No8. Certificate of Head Deptt.
No9. A.G.C.d. awards.

Rashtriya Lalit Kala Kendra
Lucknow

This is to Certify that

has successfully participated in the All India Artists' Camp an intensive workshop in painting held at Rashtriya Lalit Kala Kendra, Lucknow from Feb. 21 to 27, 1987 under the auspices of Lalit Kala Akademi, New Delhi.

BIRESHWAR BHATTACHRJEE
Camp Director

P. C. LITTLE
Director
RLKK

शिवमंगलसिंह 'सुमन'

SHIVA MANGAL SINGH 'SUMAN'

'समर्पण'
उदयन मार्ग (लिंक रोड)
उज्जैन ४५६०१०
दूरभाष ४८२०

'Samarpan'
Udayan Marg (Link Road)
Ujjain 456010
Tel. 4820

18. 3. 87

श्री आर. एस. धीर की चित्रकला प्रदर्शनी को देखने का सुयोग प्राप्त कर बड़ी प्रसन्नता हुई। विभिन्न दृश्य चित्रों में रंगों का सामंजस्य और रेखाओं की संयोजना से कुशल कलाकार ने अद्भुत प्रभाव उत्पन्न कर दिया है। वाराणसी के दृश्यों का ऐसा अनूठा और सूक्ष्म विवरणात्मक चित्रण श्री धीर के सूक्ष्म निरीक्षण और अवलोकन की पारदर्शिता का परिचायक है। इन चित्रों की wash technique ने मुझे विशेष प्रभावित किया जो श्रमसाध्य होने के साथ साथ विशेष प्रभावी है। कला की ऐसी दक्षता और मनोहारिता के लिए मेरी बधाई और साधुवाद।

शिवमंगलसिंह सुमन

कला | नईदुनिया

गंगा संस्कृति क्षिप्रा आई

उज्जैन की कलाधारा में आर. एस. धीर की कृतियों का प्रदर्शन सुखद प्रतीत हुआ है। श्री धीर बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में कला विभाग के प्रमुख हैं।

स्थानीय कालिदास कला वीथिका में श्री धीर की लगभग पंद्रह कृतियों को प्रदर्शित किया गया। जिनमें वाशटेक्निक के ५ चित्र चित्ताकर्षक हैं। चित्रों की पृष्ठ भूमि के अनुसार कलर टोन, वातावरण को सजीव बनाने में सफल हुए हैं। चार चित्रों में वाराणसी के घाटों को चित्रित किया गया है। घाट के पुजारियों, हरिकथा के श्रोता पुरुषों और स्त्रियों की मुखमुद्राएं एवं सहज कार्यकलाप जीवंत प्रतिबिंबित हुए हैं। 'ग्राम्य विवाह' और 'शिकारे पर मुजरा नृत्य' वाले चित्र आकर्षक बन पड़े हैं। चित्रकार की सर्वाधिक सशक्त कृति 'आगंतुक' अपना विशेष प्रभाव छोड़ती है। लालटेन की मद्धिम रोशनी, युवती की मुखमुद्रा एवं अपनी अद्भुत कल्पनाशक्ति का परिचय दिया है। इसके अतिरिक्त अपने दस अमूर्त चित्रों में चटक रंगों व ज्यामितिय आकारों को कुशलता से संजोया है। सभी लघुचित्र व ज्यादातर कोलाज हैं।

प्रकाश शेण्डे
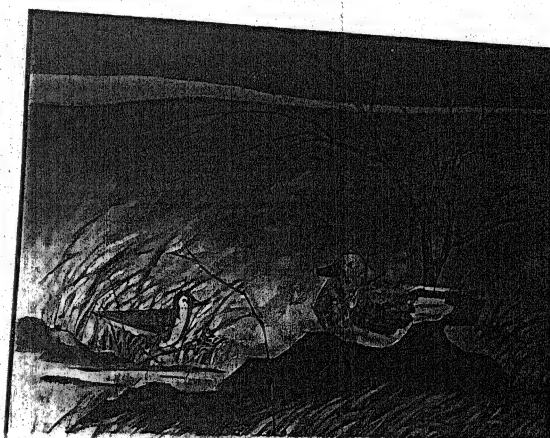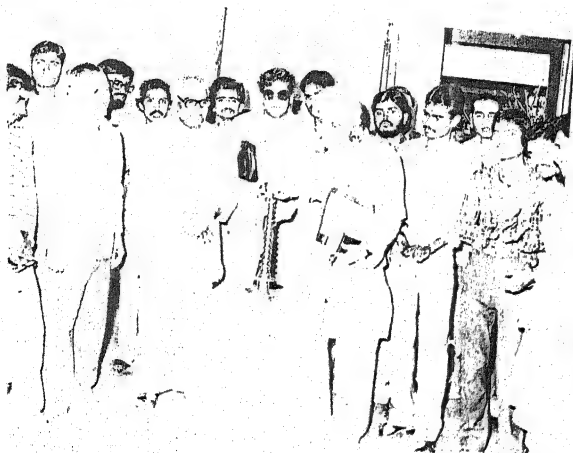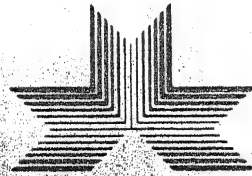
Babu Jagjivan Ram Memorial 1st All India Art Exhibition

BABU JAGJIVAN RAM : STRUGGLE AND ACHIEVEMENTS

Certified that R. S. Dhir *participated in the Art Exhibition held from November 22-30, 1992 in Lalit Kala Akademi Gallery, New Delhi and was awarded for his/her exhibit.*

Indrani Devi
(Smt. Indrani Jagjivan Ram)

Sponsored by :
Jagjivan Vidya Bhawan
Organised by :
Avantika
-a group of contemporary artists
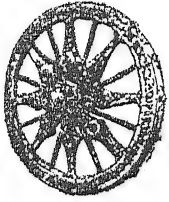
संस्कार भारती

अखिल भारतीय कला प्रदर्शनी

चित्रकला प्रतियोगिता

"राम राज्य को पुकार"

राष्ट्रीय एकादश कला साधक संगम, जयपुर–१९९२

प्रमाणित किया जाता है कि

श्री/~~श्रीमती~~/~~कु०~~ आर० एस० धीर
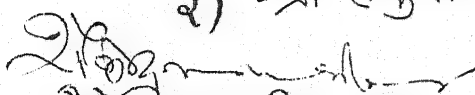
पुत्र/पत्नी/पुत्री
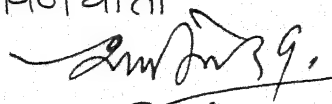
स्थान नारायण नगर, वाराणसी ने संस्कार भारती आयोजित अखिल भारतीय कला प्रदर्शनी "राम र
की पुकार" में सफलता पूर्वक भाग लेकर
पुरूस्कार प्राप्त किया। हम इनके उज्जवल भविष्य
कामना करते हैं।
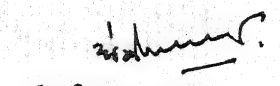
चित्र का विषय निम्नवत है।

१) जटायू युद्ध

२) श्री हनुमान रावण वार्ता

शैलेन्द्रनाथ श्रीवास्तव	शान्ति देव	योगेन्द्रनाथ "र
राष्ट्रीय अध्यक्ष	विशिष्ठ सदस्य	अ. भा. चित्रकला प्र

क्रमांक : 1. दिनांक : 2.10.98

कला केन्द्र, वाराणसी

अधिसदस्यता प्रमाण पत्र
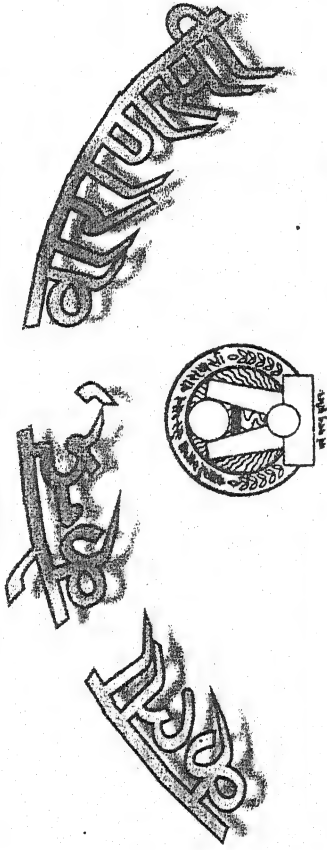
श्री .... आर० एस० धीर ....

को उनके .... चित्र कला .... के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान के लिए प्रतिष्ठा स्वरूप कलाकेन्द्र, आर्यभाषा संस्थान का अधिसदस्यता सम्मान प्रदान किया जाता है।

कला केन्द्र को यह विश्वास है कि आप उसके सम्मानित सदस्य के रूप में उसके विकास में सहायक होंगे /होंगी, कला को जनसांस्कृतिक मूल्यों से जोड़ने की दिशा में सृजनात्मक प्रयास करेंगे/करेंगी, और जीवन में उच्च मूल्यों के स्थापनार्थ सदैव तत्पर रहेंगे/रहेंगी।

राजेश श्रीवास्तव
सचिव

अध्यक्ष

computer graphics : manish khattry, ph : 0542-312258

PRIZE LIST

40TH ALL INDIA ART EXHIBITION

ORGANISED BY :

THE INDIAN ACADEMY OF FINE ARTS, AMRITSAR

The Judging Committee have selected the following exhibits for the awards :-

Punjab Governor's Cash Prize
"Rani" (Water Colour) — By R.S. Dhir

Academy's Cash Prize
"Dharamsala View" (Oil) — By Gurbachan Singh

Academy's Cash Prize
"Rainbow Dawn" (Oil) — By D.G. Pujare

Academy's Cash Prize
"Street Nasik" (Water Colour) — By M.S. Joshi

Academy's Cash Prize
"Composition" (Oil) — By Nar Singh Dev Jamwal

Academy's Cash Prize
"Painting No : 2" (Oil) — By Prem Raval

Academy's Cash Prize
"Still Life" (Oil) — By Kalele N.G.

Academy's Cash Prize
"Worker" (Oil) — By Mewa Singh

Academy's Cash Prize
"Artist's Print" (Graphic) — By Niramoy Roy

Academy's Cash Prize
"Portrait of Suzzane" (Oil) — By S.K. Lawate

Academy's Special Prizes for Students
"Landscape" (Oil) — By Indu Arora
"Thoughts" (Black & White) — By Kirandip Kaur

Academy's Cash Prizes for the best Photographs.
"Is it Steady ?" — By Vraj Mistry
"Scribbles of Experience" — By Madan Mohan

Highly Commended Certificates have been awarded to the works of Merit by : Sq. Leader B.R. Malik, Erashia K. Raj, J.K. Aman, Prem Singh, Suresh C. Lall and Mohindar Tuli.

कला-गुरु प्रो. रघुवीर सेन धीर
व्यक्तित्व एवं कृतित्व

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी की पी-एच. डी. (चित्रकला) उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

2007

निर्देशिका

डॉ. (कु.) सरोज भार्गव

प्राचार्या, बैकुण्ठी देवी कन्या महाविद्यालय, आगरा

शोधार्थी

बीरेन्द्र कुमार मौर्य
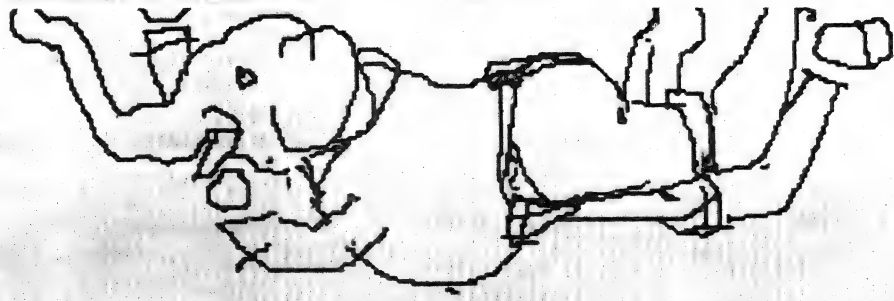
चित्र सं.1-कल्पना

चित्र सं.2-विदाई

चित्र सं.3-वट-पूजा

चित्र सं.4-घाट-पूजा

चित्र सं.5-दुर्गा रूप
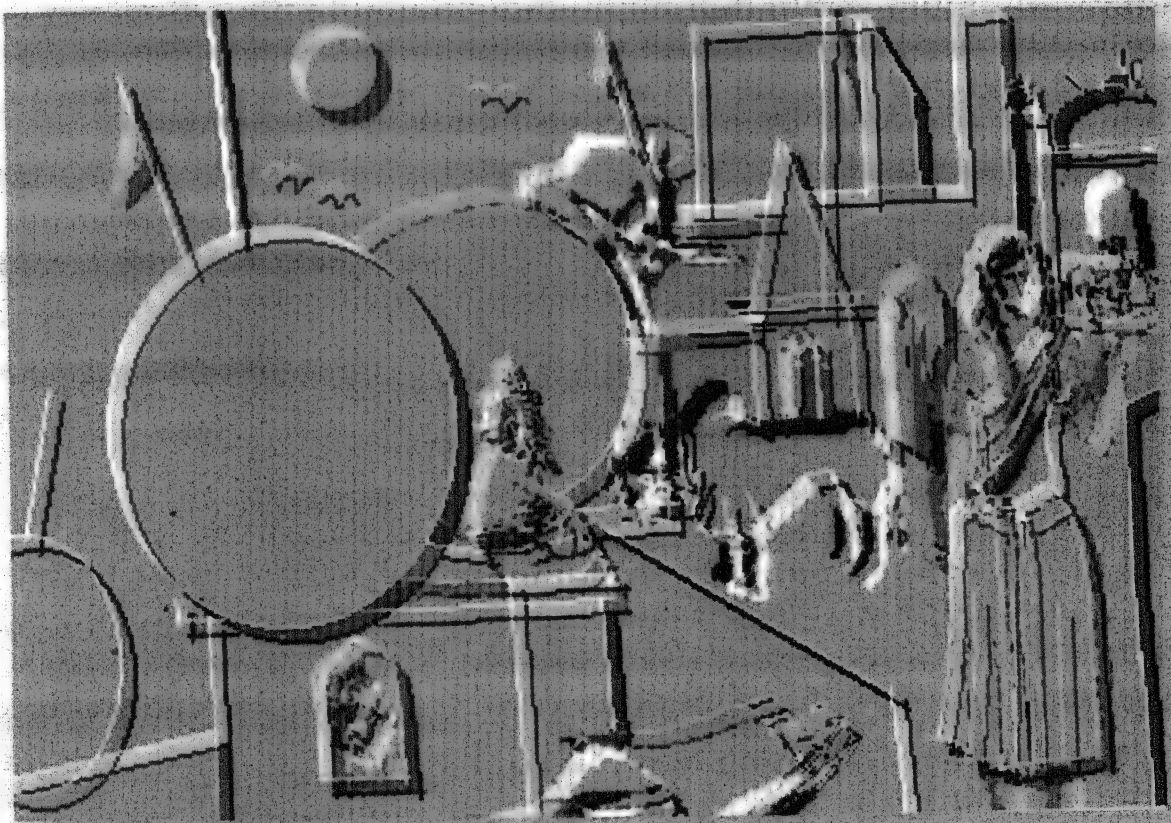
चित्र सं.6-रेखांकन
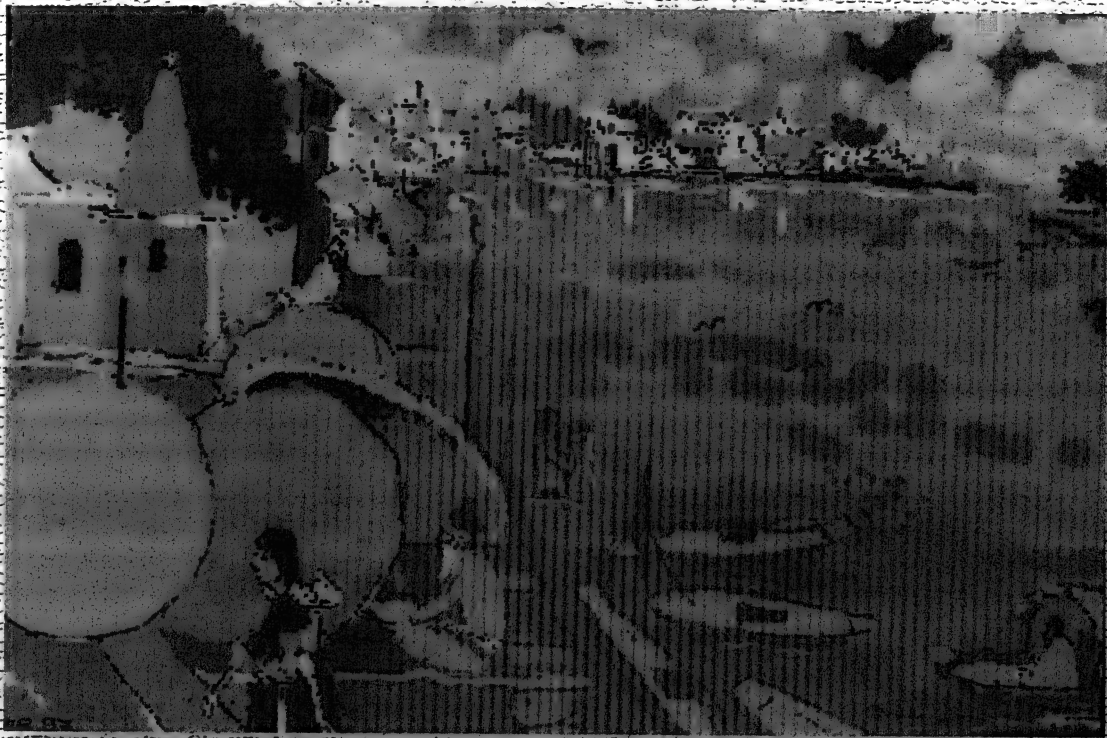
चित्र सं.7-घाट

चित्र सं.8-घाट
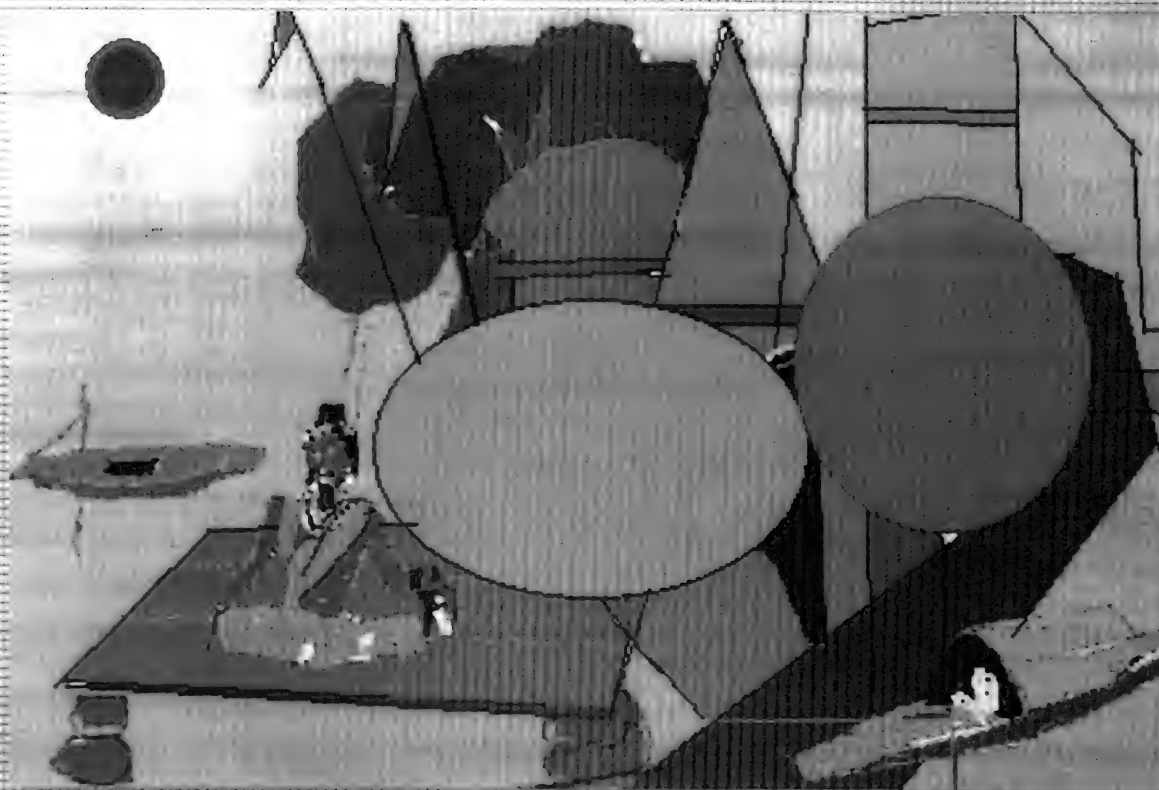
चित्र सं.9-घाट
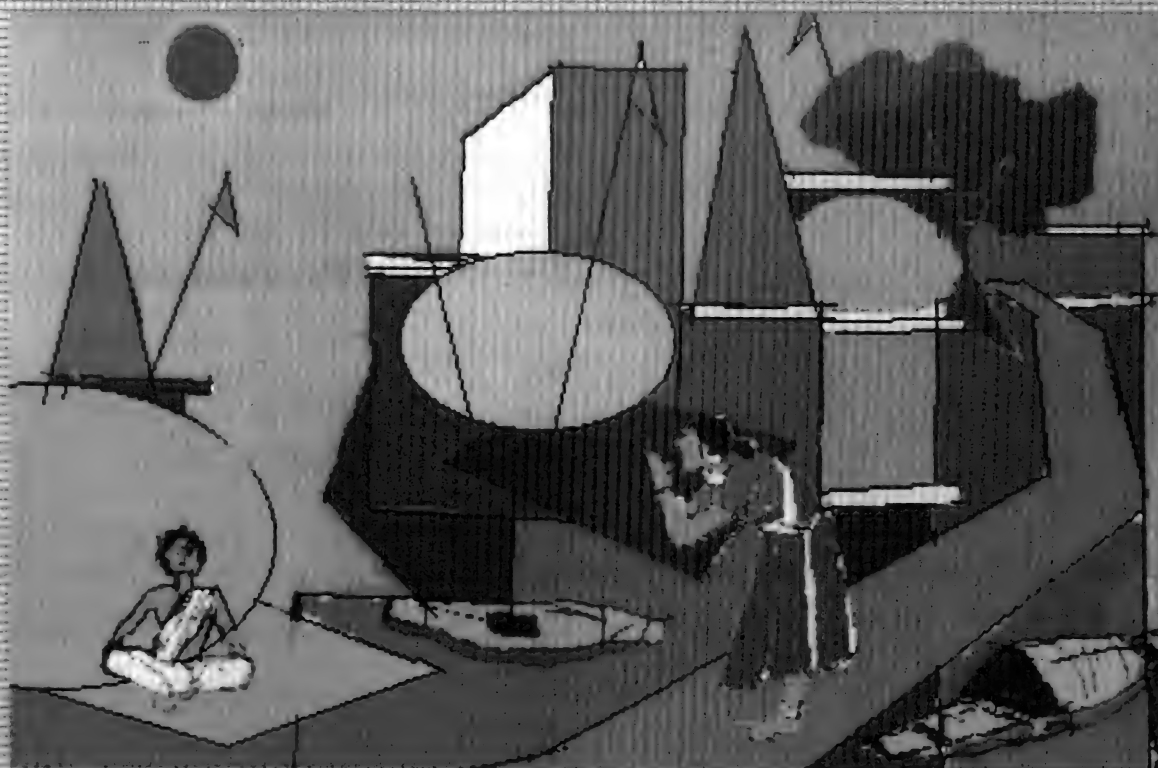
चित्र सं.10-घाट

चित्र सं.11-आस्था

चित्र सं.12-आस्था
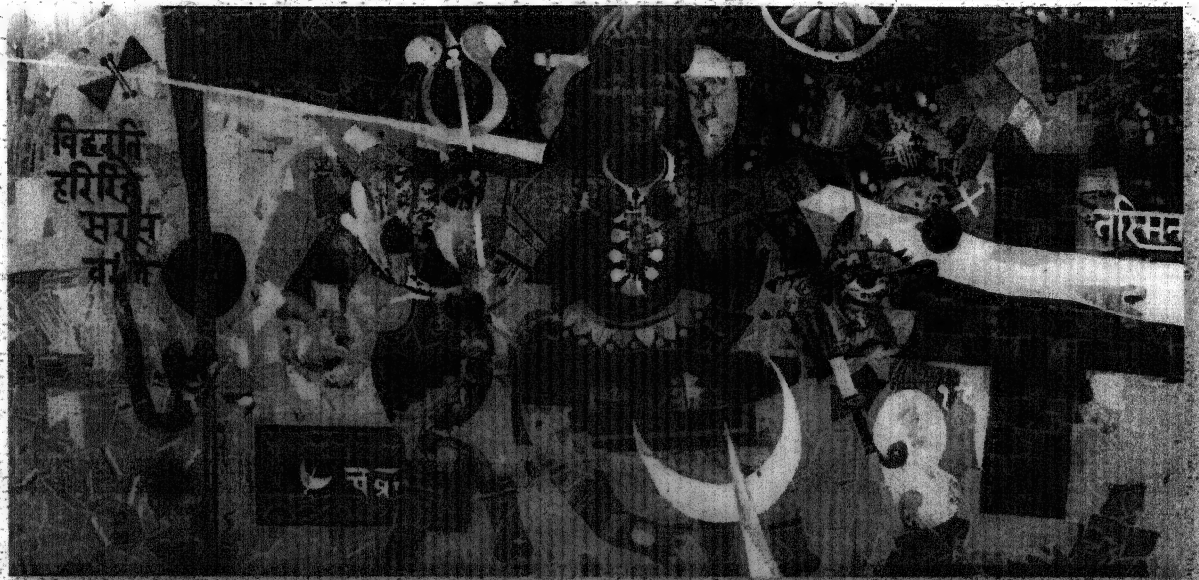
चित्र सं.13-तांत्रिक प्रतीक

चित्र सं.14-गॉव

चित्र सं.15-रोजगार
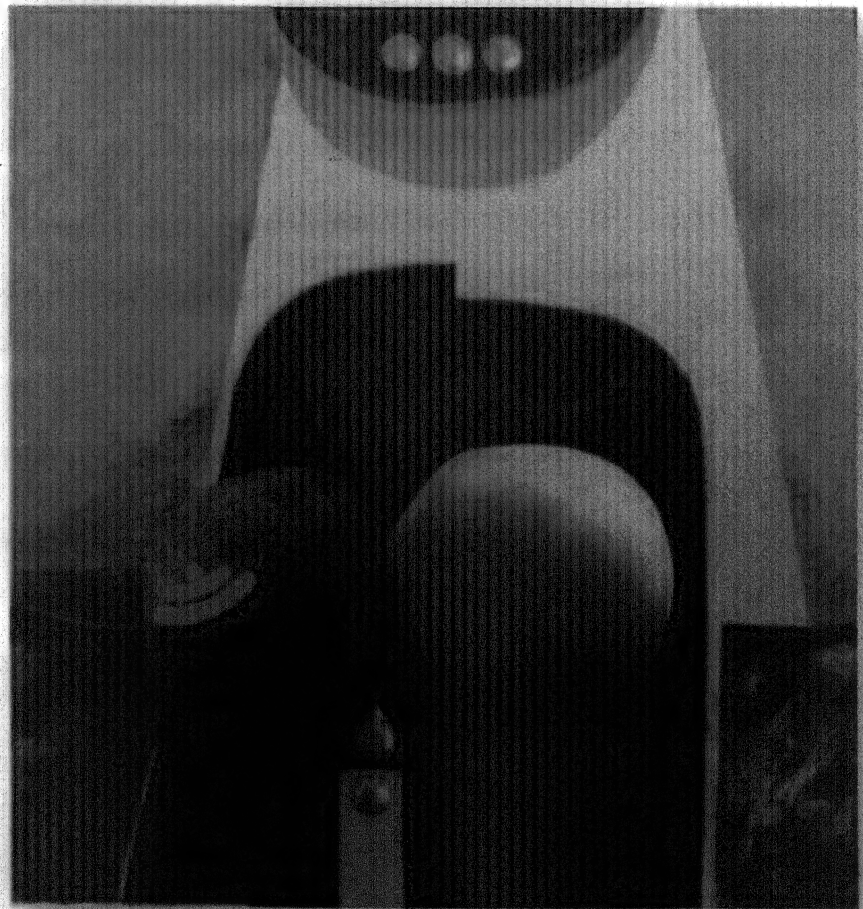
चित्र सं.16-आस्था
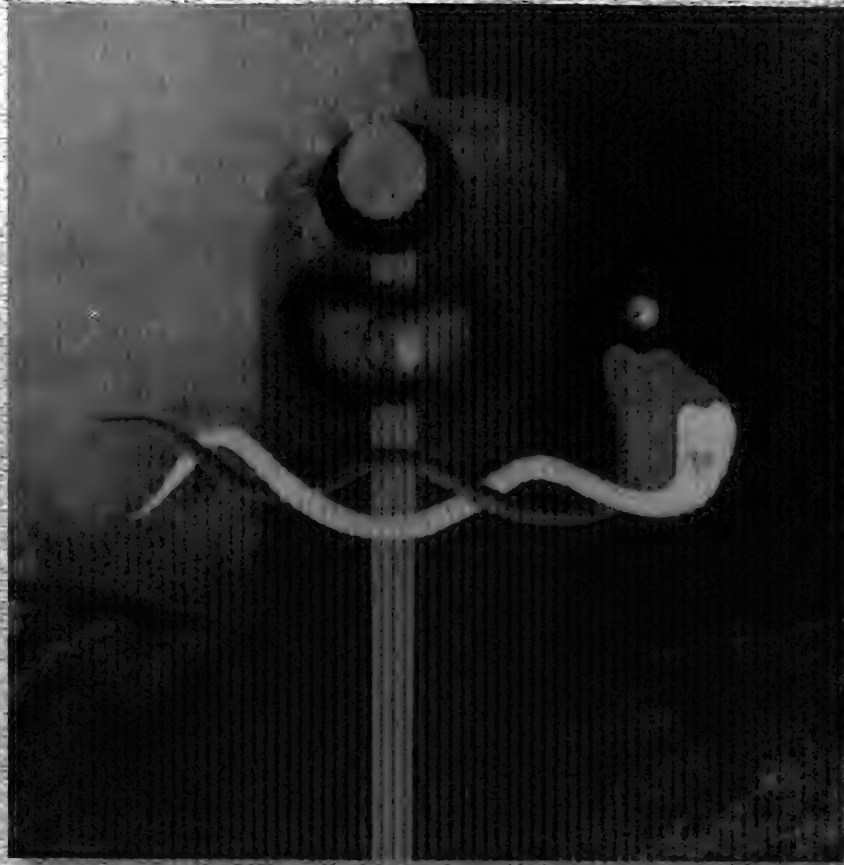
चित्र सं.17-*आस्था*

चित्र सं.18-*श्री गणेश जी*
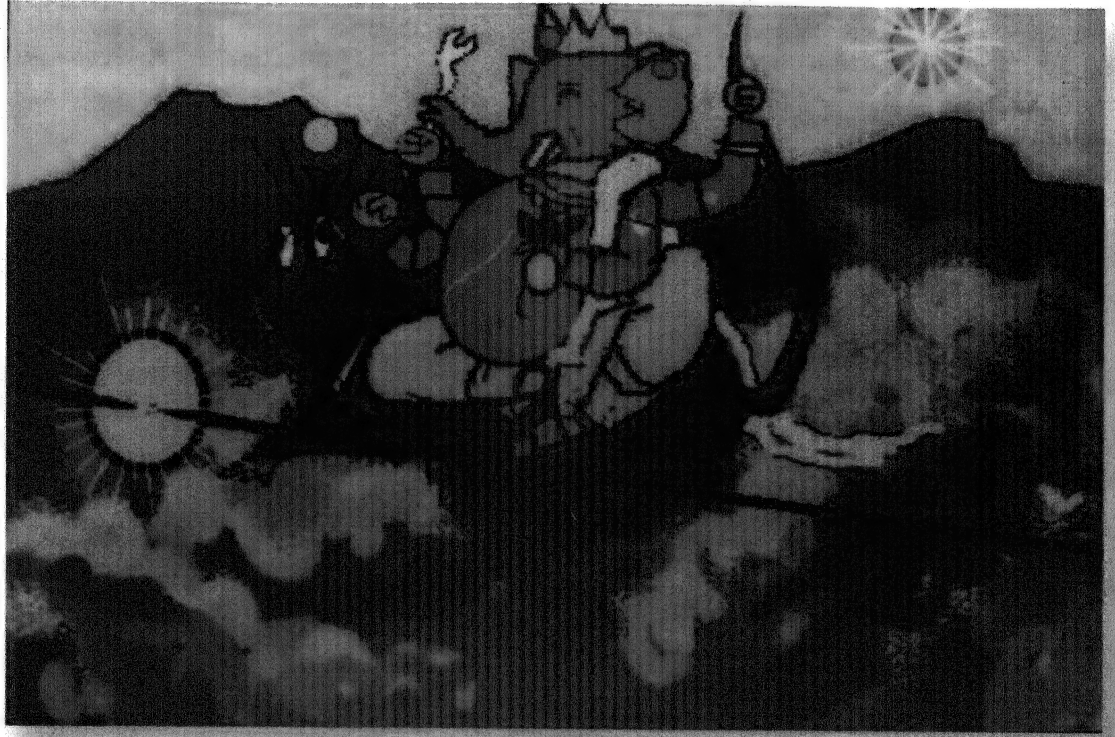
चित्र सं.19-*विश्व-भ्रमण पर गणेश जी*
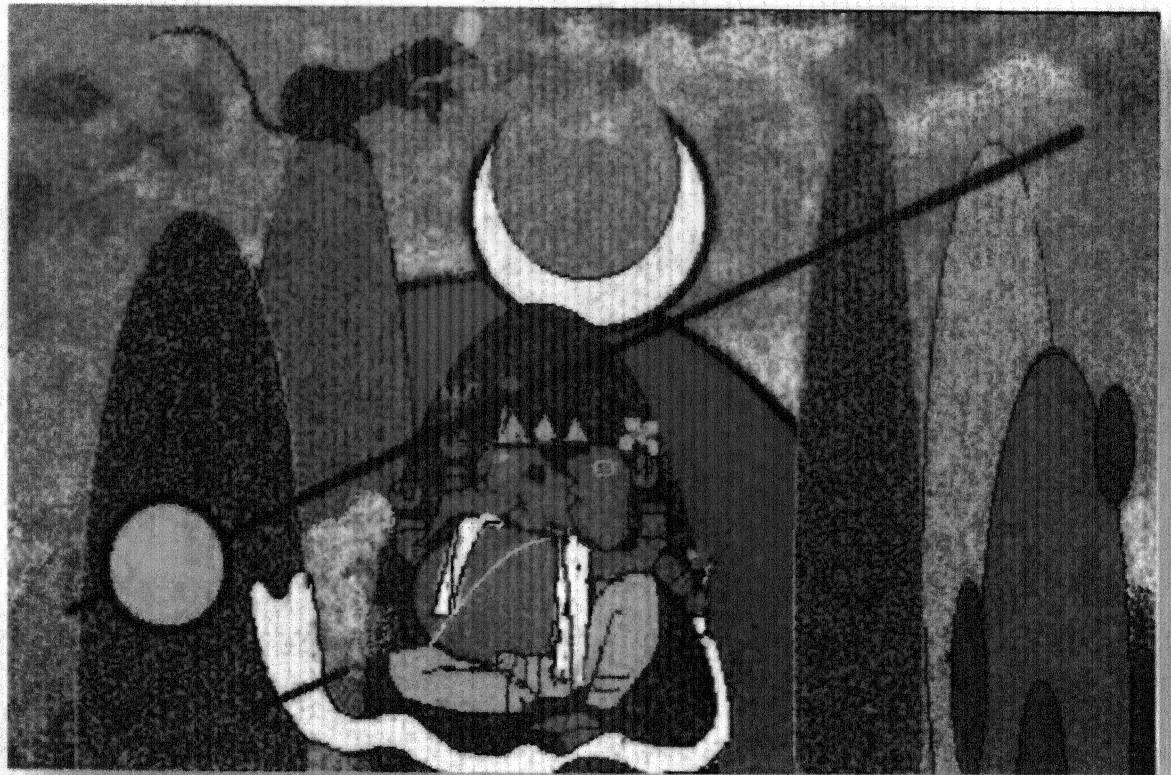
चित्र सं.20-*श्री गणेश जी*
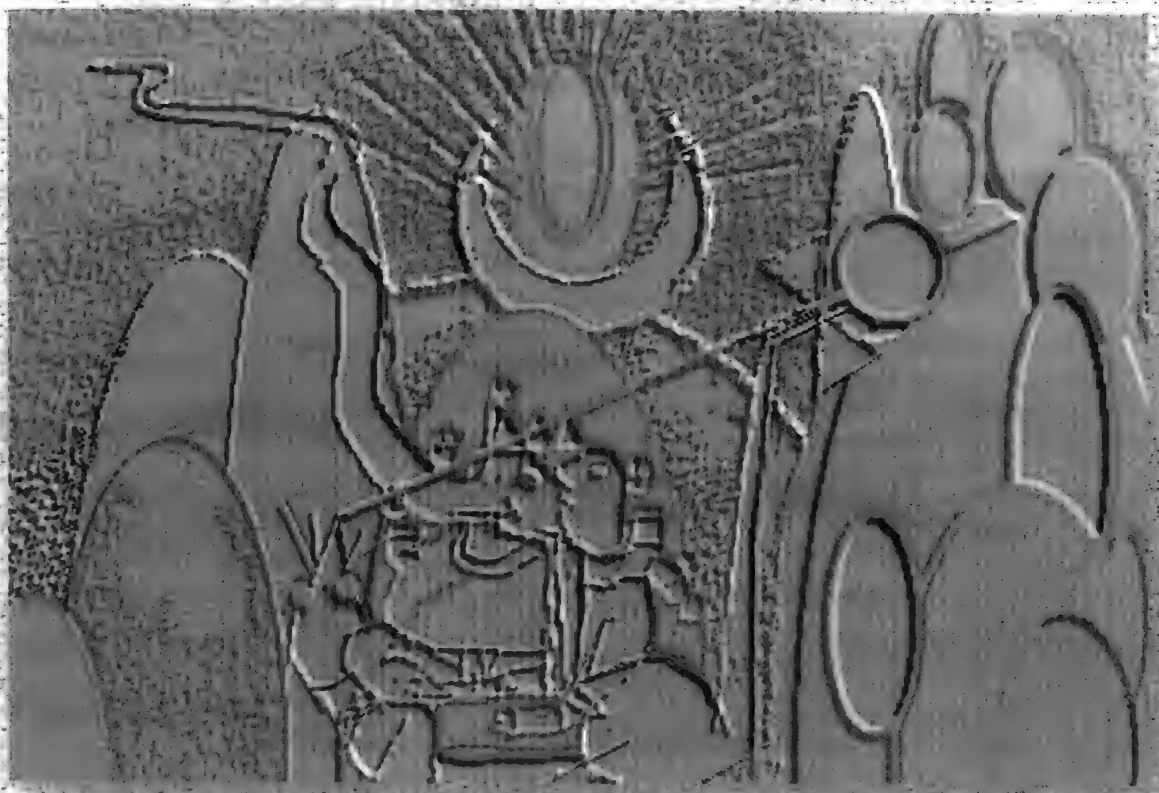
चित्र सं.21-रेखांकन
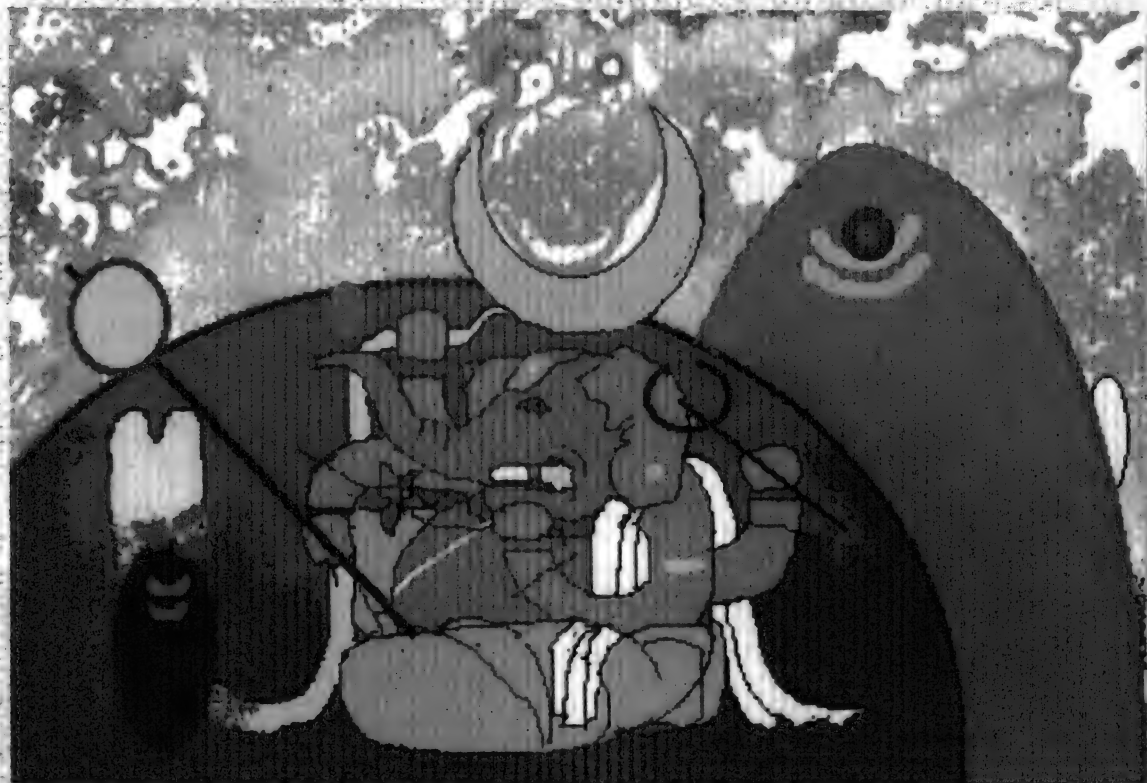
चित्र सं.22-शिवपूजा
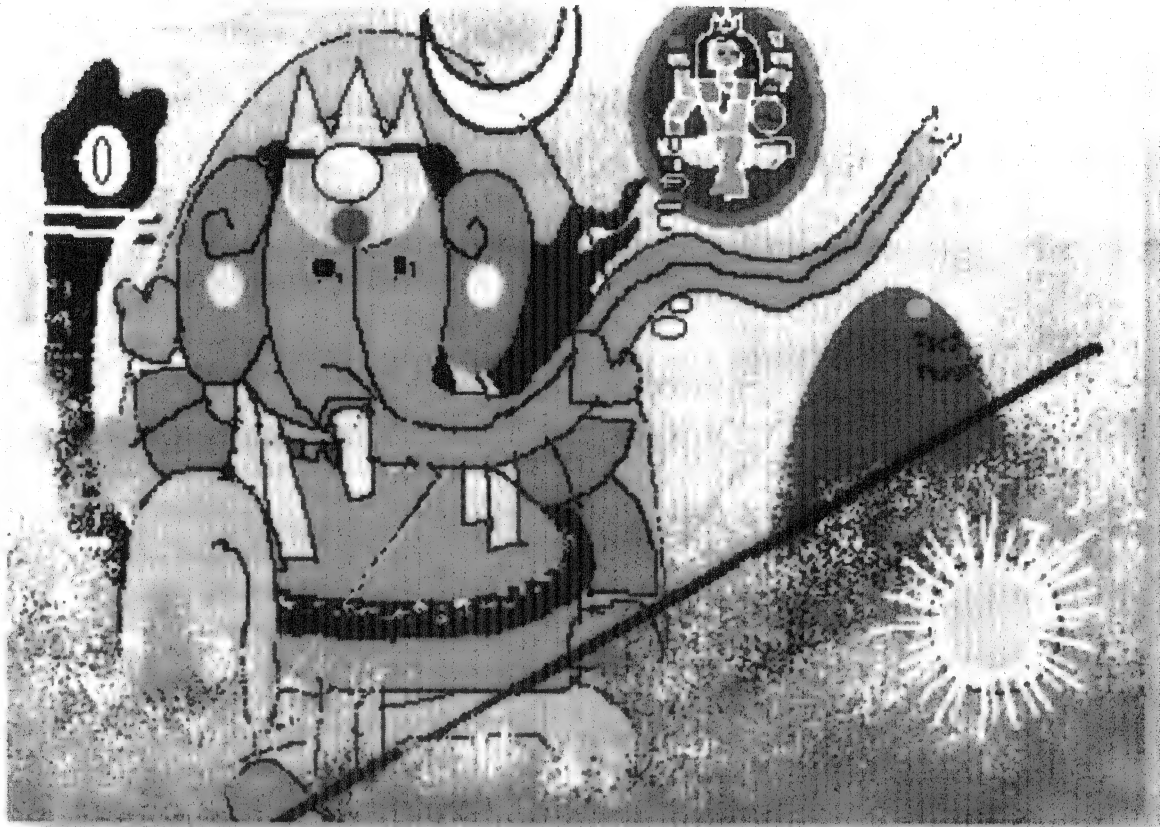
चित्र सं.23-श्री गणेश जी
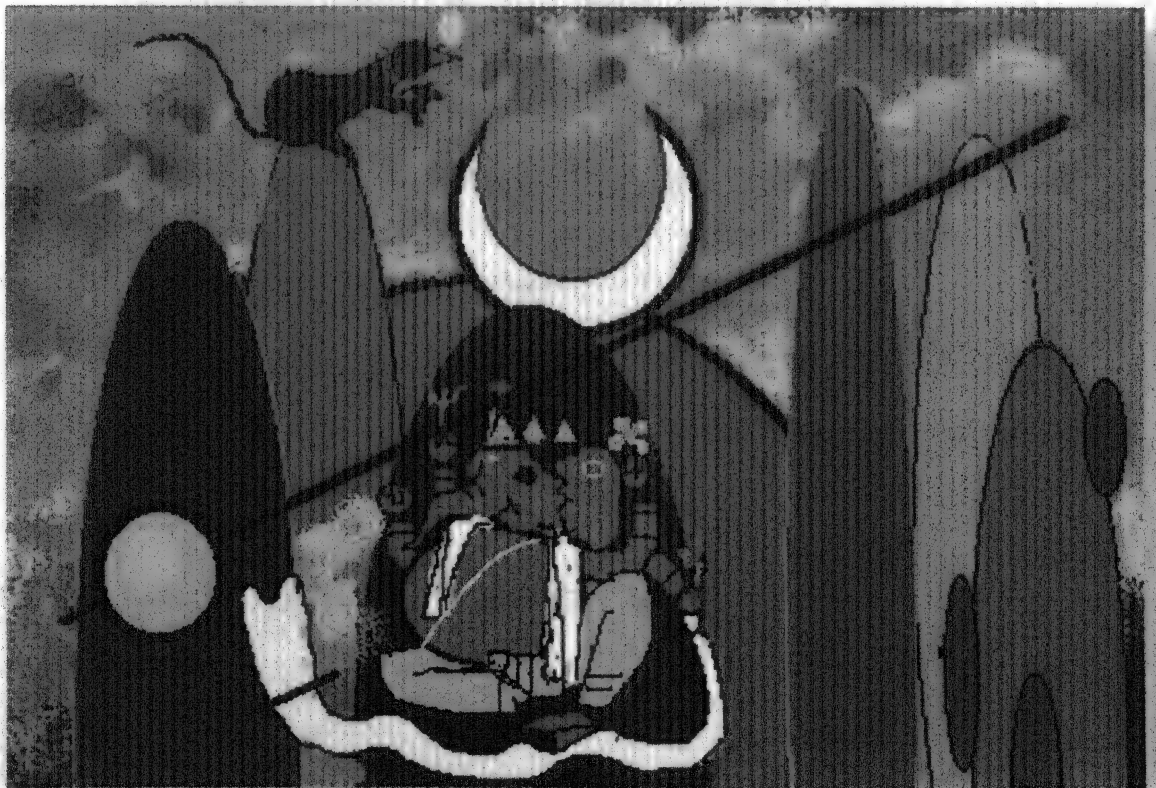
चित्र सं.24-श्री गणेश जी
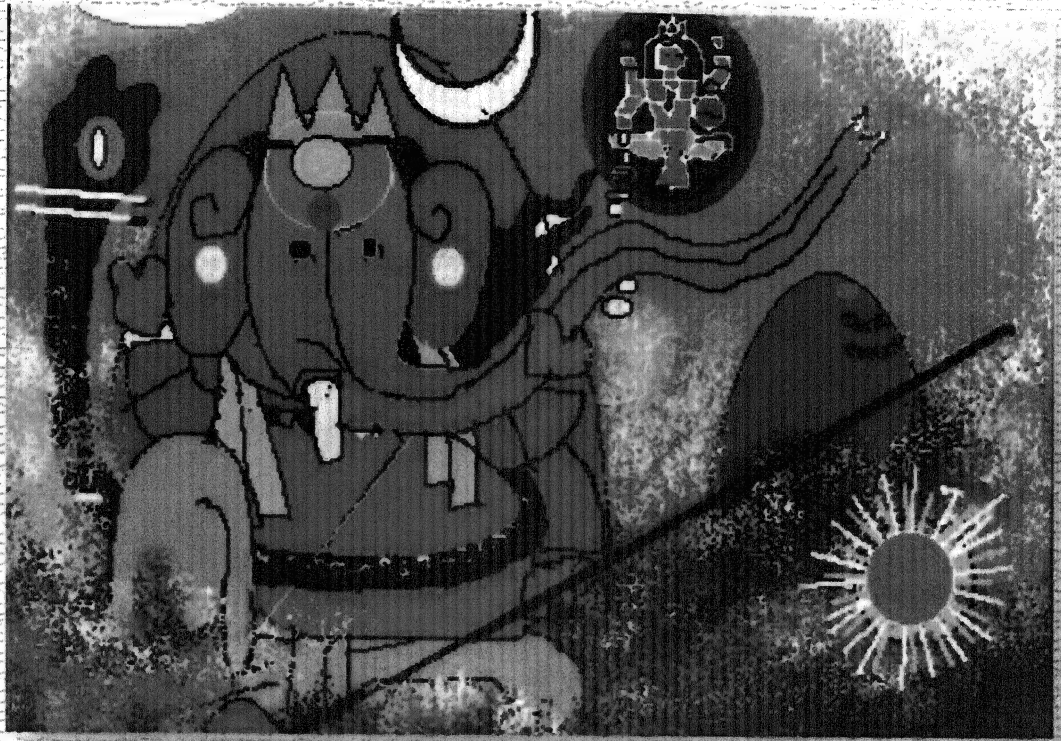
चित्र सं. 25-कैलाश पर्वत पर गणेश जी

चित्र सं. 26.-वस्तु-चित्रण

चित्र सं. 27-तेजस्वरूप गणेश जी
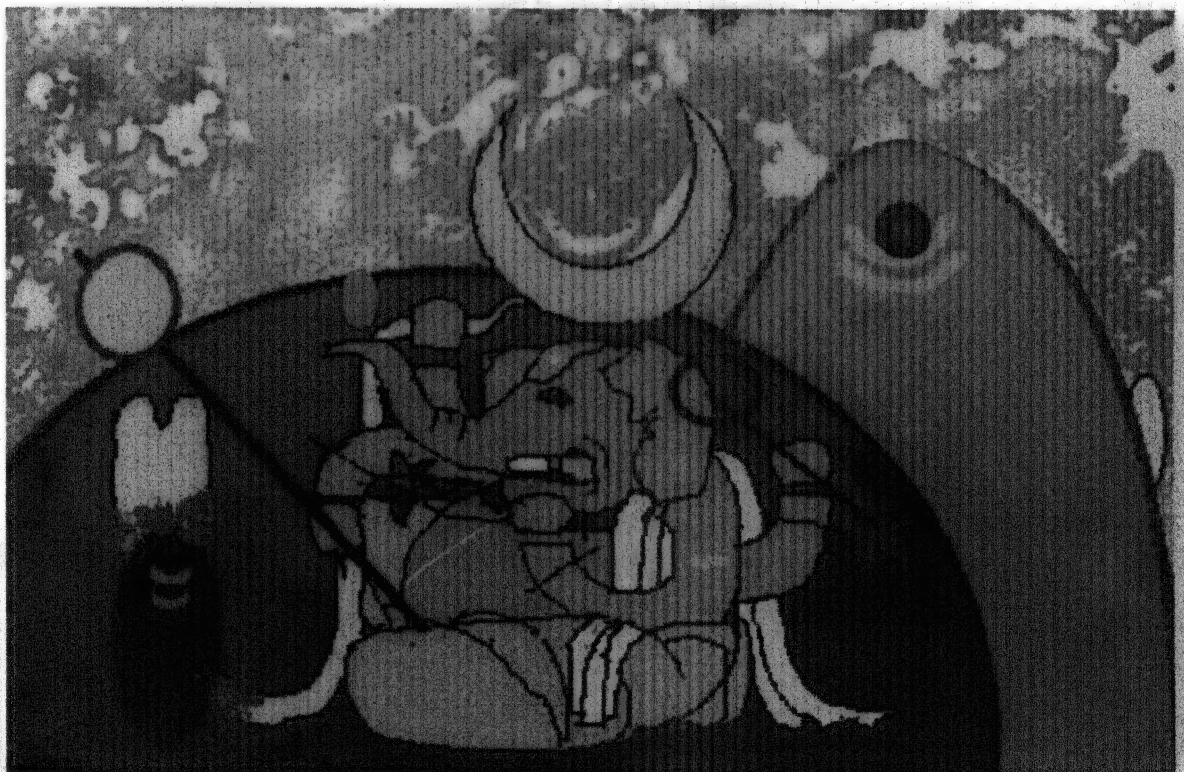
चित्र सं. 28-गणेश जी

चित्र स.29-प्रकृति
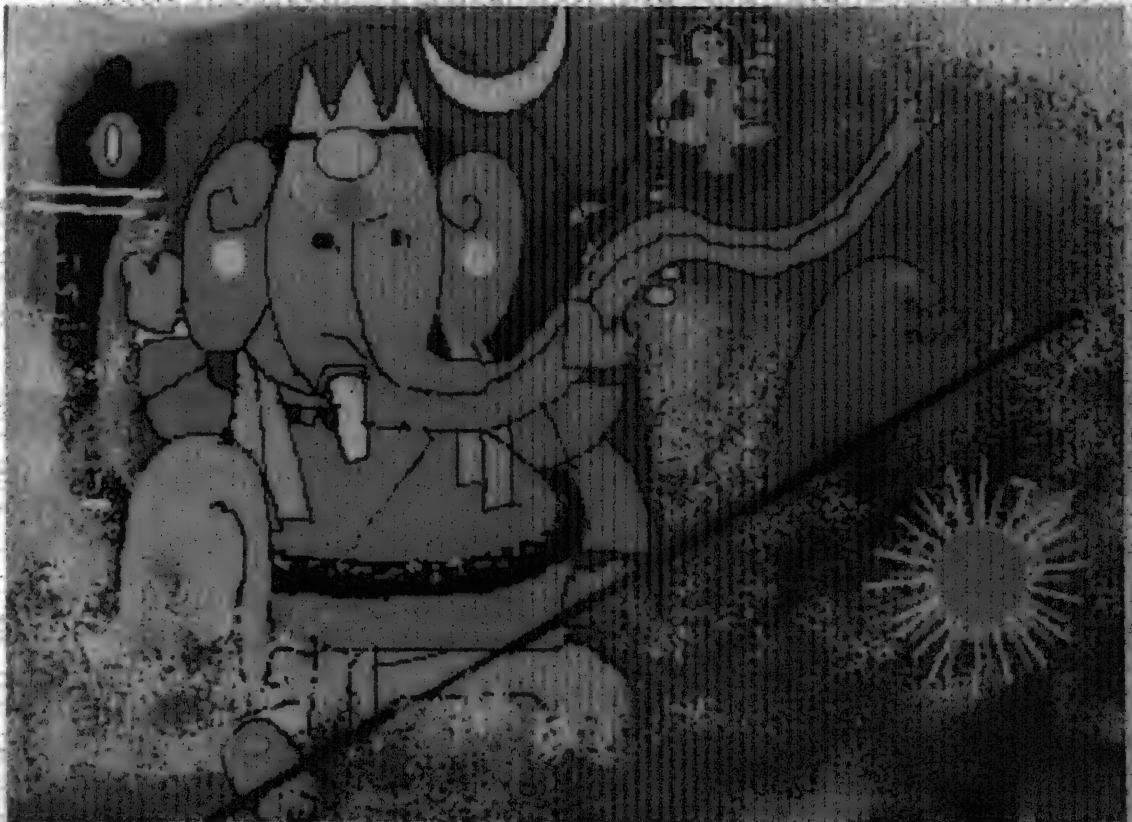
चित्र सं.30-गणेश जी
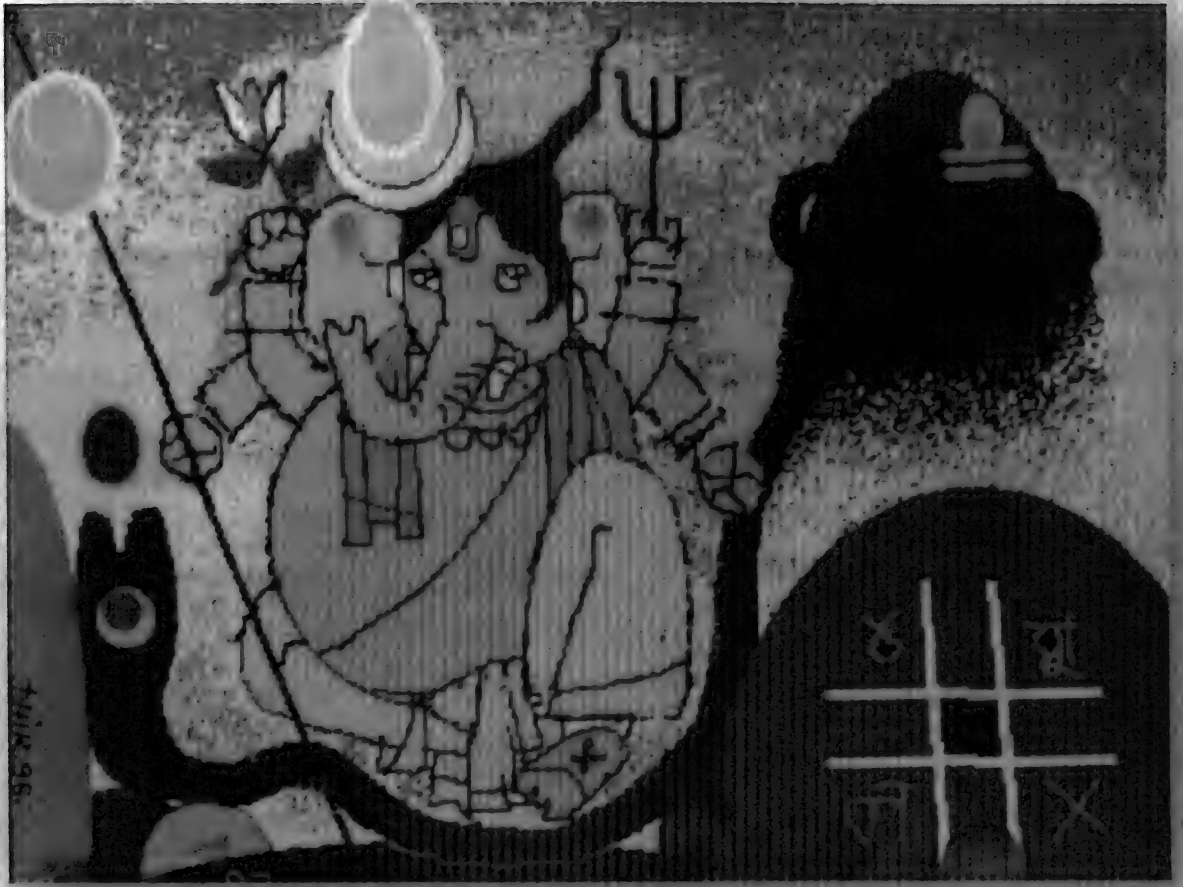
चित्र सं.31-प्रतीक गणेश जी
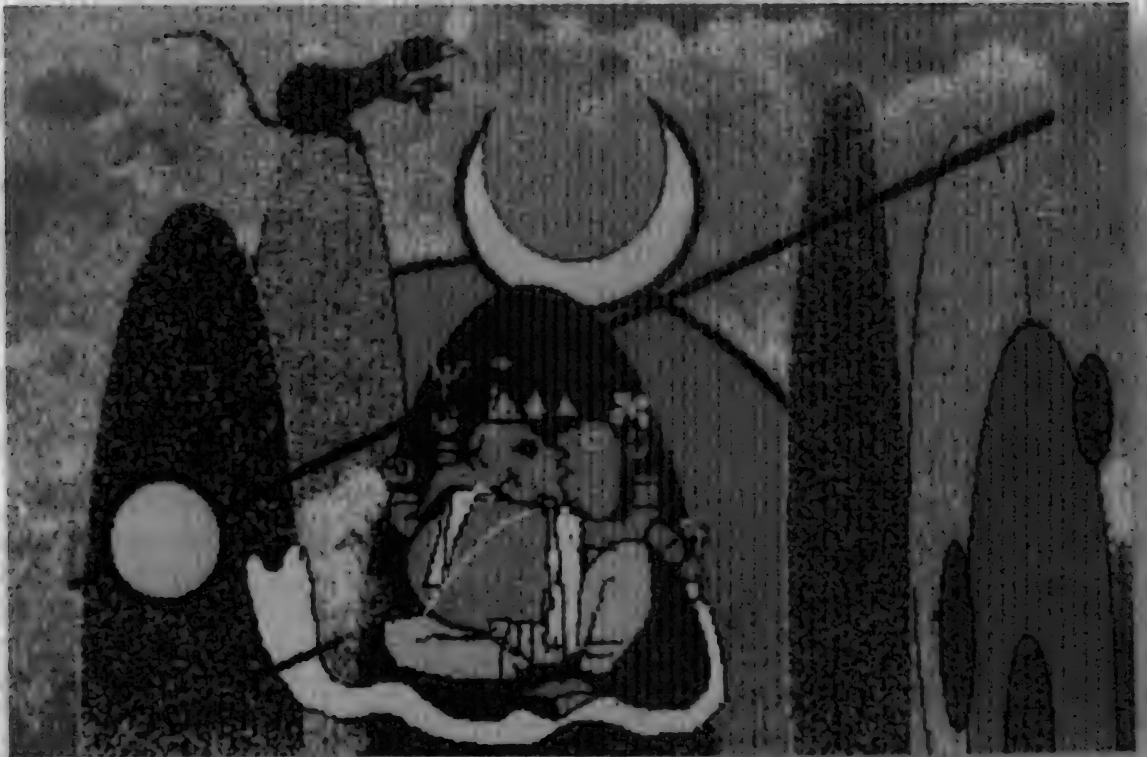
चित्र सं.32-गणेश जी

चित्र सं.33-हरियाली

चित्र सं.34-प्रतीक्षा
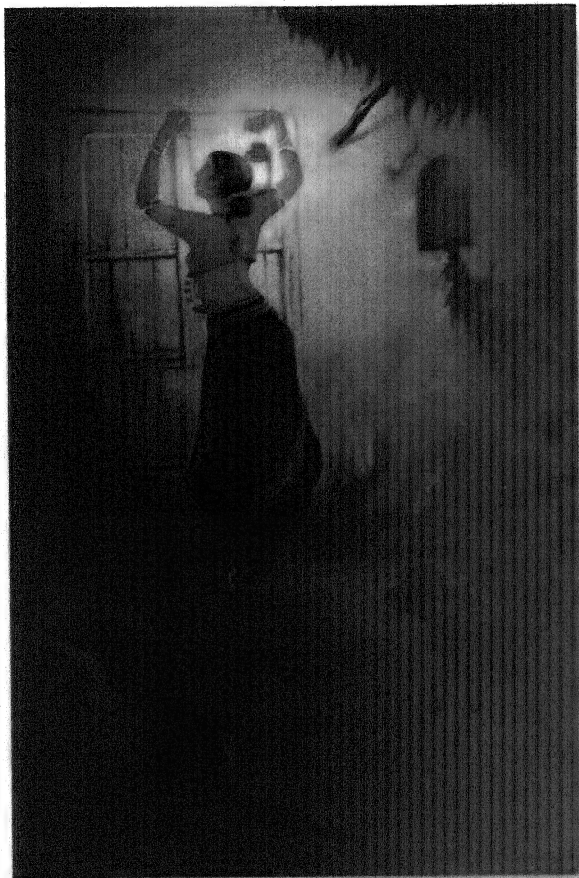
चित्र सं.35
ग्रामीण जीवन

चित्र सं.36-दहेज
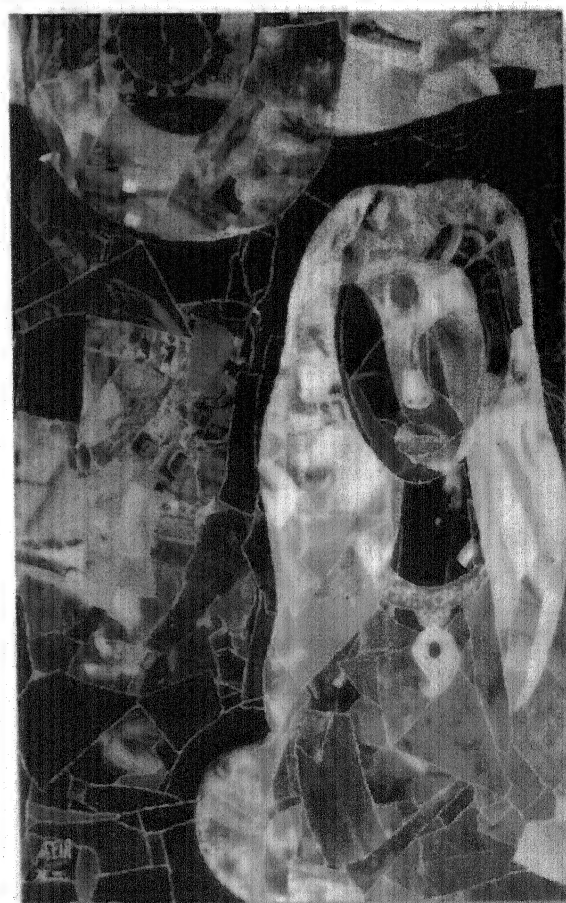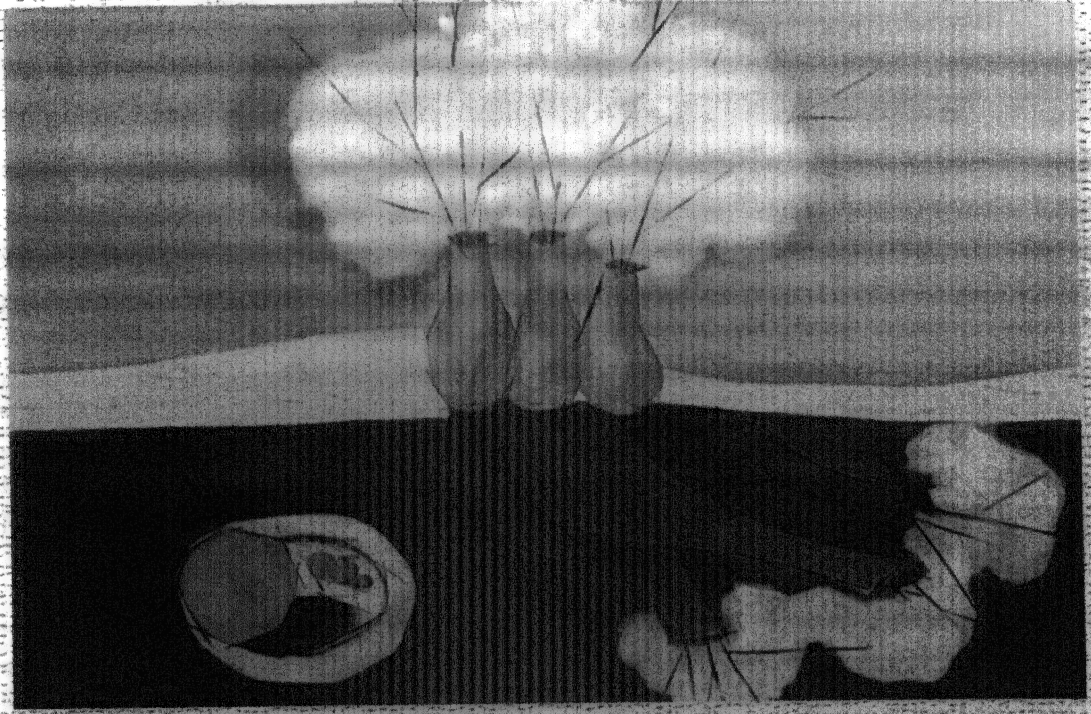
चित्र सं.37-वस्तु-चित्र
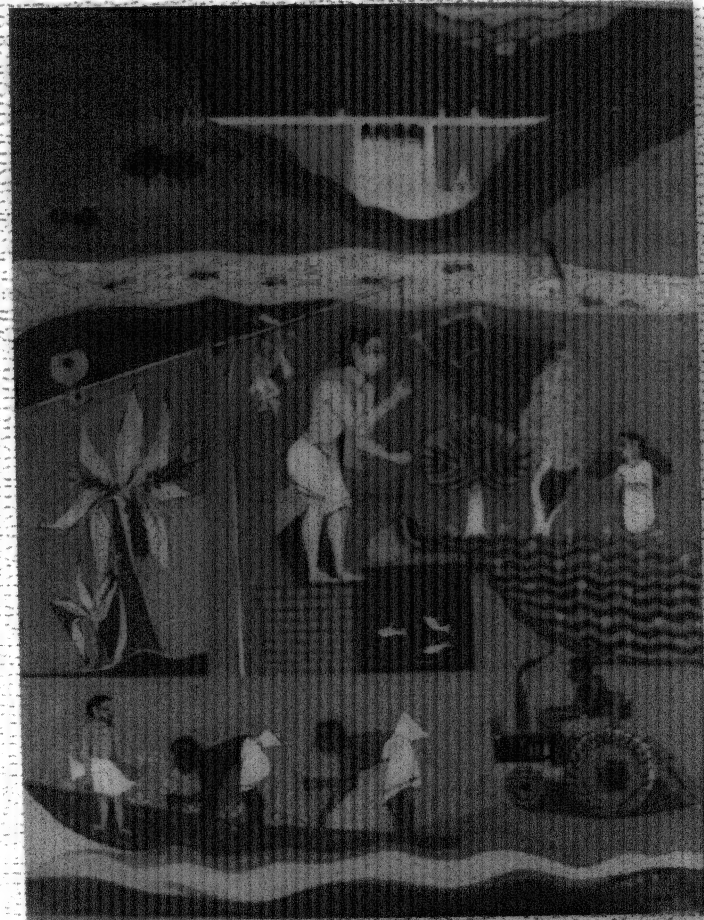
चित्र सं.38-जल-समस्या
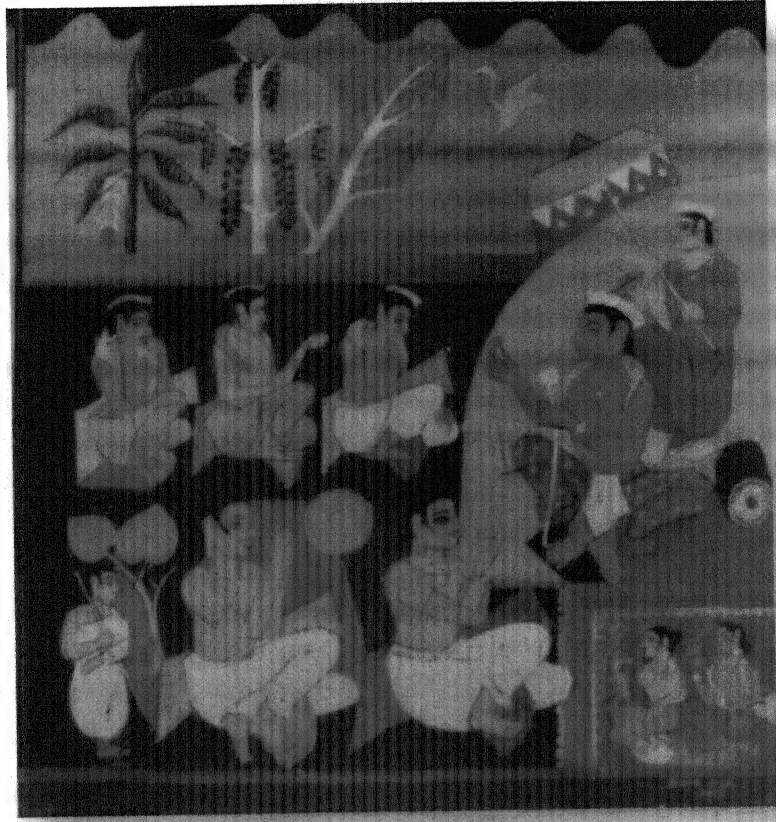
चित्र सं.39-*शिक्षक*

चित्र सं.40-*हिमालय*

चित्र सं.41-हिमालय

चित्र सं.42-हिमालय

चित्र सं.43-*हिमालय*

चित्र सं.44-*हिमालय*

चित्र सं.45-*हिमालय*

चित्र सं.46-*हिमालय*

चित्र सं.47-हिमालय

चित्र सं.48-सरकारी कार्यालय

चित्र सं.49–वस्तु-चित्रण
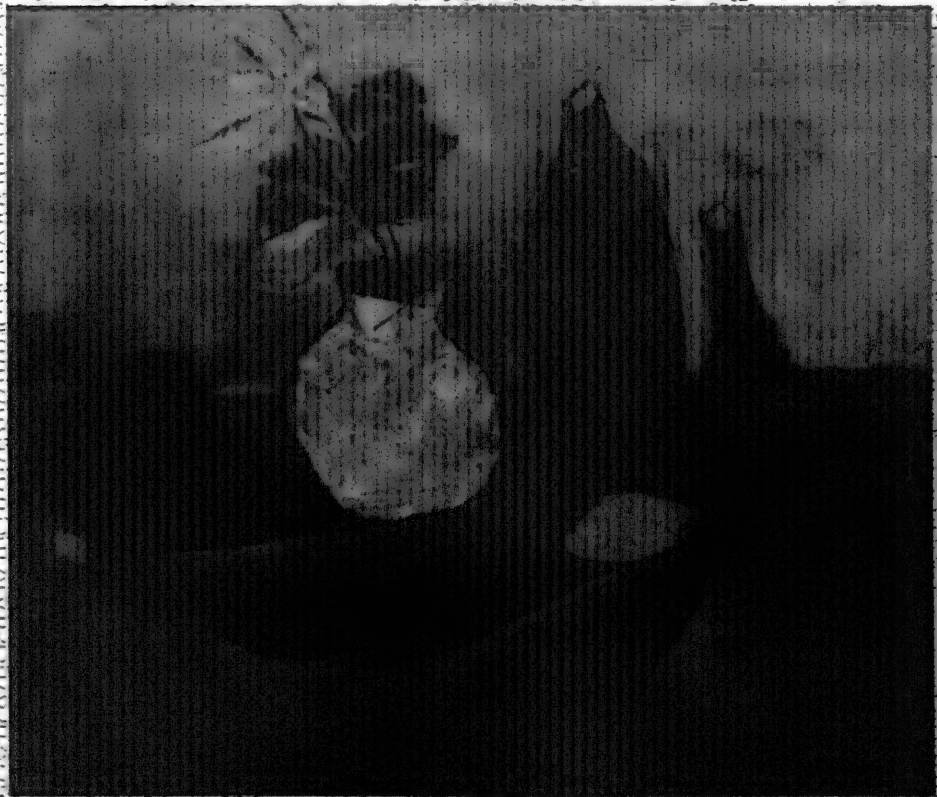
चित्र सं.50–वस्तु-चित्रण
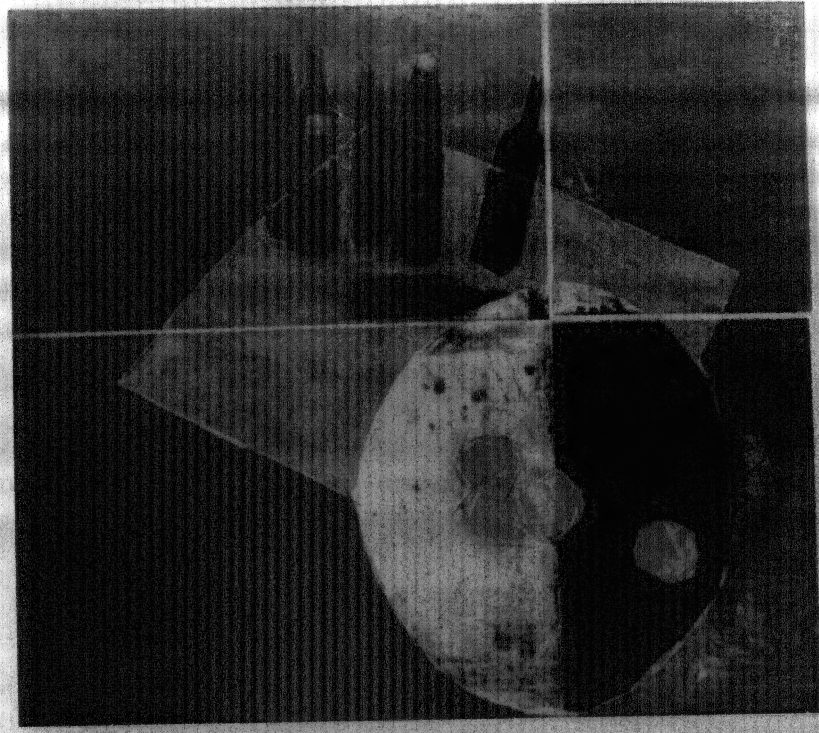
चित्र सं.51-वस्तु-चित्रण

चित्र सं.52-वस्तु-चित्रण

चित्र सं.53-वस्तु-चित्रण

चित्र सं.54-वस्तु-चित्रण

चित्र सं.55
वस्तु-चित्रण
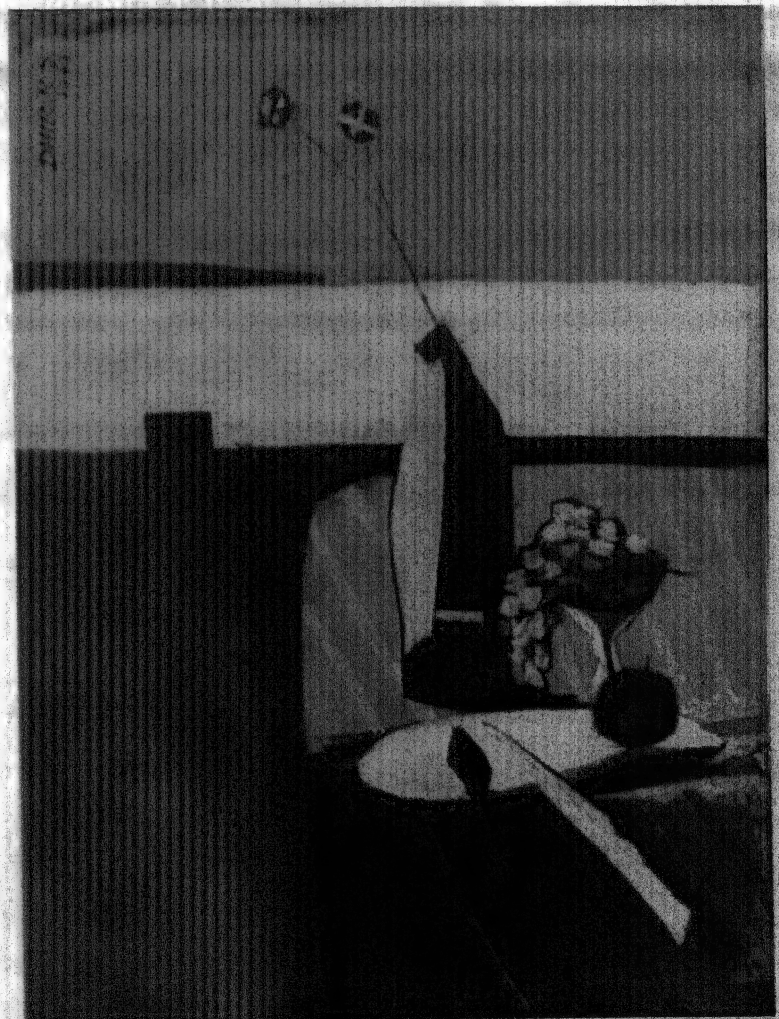
चित्र सं.56
वस्तु-चित्रण

चित्र सं.57-वस्तु-चित्रण

चित्र सं.58-वस्तु-चित्रण
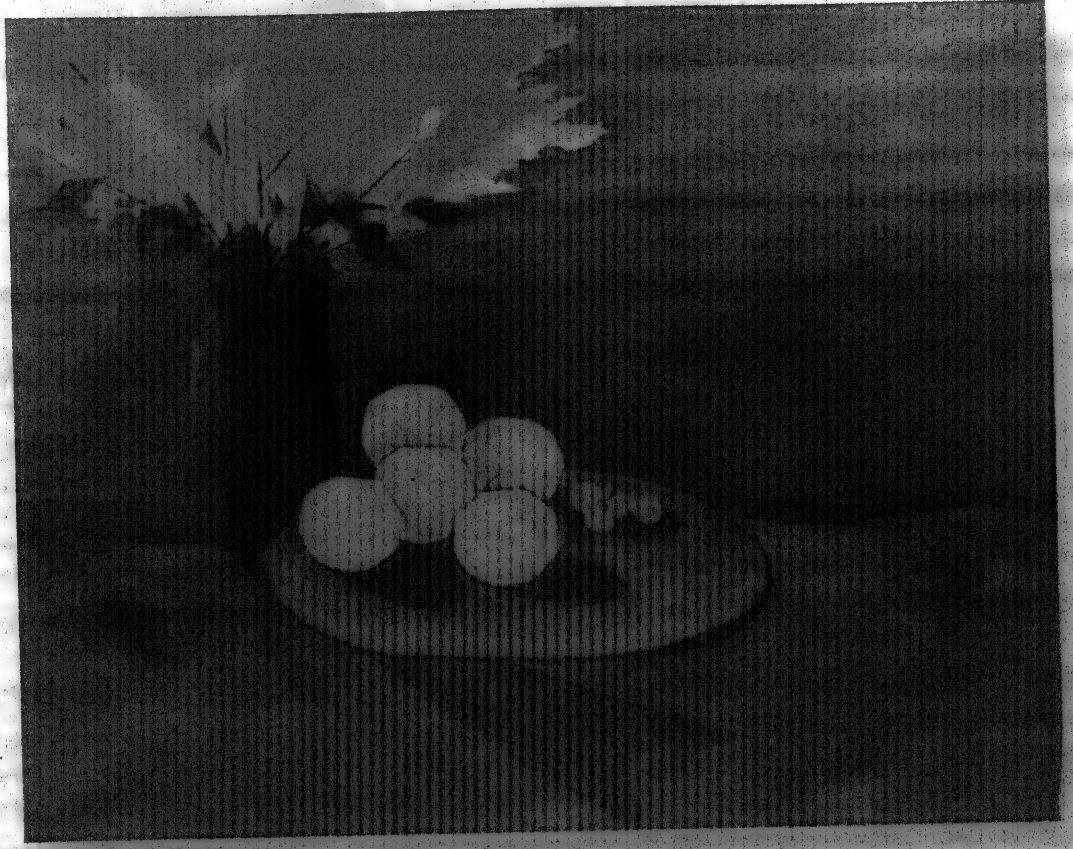
चित्र सं.59-वस्तु-चित्रण

चित्र सं.60-वस्तु-चित्रण
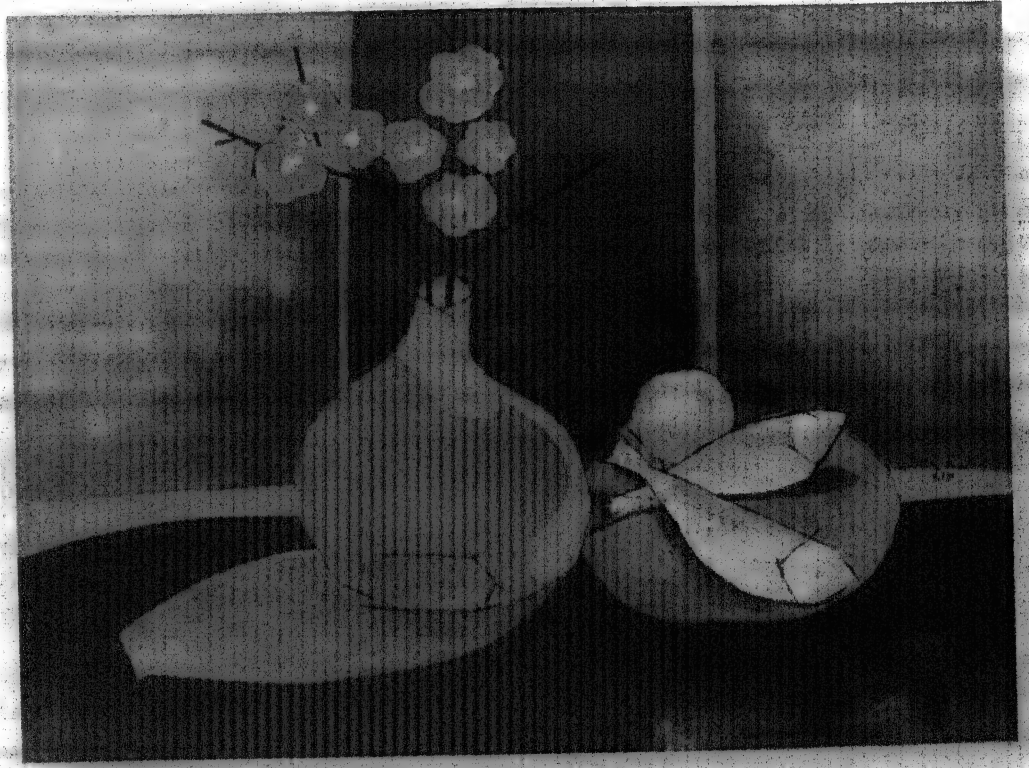
चित्र सं.61-वस्तु-चित्रण
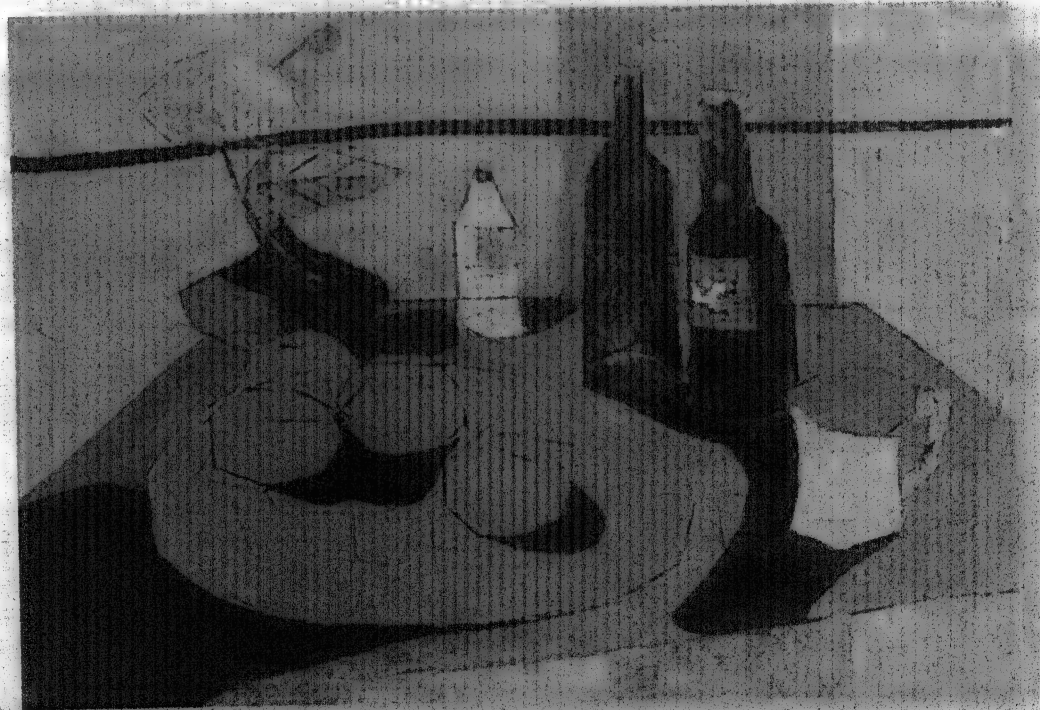
चित्र सं.62-वस्तु-चित्रण

चित्र सं.63-वस्तु-चित्रण

चित्र सं.64-वस्तु-चित्रण
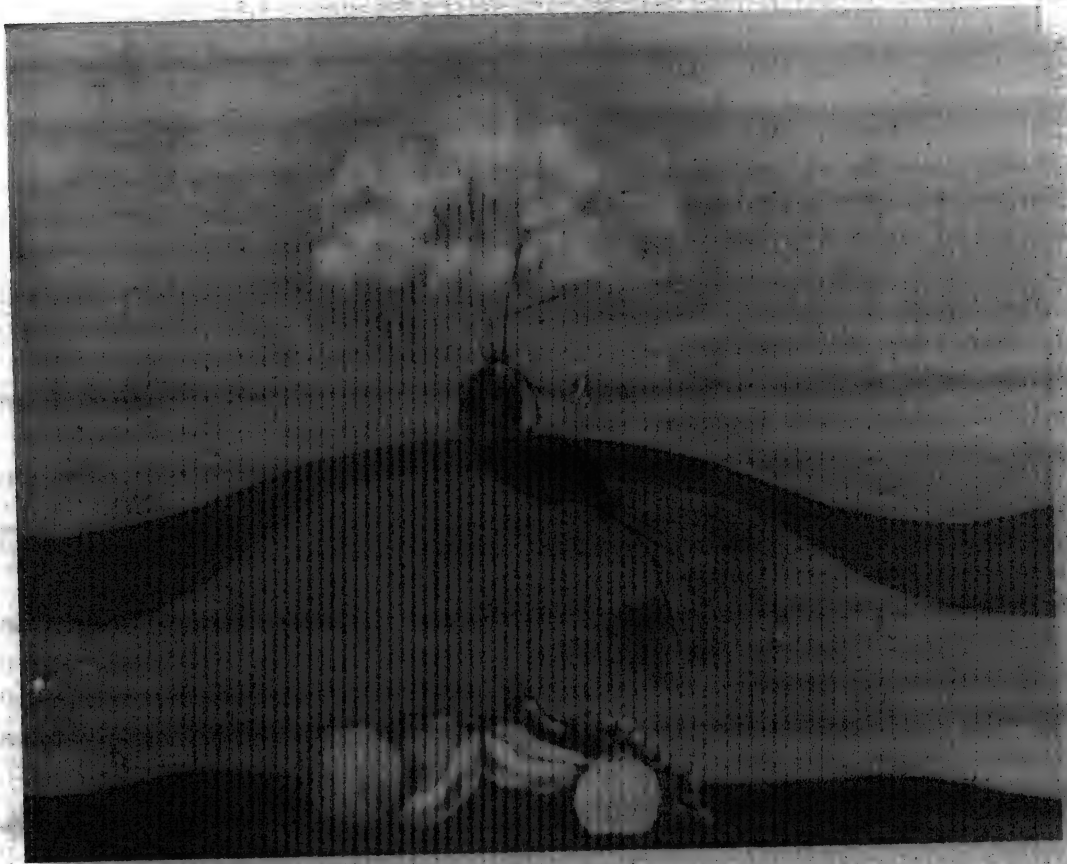
चित्र सं.65-वस्तु-चित्रण

चित्र सं.66-जैन-तकनीकी
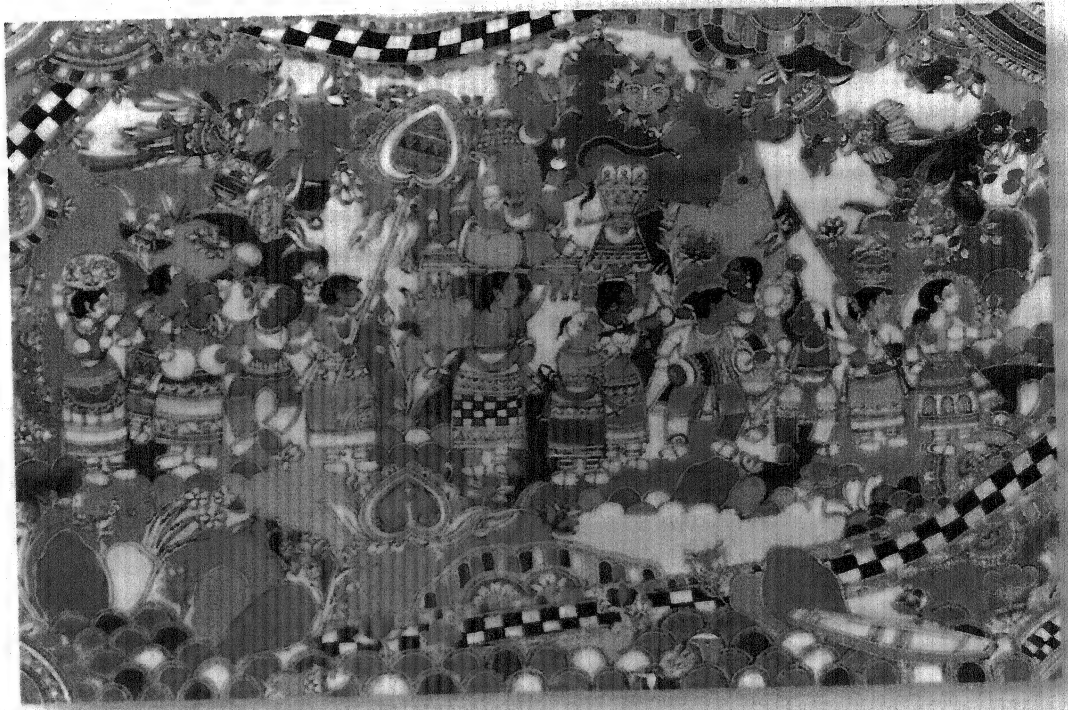
चित्र सं.67-जैन-तकनीकी
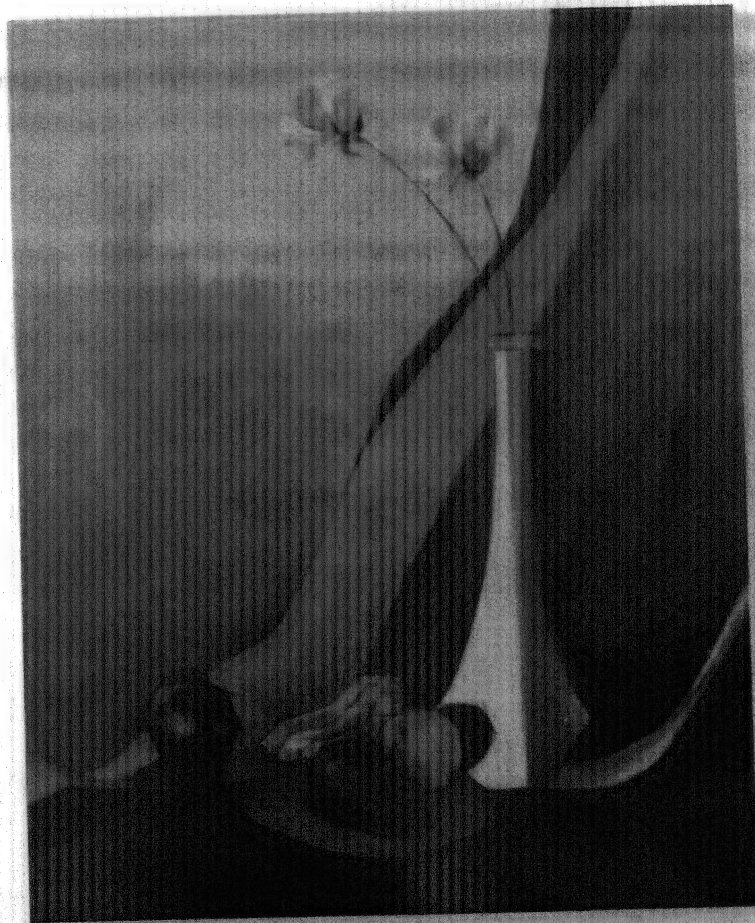
चित्र सं.68-वस्तु-चित्रण

चित्र सं.69-घाट

चित्र सं.70-उलझन

चित्र सं.71-बुढ़वा मंगल
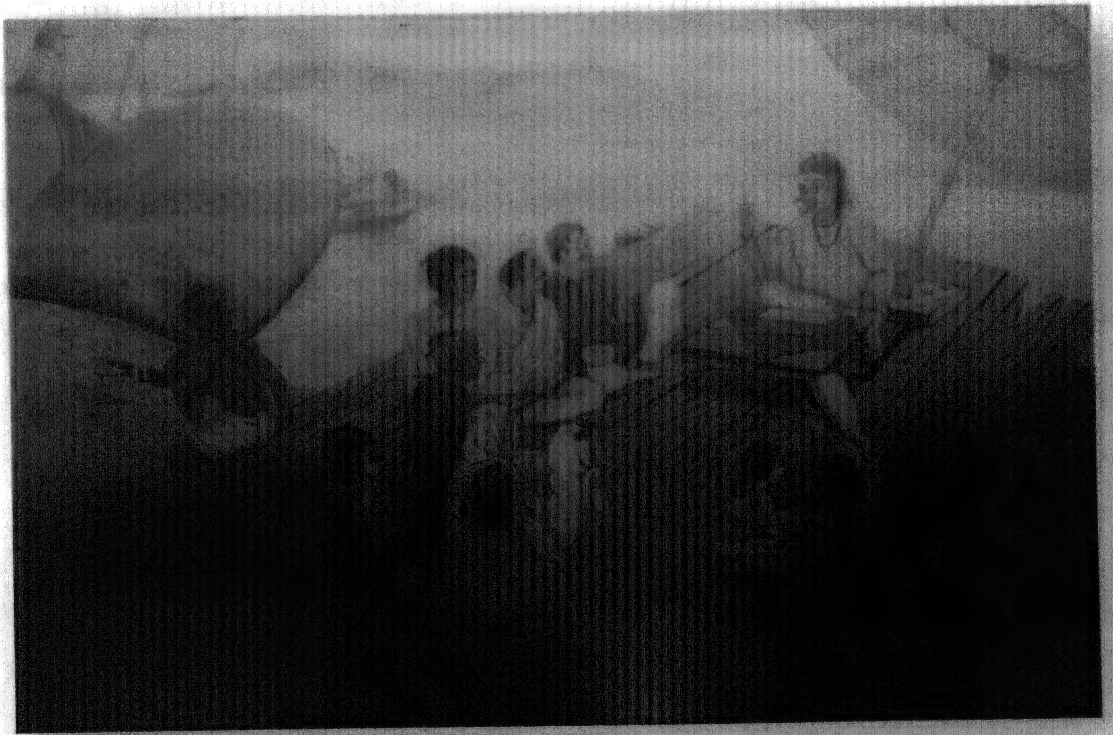
चित्र सं.72-घाट

चित्र सं.73-संयोजन

चित्र सं.74-काली पूजा
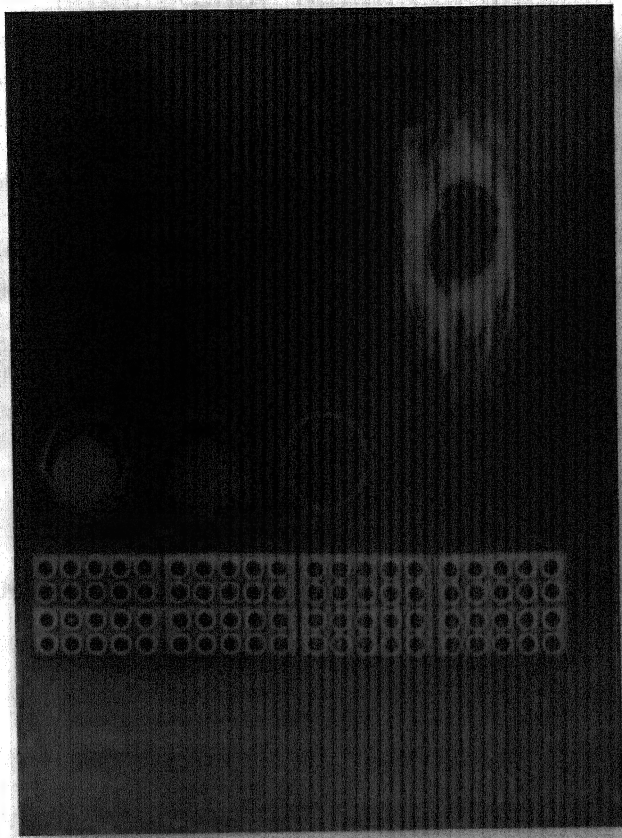
चित्र सं.75
संयोजन
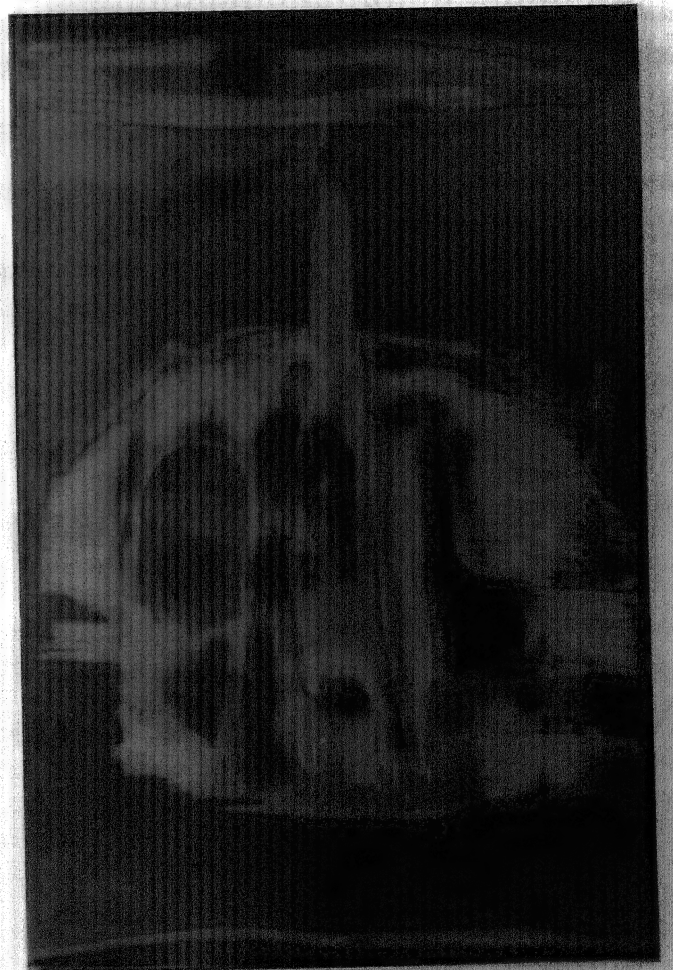
चित्र सं.76
संयोजन

चित्र सं.77-प्रकृति

चित्र सं.78-पहाड़ी
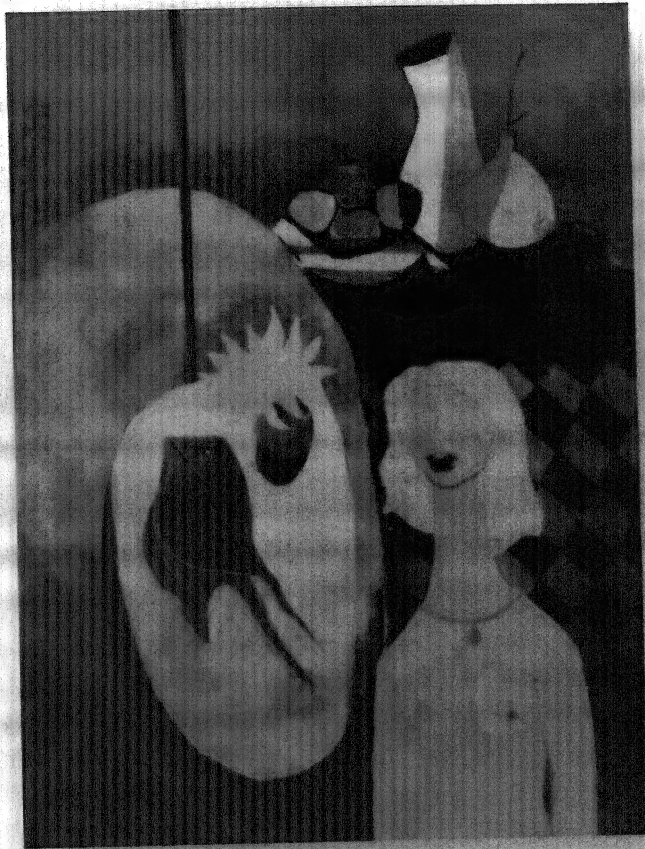
चित्र सं.79-स्त्री

चित्र सं.80-दशा
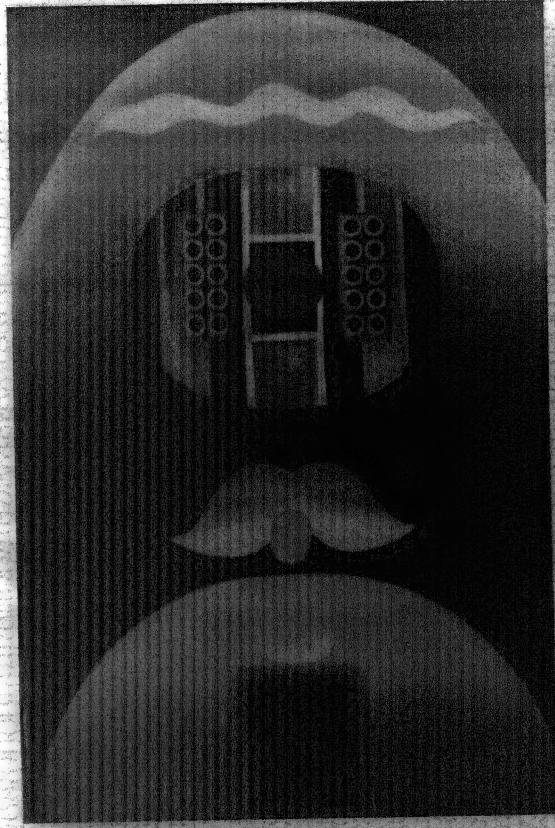
चित्र सं.81-संयोजन

चित्र सं.82-चीरहरण
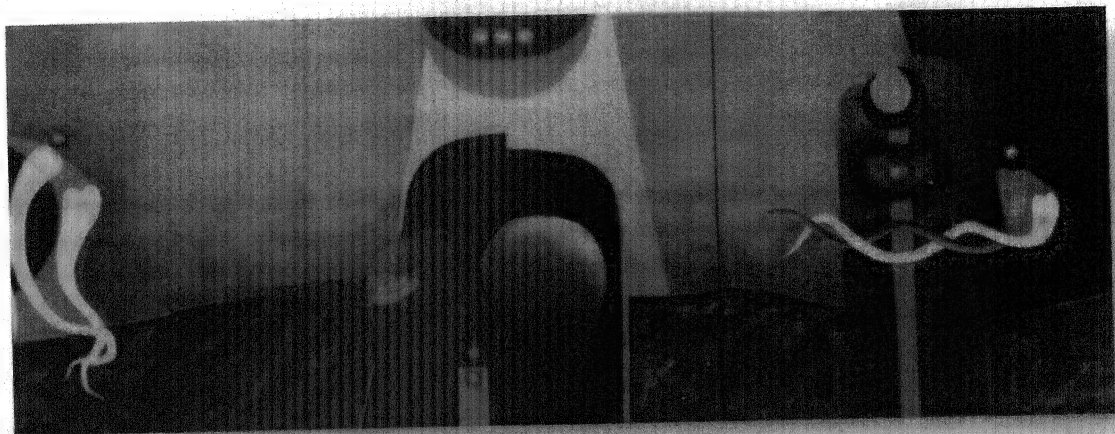
चित्र सं.83-आस्था
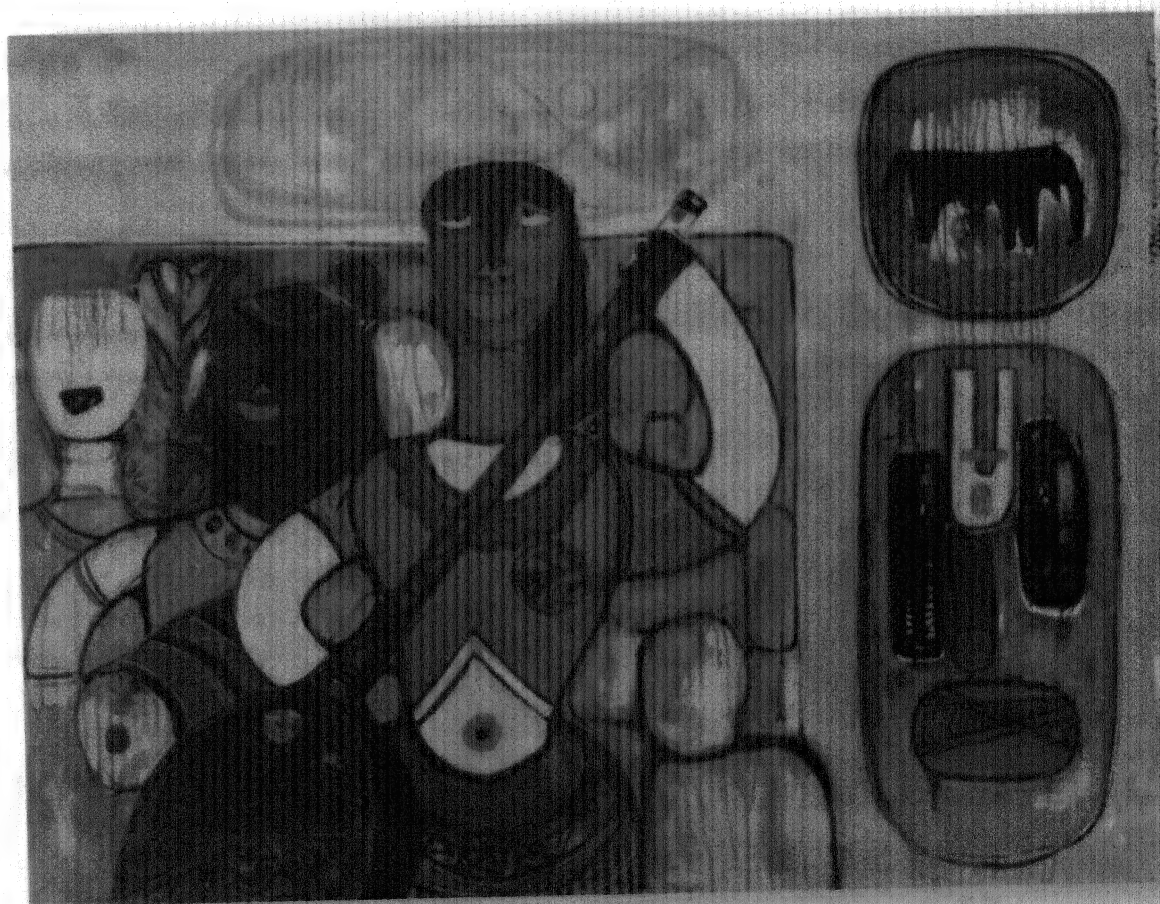
चित्र सं.84-संयोजन

चित्र सं.85-सब्जी वाली

चित्र सं.86-सावन की हरियाली
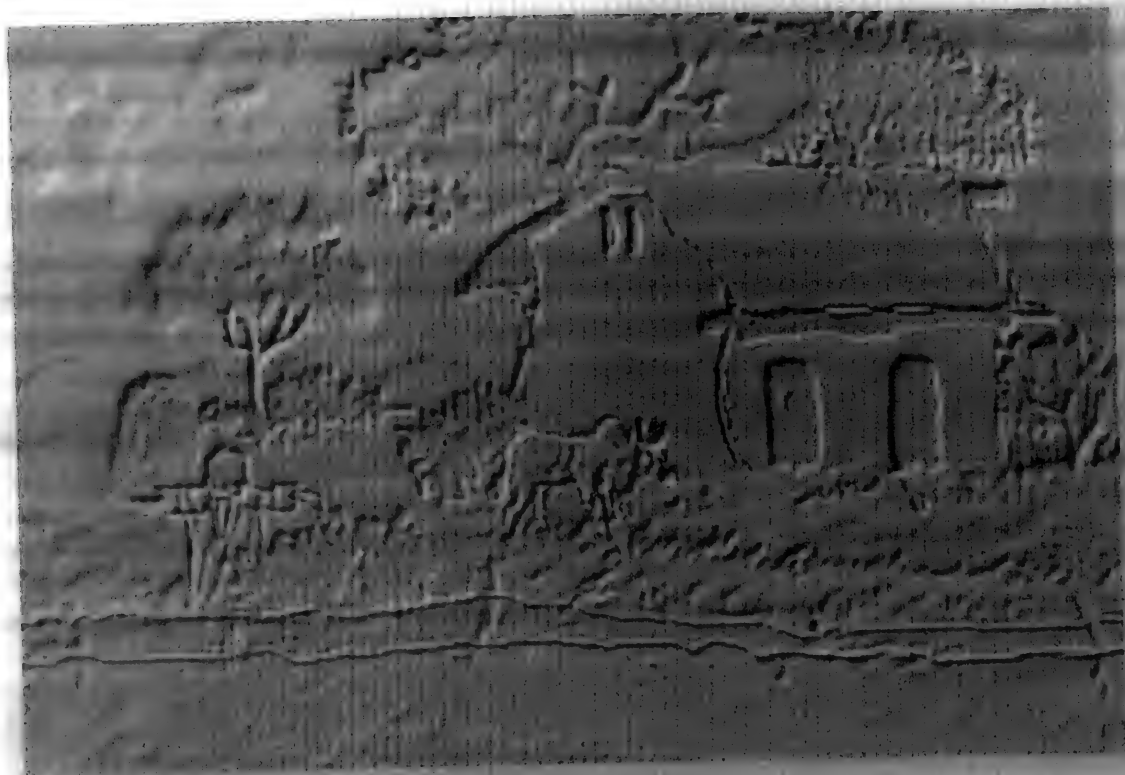
चित्र सं.87क-गाँव

चित्र सं.87ख-दोस्ती

चित्र सं.88-आधुनिक शिक्षा
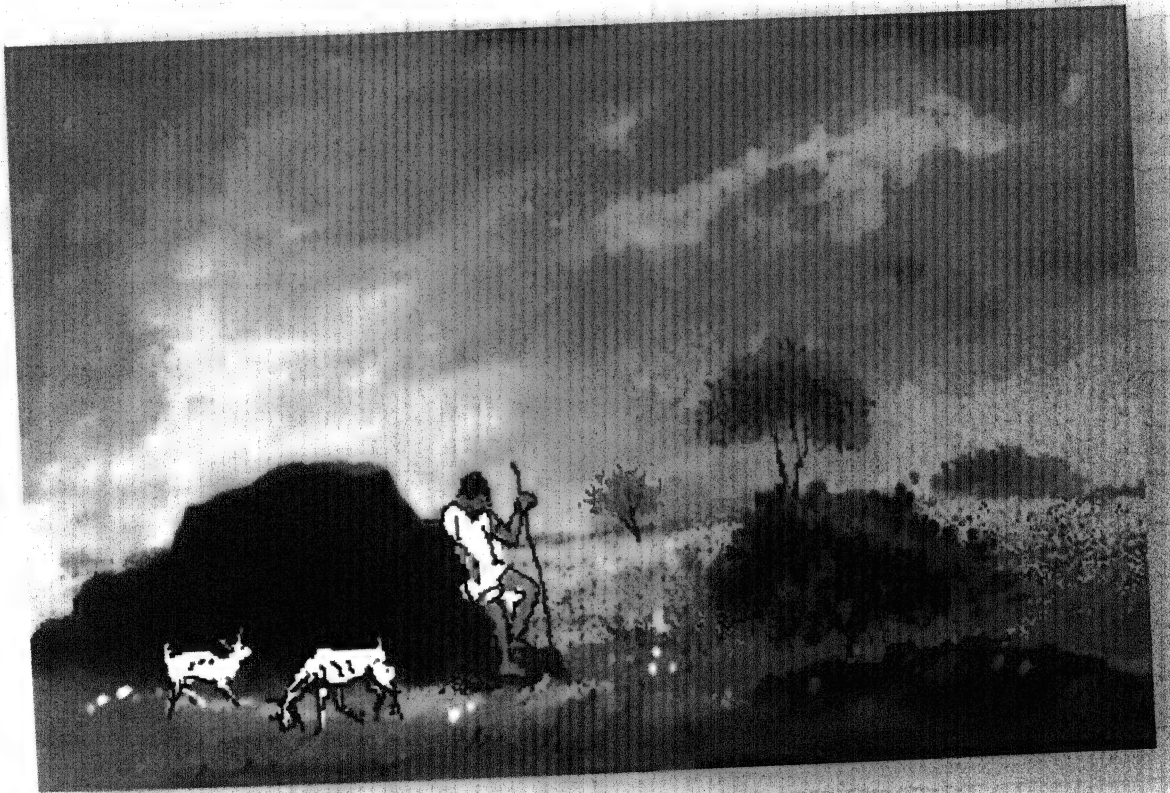
चित्र सं.89-चरवाहा

चित्र सं.90-ग्रामीण दृश्य

चित्र सं.91-डायनिंग पर पढ़ाई

चित्र सं.92-बचपन
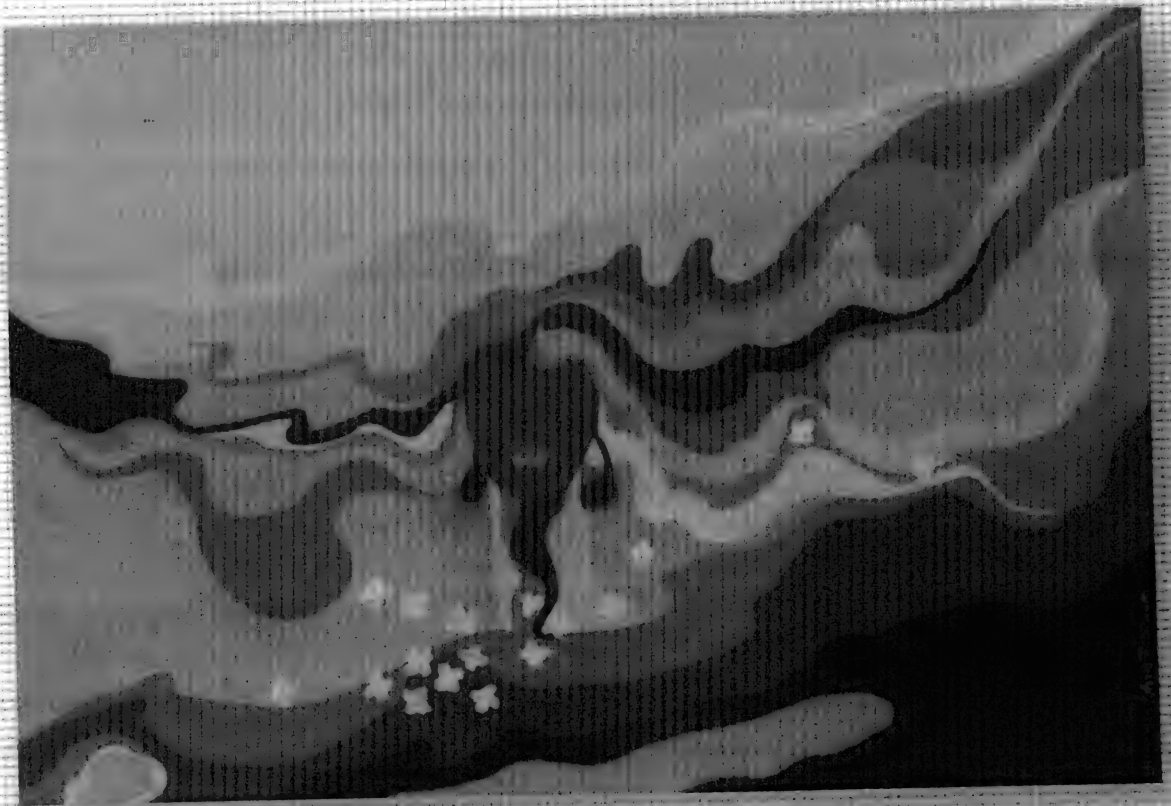
चित्र सं.93-संयोजन
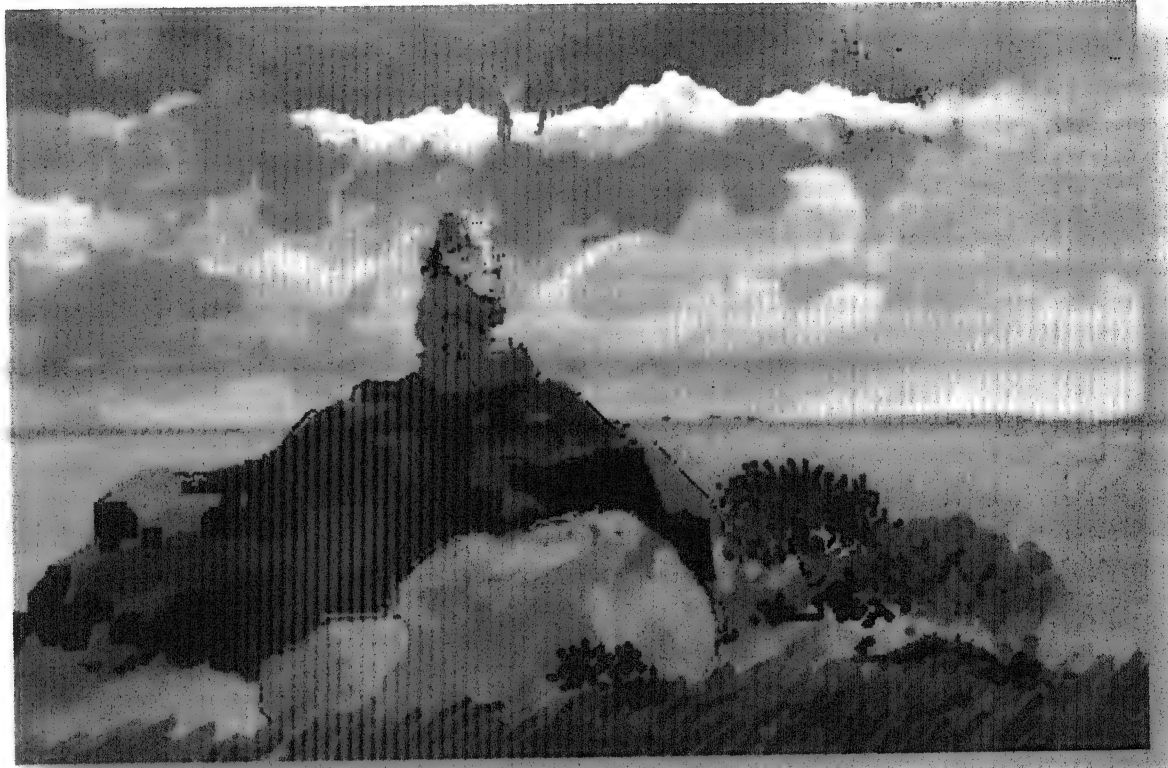
चित्र सं.94-टीले पर बैठा साधु
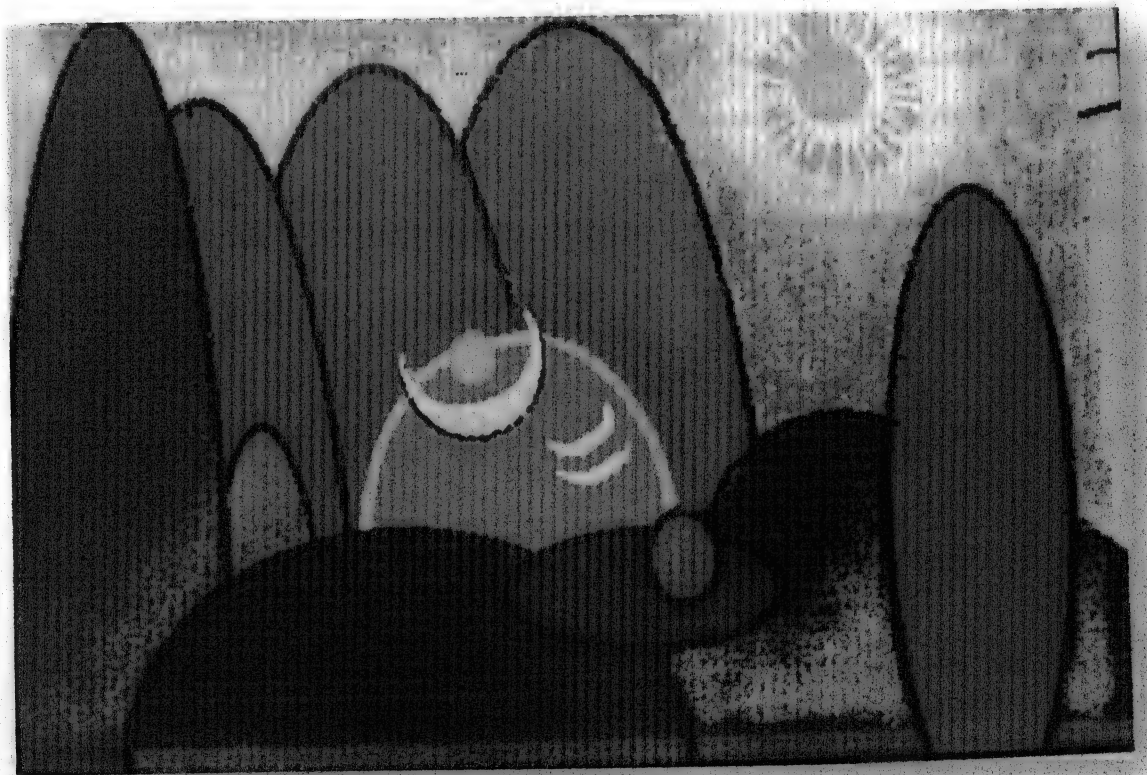
चित्र सं.95-धार्मिक प्रतीक
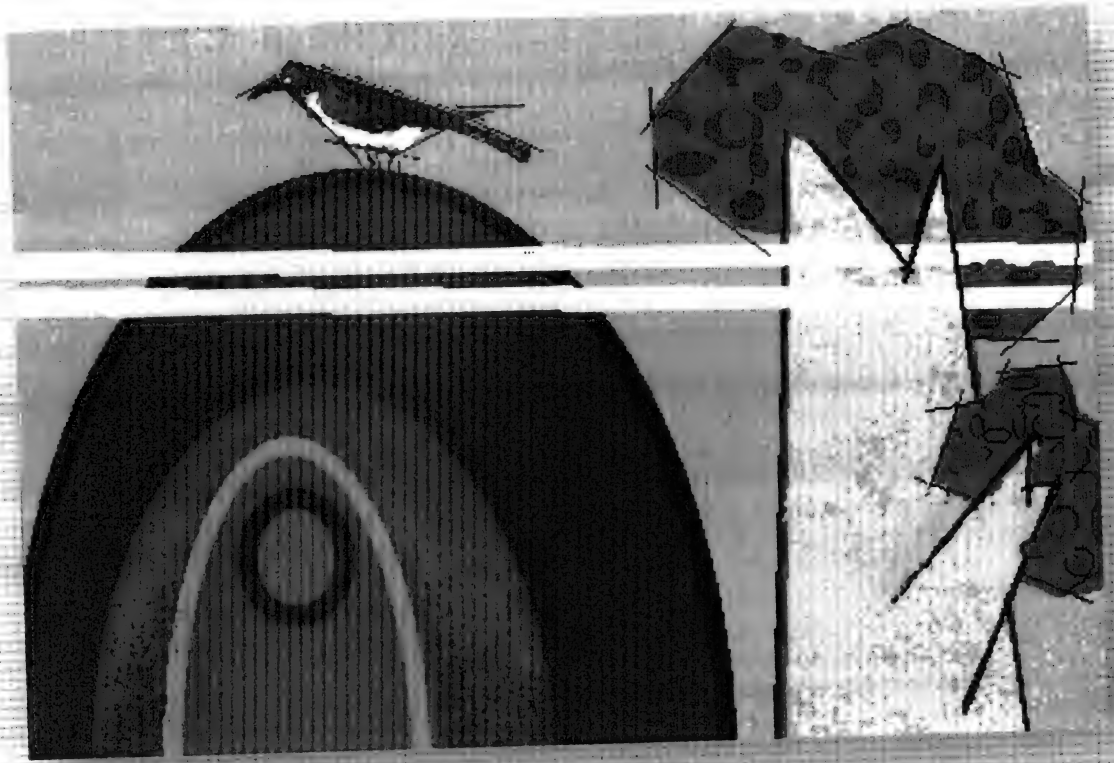
चित्र सं.96-आकारों का सरलीकरण

चित्र सं.97-आकारों का सरलीकरण
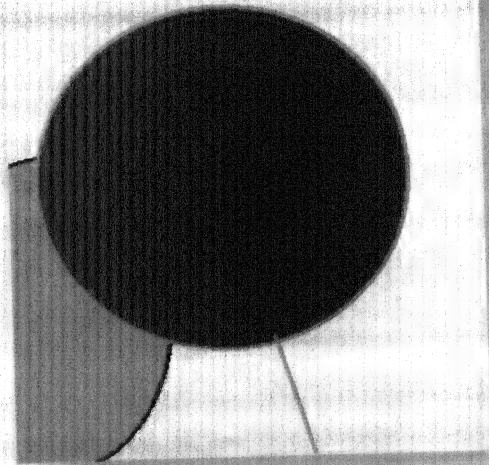
चित्र सं.98-प्रतीक
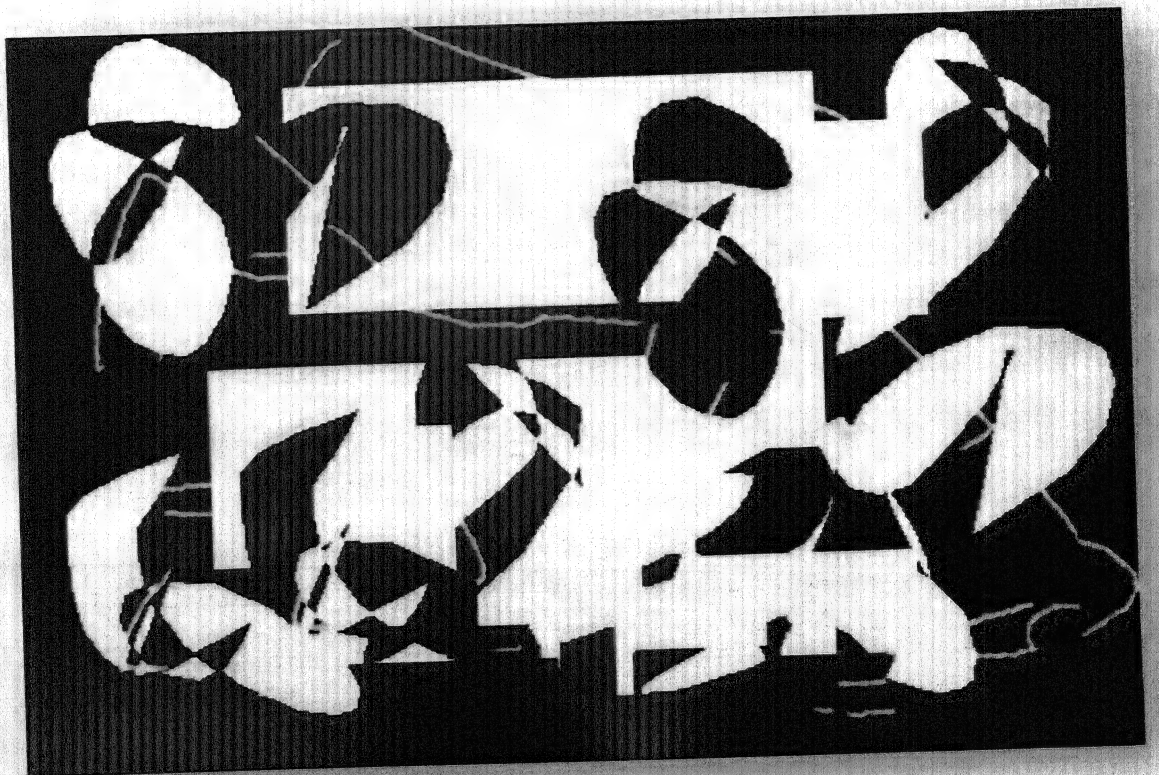
चित्र सं.99-आकारों की जटिलता

चित्र सं.100-संयोजन
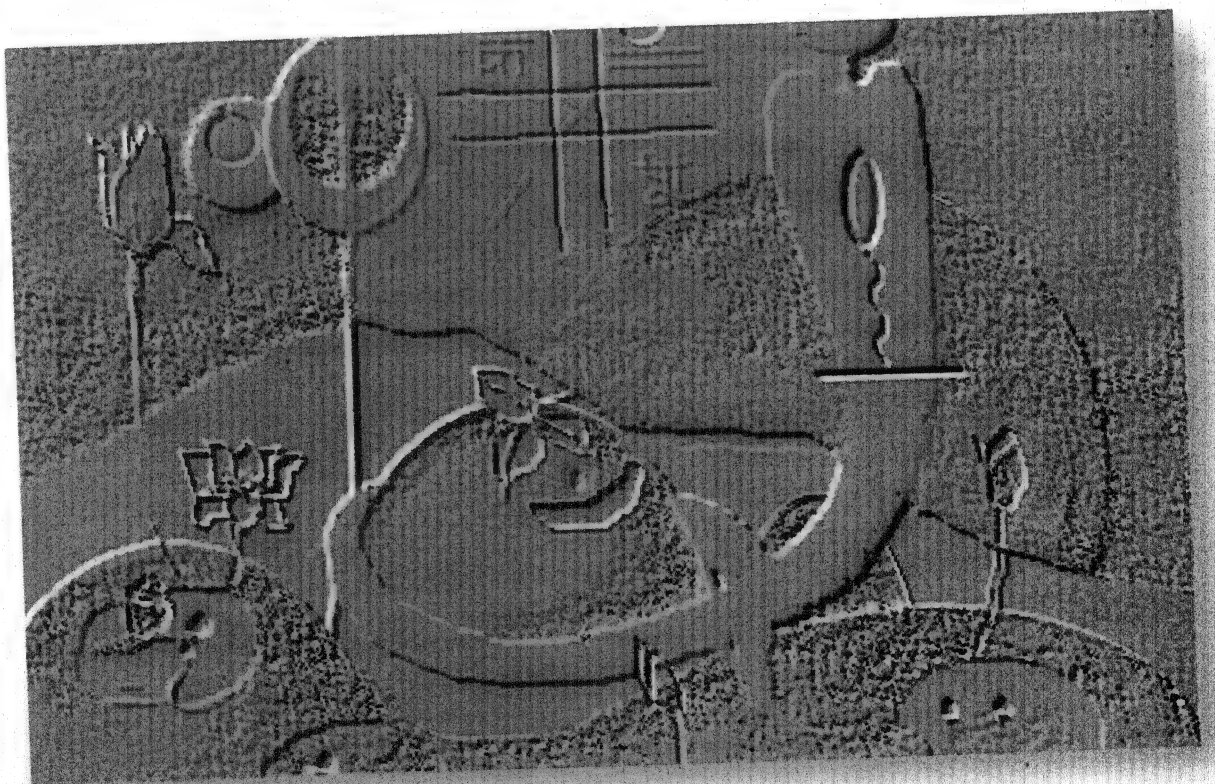
चित्र सं.101-प्रतीक
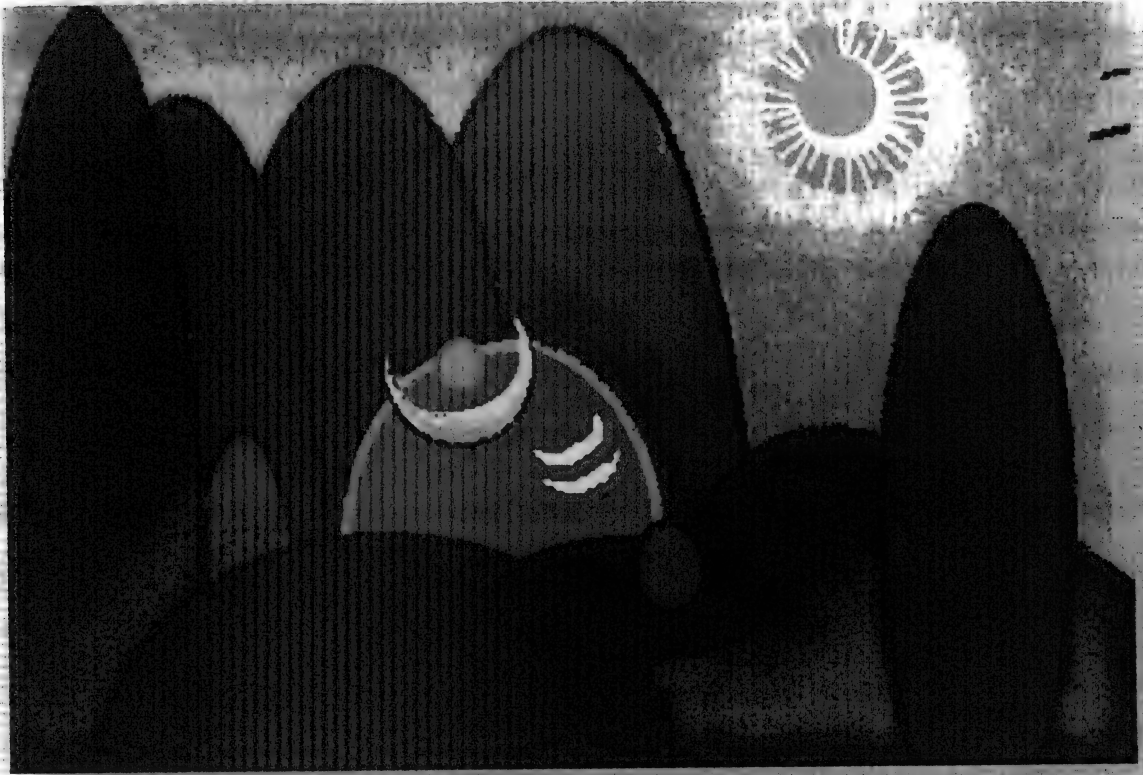
चित्र सं.102-धार्मिक प्रतीक
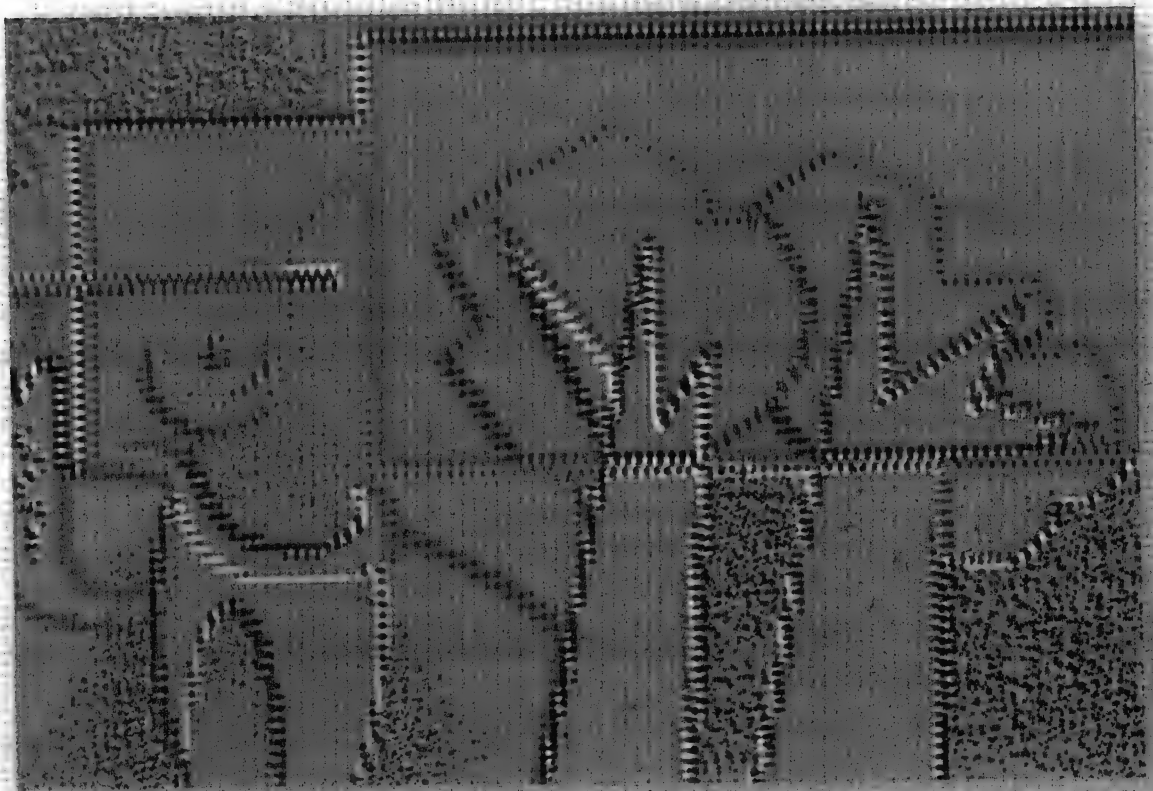
चित्र सं.103-प्रतीक

चित्र सं.104-सूर्यास्त
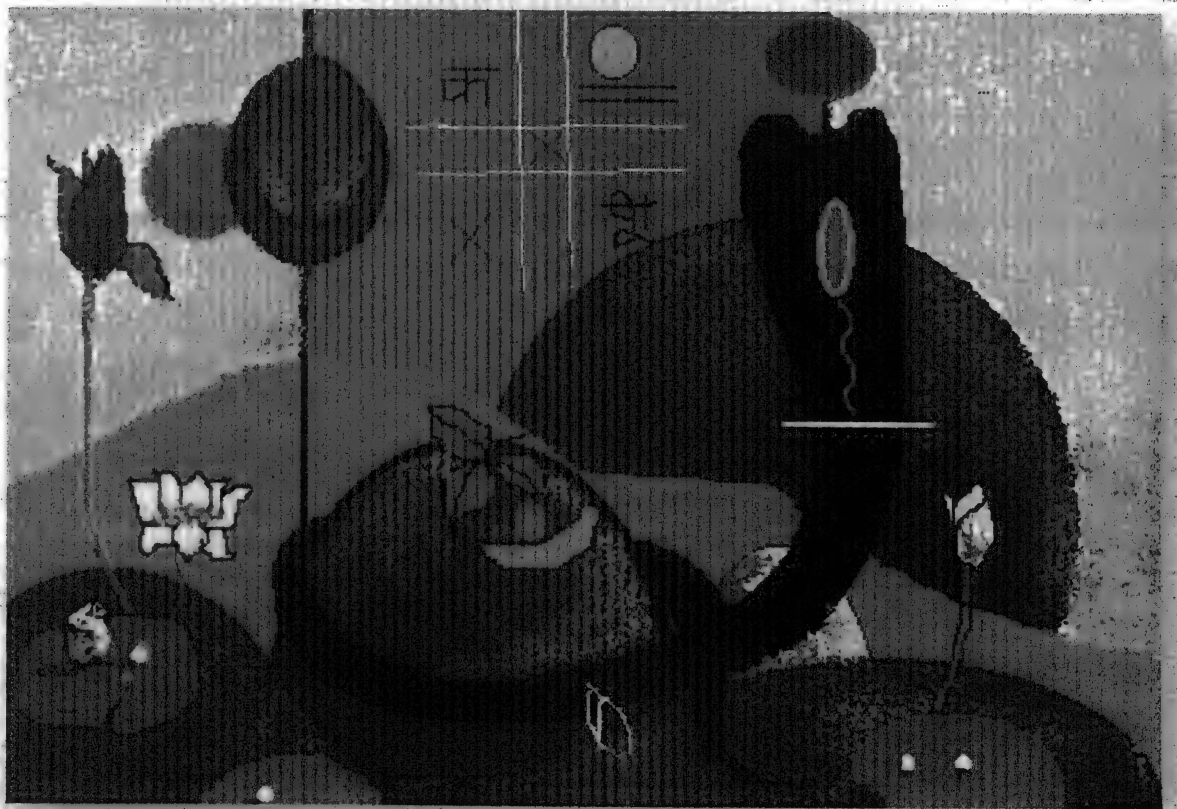
चित्र सं.105-धार्मिक प्रतीक
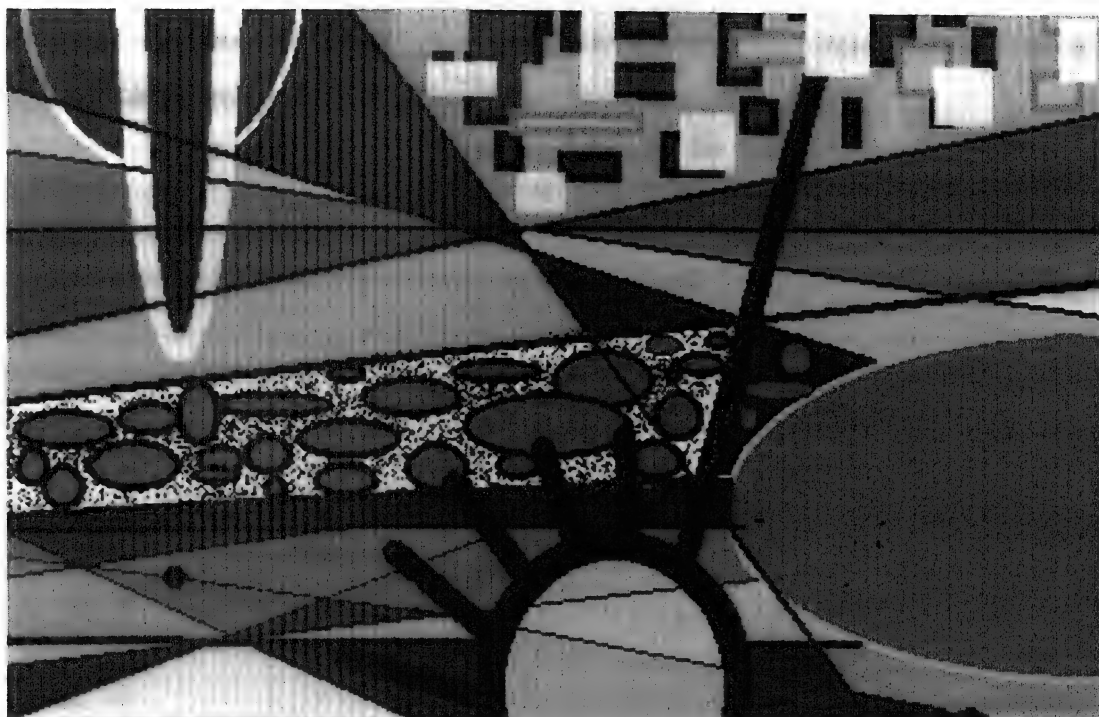
चित्र सं.106-ग्राफिक डिजाइन

चित्र सं.107-दृश्य चित्र

चित्र सं.108-दृश्य चित्र

चित्र सं.109-दृश्य चित्र

चित्र सं.110-दृश्य चित्र

चित्र सं.111-दृश्य चित्र

चित्र सं.112-पर्यावरण

चित्र सं.113-क्रिएशन

चित्र सं.114-क्रिएशन

चित्र सं.115-क्रिएशन

चित्र सं.116-क्रिएशन

चित्र सं.117-हरियाली

चित्र सं.118-क्रिएशन

चित्र सं.119-संयोजन

चित्र सं.120-संयोजन

चित्र सं.121-संयोजन

चित्र सं.122
संयोजन

चित्र सं.123
संयोजन

चित्र सं.124-प्रकृति

चित्र सं.125-कहावत
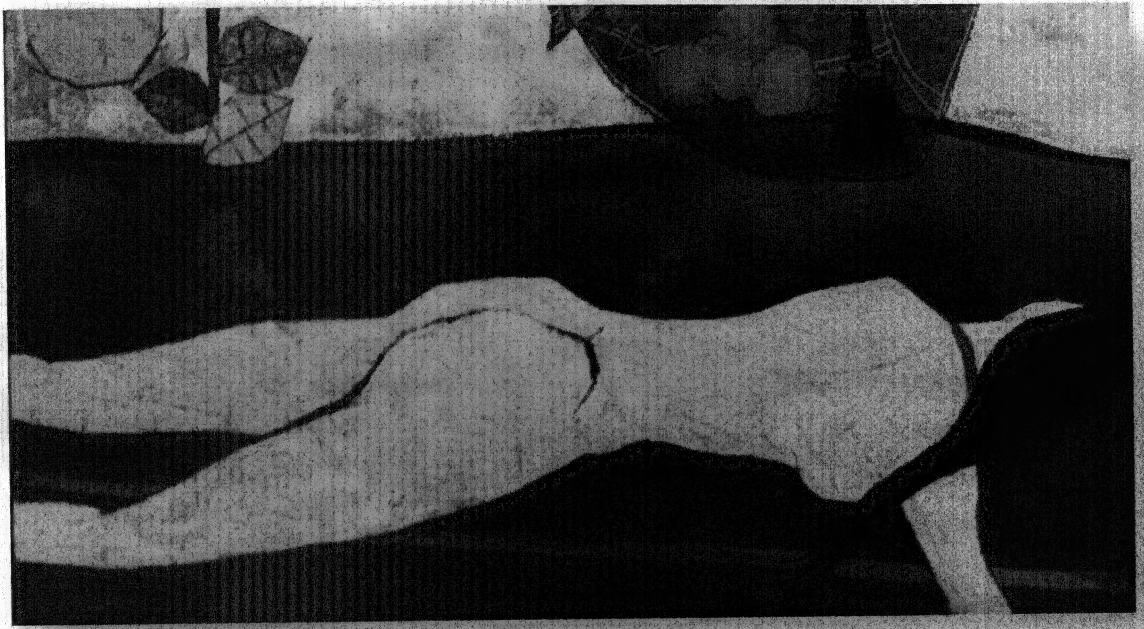
चित्र सं.126-संयोजन
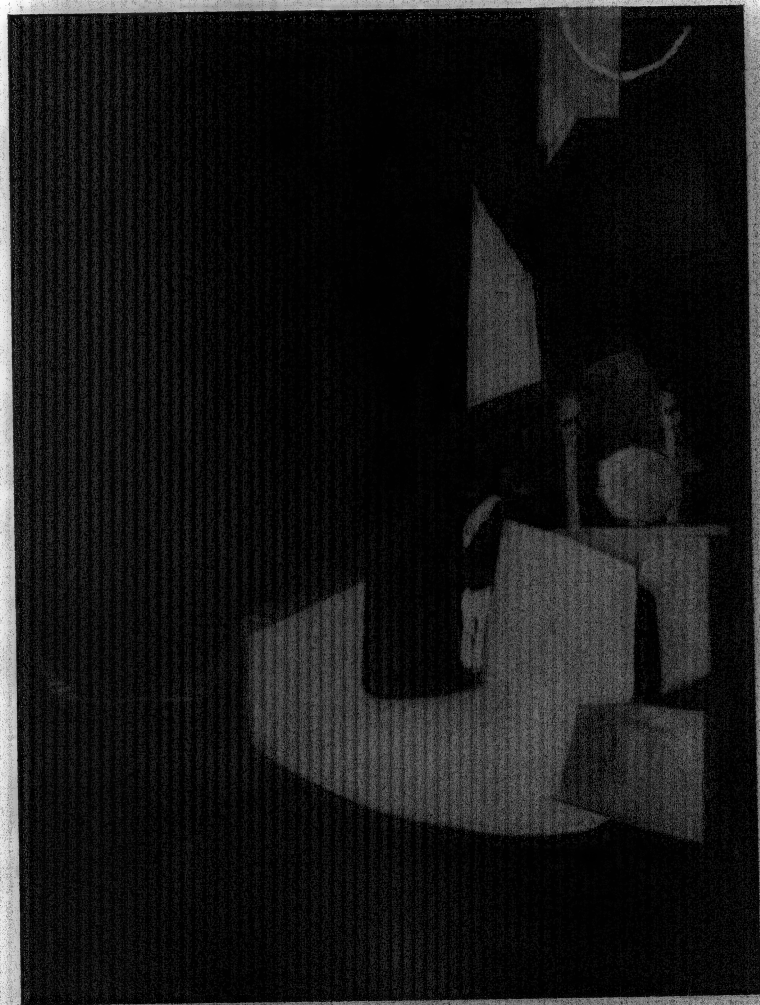
चित्र सं.127-सरलीकरण

चित्र सं.128-प्रो. धीर चित्रण कार्य में लीन

चित्र सं.129-प्रो. धीर चित्रण कार्य में लीन
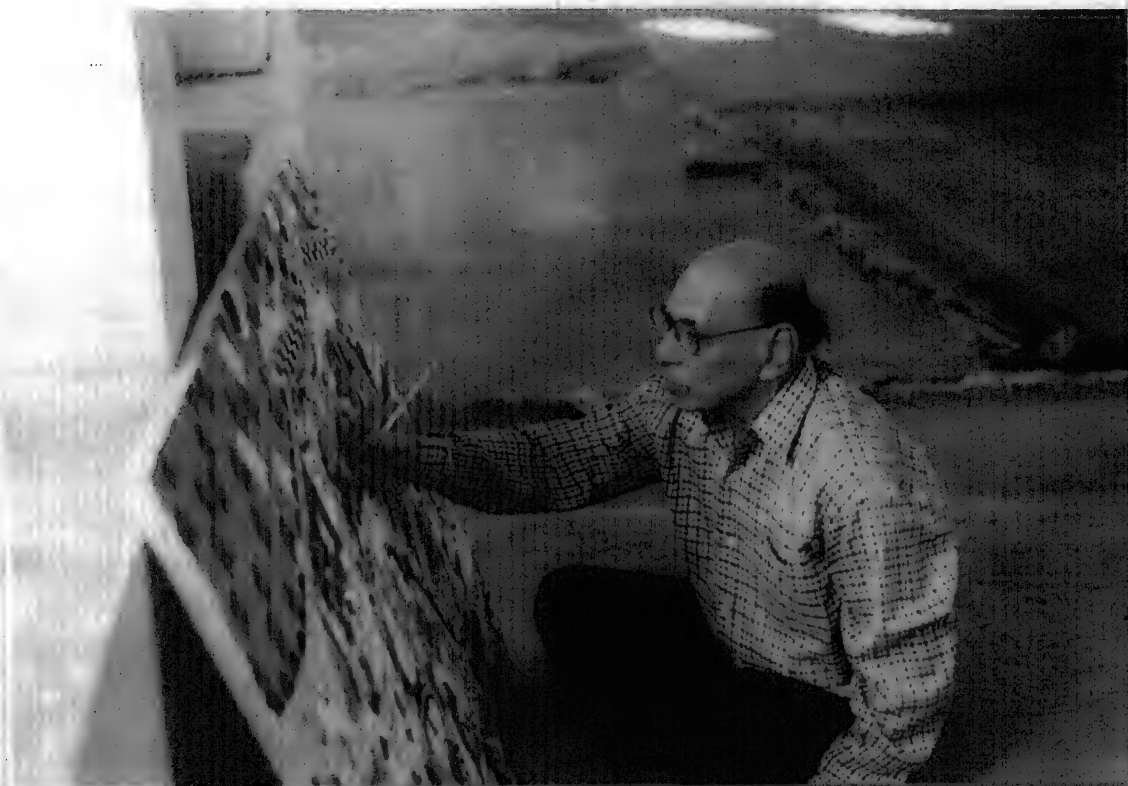
चित्र सं.130-प्रो. धीर *चित्रण कार्य में लीन*

चित्र सं.131-प्रो. धीर *चित्रण कार्य में लीन*

चित्र सं.132-प्रो. धीर
चित्रण कार्य में लीन

चित्र सं.133-प्रो. धीर
चत्रण कार्य में लीन
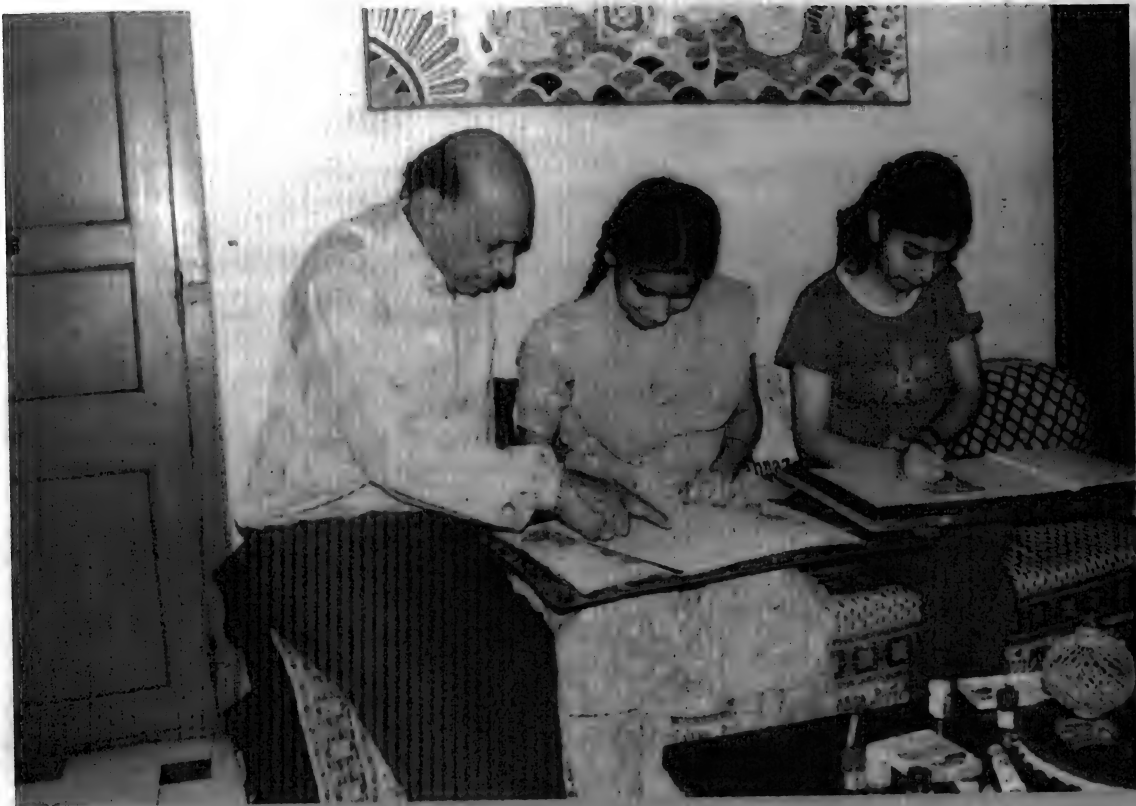
चित्र सं.134-प्रो. धीर शिक्षक के रूप में

चित्र सं.135-प्रो. धीर शिक्षक के रूप में

चित्र सं.136-प्रो. धीर अपनी कृति के साथ

चित्र सं.137-प्रो. धीर राज्यपाल द्वारा पुरस्कृत

चित्र सं.138-प्रो. धीर अपनी कृति के साथ
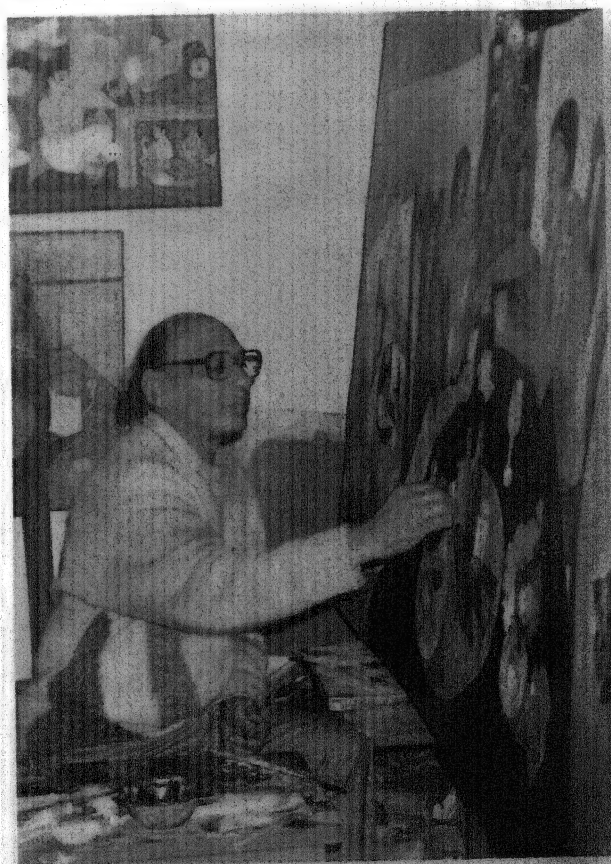
चित्र सं.139-प्रो. धीर चित्रण करते हुए
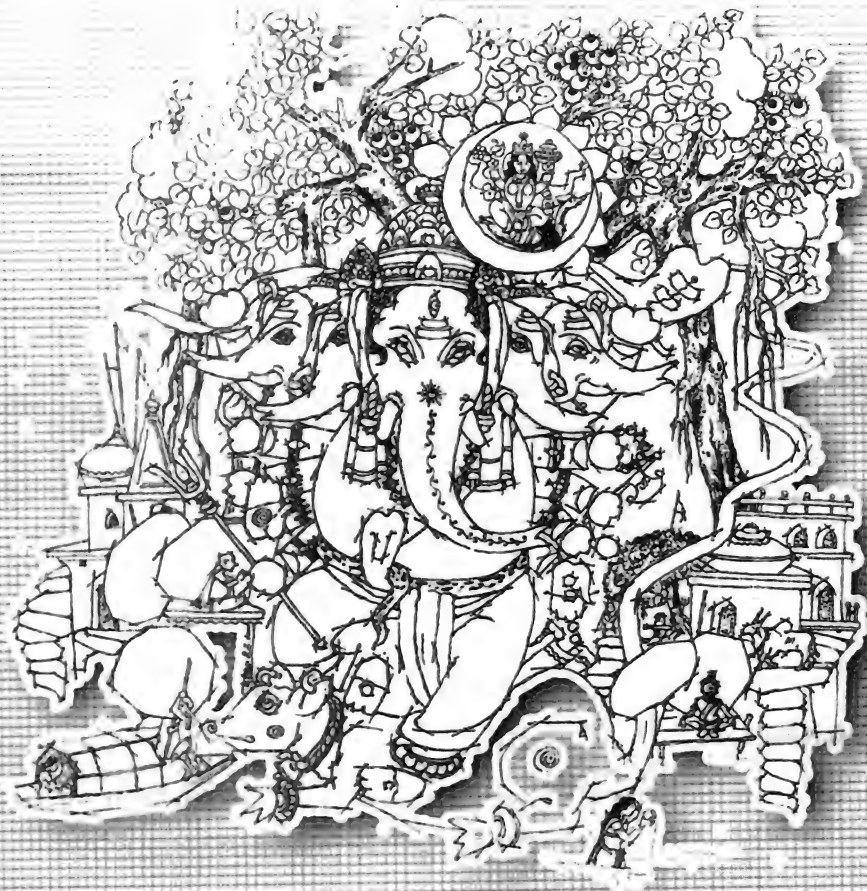
चित्र सं.140-पंचमुखी गणेश जी
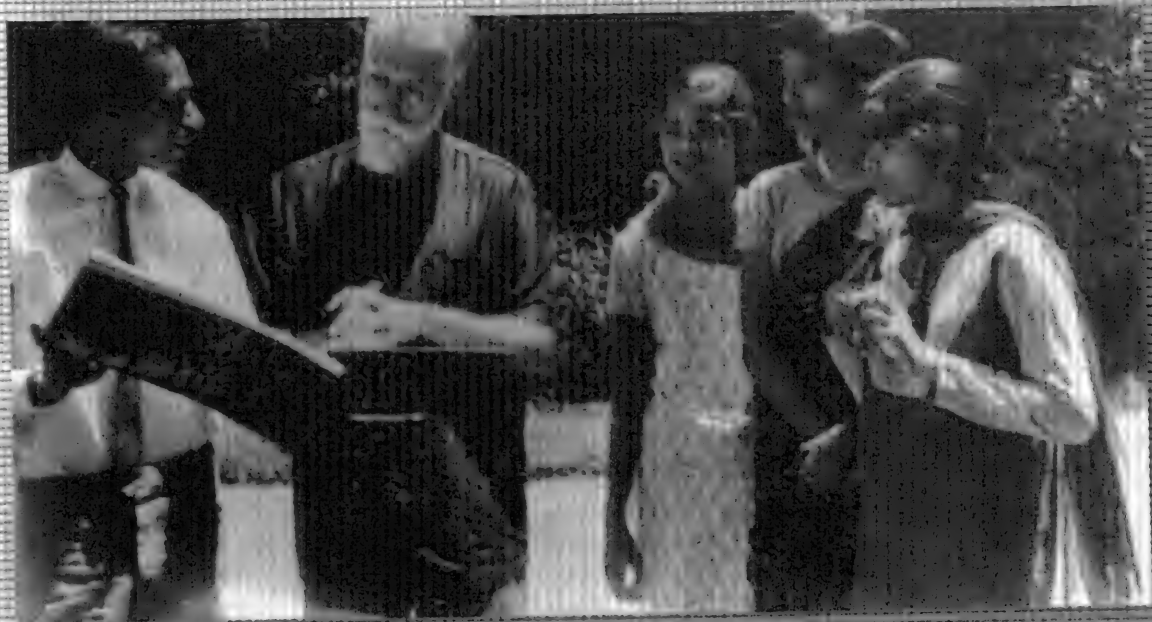
चित्र सं.141-प्रो. धीर कलाकार रोरिक के साथ

चित्र सं.142-उपलब्धि
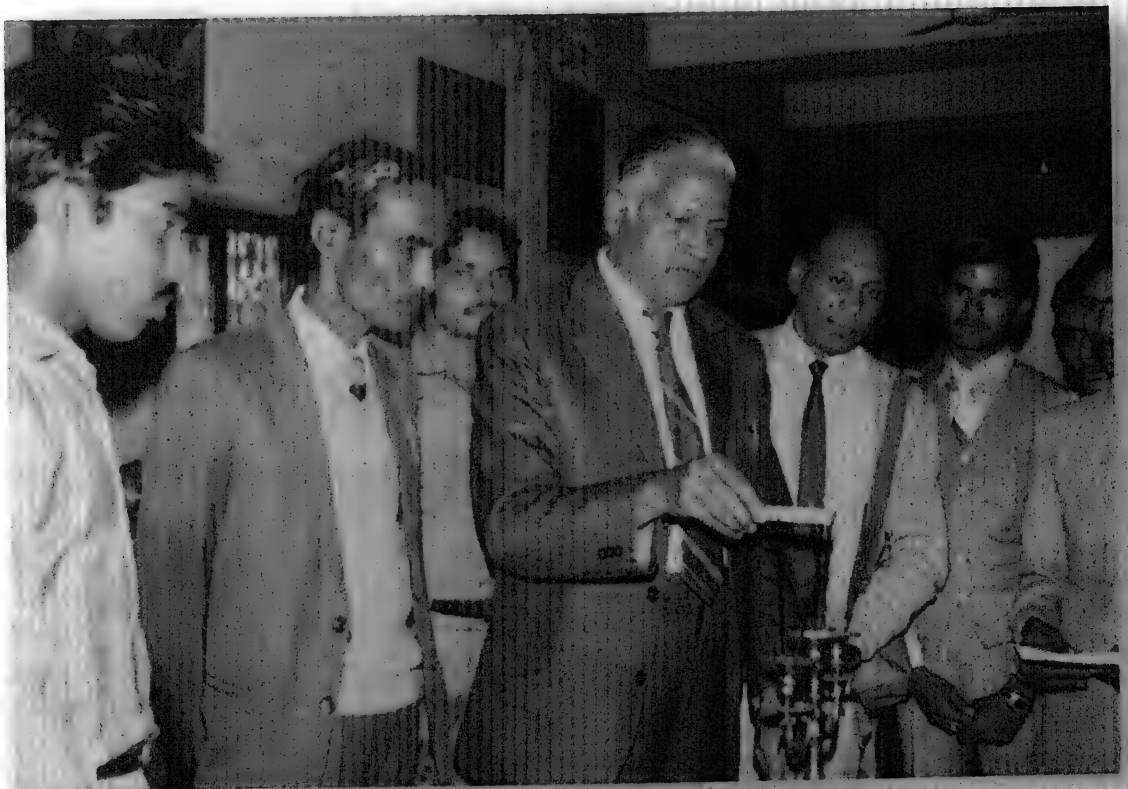
चित्र सं.143-उपलब्धि

चित्र सं.144-उपलब्धि
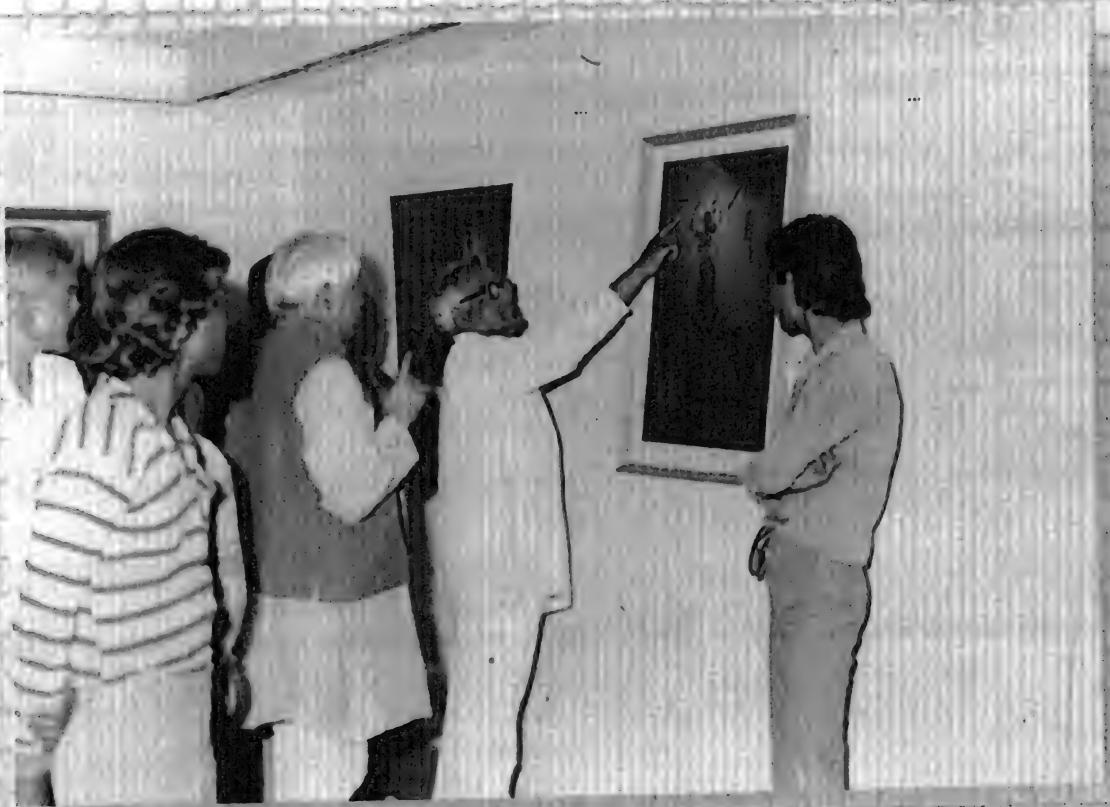
चित्र सं.145-उपलब्धि
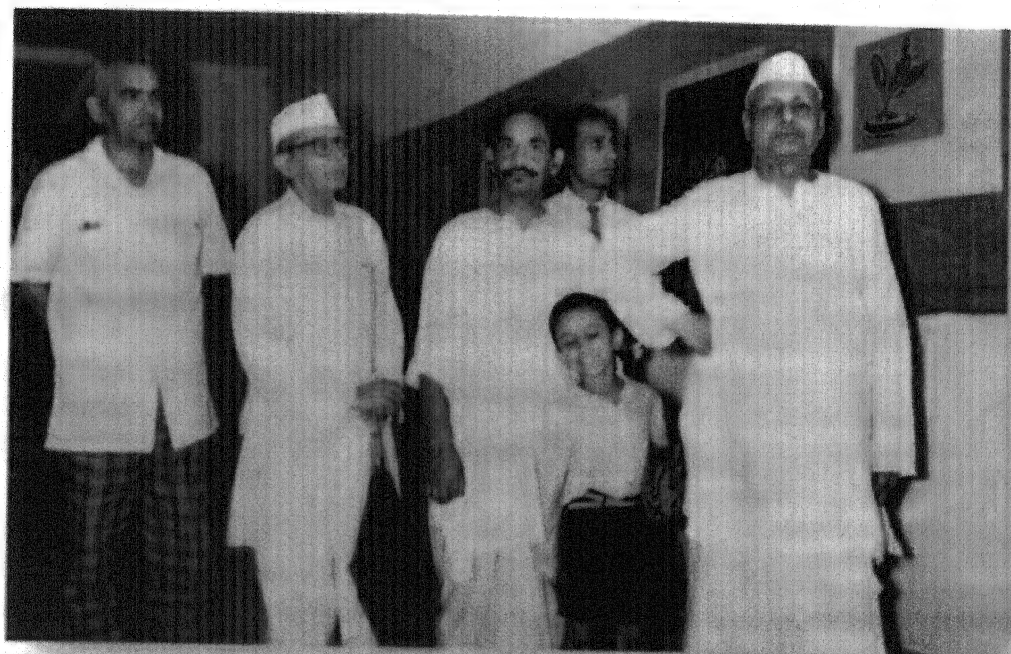
चित्र सं.146-उपलब्धि
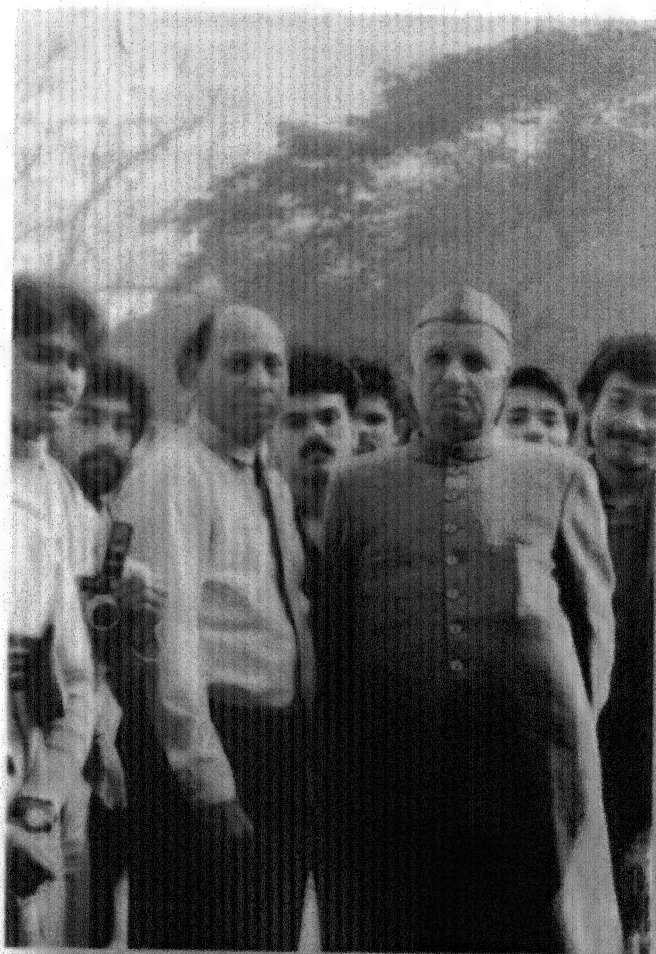
चित्र सं.147-
पूर्व राज्यसभा-सांसद श्यामलाल यादव जी के साथ श्री धीर

चित्र सं.148-उपलब्धि
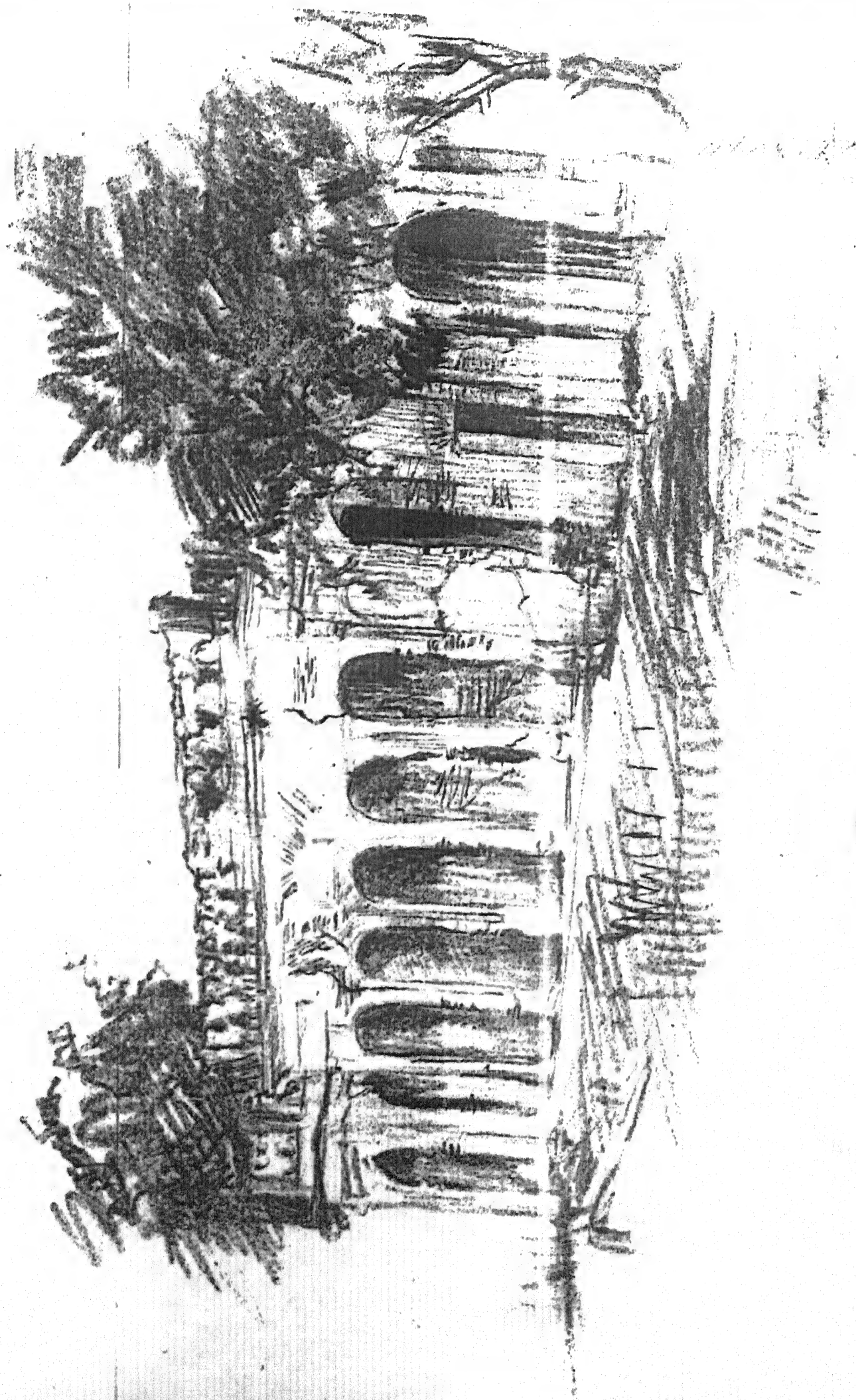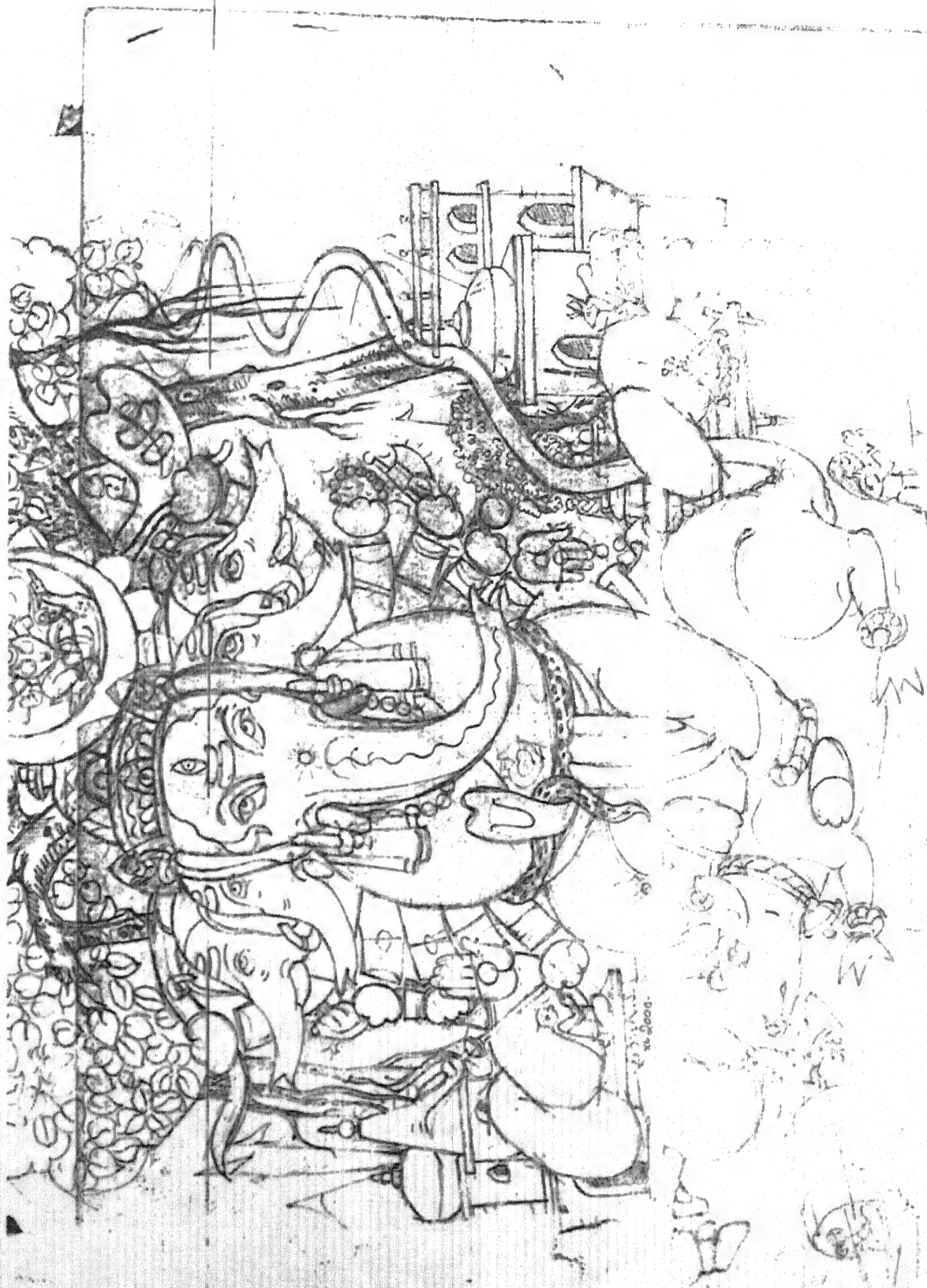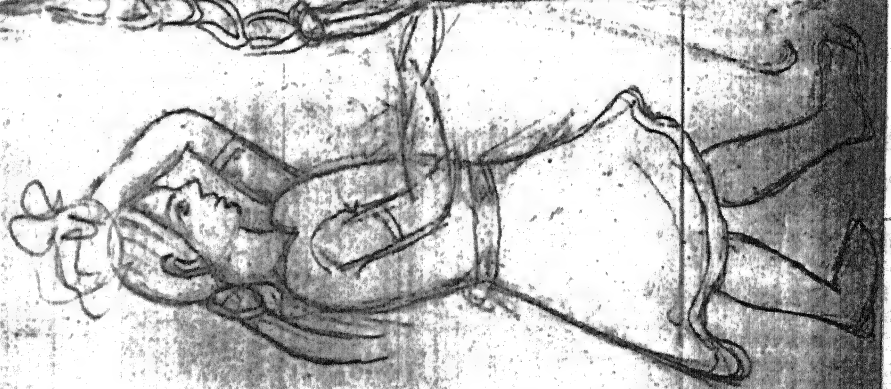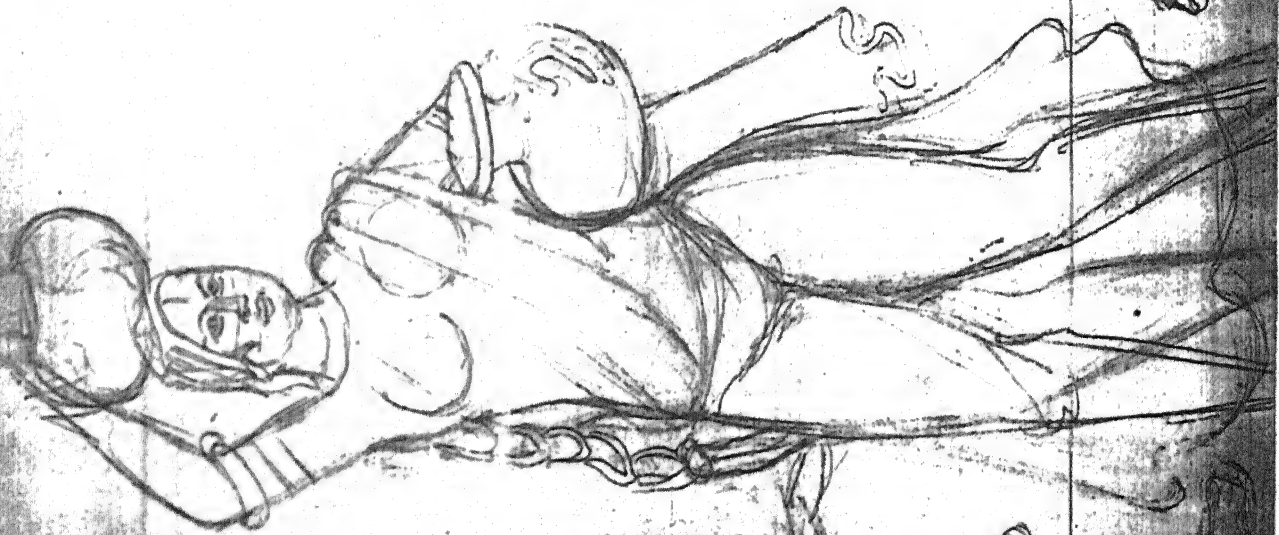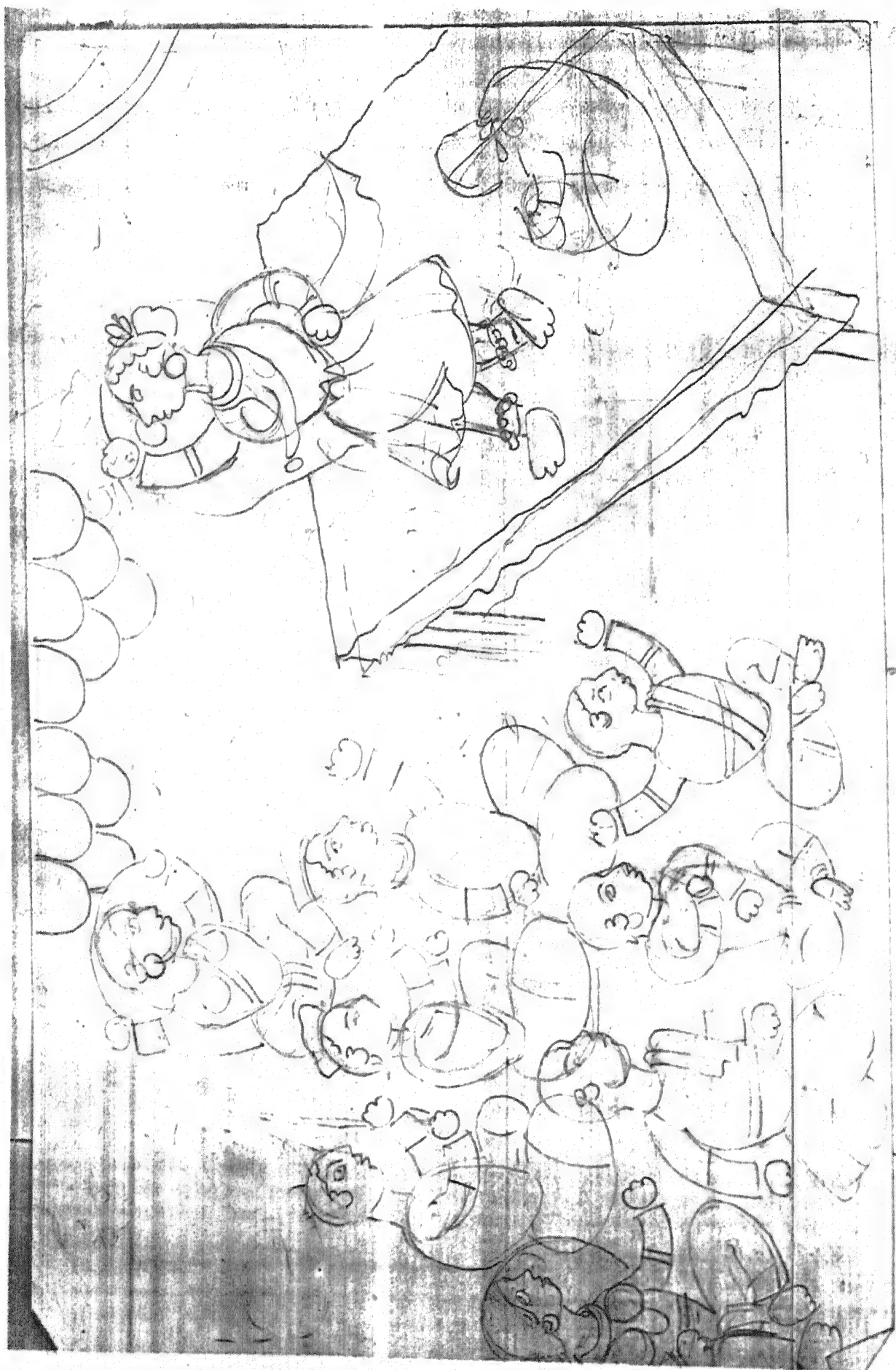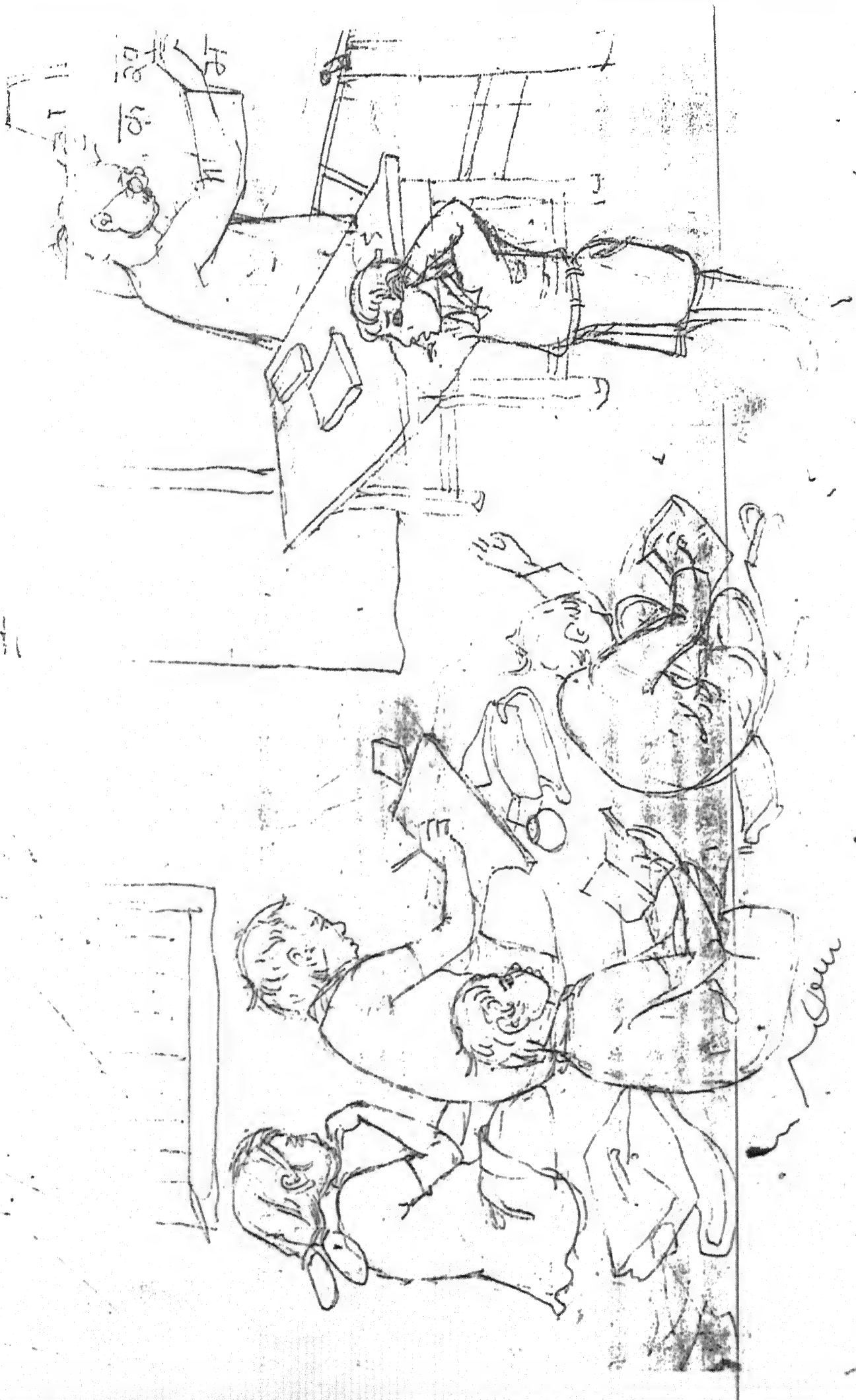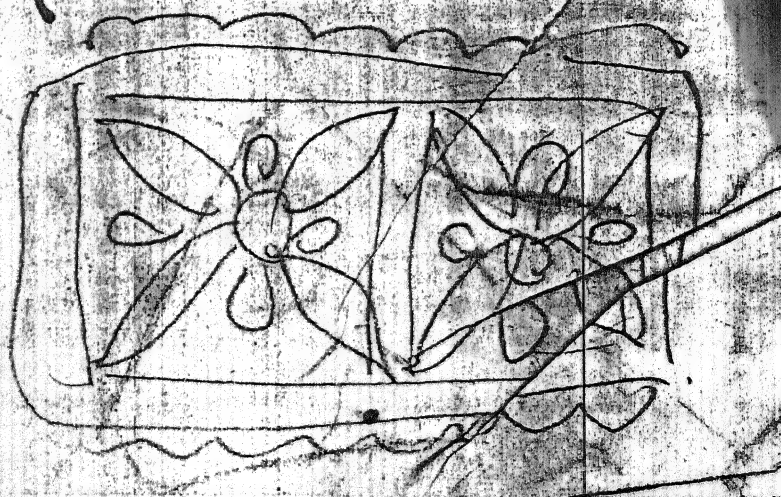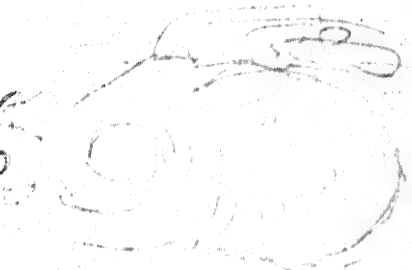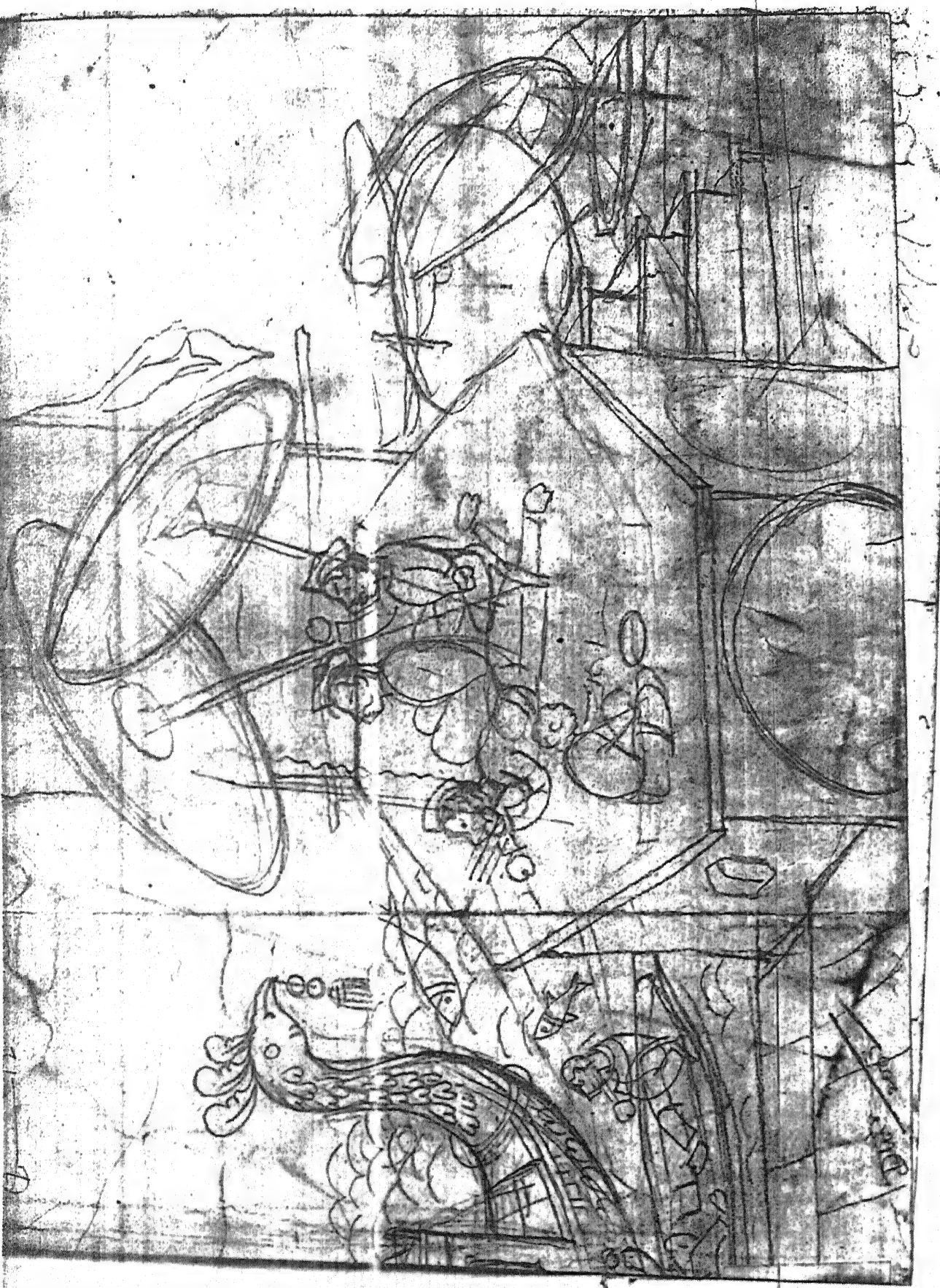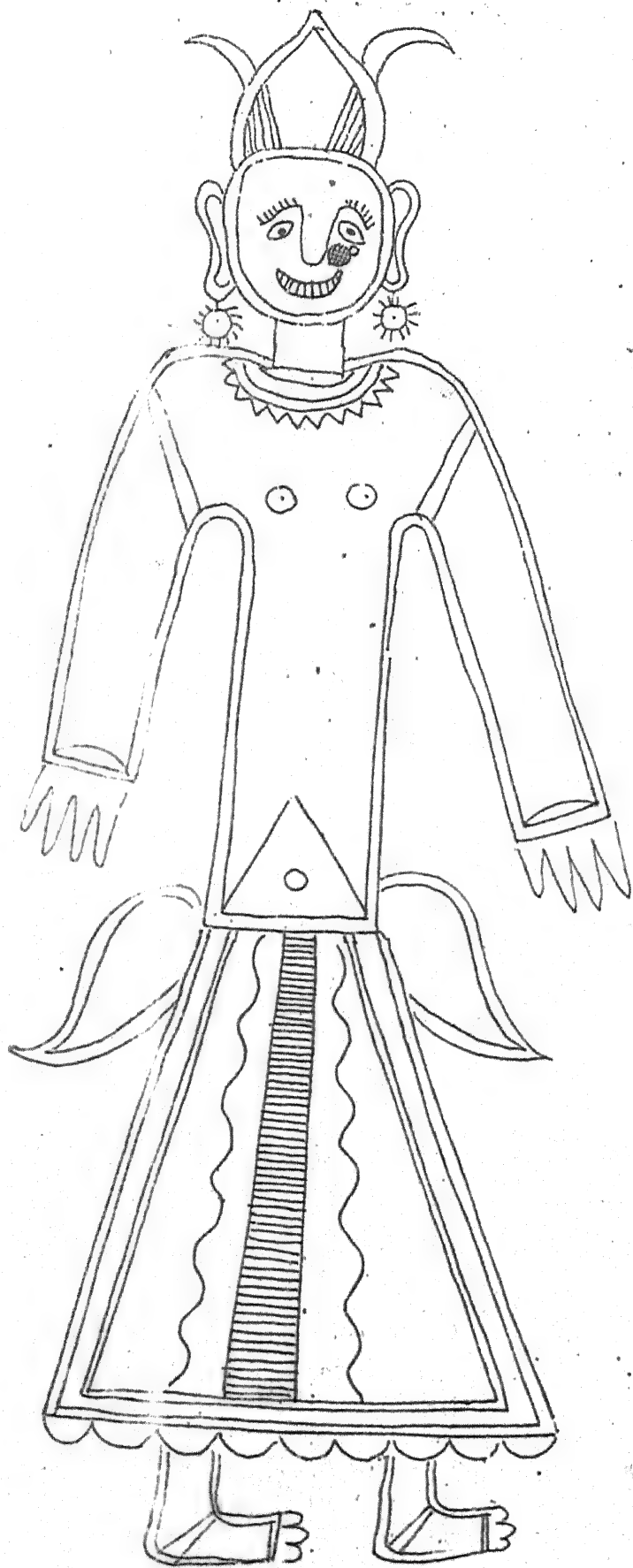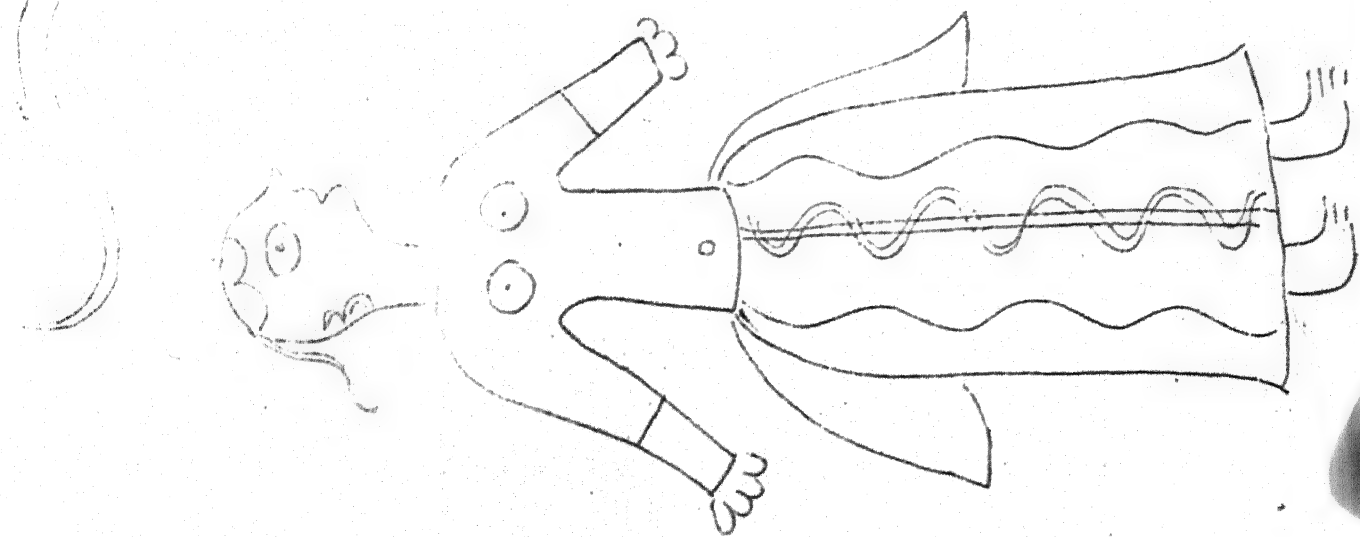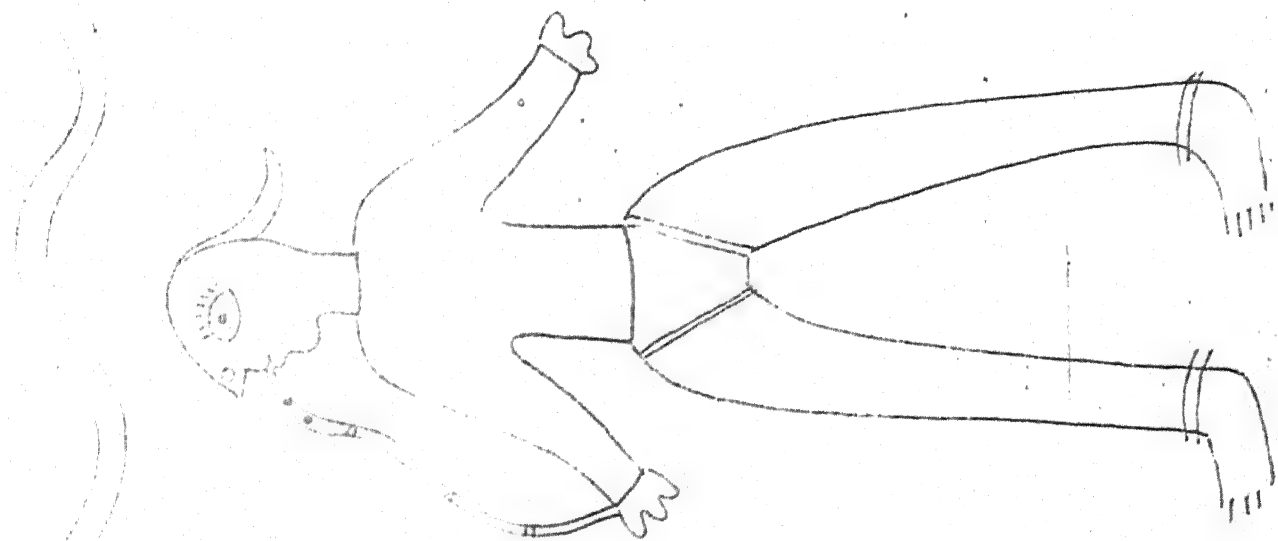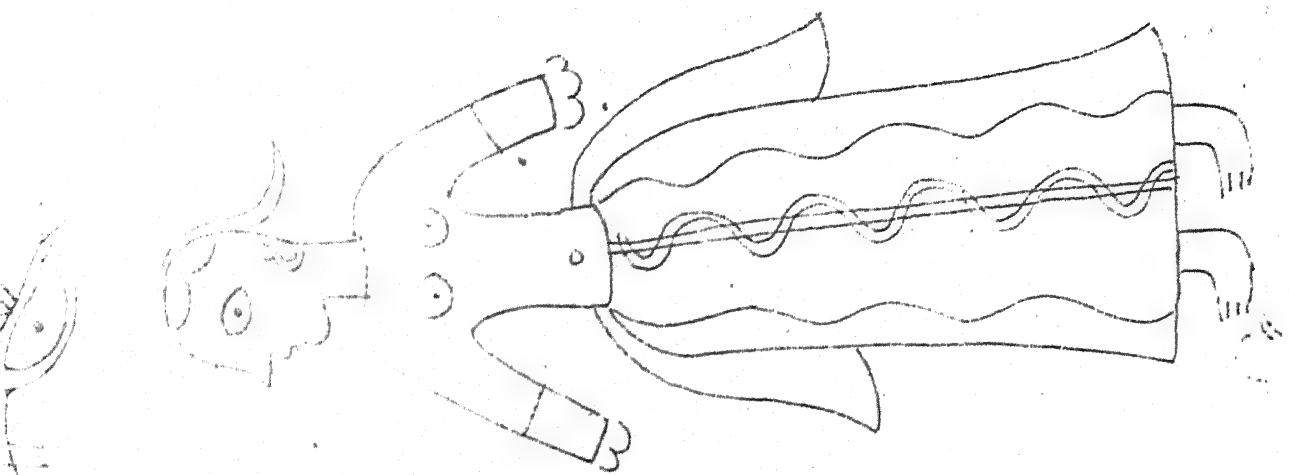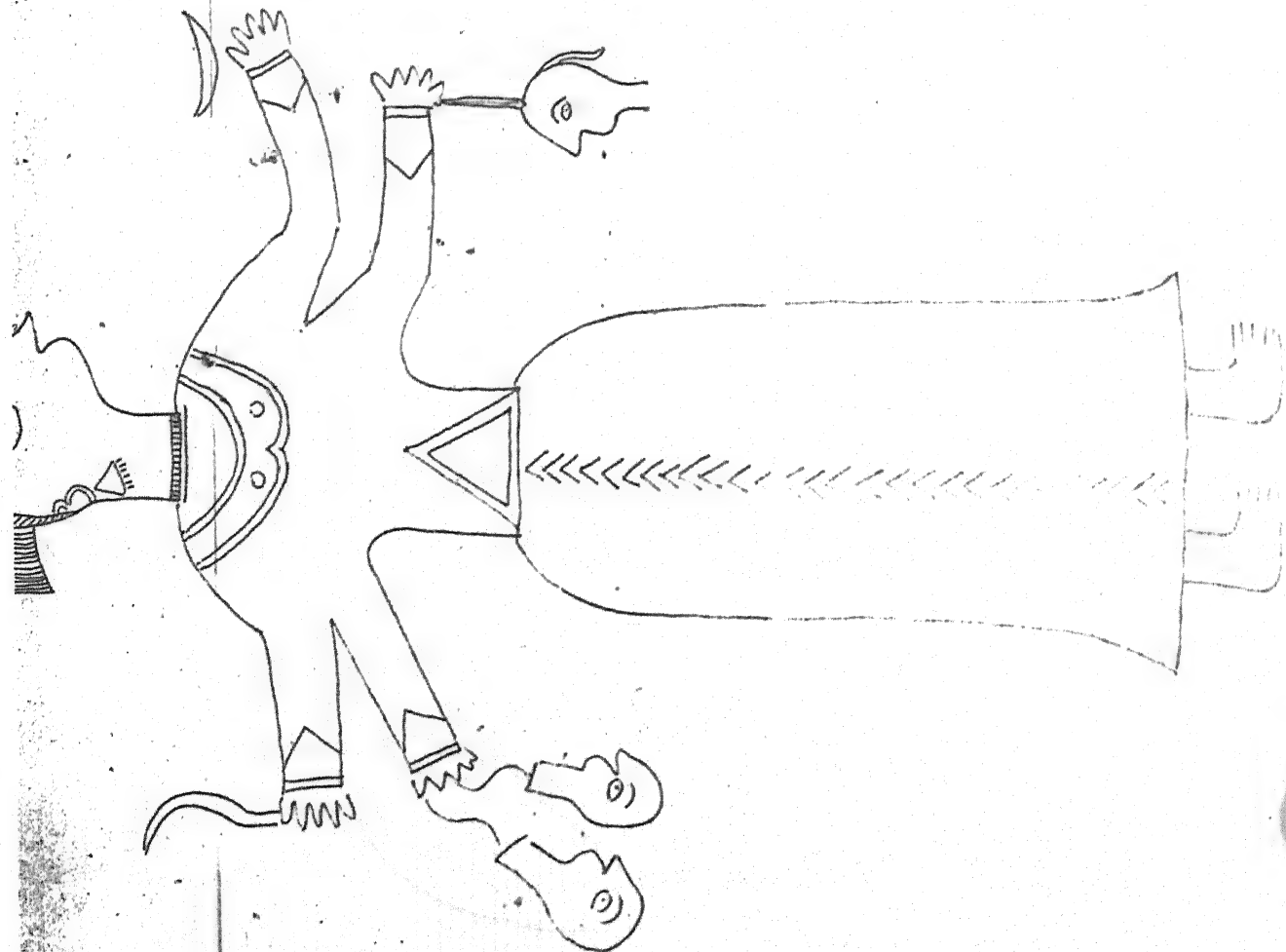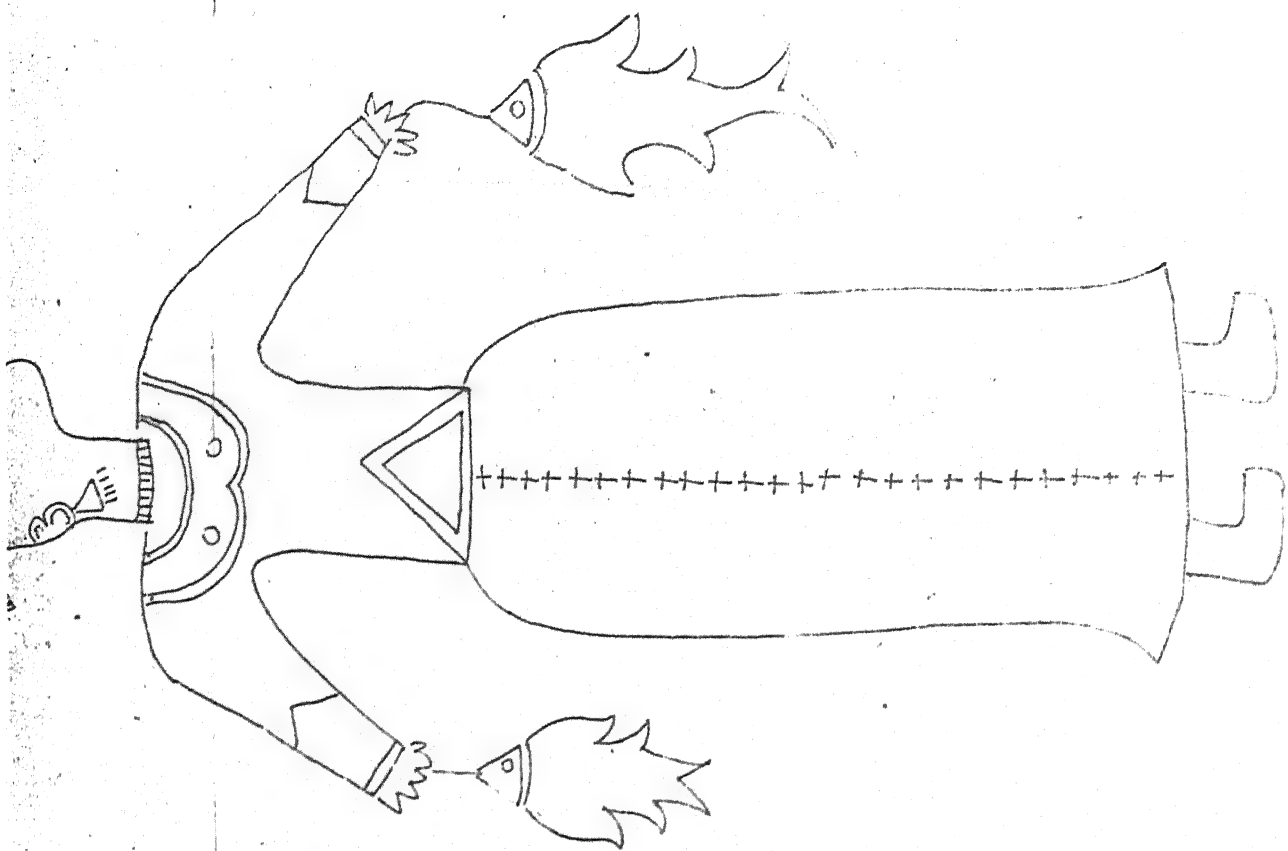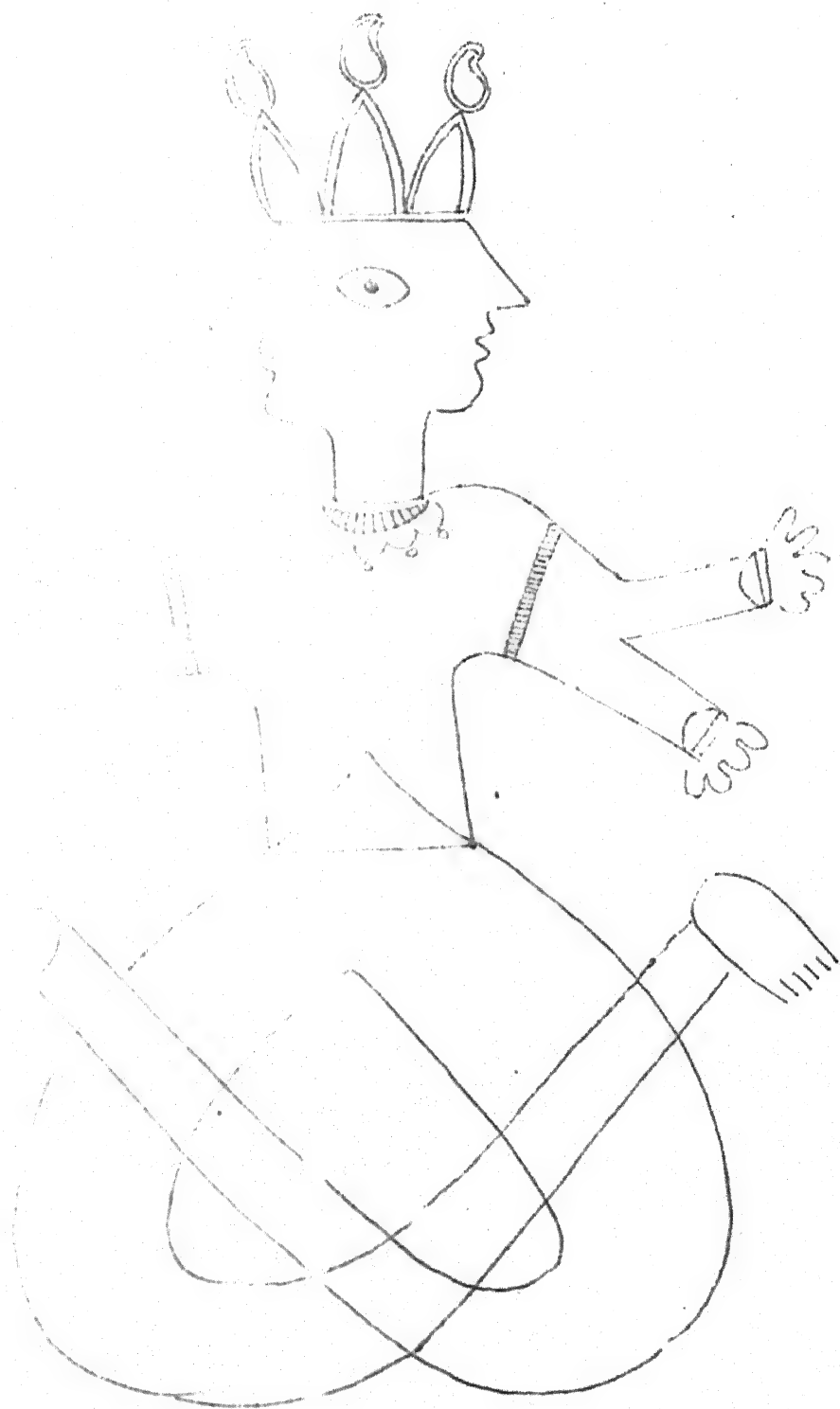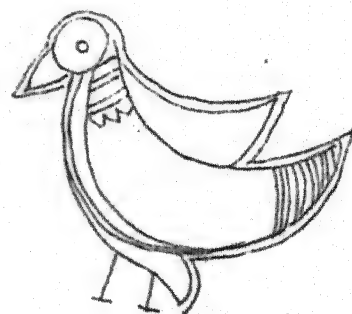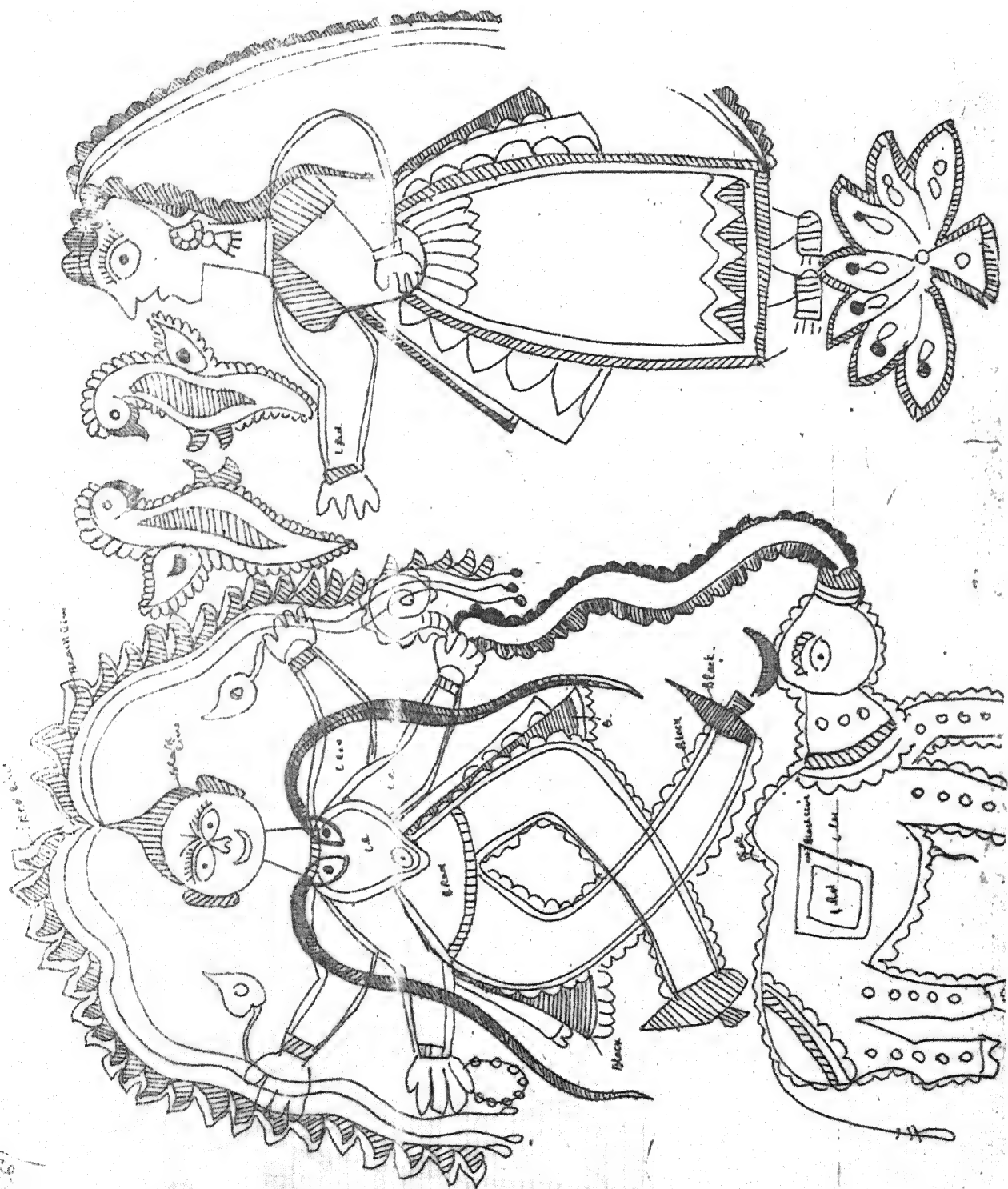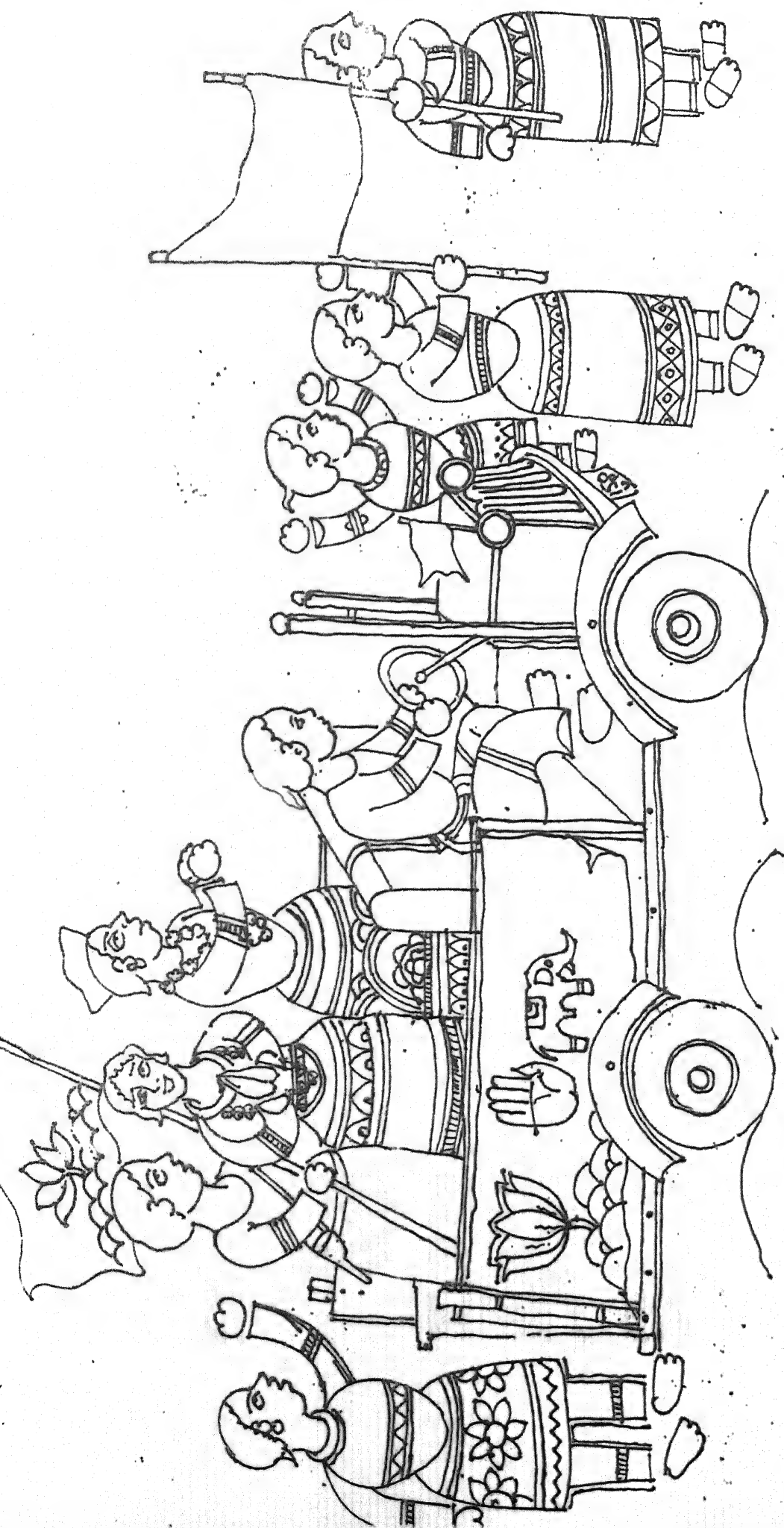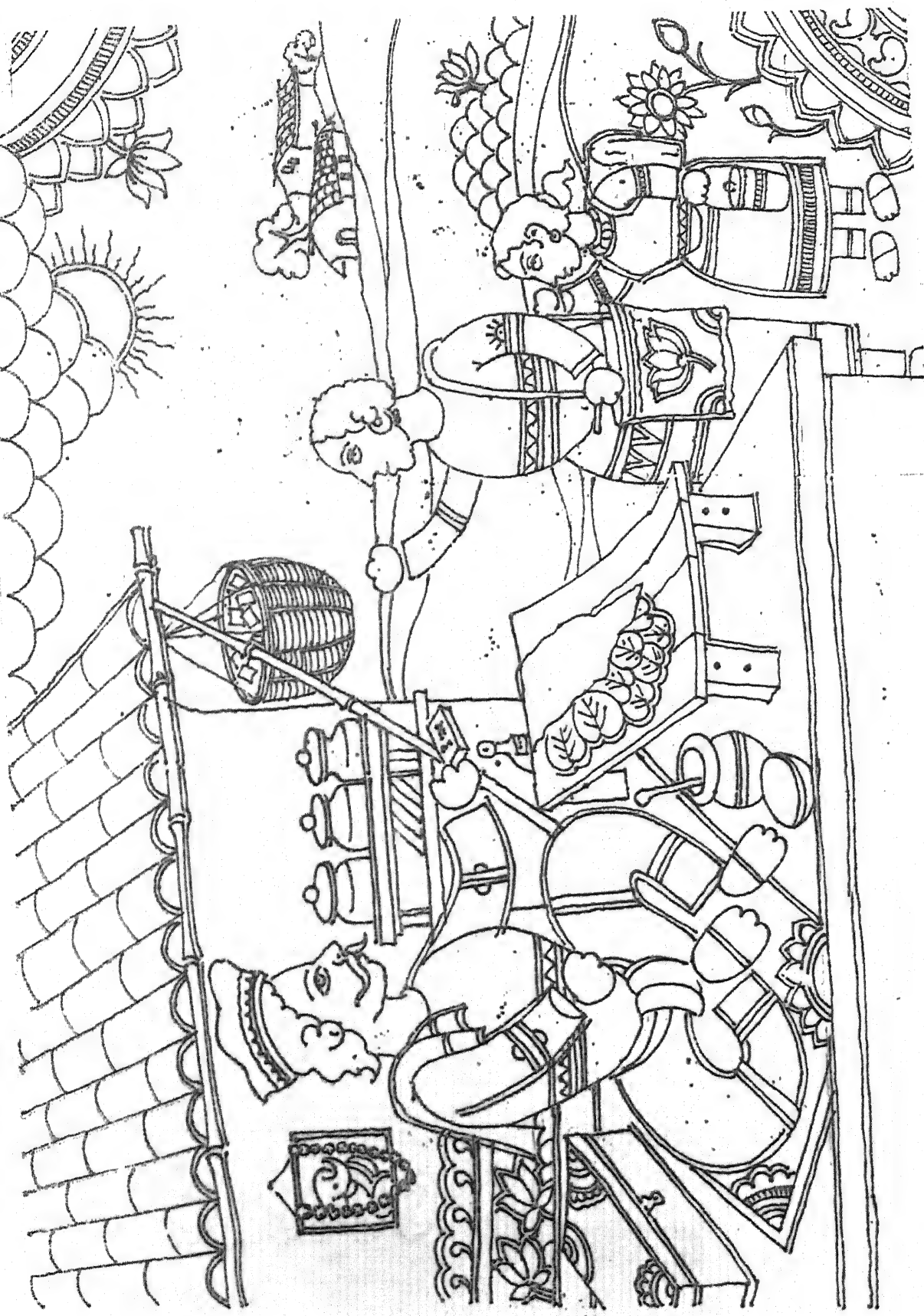
Paintings of

Late Prof. R. S. Dhir
(1937-2002)

from
December 22nd to 26th, 2003

at
SHOPPING PLAZA
Bhelupura, Varanasi
(Adjacent to Hotel Diamond)

Organized by
Mrs. Sudharshan Dhir
DHIR SCHOOL OF FINE ARTS
D-53/90, Narain Nagar, Luxa, Varanasi
Tel : 2421070

प्रथम पंक्ति बायें से दायें—सर्वश्री हृदय नारायण मिश्र, रवीन्द्र नाथ मिश्र, बीरेन्द्र प्रताप सिंह, एस.के. वर्मा

द्वितीय पंक्ति—सर्वश्री एन. खन्ना, आर. एस. धीर, बी. न्यूटन, एन. एन. राय

तृतीय पंक्ति—सर्वश्री बद्री नाथ आर्य, सतीश चन्द्र, रामचन्द्र शुक्ल, रणबीर सक्सेना

चतुर्थ पंक्ति—सर्वश्री गोपाल कृष्ण तथा पी. सी. लिटिल
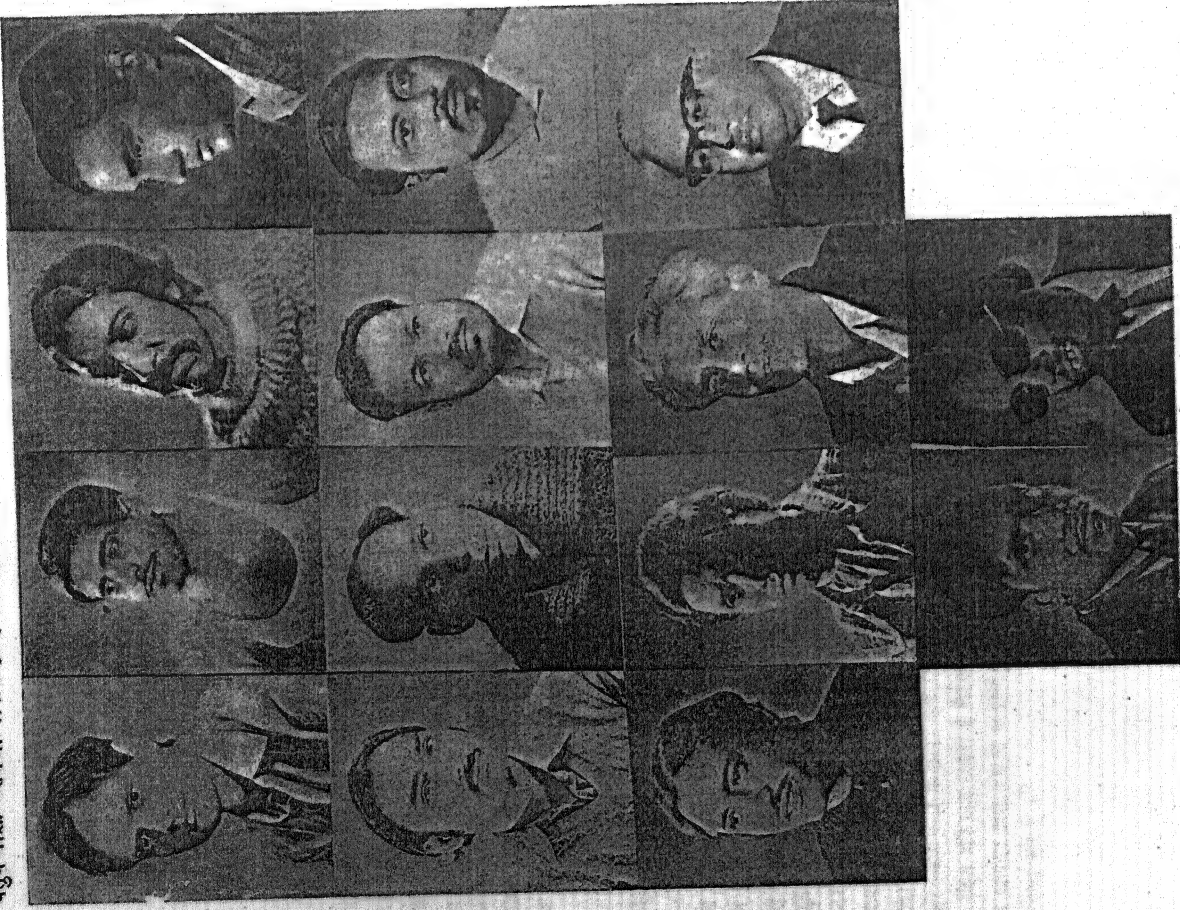
१९७२

उत्तर प्रदेश राज्य ललित कला अकादमी

द्वारा आयोजित

प्रथम चित्रकार शिविर में निर्मित

चित्रों की प्रदर्शनी

आर. एस. धीर

आर. एस. धीर ; कला शिक्षा—राजकीय कला एवं शिल्प महाविद्यालय लखनऊ, पुरस्कार—अखिल भारतीय मैसूर दशहरा प्रदर्शनी (स्वर्ण पदक) १९६२; इंडियन एकेडेमी आफ फाईन आर्टस, अमृतसर सर्वश्रेष्ठ कृति का राज्यपाल पुरस्कार, १९६८, १९६९ तथा १९७१, एकेडेमी आफ फाईन आर्टस, कलकत्ता, १९७१ उ०प्र० राज्य ललित कला अकादमी, लखनऊ १९७१, प्रदर्शनी–आठ एकल प्रदर्शनियाँ हो चुकी हैं जिनमें १९७१ में उ०प्र० राज्य ललित कला अकादमी द्वारा आयोजित प्रदर्शनी भी सम्मिलित है। भारत की महत्वपूर्ण प्रदर्शनियों में आपके चित्रों का प्रदर्शन होता रहता है। आजकल आप काशी विश्वविद्यालय, वाराणसी के ललित कला विभाग में रीडर के पद पर कार्यरत हैं।

"मैं प्रकृति अथवा मानव निर्मित कलात्मक वस्तुओं को जब भी देखता हूँ और उसमें से जो भी वस्तुयें अपने आकार अथवा रंग परिधान द्वारा मुझे अत्यधिक प्रभावित करते हैं उनको मैं अपने चित्रों में पुन: निर्मित करने का प्रयास करता हूँ वह ऐसा ही है जैसे किसी बच्चे ने ईंट को एक के ऊपर एक रखके कोई घरौंदा खड़ा किया और उसके बाद दूसरा बच्चा आकर उन्हें बिखरा देता है और पुन: अपने ढंग से संयोजित करता है इसी प्रकार मैं प्रकृति अथवा अपने चारों ओर के वातावरण से प्राप्त आकारों को फिर से तोड़कर या बिखेर कर अपनी कल्पना अथवा भावना के आधार पर अपने ढंग से संयोजित करता हूं। प्रस्तुत चित्र कोलाज है मैंने प्राय: इस माध्यम में बनाये हैं। मुझे अनेक प्रकार के पोस्टर्स, शो कार्ड, फोलडर अपने रंग और सतह के प्रयोग की वजह से बड़े सुहावने लगते हैं और मेरी तबियत करती है कि अनेक टुकड़ों को फाड़कर अपनी भावना के अनुकूल एक नया चित्र संयोजित करना। ऐसे चित्र बड़े परिश्रम साध्य होते हैं और समय और एकाग्रता की बड़ी आवश्यकता होती है जो चित्र रंगों के द्वारा एक दो दिन में पूर्ण किया जा सकता है उसे कोलाज के माध्यम से करने में दस दिन भी लग सकते हैं लेकिन जो प्रभाव कोलाज के माध्यम से उत्पन्न किया जा सकता हैं वह तैल अथवा जल रंग से असम्भव है। इस चित्र मे मैंने भगवान विष्णु का ध्यान रूपायित करने की कोशिश की है।"

सतीश चन्द्र

सतीश चन्द्र –जन्म १९४१, कला शिक्षा—राजकीय कला एवं शिल्प महाविद्यालय लखनऊ। भारत की महत्वपूर्ण कला प्रदर्शनियों में चित्रों का प्रदर्शन होता रहता है। पुरस्कार उ० प्र० राज्य ललित कला अकादमी १९६४, १९६६, १९६७ तथा १९६८ (डॉ० राधाकमल मुकर्जी स्वर्ण पदक) उ० प्र० कलाकार संघ (रजत पदक) १९६४; प्रदर्शनी दस एकल प्रदर्शनियों का आयोजन किया जा चुका है जिनमें उ०प्र० राज्य ललित अकादमी द्वारा १९६४ तथा अमेरिका में १९६७ में आयोजित प्रदर्शनियाँ सम्मिलित हैं। आजकल आप राजकीय कला एवं शिल्प महाविद्यालय, लखनऊ में कार्यरत हैं।

"मुझे प्रकृति में जो कुछ भी अच्छा लगता है मैं उसी को चित्रित करता हूं किन्तु प्रकृति को देखने का मेरा अपना दृष्टिकोण है मैं प्रकृति में जो कुछ देखता हूं उसको वैसा ही चित्रित नहीं कर सकता मैं प्रकृति के कुछ विशिष्ट गुणों से ही प्रभावित होता हूँ और उसके अतिरिक्त जो कुछ भी होता है उसे मैं अपने चित्र में गौण स्थान ही देता हूँ। प्रस्तुत चित्र में मैंने सूर्यास्त को चित्रित करने का प्रयास किया है। वातावरण में दिखाई पड़ने वाली उस दिव्य प्रकाश को ही चित्रित करने का प्रयास किया है जिसमें अपनी आभा तथा प्रकाश से मेरे हृदय को अलोणित कर दिया था।"

रचना

(वाराणसी के सृजनशील कलाकारों की संस्था)

चित्र कला प्रदर्शनी

वाराणसी के सृजन शील कलाकारों की कला

वाराणसी भारतीय संस्कृति और सभ्यता की एक अति प्राचीन नगरी है। वास्तव में यह वह निराली नगरी है जहां सम्पूर्ण भारत का ही नहीं सारे विश्व की संस्कृति और सभ्यता का संगम होता है। परम्परा और आधुनिकता यहां एक साथ सांस लेती हैं और एक दूसरे को मर्यादित करती है। वास्तविक भारत का दर्शन यहीं होता है। यहां धर्म, दर्शन, ज्ञान, विज्ञान, साहित्य और कला की अजस्र धारा गंगा सतरंगी होकर नहीं, धवल होकर प्रवाहित होती है।

'रचना' इस पावन नगरी के सृजन शील कलाकारों की क्रियाशील संस्था है। इसने परम्परा और आधुनिकता को एक साथ आत्म सात करने का प्रयास किया है क्योंकि परम्परा और आधुनिकता दो अलग-अलग इकाइयां नहीं हैं बल्कि एक ही माला की दो कड़ियां हैं या कहा जाय एक ही मंजिल की दो सीढ़ियां हैं। आधुनिक भारतीय कला ऐसे ही मिलेजुले प्रयास का प्रतिफल ही हो सकती है, भले ही उसका रूप इस समय गोधूलि की तरह धूमिल क्यों न हो। कल का सूर्य आज की निशा में ही जन्म लेता है। उषा ही नव प्रभात का सन्देश देती है। वास्तविक रचना इसी वेला में सर्जित होती है। स्वतंत्रता के पश्चात पिछले २५ वर्षों में काशी ने कला क्षेत्र में क्या अर्जित किया उसकी एक झांकी यहां प्रस्तुत है।

१ फरवरी १९७३ — रामचन्द्र शुक्ल

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी

कलाकार—

१. रामचन्द्र शुक्ल
२. हृदय
३. दिनेश प्रताप सिंह
४. जयशंकर मिश्र
५. श्रीमती उमा दूबे
६. बैजनाथ प्रसाद गुप्त
७. राम प्यारे सिंह
८. रवीन्द्र नाथ मिश्र
९. आर० एस० घीर
१०. महेन्द्र नाथ सिंह
११. गोकुल प्रसाद
१२. उमा शंकर पाण्डेय

चित्र परिचय

कलाकार	कालाकृति	माध्यम	मूल्य
१—राम चन्द्र शुक्ल	१—उत्पीड़न	तेल चित्र	७५०/-
	२—होमेज टू सुभाष चन्द बोस	,,	७५०/-
	३—होमेज टू सी० वी० रमन	,,	७५०/-
	४—किंगडम आफ मून	,,	७५०/-
२—हृदय	५—प्लेजर आफ कलर	,,	४५०/-
	६—मून इन नाइट	,,	५००/-
	७—मून इन डे	,,	५००/-
३—दिनेश प्रताप सिंह	८—अवगुंठन	जल रंग	
	९—दीप-शिखा	,,	
४—जय शंकर मिश्र	१०—बुद्धम् शरणम् गच्छामि	,,	१५००/-
	११—ग्रामीण जीवन	,,	२००/
	१२—कंचन जंघा	,,	२००
५—श्रीमती उमा दूबे	१३—कम्पोजीशन	,,	
	१४—महा काली	,,	
	१५—द मून	,,	
६—बैजनाथ प्रसाद गुप्त	१६—विजय दशमी	,,	
	१७—पूजा	,,	
	१८—दीप दान	,,	
७—राम प्यारे सिंह	१९—कम्पोजीशन नं० १	,,	
	२०—कम्पोजीशन नं० २	,,	
८—रवीन्द्र नाथ मिश्र	२१—कम्पोजीशन नं० १	तेल चित्र	
	२२—कम्पोजीशन नं० २	,,	
९—आर० एस० घीर	२३—दि लाइफ	,,	२००/-
	२४—डिस्पल आफ शेडो	,,	२००/-
	२५—स्टिल लाइफ	,,	५००/-
१०—महेन्द्र नाथ सिंह	२६—हाथी	जल रंग	
	२७—नायिका	,,	
११—गोकुल प्रसाद	२८—शकुन्तला	,,	१५००/-
	२९—कुटीर उद्योग	,,	१५००/-
	३०—कृषक	,,	१०००/-
१२—उमा शंकर पांडे	३१—लव कुश	,,	
	३२—प्यास	,,	

रामायण प्रेस, अस्सी-वाराणसी।

CATALOGUE

PRICE ON DEMAND

Name of Artists	Titles
1. Prof. R. C. Shukla	1. The Ring Master
	2. The Last Supper
	3. Yatra
	4. The Moon Painter
2. Dr. Gopal Madhukar Chaturvedi	5. Jan Tantra
	6. Lok Tantra
	7. Raj Tantra
	8. Bhirh Tantra
3. Prof. R. S. Dhir	9. Devaluation
	10. Development
	11. Defection
	12. Promise
4. Shri Bala Datt Pande	13. Black Board I
	14. ,, II
	15. ,, III
	16. ,, IV
5. Shri Santosh Kumar Singh	17. Auditorium
	18. Madari
	19. Fate
	20. Saviour of Democracy
6. Shri Ved Prakash Mishra	21. The Protector
	22. Safety
	23. Expectations
	24. The Twins
7. Dr. Kamlesh Datt Pande	25. The Vulture
	26. Democracy
	27. The Rape
	28. The Value
8. Shri Kesari Kumar	29. Chakravyuh
	30. The Situation is Under Control

SAMIKSHAVAD

AN INDIGENOUS MOVEMENT OF MODERN ART IN INDIA

GROUP SHOW OF PAINTINGS BY U. P. ARTISTS
AT THE JEHANGIR ART GALLERY, BOMBAY
FROM NOV. 4 TO 9, 1980 DAILY 10 A. M. TO 8 P. M.
INAUGURATION ON NOV. 3 AT 6 P. M.

SAMIKSHAVAD is basically an Indian movement of Contemporary Art, which is opposed to the tendency of Indian artists following the Western trends of Modern Art. It originated in the Emergency period of India near about 1974. Its basic purpose is to help create an atmosphere in the country for such an art, which developes on mostly indigenous know-how and resources. 'Samiksha' is a Sanskrit word which denotes criticism or comment. The Samikshavadi artists believe art to be criticism of life and Society in which we live in. It is against any type of imitation of the past and present styles of Eastern or Western art.

The first exhibition of the works of this group was held in Delhi at the AIFACS Gallery in January 1979. The second exhibition is being held at Bombay. The first exhibition included the works of six painters—Prof. R. C. Shukla, Varanasi; Dr. Gopal Madhukar Chaturvedi, Aligarh; Prof. R. S. Dhir, Varanasi; Shri Bala Datt Pande, Allahabad; Shri Santosh Kumar Singh, Varanasi and Shri Ved Prakash Mishra, Varanasi. The present show includes the works of two more painters besides the above, Dr. Kamlesh Datt Pande, Delhi, and Shri Kesari Kumar, Mirzapur.

Mostly all the paintings of these artists deal with some or the other social, economic, educational or cultural problems of present day India, in a satirical but simple, direct and powerful language of art. None of the exhibits pertain to any of the Western modern trends of art like that of Abstract Art, Surrealism or Expressionism.

The Samikshavadi painters believe in an art which has a social purpose and this is only possible if the language of art is simple, direct, intelligible and yet powerful. Art without social purpose can be nothing but a personal fad. It begins with individuality and ends individually. Samikshavadi painters are sensitive to the maladies of present day life and society and are deeply touched by the suffering humanity. They want to raise their voice against the anti-social elements and exploiters of the society, who are responsible for the malady. This is the main theme of their paintings. They realize their responsibility to the society in which they live in. They want to inspire the people through their works to fight against evil. They consider art to be a powerful instrument of social change, upliftment and awakening. They are not at all interested in merely showing the feats of colour and form as is commonly seen in the socalled Modern Art.

This group of artists believe in bringing art nearer to the people and this is only possible if the language of art is simple and expresses the desire and feelings of the common people. Samikshavadi artists are not only trying to do that but are occasionally organising such exhibitions in small towns and villages too. The purpose of organising its exhibition in big cities like that of Delhi and Bombay is mainly to attract the larger section of common man and working people and to stimulate brother artists to cooperate with us in this mission.

For further enquiries please write to :
Prof. R. C. Shukla, Head, Deptt. of Painting,
Faculty of Visual Arts.
G. 35, Arvind Colony, B. H. U., Varanasi-221005, U. P, INDIA

MANIFESTO OF SAMIKSHAVAD

(A Movement of Social Art)

1. We Reject all Foreign Movements of Modern Art
2. We Reject Blind Imitation of the past
3. We Reject Individualism
4. We Reject Ambiguity
5. We Reject Rigidity
6. We Reject Formalism
7. We Reject Anti Art Movement
8. We Reject the Idea of Confused Creativity
9. We Reject the Idea of Art for Art Sake
10. We Despise Following the foot-steps of the West
11. We Reject Technique as an end in it-self
12. We have our Roots in the Indian Soil
13. It is Nourished by Indian Culture, Art & Society
14. We Express the Desire of the Common Man
15. We Express the mute Feelings of the Masses
16. We Aim at Purifying the Society
17. We Attack the Exploiters of the Society
18. We Believe in Impersonal Art
19. We Believe in Progress & Growth
20. We Believe in Truth not Pleasing Beauty
21. We Believe in Symbolic Realism
22. We Believe in Reform
23. We Believe in Revolution
24. We Believe in Criticism of Life and Society to build a better World

Published on the occasion of the First Samikshavadi Exhibition held at
NEW DELHI From Jan. 15 to 21, 1979

प्रौढ़ एवं सतत शिक्षा केन्द्र

गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर
द्वारा आयोजित

चित्रकला प्रदर्शनी

स्थान :
परीक्षा भवन, गोरखपुर विश्वविद्यालय

दिनांक : 16-19 अक्टूबर 1981 समय : अपराम्ह २ से ६ बजे

- दिलीप कुमार
- ओमप्रकाश मणि त्रिपाठी

संयोजक :
डा० बृज बिहारी सिंह
निदेशक

भूमिका

अक्षर सीख कर किताब पढ़ने में काफी कुछ समय लग जाता है किन्तु चित्र देखकर उसमें चित्रित रूप भाव, घटना, विवरण अथवा कथा वस्तु को बेपढ़ा-लिखा कोई भी मनुष्य यहां तक की पांच वर्ष का बालक भी आसानी से समझ लेता है। जैसे अक्षर और शब्दों की एक भाषा है वैसे ही रेखा-रंग की भी एक भाषा है और बिलकुल सरल है। शब्दों की भाषा जानने पर भी, पुस्तक पढ़ जाने पर भी बात मन में उतनी स्पष्ट नहीं होती जितना चित्र में देख लेने पर। जिस व्यक्ति ने कभी समुद्र न देखा हो उस पर वह चाहे जितना पढ़ ले, उसका दृश्य उसे तब तक स्पष्ट नहीं झलकता जब तक उसका एक विस्तृत चित्र न देख ले। राम अथवा कृष्ण के बारे में असंख्य पोथियां लिखी पड़ी हैं पर इनके चित्र या मूर्ति न बनाये गये होते तो शायद ही इनका रूप हमारे मन में स्पष्ट उतर पाता। अक्षर और शब्दों की भाषा का सीमित दायरा होता है। उसी दायरे के लोग ही उस भाषा का उपयोग कर पाते हैं, जैसे बंगाल के लोग बंगाली भाषा का या हिन्दी प्रदेश के लोग हिन्दी भाषा का। किन्तु चित्र की भाषा सार्वभौम होती है। चित्र में यदि एक तोते का रूप बना है तो संसार भर के लोग उसे देखकर पहचान लेंगे किन्तु यदि हिन्दी में 'तोता' लिख दिया जाय तो मात्र हिन्दी जानने वाला ही उसे समझ सके-गा। कहने का तात्पर्य यह है कि चित्र-कला एक सरल तथा सशक्त भाषा है, ज्ञान प्राप्त करने का एक सहज माध्यम है।

चित्र-कला एक भाषा के रूप में आदिम काल से ही प्रचलित रही है और हमारे देश में आदिकाल से ही इसकी प्रतिष्ठा रही है। अजन्ता राजस्थान तथा मुगल चित्र-कला हमारी उच्चतम चित्र-कला परम्परा के उदाहरण हैं और संसार भर में प्रतिष्ठित हैं। वर्तमान काल में भी चित्र-कला प्रचलित है जिसे आधुनिक शैली की कला कहा जाता है। इस कला का प्रचार-प्रसार पश्चिमी देशों से आरम्भ हुआ और आजकल दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता, मद्रास जैसे नगरों में भी फैशन सा बन गई है। इसका स्वरूप इतना दुरूह बना दिया गया है कि पढ़े लिखे प्रबुद्ध लोगों की समझ से भी यह परे की चीज हो गई है। साधारण जन के लिए तो यह मात्र पहेली बन कर रह गई है।

आप आज जो चित्र इस प्रदर्शनी में देख रहे हैं वे पश्चिमी आधु-निक चित्र शैली से भिन्न भारतीय आधुनिक शैली के चित्र हैं। इन्हें इनके कलाकारों ने 'समीक्षावादी' शैली कहा है। समीक्षावाद भारत में वर्तमान कला का एक सशक्त आन्दोलन है जो पश्चिमी आधुनिक चित्र शैलियों की नकल का घोर विरोधी स्वर है और भारत में भारतीय कला शैली का समर्थक है जो सहज ही सभी को ग्राह्य हो और जनमानस को उद्बोधित करने का सामर्थ्य रखती है। समीक्षावादी कलाकार अपने वर्तमान समाज तथा जीवन को उसके नंगे रूप में चित्रित करने के हामी हैं ताकि जन साधारण अपने वातावरण से अच्छी तरह परिचित होकर इसे परिष्कृत करने की ओर अग्रसर हो सके।

समीक्षावादी चित्र शैली का जन्म उत्तर प्रदेश में ही हुआ है और थोड़े ही समय में इसे सम्पूर्ण देश के कला प्रेमियों ने जान पहचान लिया है। इन समीक्षावादी चित्रों की प्रदर्शनी दिल्ली और बम्बई में पहले ही हो चुकी है और पहली बार उत्तर प्रदेश के पूर्वी अंचल गोरखपुर में प्रौढ़ एवं सतत शिक्षा केन्द्र, गोरखपुर विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित हुई है। यह चित्र शैली उत्तर प्रदेश की एक महत्वपूर्ण देन है कला जगत को जिस पर सभी को गर्व होना चाहिये। प्रस्तुत प्रदर्शनी में भाग लेने वाले कलाकार प्रोफेसर राम चन्द्र शुक्ल, प्रोफेसर रघुबीर सेन धीर, परियोजना अधिकारी श्री दिलीप कुमार, श्री सन्तोष कुमार सिंह तथा श्री वेद प्रकाश मिश्रा हैं। श्री दिलीप कुमार परियोजना अधिकारी को छोड़ कर सभी कलाकार काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के चित्रकला विभाग से सम्बद्ध हैं।

हम पूरी तरह आश्वस्त हैं कि पूर्वान्चल में स्थित गोरखपुर जन-पद के अनेकानेक लोग इस प्रदर्शनी को देखने आयेंगे और हमारा मनोबल ऊंचा करेंगे।

१५-१०-८१ रामचन्द्र शुक्ल

चित्र - परिचय

कलाकार- राम चन्द्र शुक्ल : अध्यक्ष, चित्रकला विभाग, दृश्य कला सकाय, काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय, वाराणसी। जन्म बस्ती, उत्तर प्रदेश, १६२५

चित्र संख्या (१) 'बाढ़ पीड़ित सेवा केन्द्र'

जब बाढ़ आती है। जन जीवन त्रस्त हो जाता है। आदमी पनाह लेने के लिये अपना घर द्वार छोड़कर इधर-उधर भागता है। ऐसे समय अक्सर बाढ़ पीड़ितों को सहायता के लिये केन्द्र खोले जाते हैं। कल्पना कीजिये यदि ऐसे केन्द्रों पर घड़ियाल रूपी मददगार बैठे हों तो पनाह लेने वालों का क्या हाल होगा?

चित्र संख्या (२) 'राजनैतिक यथार्थ'

आज की राजनीति क्या है? सत्ताधारी व्यक्ति की तोंद फूलती जाती है। खूब खाता पीता, और समृद्ध होकर आंख मूंद कर आराम कुर्सी में आराम करता है। जनता जनार्दन उसको सत्ता

पर बैठाने वाला, गिड़गिड़ाता हुआ भूखा-प्यासा उसके पैरों पर पड़ा रहता है। विरोधी पार्टी हमेशा इसी ताक में रहती है कि कैसे कुर्सी के पैर काटकर कुर्सी पर बैठा सत्ता प्राप्त व्यक्ति को उलट दिया जाय।

चित्र संख्या (३) 'यात्रा

आज सबसे महत्वपूर्ण तथा कठिन यात्रा है, कुर्सी यात्रा। इस यात्रा में सफलता पाने के लिये शिक्षा, बुद्धि तथा चरित्र बल बेमानी हैं। हम चोर हों, बदमाश हों, गुंडे हों कोई फर्क नहीं पड़ता। इस यात्रा के लिये गधे की सी बुद्धि, गिरगिट जैसी रंग बदलनेवाली प्रवृत्ति और हाथ में रुपयों से भरी थैली चाहिये। एक पार्टी या झंडा नही, जिससे कुर्सी मिले वहीं पार्टी और वही झंडा बदलते रहना चाहिये, भले लोग आप को दल-बदलू कहें। कुर्सी मिल जाने पर सभी पैरों पर पड़े रहेंगे।

चित्र संख्या (४) 'रिंग मास्टर'

युवा शक्ति के बल पर बड़ी अच्छी तरह से उल्लू सीधा किया जा सकता है यदि रिंग मा-स्टरी आती हो। युवा काल में शेर की सी शक्ति होती है। किसके इशारे पर स्कूल के युवा-छात्र हड़ताल, आगजनी एवं हिंसा ऐसे कार्यों में लिप्त होकर स्वयं को तथा राष्ट्र की प्रगति में अवरोध उत्पन्न करते हैं। उस राज-नीति के रिंग मास्टर को कौन नहीं जानता जिसके इशारे पर युवा शेर शिक्षा तथा शिक्षक की हत्या करने पर तैयार हो जाता है? यह जघन्य व्यापार कब तक चलता रहेगा?

चित्र संख्या (५) 'अन्तिम भोज'

तीन विशेष व्यक्तियों के सामने खाने की मेज पर एक आदमी मुसल्लम पड़ा है। मेज के नीचे जाने पहचाने मांसाहारी जीव टकटकी लगाये बैठे हैं। जब कुछ बचेगा तो इन्हें भी शायद खाने को मिल जाय। क्या अब आदमी आदमी को खाने लगा है? इसके बाद खाने को क्या बचेगा? यहीं क्या अन्तिम भोज होगा? प्रगति की शाम।

चित्र संख्या (६) 'चन्द्र यात्रा'

चांद पर जाने के लिये विकसित देशों द्वारा अरबों रुपया लगाया जा रहा है। शायद चांद पर अपनी सभ्यता का विस्तार करने के लिये। एक ओर गगन चुम्बी अट्टालिकाएं और दूसरी ओर निराश्रित भिखारिन माता की गोद में दम तोड़ते, चीखते, बिलबिलाते बच्चे। इसी रंग से पोतने जा रहा है चांद के धवल मुख को आज का चित्रकार रुपी समृद्ध मानव चन्द्रमा में कलंक तो होता ही है।

कलाकार – रघुबीर सेन धीर : चित्रकला विभाग, दृश्य कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
जन्म- पंजाब, १९३९

चित्र संख्या (७) 'दहेज प्रथा'

दहेज का लालच हमारे युवा वर्ग को गलत चीजें स्वीकार करने के लिए बाध्य कर रहा है। चित्र में दूल्हा नोटों (रुपयों) के ढेर पर खड़ा है। रुपयों के लालच में वह एक अनपढ़, काली' बदसूरत लड़की से शादी कर अपने को गौरवान्वित अनुभव कर रहा है।

चित्र संख्या (८) 'अन्धा राजा'

राजा व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए जनता की भलाई की अपेक्षा उसको कुचलने में अधिक विश्वास एवं आनन्द का अनुभव कर रहा है।

चित्र संख्या (९) 'समय का चक्र'

जीवन चक्र झूले के समान है जो कभी उपर और कभी नीचे चलता रहता है। चित्र में एक राजा जो कभी सबसे उपर था समय के चक्र ने उसे नीचे फेंक दिया है। सर्प को काल का प्रतीक माना गया है।

चित्र संख्या (१०) 'मक्कार शासक'

जनता का विश्वास पद से नहीं सेवा से प्राप्त होता है।

चित्र संख्या (११) 'अवमूल्यन'

बढ़ती हुई मंहगाई में पैसे का मूल्य इतना कम हो गया है कि जनता थैलों में नोटो की गड्डियां भर कर ले जा रही है और सामान———कुछ भी नहीं है।

चित्र संख्या (१२) 'झूठा आश्वासन'

नेताओं का वह समय जब वह वोट के लिए गिड़गिड़ाता है और असहाय एवं गरीब जनता को झूठा प्रलोभन देता है, पट्टी पढ़ाता है।

कलाकार – दिलीप कुमार : परियोजना अधिकारी, प्रौढ़ एवं सतत शिक्षा केन्द्र, गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर।
जन्म फैजाबाद, उत्तर प्रदेश, १९५२

चित्र संख्या (१३) 'विकल विकलांग'

अन्तर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष (१९८१) चन्द लमहों का मेहमान है। वह चला जायेगा लेकिन विकलांगों की समस्यायें अनन्त काल तक मुंह बाये यूं ही खड़ी रहेंगी।

चित्र संख्या (१४) 'बार सूत्रीय कार्यक्रम'

संजय गांधी का बार-सूत्रीय विकास कार्यक्रम, साक्षरता, दहेज प्रथा का अन्त, वृक्षारोपण एवं परिवार नियोजन अंगूठे की राजनीति में खामोश।

चित्र संख्या (१५) 'दिशा बोध'

कटि प्रदेश की चमक में पाश्चात्य सभ्यता की तरफ खिंचता भारतीय मानव मन कब समझेगा नारी की सहज भावनाओं को जो जूतों तले पल कर भी पुत्र रत्न देती है। कब तक झूठी-मूठी प्रगति के नाम पर हमारी अंगुलियां उधर उठती रहेंगी?

चित्र संख्या (१६) 'आज का मानव'

आज व्यक्ति पर भौतिकता का भूत सवार है वह अपने स्वार्थों के लिए मानवता का खून पी रहा है। वह जा रहा है। भ्रूण आत्म हत्या कर रहा है।

कलाकार – सन्तोषकुमार सिंह : काशी हिन्दू विश्व विद्यालय
जन्म - बलिया, १९५५

(१७) 'सभा स्थल'

आजकल नेताओं के भाषणों में पार्टी के चाटुकार सीधी एवं गंवार जनता को कुछ पैसा देकर भीड़ जुटाने का काम करते हैं। वहां सिद्धान्तों को सुनने कोई नहीं जाता है। इस लिए प्रतीक रूप में कुत्ते को चाटुकार तथा गदहे को मूर्ख के रूप में दर्शाया गया है।

(१८) **'सड़क से मंजिल तक'**

इस चित्र में अफसर शाही एवं नेता शाही का नग्न ताण्डव प्रतीक के माध्यम से दिखलाया गया है। गांधी को आदर्श मानने वाले लोग अनेक प्रकार के भ्रष्टाचार में लिप्त हैं।

(१९) **'मदारी'**

इस चित्र में एक मदारी रूपी नेता दो बन्दरों को नचा रहा है। एक हिन्दू एवं दूसरा मुस्लिम। इन दोनों को लड़ाकर वह अपना उल्लू सीधा करता है।

(२०) **'कुत्ता और आदमी'**

इस चित्र में एक बड़ी-सी चाहर दीवारी के बाहर गेट पर एक कुत्ता बैठा मेवा खा रहा है तथा उसके ठीक सामने एक भिखारी सा आदमी बैठा है। आदमी कुत्ते को देख रहा है और कुत्ता आदमी को। आदमी दर्शक से कह रहा है—यदि जीना है तो आपको कुत्ता बनना पड़ेगा।

(२१) **'बंधी रोटी'**

इस चित्र में प्रबुद्ध वर्ग–नेता को कुत्ते के रूप में दिखलाया गया है जिसको एक पूंजीपति रोटी खिलाकर अपने जाल में फसा रहा है। जिसके परिणाम स्वरूप आम आदमी एक-एक रोटी के लिए मुहताज है।

(२२) **'कुर्सी की लड़ाई'**

इस चित्र में कुर्सी पाने के लिए राजनीतिज्ञों को किस प्रकार के हथकंडे अपनाने पड़ते है, इसको दिखलाने के लिए प्रतीक रूप में कुत्ते और सांड़ को प्रयुक्त किया गया है।

कलाकार – वेद प्रकाश मिश्र : काशी हिन्दू विश्व विद्यालय,
जन्म - मिर्जापुर, १९५४

(२३) **'कुर्सी की सुरक्षा'**

नगर में बाढ़ से परेशान जनता अपने-अपने घर-द्वार एवं बाल-बच्चों की सुरक्षा में लगी है। लोग एक दूसरे की सहायता में लगे हैं, लेकिन उन्ही लोगों में कुछ वद्दार अपनी कुर्सी की सुरक्षा में व्यस्त हैं।

(२४) **'नेता का जन्म'**

पुराने चित्रों व कथाओं द्वारा ज्ञात होता है

भगवान राम या कृष्ण जन्म लेने के पहले अपनी मां को स्वप्न देते हैं, मैं तुम्हारे गर्भ में आ रहा हूं, अब तुम्हारे और समाज के सारे दुःख-दर्द दूर हो जायेंगे। ठीक यही बात इस चित्र में है। एक गरीब परिवार के बीच रेडीमेड नेता जी जन्म लेने के पहले अपने माता-पिता को चार भुजाओं के साथ दर्शन देते हैं मै तुम्हारे परिवार में आ रहा हूं।

(२५) **'नारी सुरक्षा'**

देश में खाकी एवं श्वेत वस्त्र धारी जो देश के रक्षक कहे जाते हैं वे ही भक्षक हो गये हैं। चित्र में एक नारी की दुर्दशा को दिखाया गया है जिसमें यही लोग सक्रिय हैं।

(२६) **'मानव-वृक्ष'**

नर-नारी मिलकर परिवार का रूप लेता है और सुखी रहने की कल्पना करता है। चित्र में वही परिवार विभिन्न कीड़ों के द्वारा सूखकर कांटा होता जा रहा है। उस परिवार का भविष्य क्या होगा ? उस राष्ट्र का भविष्य क्या होगा ?

(२७) **'आज का देवता'**

कोई भी कार्य इस देवता द्वारा आज असम्भव नहीं है, भक्त ने जो मांगा वो मिला। लेकिन इस देवता के गुण कल के देवता से भिन्न हैं। हत्या, बलात्कार, दल बदलूपन, जहरीले गुण्डे पालना इनके साधारण गुण हैं और इन्हीं के द्वारा भक्तों की हर मनोकामना पूरी होती है।

(२८) **'गोवर्धन धारी'**

एक बार भगवान श्रीकृष्ण ने समाज सुख के लिये गोवर्धन धारण किया था, लेकिन आज देश में एक भी कृष्ण सामाजिक गोवर्धन उठाने के लिये तैयार नहीं है अतः धन्य है समाज जो अपने-अपने परिवार का गोवर्द्धन स्वयं उठाये हैं।

সমীক্ষাবাদ

বর্তমান প্রদর্শনীটি সমীক্ষাবাদী কলার কোলকাতায় অনুষ্ঠিতব্য তৃতীয় প্রদর্শনী। প্রথম প্রদর্শনী আয়োজিত হয়েছিল দিল্লীতে দ্বিতয়টি বোম্বাইতে। সমীক্ষাবাদ দেশীয় আধুনিক শিল্পের প্রথম আন্দোলন। এদেশে প্রচলিত পাশ্চাত্যধর্মী আধুনিক শিল্প থেকে সমীক্ষাবাদ একটি সম্পূর্ণ আলাদা পথ বেছে নিয়েছে। এই সমস্ত শিল্পকলা, যদিও আমাদের দেশে নতুন তবু আমাদের দেশের লোকের কাছে অথবা আন্তর্জাতিক ক্ষেত্রে কোথাও স্বীকৃতি পায়নি। এই অভিজ্ঞতা থেকে আমাদের কিছু একনিষ্ঠ শিল্পী গুরুতরভাবে এমন একটি শিল্প গড়ে তোলার কথা ভেবেছেন যা দেশের লোক গ্রহণ করবে এবং যা আন্তর্জাতিক ক্ষেত্রেও একটা স্থান করে নিতে পারবে। সমীক্ষাবাদ হলো এজাতীয় একটি প্রচেষ্টা।

এই শিল্পরীতির মুখ্য একটি বৈশিষ্টা হল এই যে তা সাধারণ মানুষের প্রয়োজনের কথা ভেবেছে। তা এমন একটি মাধ্যম বেছে নিয়েছে যার দ্বারা সাধারণের সঙ্গে যোগাযোগ করা যায় এবং যা শিক্ষিতজনের কাছেও নিজেকে প্রকাশ করতে পারে। বর্তমান জীবনের জ্বলন্ত সমস্যাগুলি ও সাধারণ মানুষের আশা-আকাঙ্ক্ষা নিয়ে সে চিন্তা করে। পাশ্চাত্য দেশের মত এটি ব্যক্তিক কলা নয়। প্রাচ্য দেশের মত নৈর্ব্যক্তিক কলা। প্রযুক্তি শিল্প সংক্রান্ত আবিষ্কারের বাহাদুরি দেখানো এর উদ্দেশ্য নয়। এর উদ্দেশ্য জনসাধারণকে তাদের সামাজিক, অর্থনৈতিক, রাজনৈতিক ও সাংস্কৃতিক পরিস্থিতি সম্পর্কে শিক্ষিত করা। এই কলা বিত্তবান লোকের বৈঠকখানা সাজাবে না বরং শোষকের অত্যাচারের বিরুদ্ধে শোষিতকে বিদ্রোহের অনুপ্রেরণা যোগাবে। সামাজিক উদ্দেশ্যযুক্ত এটি একটি শিল্প আন্দোলন। সমীক্ষাবাদী শিল্পকর্মকে এই দৃষ্টিকোণ থেকে বিচার করতে হবে—পাশ্চাত্য দৃষ্টিকোণ থেকে নয়।

কোলকাতায় আমরা প্রদর্শনী করছি কারণ এই দৃঢ় বিশ্বাস আমাদের আছে যে এই মহানগরের অধিবাসীরা যে কোনপ্রকার সামাজিক আন্দোলনকে স্বাগত জানিয়েছেন এবং আমাদের এই শিল্পকলার মূল্য তাঁরা উপলব্ধি করতে পারবেন। আমরা আশা করি এই জাগ্রত নগরের তরুণ শিল্পীরা এই শিল্পকলার বিপ্লব ঘটাতে আমাদের সঙ্গে হাত মেলাবেন।

Our Representative in Calcutta—

SHRI SUBRATA BASU
117-1 A, Lake Terrace, Calcutta-700029
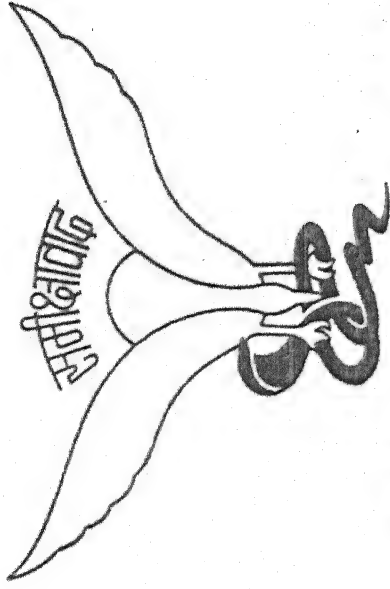
SAMIKSHAVAD

THE FIRST INDIGENOUS MOVEMENT OF CONTEMPORARY ART IN INDIA

PARTICIPATING ARTISTS

1. RAM CHANDRA SHUKLA, VARANASI
2. RAGHUBIR SEN DHIR, VARANASI
3. SANTOSH KUMAR SINGH, VARANASI
4. VED PRAKASH MISHRA, VARANASI
5. KESARI KUMAR, MIRZAPUR
6. ASHOK JHA, JABALPUR
7. RAJESH SHARMA, JABALPUR
8. KAMLESH DATTA PANDE, DELHI

THIRD EXHIBITION AT THE ACADEMY OF FINE ART
Cathedral Road, Calcutta

March 23 to 29, 1982 ● Daily from 3 to 8 P. M.

MANIFESTO OF SAMIKSHAVAD

(A Movement of Social Art)

1. We Reject all Foreign Movements of Modern Art
2. We Reject Blind Imitation of the past
3. We Reject Individualism
4. We Reject Ambiguity
5. We Reject Rigidity
6. We Reject Formalism
7. We Reject Anti Art Movement
8. We Reject the Idea of Confused Creativity
9. We Reject the Idea of Art for Art Sake
10. We Despise Following the foot-steps of the West
11. We Reject Technique as an end in it-self
12. We have our Roots in the Indian Soil
13. It is Nourished by Indian Culture, Art & Society
14. We Express the Desire of the Common Man
15. We Express the mute Feelings of the Masses
16. We Aim at Purifying the Society
17. We Attack the Exploiters of the Society
18. We Believe in Impersonal Art
19. We Believe in Progress & Growth
20. We Believe in Truth not Pleasing Beauty
21. We Believe in Symbolic Realism
22. We Believe in Reform
23. We Believe in Revolution
24. We Believe in Criticism of Life and Society to build a better World

Published on the occasion of the First Samikshavadi Exhibition held at NEW DELHI From Jan. 15 to 21, 1979

The present one is the third exhibition of Samikshavadi art being held at Calcutta. The first exhibition was organised at Delhi and the second one at Bombay. Samikshavad is the first movement of indigenous modern art. It has chosen quite a new direction different from that of the Westernised Modern Art prevalent in this country. All such art, though new for this country, could neither be appreciated by our own people, nor has been able to get any recognition in the international field of art. This experience has led some of our sincere artists to think seriously about building up an art which can be acceptable to our own people and which can also claim its position in the international field of art. Samikshavad is an effort in this direction.

The most important feature of this school of art is to cater for the needs of the common man. It has chosen such a language of art which can easily communicate with the masses and can also express itself to the elite. It deals with the present day burning problems of the common man and represents their wishes and aspirations. It is not an individualistic art like that of the West but impersonal like that of the ancient art of India. It is not interested in merely showing the fads of technical innovations but seriously engaged in educating the people about their social, economical, political and cultural circumstances. It is not just to decorate the drawing rooms of the moneyed people but to inspire the people in general to revolt against the tyrrany of the oppressor. It is an art movement with a social purpose. Samikshavadi works of art should be judged from this point of view not with a Western eye.

We have been confident in deciding to exhibit our works at Calcutta that they will be best appreciated by the people of this great cosmopolitan city, which has always reacted favourably to the socialistic movements of the country. We hope that the younger generation of artists of this land of awakening will join hands with us in revolutionising the art of India—Vande Mataram.

—R. C. Shukla

RAM CHANDRA SHUKLA

Head, Deptt. of Painting
Faculty of Visual Arts
Banaras Hindu University
Varanasi.

Shukla is not only an eminent contemporary painter but an author of art books, art-critic and art-educationist of repute. As a painter he is well-known for his deep understanding of the spirit of contemporary art in India. As a Samikshavadi painter he has been interested in exposing the nefarious character of the so called political leaders. His style of expression is simple, direct, symbolic and satirical.

RAGHUBIR SEN DHIR

Lecturer, Deptt. of Painting
Faculty of Visual Art
Banaras Hindu University
Varanasi.

Dhir is one of the most active painters of Uttar Pradesh, who has worked in different media of art like that of Water Colour, Collage, Batik, Graphics as well as oils. His decorative sense is tremendous. As a Samikshavadi painter he has chosen to comment on the social miseries and unsocial behaviour prevalent in the society. His compositions are colourful but loaded with under meanings.

SANTOSH KUMAR SINGH

Deptt. of Painting
Faculty of Visual Art
Banaras Hindu University
Varanasi.

Santosh is a young painter full of genuine anger towards the criminals of the society and tries to smash their covered faces through his powerful expressions in his compositions. His drawing and colours are bold in temper and easily move the expectator. His brush moves harshly towards harsh people who are bent upon exploiting the society.

VED PRAKASH MISHRA

Deptt. of Painting
Faculty of Visual Art
Banaras Hindu University
Varanasi.

Ved is a talented young painter, who is a fine colourist and a skillful draftsman, full of imagination and creativity. As a Samikshavadi painter he tries to express the miseries of the common man and their weaknesses of character which allow the unsocial elements to exploit them. His expression is truely symbolic and powerfully satirical.

KESARI KUMAR

Amateur Painter
of Mirzapur, U. P.

Kesari Kumar is a painter of poetical imagination. His expressions are subtle but pregnant with deep feelings and ideas. He tries to express the duality of nature, expressions, deeds and behaviour of the authorities at the helm of affairs. His paintings are suggestive in expression and simple in execution.

ASHOK JHA is young and enthusiastic painter of Jabalpur. He has been quite active in organising group shows of younger artists in Jabalpur and surcharging the atmosphere with art activities. He has a team of younger artists who are eager to revolutionise the present scene of art with socialistic outlook suitable for the people of the country. He is deeply affected by the falling human values and tries to express them in his works.

RAJESH SHARMA is a socially conscious young painter of Jabalpur who has also tried to activise the art world of his city. He works hard in different media. He is originally a sculptor but paints too. He is alert and thoughtful. He expresses boldly and satirically with simple but forceful symbols. He is also a severe critic of the social misdoings.

DR. KAMALESH DATTA PANDE
Lecturer in Drawing & Painting
M. M. H. College, Ghaziabad

Kamalesh is an active and smart youngman full of enthusiasm and imagination. He has a scholarly bent of mind always trying to go deep into the basic roots and causes of events and acts of social life. He has been particularly interested in studying the maladies of womanhood in the Indian Society and has tried to express against their exploitations boldly and directly.

CATALOGUE

PRICE ON DEMAND

Name of Artists	Titles
1. R. C. SHUKLA	1. The Ring Master
	2. The Last Supper
	3. Yatra
	4. The Moon Painter
2. R. S. DHIR	5. Defection
	6. Risk
	7. Curse of Dowery
	8. Dharma Shettra
3. S. K. SINGH	9. Bread with String
	10. Dog and Man
	11. Saviour of Democracy
	12. Corpse Eater
4. V. P. MISHRA	13. In Dilemma
	14. Dignity of Woman
	15. Safety
	16. The Protector
5. KESARI KUMAR	17. Democracy
	18. Flower & Flower
	19. Horror I
	20. Horror II
6. ASHOK JHA	21. The New Chess Queen
	22. The New Chess Knight
	23. The New Chess Bishop
	24. Dowery
7. RAJESH SHARMA	25. Renaissance
	26. Progress
	27. Modern Musician (sculpture)
	28. The distress of Humanity (sculpture)
8. K. D. PANDE	29. The Vulture
	30. Democracy
	31. The Rape
	32. The Value

Still-life in iol colour

Exhibition of Water Colours Landscape-84

DHIR R. S.

D. 53/90, NARAYAN NAGAR, LUXA, VARANASI, Ph. No. 64319
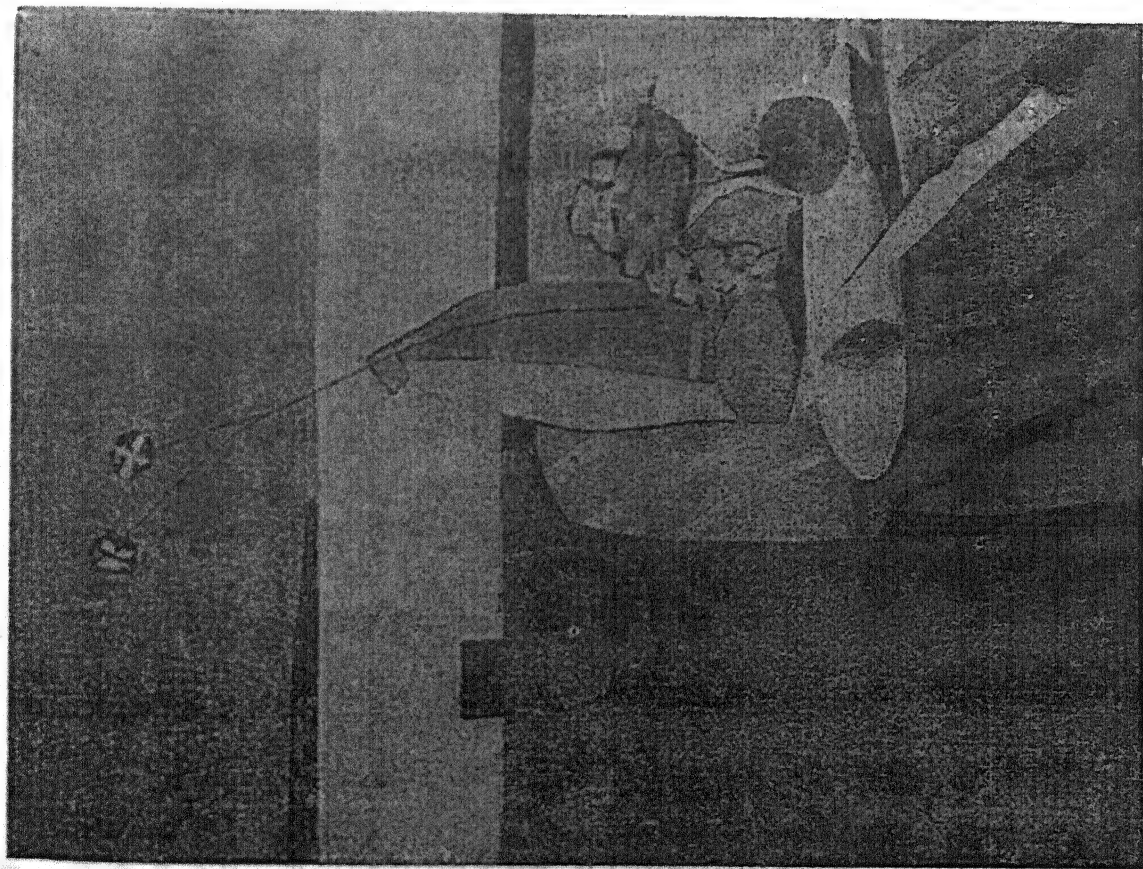
DHIR R. S.

Education :

'Five Years' Diploma in Fine Arts, College of Arts and Crafts, Lucknow-1961.

One Year Post-Diploma in Painting College of Arts and Crafts, Lucknow-1963.

Master of fine Arts (M. F. A.) 1st Class First-Gold Medal, Banaras Hindu University, Varanasi-1977-79.

Field of Specialisation :

Water Colour (Traditional Style).

Worked on Creative Painting Based on Jain Miniature for M. F. A.

Participations :

1971 participated in the 1st All India Sequential Autumn School for Teachers Organised by Indian Society for Technical Education Board, New Delhi at Sir J. J. Institute of Applied Arts, Bombay.

1972 participated in Painter's Camp held at Dehra-dun, Organised by U. P. State Lalit Kala Academy.

Participated in various All India Exhibitions including National Exhibition of Art, Academy of Fine Arts, Calcutta, Bombay Art Society, Hyderabad Art Society, A. I. F. A. C. S., Indian Academy of Fine Arts, Amritsar, Birla Academy of Fine Arts, Calcutta, Mahakoshal Kala Parishad, Raipur.

Awards :

All India Exhibition Mysore.
Gold Medal-1962.

All India Exhibition, Indian Academy of Fine Arts.
Amritsar-1968, 1969, 1977, 1979, 1980

All India Exhibition, Academy of Fine Arts Calcutta-1971.

All India Exhibition, U. P. State Lalit Kala Academy, Lucknow-1971.

All India Exhibition, Rajahmundry (A. P.) Best Exhibit.
For the best Exhibits-1974, 1976.

All India Exhibition, Raipur M. P. Gold Plaque. For the best Exhibit-1977.

Collection :

- U. P. State Lalit Kala Academy, Lucknow.
- Children's Museum, Lucknow.
- Govt, Museum, Bangalore.
- Govt. Museum, Mangalore.
- Lady Ranu Mukerjee, Calcutta.
- Raj Bhawan, Lucknow.
- Indian Embassy, Nepal.
- Lalit Kala Academy, Rajahmundary, A. P.
- Many Private collections in India and Abroad.

Solo-Exhibition and Group Shows :

Varanasi, Lucknow, Delhi, Kathmandu, Bombay, Kanpur, Calcutta, Allahabad, Gorakhpur etc.

My work has also been displayed abroad through coloured slides & lectures (Nepal, Canada, Italy Germany)

Agra University, Agra, 1982 ; Slide show & Lectures,

Punjab University, Chandigarh, 1982 ,,

At Govt. College, Hoshiarpur, 1983. ,,

Active member of Samikshavadi Movement of Indian Contemporary Art.

Practising as Active Painter for the Last 20 years.

You are Cordially invited to an Exhibition of Recent Water Colour Landscapes by R. S. Dhir, at **Maha Rani Laxmi Bai Degree College, Bhopal** on 23rd Feb., 1984 at 5-30 p. m.
(BIRLA MUSEUM).
In view unique end 26th February 1984, between 10 a. m. to 5 p. m.

Mr. R. S. Dhir is an enthusiastic contemporary painter of considerable repute. He is well-known for his mastery of colour and design as well as use of mixed media. The present exhibition is an exposer of his love for nature which is rich in colour and design in its manifold aspects nature to him is inspiration for colour manifestation. He sees every object and form fusing in multiple colours and simultaneously producing a sweet symphony and harmony. He does not copy nature. That has never been his intension. He tries to breathe the very spirit of Nature and that makes his landscapes unique in their approach. His use of water colour and guash for landscape is typical of its pleasantness. Though small in size they produce panoramic impression.

R. C. Shukla
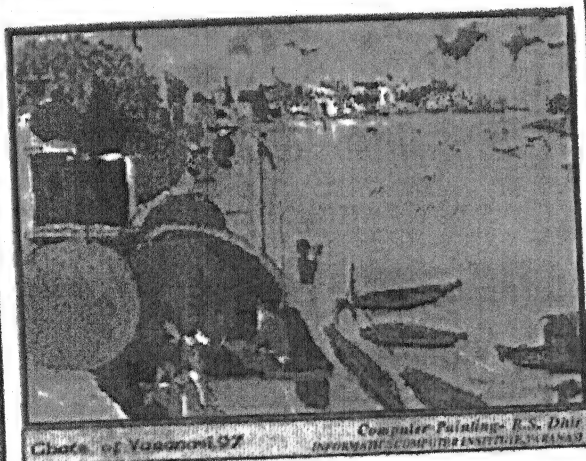
COMPUTERISED PAINTING EXHIBITION

AND

SALE

PAINTER

PROF. R.S. DHIR

Date : 22nd to 30th September, 1997

Place : Mahatama Gandhi Art Gallery, NCZCC

Time : Daily from 11.00 a.m. to 6.00 p.m.

ORGANISED BY

NORTH CENTRAL ZONE CULTURAL CENTRE,
ALLAHABAD

Prof. R.S. Dhir
Master of Fine Arts, Gold Medalist
Banaras Hindu University, Varanasi

Specialization :
Water Colour & Oil.

Academic Participations :

Participated in various All India Exhibitions Including National Exhibition of Art, A. I. F. A. C. S. Indian Academy of Fine Arts – Amritsar, Birla Academy of Fine Arts – Calcutta, Mahakoshal Kala Parishad – Raipur.

1971 - Praticipated in the 1st All India Sequential Autumn School for Teachers organised by Indian Society for Technical Education Board, New Delhi, & Sir J.J. Institute of applied Art - Bombay.

1972 Participated in Painting Artists Camp held at Dehradun organised by State Lalit Kala Academy, U.P.

1987 - All India Artist Camp organised by Central Lalit Kala Academy, New Delhi at Kala Kendra Lucknow.

1988 - Participated in Painters' Camp at Nawabganj Unnao, organised by U.P. State Lalit Kala Academy, Lucknow.

Awards :

Governor's Award (for the best Exhibit) 1969- W.C. Painting.
Indian Academy of Fine Arts, Amritsar.
Governor's Award (For the best Exhibit) 1977 - W.C. Painting.
Indian Academy of Fine Arts, Amritsar.
Academy's Award – 1971, Oil Painting,
Academy of Fine Arts, Calcutta
Academy's Award, 1971, Painting.
The State Lalit Kala Academy U.P., Lucknow.
All India Exhibition, Jaipur and New Delhi - 1993

Presented a number of solo exhibtions in major cities like Varanasi, Lucknow, Calcutta, Bhopal & Kathmandu in Nepal. Participated in Group shows at Varanasi, Lucknow & Delhi.

Computer Painting by Prof. Dhir

1. Composition (B/w)
2. Sunday Study
3. Amber Nath
4. Fisher Women (B/W)
5. Holy City
6. Noon
7. Green Field
8. Indian Village
9. Himalaya I
10. Computer Room
11. Village Outing
12. Sunset
13. Kashi Ghats
14. Refreshment Time
15. Himyalaya II
16. Ganesh I
17. Ganesh II
18. Ganesh III
19. Colour Composition
20. Himalaya in relief (B/W)
21. Himalaya (B/W)
22. Himalaya (B/W)
23. Cow in Farm
24. Dinning Room
25. Rocky Land Scape
26. Mount. Everest
27. Ganesh in relief (B/W)
28. Fields in relief (B/W)
29. Cow in farm
30. Holy City III
31. Kashi Ghats in Curve
32. Thinking mood
33. Hut in (B/W)
34. Lady on table (B/W)
35. Shivlinga
36. Landscape in blue
37. Landscape I (B/W)
38. Landscape II (B/W)
39. Fields
40. Neelkanth
41. Sabzi wali
42. Meditation
43. Ganesh IV
44. Mahaling
45. Shivlingas
46. Reflection
47. Vat pooja
48. Clouds
49. Entertainment time (B/W)
50. Dizling
51. Composition.

Contribution Price :

For B/W	Rs. 800/-
Colour	Rs. 1000/-

मध्योत्तरी
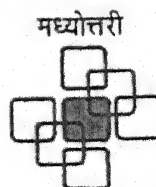
North Central Zone Cultural Centre
14, C.S.P. Singh Marg, Allahabad
Phone : 623720, 622833
Fax : (0532) 623720

मध्योत्तरी
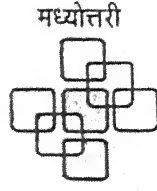
उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, इलाहाबाद

द्वारा

स्वतंत्रता की स्वर्ण जयंती
के कार्यक्रमों की श्रृंखला

में

माह सितम्बर के विभिन्न पृष्ठांकित कार्यक्रमों में
आप सपरिवार सादर आमंत्रित हैं।

निवेदक
रीता सिन्हा
आई०ए०एस०
निदेशक

नोट: राष्ट्रीय शोक के कारण 13 सितम्बर [illegible] के नाटक 'अफीम के फूल' की प्रस्तुति 16 सितम्बर को सायं 6.30 बजे होगी।
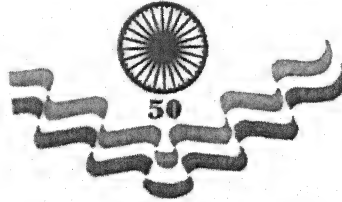
स्वर्ण जयंती के कार्यक्रमों की श्रृंखला में माह सितम्बर, 97 के कार्यक्रम

तिथि एवं समय	कार्यक्रम	स्थान
9 से 29 सितम्बर प्रातः 11 बजे से अपराह्न 1 बजे तक	भारतेंदु हरिश्चंद्र को समर्पित विकलांग बच्चों की रंग कार्यशाला	विकलांग केन्द्र, भारद्वाज आश्रम, जवाहर लाल नेहरु रोड, इलाहाबाद
10 सितम्बर सायं 6.30 बजे	"जवाबी कजरी" रानी सिंह बनाम सनाउल्ला खां	सांस्कृतिक केन्द्र प्रेक्षागृह (निकट सर्किट हाउस) इलाहाबाद
11 सितम्बर सायं 6.30 बजे	नाटक - तिलकहरू संस्था - सोनचिरई लोक नाट्य संस्थान निर्देशन - राधेश्याम ठाकुर	सांस्कृतिक केन्द्र प्रेक्षागृह
12 सितम्बर सायं 6.00 बजे	स्व० महादेवी वर्मा की पुण्य स्मृति में व्याख्यान- डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी अंतरंग संस्मरण-डा० राम जी पाण्डे	महात्मा गांधी कला वीथिका केन्द्र परिसर (निकट सर्किट हाउस)
13 सितम्बर, सायं 6.30 बजे	नाटक - "अफीम के फूल" संस्था - आधारशिला निर्देशक - श्री कौशल शुक्ला	सांस्कृतिक केन्द्र प्रेक्षागृह, (निकट सर्किट हाउस)

P.T.O.

14 से 21 सितम्बर उद्घाटन 14 सितम्बर सायं 6.00 बजे तत्पश्चात प्रतिदिन-पूर्वाह्न 11 बजे से सायं 7 बजे तक	हिन्दी दिवास को समर्पित 'चित्र प्रदर्शनी' 'हिन्दी साहित्य की उज्वल विभूतियां'' चित्रकार - बी०के० दुबे	महात्मा गांधी कला वीथिका केन्द्र परिसर, (निकट सर्किट हाउस)
15 सितम्बर सायं 6.00 बजे	पद्ममभूषण डॉ० रामकुमार वर्मा के जन्म दिवस पर (शताब्दी वर्ष) व्याख्यान (i) व्यक्तित्व एवं कृतित्व डॉ० राजेन्द्र कुमार (ii) वर्मा अन्तरंग संस्मरण- डॉ० राज लक्ष्मी वर्मा	महात्मा गांधी कला वीथिका केन्द्र परिसर, (निकट सर्किट हाउस)
19 सितम्बर सायं 6.30 बजे	**नाटक - पलटी धारा** संस्था - एकता निर्देशन - अफ़जल खांन	सांस्कृतिक केन्द्र प्रेक्षागृह, केन्द्र परिसर (निकट सर्किट हाउस)
22 सितम्बर सायं 5 बजे,	व्याख्यान - **'कम्प्यूटर पेंटिंग विधा'** प्रो० आर०एस० धीर	महात्मा गांधी कलावीथिका केन्द्र परिसर, (निकट सर्किट हाउस)
22 से 30 सितम्बर, तक उद्घाटन **22 सितम्बर** सायं 6.00 बजे तत्पश्चात **30 सितम्बर** तक प्रदर्शनी प्रतिदिन पूर्वान्ह 11 बजे से सायं 7 बजे तक	प्रो० आर०एस० धीर द्वारा निर्मित कम्प्यूटर चित्रों की प्रदर्शनी एवम् विक्रय	महात्मा गांधी कलावीथिका केन्द्र परिसर, (निकट सर्किट हाउस)
23 से 28 सितम्बर प्रतिदिन पूर्वाह्न 11 बजे से सायं 7 बजे तक	राजस्थान के हस्तशिल्प की प्रदर्शनी एवं विक्रय (i) बाड़मेरी चादरें एवं शाल (ii) बंधेज की साड़ियां	महात्मा गांधी कलावीथिका, केन्द्र परिसर (निकट सर्किट हाउस)

P.T.O.

23 सितम्बर सायं 6.30 बजे	**राजस्थान के लोकगीत एवं नृत्य** कलाकार – पारसदुलारी बाई थाली नृत्य (कोटा) सांगड़िया (भवई नृत्य) (बाड़मेर) (सागीलाल एवं मांगी भाई मांडगायन (उदयपुर)	सांस्कृतिक केन्द्र, प्रेक्षागृह (निकट सर्किट हाउस)
27 सितम्बर सायं 6.30 बजे	**नाटक - ''क्रांति की मसाल''** संस्था - भारत सेवक समाज निर्देशक - गोविन्द बिहारी	सांस्कृतिक केन्द्र, प्रेक्षागृह (निकट सर्किट हाउस)
30 सितम्बर सायं 6.30 बजे	**नाटक - ''अंधेर नगरी''** विकलांग केन्द्र के बच्चों की रंगशाला में तैयार प्रस्तुति निर्देशक - शशिकांत शर्मा	सांस्कृतिक केन्द्र, प्रेक्षागृह (निकट सर्किट हाउस)

इलाहाबाद से बाहर के कार्यक्रम

8 सितम्बर, 97 सायं 6.30 बजे	**ताल वाद्य कचेहरी एवं कथक नृत्य** प्रस्तुति भातखण्डे संगीत महाविद्यालय, लखनऊ	राय उमानाथ वली प्रेक्षागृह, लखनऊ
19 सितम्बर से **1 अक्टूबर तक**	जनजातीय पर्व	राजस्थान, मध्य प्रदेश एवं बिहार के चयनित स्थलों पर
26 सितम्बर से **29 सितम्बर तक**	**कथक नृत्य पर व्याख्यान सह प्रदर्शन** कुमकुमधर एवं श्री धर्मनाथ मिश्र	पटना बिहार

इक्कीसवीं सदी की ओर चित्रकला

○ घनश्याम रंजन

चित्रकार चित्र क्यों बनाता है ? मूर्तिकार मूर्ति क्यों बनाता है ? संगीतकार संगीत की धुनें क्यों बनाता है ? इसलिए नहीं कि उसके पास और कोई काम नहीं है। वास्तव में इसके पीछे एक कारण है, वह है सम्प्रेषण की व्याकुलता। वह अपनी रचना के माध्यम से अपने अनुभवों और विचारों को सम्प्रेषित करना चाहता है। वह चाहता है कि अन्य लोग, दर्शक उसकी भावनाओं से परिचित हों। हो सके तो उसकी भावनाओं से सहमत भी हों और लोहा मानें। इसलिए चित्रकार अपने चित्रों की प्रदर्शनी भी करता है और वह यह भी चाहता है कि प्रदर्शनी से उसकी कृतियों की बिक्री भी हो। क्योंकि चित्र बनाने से लेकर प्रदर्शनी करने तक वह जितनी धनराशि, समय और श्रम का त्याग करता है निश्चित रूप से उसका फल भी चाहता है। वह फल उसकी प्रसिद्धि भी हो सकती है। प्रसिद्धि के लिए कलाकार नये-नये प्रयोग करने और लीक से हटकर सृजन करने में भी क्रियाशील रहते हैं, चिंतनशील रहते हैं। मैंने एक जगह लिखा है कि क्रियाशीलता ही शैली, विषय और विचारों को नया मोड़ देती है, माध्यम कोई भी हो सकता है।

इधर चित्रकार आर.एस. धीर ने इसी क्रियाशीलता के चलते अपनी रचनात्मकता को कम्प्यूटर से जोड़ दिया। इस प्रकार से चित्रों का निर्माण करके धीर ने जलरंग, तैलरंग और ब्रुश एवं कैनवस को ताक में रख दिया है। श्री पी.सी. लिटिल ने प्रदर्शनी के परिचय पत्र में लिखा है--"जब कैमरे का आविष्कार हुआ तो बर्नार्ड शॉ ने पेंसिल, रंग और ब्रुश की भूमिका को समाप्तप्राय मान लिया था। पर इन साधनों की भूमिका अभी तक उतनी ही महत्वपूर्ण बनी रही है। चित्र विभिन्न वादों और शैलियों से गुजरते हुए सैकड़ों वर्षों के बाद भी आज अपना अस्तित्व बनाए हुए हैं। कलाकार विभिन्न प्रयोग करते हुये आज पुश-बटन युग में प्रवेश कर गया है और यहाँ आकर शॉ के कथन की वास्तविकता कैमरा तो नहीं, कम्प्यूटर के रूप में चरितार्थ होती लगती है।

यह चरितार्थ की है आर.एस. धीर ने। उनके कम्प्यूटर से निर्मित चित्रों की प्रदर्शनी करने का श्रेय नगर की सृष्टि आर्ट गैलरी को जाता है। धीर ने कम्प्यूटर से कैसे चित्र रचे हैं इस पर बात करने से पहले यह समझ लिया जाये कि कम्प्यूटर क्या है।

यूं तो आज से दस वर्ष पूर्व कम्प्यूटर पर चित्रों की रचना करने की सूचना भारतवर्ष में आ चुकी थी और उस पर छिटपुट चर्चाएं आपस में हुई भी थीं। परन्तु उसे किसी ने इतनी गम्भीरता से नहीं लिया था। क्योंकि तब तक भारत ने कम्प्यूटर युग में प्रवेश नहीं किया था। कम्प्यूटर शब्द अंग्रेजी के आठ शब्दों के पहले अक्षरों को मिला कर गढ़ा गया है। ये शब्द हैं-- कॉमन आपरेटिंग मशीन पर्टीकुलरली यूज्ड फॉर ट्रेड, एजूकेशन ऐण्ड रिसर्च। प्लास्टिक के एक चूहे को हाथ में पकड़ कर रबर के पैड पर चलाया जाता है। माउस एक इनपुट डिवाइस है। पी.बी. विंडो के माध्यम से प्रिंट बाक्स में रंग पहुंचाकर रंग करवाया जाता है। धीर ने बहुत परिश्रम से इस चूहे पर अधिकार जमाया और इच्छित आकार-प्रकार की रेखाएं और रंगों का संसार सृजित किया। इस सृजन में निदेशक, इन्फॉरमेटिक कम्प्यूटर इंस्टीट्यूट, वाराणसी ने अपने तकनीकी मार्ग दर्शन से सहयोग दिया।

यह विचारणीय बात है कि धीर ने जिस प्रकार की चित्र रचना की है, उसमें उनके हस्ताक्षर पहचाने जा सकते हैं अर्थात उन्होंने जिस प्रकार के पेपर कोलॉज किये थे, या स्टिल लाइफ के चित्र तैल रंगों में सृजित किये थे, या वाराणसी के घाट के प्रतीकों का इस्तेमाल जिस ढंग से अपने चित्रों में करते आये थे, वे सब कुछ परिवर्तित स्वरूप में कम्प्यूटर के इन चित्रों में उपस्थित थे और वे दूर से ही 'धीर का चित्र' होने का दम्भ भरते थे। यह धीर की बहुत बड़ी सफलता थी। इन चित्रों में जलरंगों और तैलरंगों की जैसी संवेदनशीलता तो थी ही, रंगों के हल्के और गाढ़े प्रभाव के साथ ही उनमें छाया-प्रकाश की भी अद्भुत उपस्थिति थी जो दृश्य चित्रों में विशेष रूप से दिखाई दी। प्रदर्शनी में दो चित्र श्याम-श्वेत थे और सभी चित्रों से उनकी शैली भिन्न थी। चित्रों के रेखांकन का प्रभाव 'लो रिलीफ' जैसा था। जैसे नाखून से बनाये गये चित्र में होता है। परन्तु वह लो रिलीफ या उभरापन उनमें नहीं था, प्रभाव था।

कम्प्यूटर की नवीनतम तकनीक के उपयोग के बावजूद आकृति को तोड़ने का प्रयास उन्होंने नहीं किया। उनकी अधिकतर अभिव्यक्तियाँ गणेश और शिव से सम्बन्धित मिथक कथाओं के आसपास घूमती रहीं। यह तो हो ही नहीं सकता कि काशी में रहने वाला कलाकार सांड़ के पास से होकर न गुजरता हो। और सांड़ का भद्र होना उसे न प्रभावित कर पाया हो। यह तो काशी के सांड़ ही हैं जिनसे आदमी नहीं डरता है। धीर ने अपने चित्रों में इन सांड़ों की उपस्थिति को भी नहीं नकारा है।

जैसे व्यक्तियों के रंग की पसंद के आधार पर उनकी रुचि और स्वभाव की परिकल्पना कर ली जाती है, वैसे ही चित्रों को देख-समझकर कलाकार की मानसिक स्थिति और उसकी रुचियों और आस्थाओं को जाना जा सकता है। उसके लिए प्रश्न उठ सकते हैं कि चित्रकार ने इन विषयों पर चित्र क्यों बनाए ? उनके बनाने का आशय क्या है ? क्यों नहीं उसने कोई अन्य विषय चुने ? धीर के इन चित्रों के विषय देखकर उनके भीतर छिपी आस्था का पता लगता है। वह आस्था उनके जीवन का मेरुदण्ड हो सकती है क्योंकि गणेश, शिव, श्रीकृष्ण, गंगा और वहाँ के घाट उनके प्रारम्भ के चित्रों में भी स्थान पाते रहे हैं और उनकी उपस्थिति उनके चित्रों में निरन्तर बनी ही हुई है। वह अपने चित्रों के माध्यम से अपनी इस आस्था को ही सम्प्रेषित करना चाहते हैं या हो सकता है उन्होंने इन सभी विषयों के जो आकार गढ़े हैं उन आकारों को वह छोड़ना नहीं चाहते हैं या आकार स्वयं उनके मस्तिष्क में इतनी गहराई तक जड़ें जमा चुके हैं कि वह स्वयं नहीं निकल पाते। मगर ये आकार और उनके संयोजन धीर की पहचान अवश्य बने हुए हैं।

धीर वाश शैली के प्रख्यात चित्रकार बद्रीनाथ आर्य के शिष्य रहे हैं। पर धीर का कहना है कि उन्होंने उनकी शैली का प्रभाव अपनी चित्रकला पर नहीं पड़ने दिया। विपरीत इसके अपनी स्वयं की कला शैली विकसित की। उनसे जब प्रश्न किया कि कम्प्यूटर से चित्र बनाने का विचार उनके मन में कैसे आ गया तो उनका उत्तर था मेरा दिमाग नई खोज में चलता रहता है। मेरा कला जीवन इसका साक्षी है। माउस से जो चित्र तैयार किये हैं उनके लिये मैंने पहले से कोई आरेख नहीं किये। सीधे स्क्रीन पर सब कार्य किया है। यह एक नई चीज है, नई एप्रोच है और सफल है। इसमें कितनी ही सम्भवनाएं भी हैं।

मगर इन सम्भावनाओं को काबू करने के लिए निरन्तर क्रियाशीलता भी बनाए रखनी पड़ेगी। इतनी कृतियाँ तैयार करने में उन्हें कितनी दिमागी कसरत करनी पड़ी होगी। कितनी परिकल्पनाओं को स्क्रीन पर समेटना पड़ा होगा। इसका अनुमान लगाना सहज नहीं लगता। फिर भी जो उपलब्धियाँ सामने आई हैं। वह कला जगत को चौंकाने वाली अवश्य हैं। साथ ही चित्रकला को इक्कीसवीं सदी की ओर ले जाने में अगुआई करती लगती हैं।

❑ पता : 65, कैण्ट रोड, उदयगंज, लखनऊ - 226 001

Exhibition '98
Computer Paintings
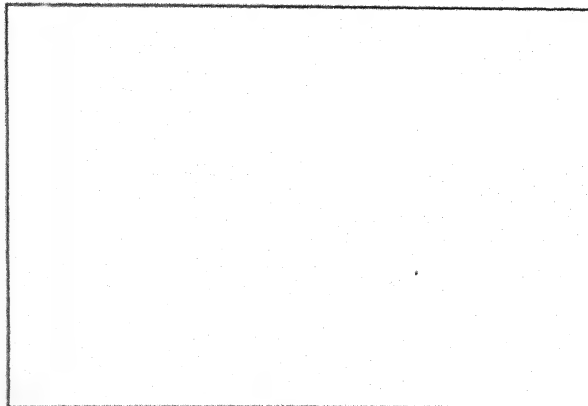
By

R.S. Dhir

(From March 1st. to 10th. 1998.)

at

Shristi Art Gallery

65, Laxman Puri, Lucknow-226 016.

Prof. R.S.Dhir

Master of Fine Arts (M.F.A.) First Class First with Gold Medal , Banaras Hindu University,Varanasi

Academic Participation's :

-Participated in various All India Exhibitions including National Exhibition of Art ,Academy of fine Arts, Calcutta ,Bombay Art Society Bombay, Hyderabad Art Society,A.I.F.A.C.S. New Delhi, Indian Academy of Fine Arts,Amritsar , Birla Academy of Fine Arts, Calcutta , Mahakoshal kala Parishad ,Raipur.

-1971 Participated in the First all India Sequential Autumn for Teachers organized by Indian Society for Technical education Board, New Delhi . At Sir J.J.Institute of applied Arts , Bombay . State Lalit Kala Academy, Lucknow.

Camps :

-1972 Participated Painting artists Camp held at Dehra-Dun organized by State lalit kala Academy , Lucknow

-1986 Participated in the All India Painters/Writers camp held at Allahabad ,organized by Department of Cultural affairs Uttar Pradesh Lucknow .

-1987 All India Artist Camp organized by Central lalit Kala Academy New Delhi ,at Kala Kendra Lucknow .

-1988 Participated Painters Camp at Nawabganj Unnao organized by U.P. State lalit Kala Academy , Lucknow .

-1988 Participated All India painters Camp at Kanpur organized by Human Resources Education Dept. New Delhi

-1991 All India Painters Camp at Jalandhar (Punjab) organized by Department of Cultural Punjab .

-1992 All India Painters Camp held at Sarnath Varanasi organized by Cultural Lalit Kala Academy Ravindra Bhawan New Delhi .

-1994 All India Painters Camp at U.P., Lalit Kala Academy, Lucknow organized by North Zone Cultural Center Allahabad .

Awards

-Silver Medal - 1961 :Oil Painting All India Mysore Dussera Exhibition , Myssore .

-Gold Medal (For the best Exhibit)-1962 -W.C. Painting) -All India Myssore Dussera Exhibition , Myssore

-Award-1967: U.P. Artist Association ,Lucknow.

-Governor's Award (For The Best Exhibit)1968 W.C. Painting All India Exhibition , Indian Academy Of Fine Arts Amritsar.

-Governor's Award (For The Best Exhibit)1969 W.C. Painting All India Exhibition Indian Academy Of Fine Arts Amritsar.

-Academy's Award, 1971-Oil Painting All India Exhibition Academy Of Fine Arts Calcutta.

-Academy's Award,1971-Painting State Lalit Kala Academy ,Lucknow.

-The Best Exhibit Award,1974, W.C. Painting All India Exhibition Rajahmundry A.P.

-The Best Exhibit Award, (The Golden Jubilee) 1976, W.C. Painting All India Exhibition Rajahmundry A.P.

-Gold Plaque 1977 (For The Best Exhibit) Painting, All India Exhibition Mahakoshal Kala Parishad Raipur M.P.

-Governor's Award (For The Best Exhibit)1977 W.C. Painting All India Exhibition Indian Academy Of Fine Arts Amritsar.

-The Golden Jubilee Prize 1979,W.C. Painting ,All India Exhibition ,Indian Academy Of Fine Arts Amritsar.

-The Best Exhibit Award W.C. Painting 1980,All India Exhibition Indian Academy Of Fine Arts Amritsar

-1993.Award All India Exhibition on Ramayana. At Jaipur

-1993.Award All India Exhibition on Jag Jeewan Ram, At Lalit Kala Academy New Delhi..

Solo Exhibitions And Group Shows-
-More Then Thirty one Solo And Group Shows In, Major Cities Of India And Abroad.
Position Held-
-Senior Reader
-Head Of Department Faculty Of Visual Arts B.H.U., Varanasi 1984-87,1989-91 & 1992-95.
-Member Of The Scholarship & Purchase Committee.
-U.P. Lalit Kala Academy Lucknow.
-Banaras Hindu University, Varanasi.
-Bharat Bhawan Bhopal.
-Member Of U.P. State Lalit Kala Academy 1993 to 98.
Expert -
-U.P.S.C. New Delhi 1986 & 88.
-Kanpur University Kanpur.
-Gorakhpur University Gorakhpur.
-College Of Arts Shimla University.
-Dayalbagh University Agra.
Member of Board of Studies ,Research and Examinations :
-Jaipur University, Jaipur.
-Allahabad University, Allahabad.
- Kanpur University ,Kanpur.
-Rohilkhand ,University.
-Bhopal University, Bhopal.
-Indore University ,Indore.
-Aligarh University , Aligarh.
-Punjab University ,Punjab.
-Chandigarh University , Chandigarh.
Publications :
-Published in many Indian Newspapers and Magazines.
Collections In Many Impo. Galleries in India, Govt. House Lucknow, and Personal Collections in India and Abroad.

Presently : Freelance Artist
Residence : D 53/90 Narain Nagar Luxa
Varanasi-221002
Tel.No. : 355070 (Resi.)
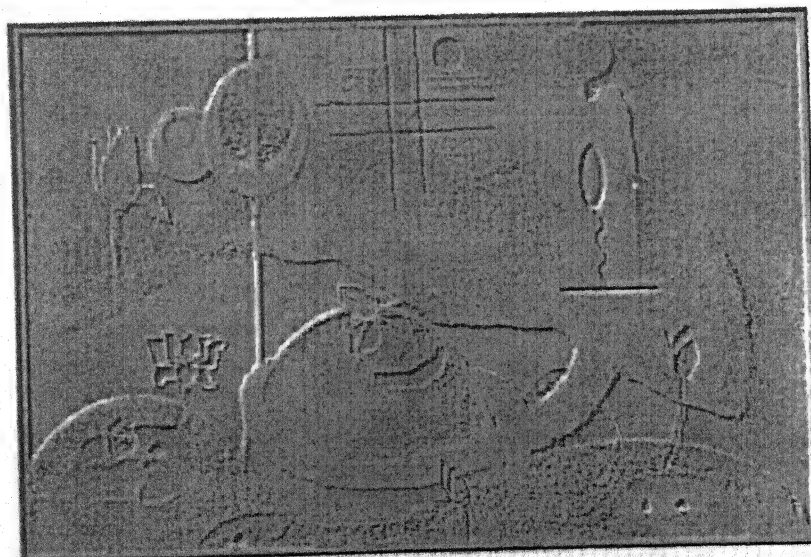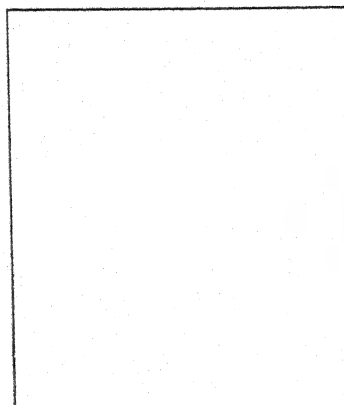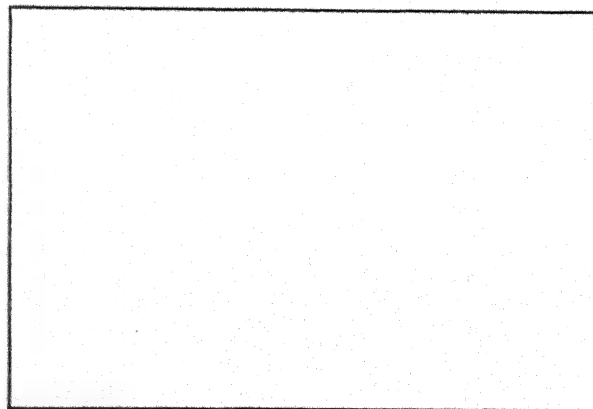
It may be called the coming of age in the world of art.While the world breathlessly watched the turns and twists in the terbulent waters of visual expression disturbed by the birth of 'camera art',Bernard shaw's 'hopelessly beaten pencil,paint and brush' still breathed and lived , and against the prophecy of de-la-roche is yet to die, even though it is over a century now. From the naturalism of ingres and rubens that made one feel like touching, to Degas's vanishing contours,Mondrian's diversion towards reduced elements to Duchamp's nude descending the stairs in stroboscopic sequence, or from Dali's dreamland to Picasso's veronica, the past hundred years have indeed seen a fast forward play, as if a TV screen sat for channel scan. The artist,explorer by nature, leaving no stone unturned, appears to have really arrived the modern press -button age. It may be now that Shaw's pencil, paint and brush are really under a threat posed by the plastic mouse crawling on a rubber pad and the colours oozing out of the chip-fed paint box, instead of leaden tubes that one loved to squeez.It is definitely a new world. New, new, new!! to its infinite horizons.

The artist must live by his times, that is an ages old dictum. Dhir, in past forty years , has been going through a constant change and evolution. From water colour wash to oils, to collages and drawings, his unsatisfied urge never tarried to rest. It has been like caterpillar to cocoon in hibernation to emerge as colourful butterfly, going from flower to flower, to lay down a new cycle of larvae to chryselis. Fascinated by the time in which he is living, this time he has switched from paint and brush to chip controlled paint-box, where he can watch his mental vision coming to life on the monitor screen, forms, colours and all. He has found for himself a new world to live.

Lucknow,U.P. **Prof. P.C. Little**
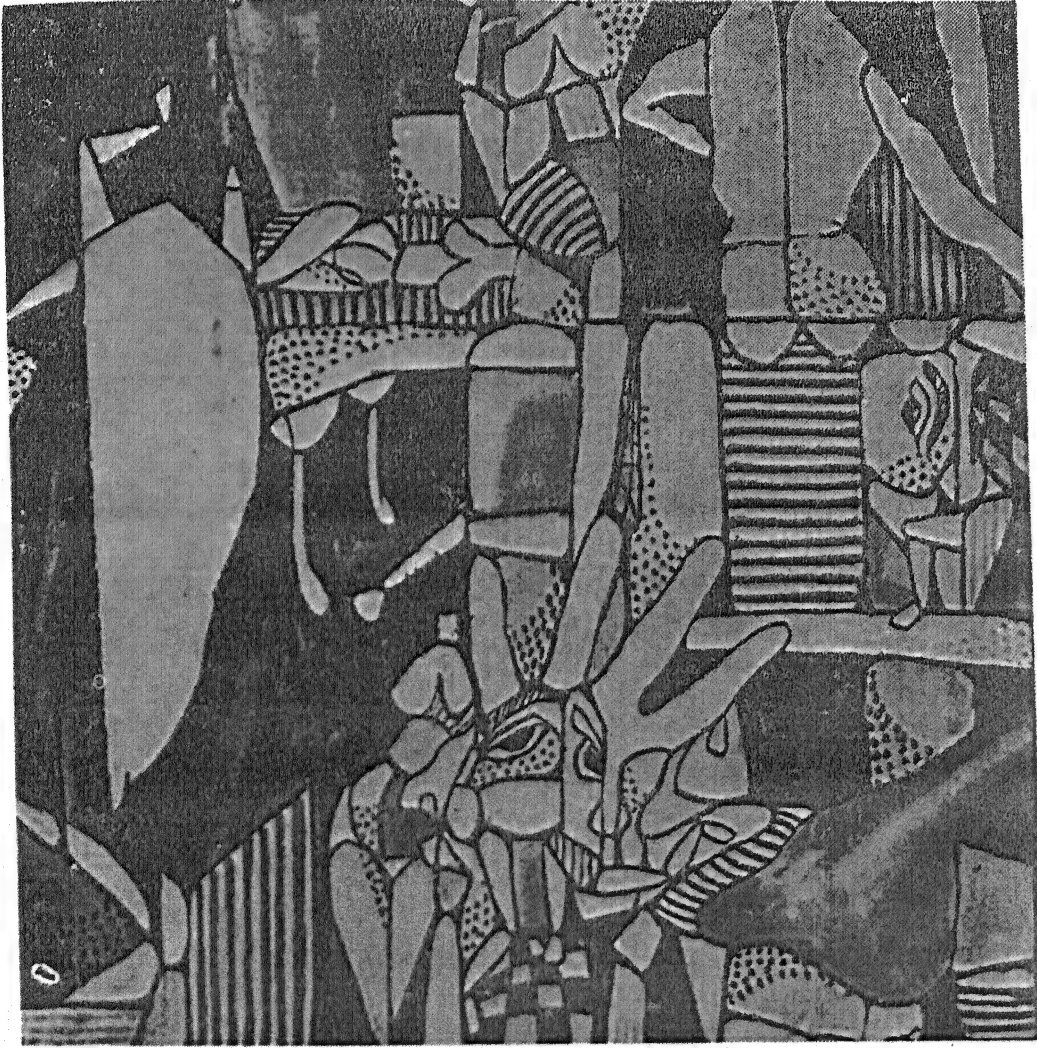
वाराणसी के कलाकारों की कृतियों की प्रदर्शनी

राज्य ललित कला अकादमी, उत्तर प्रदेश द्वारा आयोजित

विषय सूची

नाम	कृति का नाम	माप (सेमी० में)	माध्यम	मूल्य
अमर नाथ शर्मा	१—गणेश	५१ × ६२	तैल	२००/-
	२—आकृतियाँ	३८ × ५८	,,	२००/-
अमूल्य मुकर्जी	३—गाय घाट	३५ × ५२	टेम्परा	अविक्रीत
	४—समुद्र का छोर	५० × ३८	,,	,,
बसन्त गोडबोले	५—संगीत नं० १	३२ × २७	,,	२००/-
	६—संगीत नं० २	२८ × २६	,,	२००/-
ए० पी० गज्जर	७—देवी शीतला	७७ × ८२	तैल	६००/-
बी० बी० चक्रवर्ती	८—नक्षत्र-२१	६५ × ८७	तैल	३००/-
	९—हरित भूमि	८८ × ६७	,,	३००/-
बी० के० शाह	१०—संयोजन नं० १	४६ × ४६	इंक	३००/-
	११— ,, ,, २	४६ × ४६	,,	३५०/-
बैज नाथ शर्मा	१२—हिंसा	६८ × ४९	तैल	अविक्रीय
	१३—मानव जय	७७ × ३२	,,	५००/-
दीपक बनर्जी	१४—निर्माण नं० १	१७ × १८	ग्राफिक	अविक्रीत
	१५— ,, ,, २	२५ × २५	,,	२५०/-
दिनेश प्रताप सिंह	१६—मुखाकृति	३८ × ३०	प्लास्टर	अविक्रीत
डी० के० दास गुप्ता	१७—संयोजन नं० १	४९ × ९७	तैल	३००/-
	१८— ,, ,, २	८८ × ९०	,,	५००/-
डी० पटनायक	१९—पक्षी	३७ × ७२	टेम्परा	३००/-
	२०—प्रतीक्षा	३६ × ७२	,,	३००/-
श्रीमती कुसुम दास	२१—संयोजन नं० १	२५ × २०	ग्राफिक	२५०/-
	२२— ,, ,, २	५० × ३८	,,	२००/-
के० वी० जेना	२३—एक प्रयोग	२० × २०	सिरेमिक	अविक्रीत
एम० अफसर	२४—प्राकृतिक न्याय	७७ × १०८	तैल	५००/-
एम० वी० कृष्णनन	२५—मूर्ति	६३ × ३२	प्लास्टिक	५००/-
रामचन्द्र शुक्ल	२६—बाँसुरी वादक	१०२ × ८१	तैल	१०००/-
आर० एस० धीर	२७—लोकाभिव्यक्ति	१४० × १०२	तैल	६००/-
	२८—लोक संगीत	१४० × १०२	तैल	६००/-
एस० के० बनर्जी	२९—इगो एण्ड सुपर इगो	६० × ७४	तैल	४००/-
	३०—जीवन के लिए	६० × ९१	तैल	३५०/-
एस० पी० कारचौधरी	३१—संयोजन	६५ × ५२	इंक	५००/-
शान्तिरंजन बोस	३२—विश्राम	३७ × ४२	टेम्परा	७००/-
	३३—समर क्वीन	५७ × ९७	तैल	७००/-
सुकान्त रुकाई	३४—कोलाज नं० ३०-ए	३७ × ५५	पेपर कट	२५०/-
बी० बी० स्मार्त	३५—आसाम के निवासी	९० × २९	टेम्परा	३००/-

regional art EXHIBITION 2002

sponsored by
UP State Lalit Kala Akademi
Lucknow

आयोजन समिति सदस्य

प्रो० मंजुला चतुर्वेदी
श्री एस० प्रणाम सिंह
डा० ए० के० सिंह
श्री आर० एस० धीर
श्री विनोद सिंह

आज हर क्षेत्र में नित नये प्रयोग हो रहे हैं कला भी इसमें अछूती नहीं। निश्चय ही कलात्मक कृति हृदय की प्रेरणा से निर्मित होती है, कलाकार की अन्तःप्रेरणा के स्वर उसकी कला से स्वतः ध्वनित होते हैं, प्रदेश के कई कलाकारों ने अपनी कलाकृतियों में असाधारण प्रतिभा और कौशल दिखाया है, ये हमारे लिए गौरव का विषय है। निश्चय ही ऐसे चित्रकारों व मूर्तकारों के प्रेरणा स्त्रोत समृद्ध रहे होंगे। ये बधाई के पात्र हैं। अच्छी कलाकृतियों के प्रदर्शन समाज को अनुप्राणित कर पवित्र संस्कार और उनकी जीवन शैली को नये आयाम देते हैं, या यों कहें समाज को एक साफ-सुथरी कला दृष्टि देते हैं। वाराणसी क्षेत्र के कई कलाकारों ने प्रदेश और देश में नये कीर्तिमान स्थापित किये हैं, अपनी रचनाओं से अलग पहचान बनाई है, निश्चय ही ये उनकी अनवरत साधना का ही प्रतिफल है।

मुझे प्रसन्नता है राज्य ललित कला अकादमी क्षेत्रीय प्रदर्शनियों के माध्यम से कला के उन्नयन में अपने सीमित साधनों से योगदान कर रही है। पिछले आयोजनों ने इन कला साधकों के अपूर्व सहयोग ने हमारा उत्साह बढ़ाया है। हमारा लक्ष्य कला के माध्यम से जीवन को सुन्दर, शान्त, संयम व समृद्ध बनाना है। भारतीय कला के यहीं मूल तत्व भी हैं।

शुभकामनाओं सहित
योगेन्द्र नाथ योगी
अध्यक्ष
राज्य ललित कला अकादमी, उ०प्र०

राज्य ललित कला अकादमी के तत्वावधान में वाराणसी में द्वितीय क्षेत्रीय कला प्रदर्शनी की प्रस्तुति वाराणसी और इस क्षेत्र के लिए रचनात्मक उपलब्धि है। निश्चित रूप से ललित कला अकादमी क्षेत्रीय कलाकारों और कलात्मक गतिविधियों को प्रोत्साहित करने की दिशा में सक्रिय रूप से प्रयत्नशील हैं । वाराणसी कला और संस्कृति का एक प्रमुख राष्ट्रीय केन्द्र है। कला के विस्तृत पटल पर दृश्य कलाओं को भी विस्तृत और विकसित करने का प्रयास वाराणसी में निरन्तर हो रहा है जिसमें संस्थानों के साथ-साथ यहां के कलाकारों की जागरूकता और भागीदारी का परिणाम विगत की अनेक प्रदर्शनियां और प्रस्तुत यह प्रदर्शनी है। इस प्रदर्शनी के लिए वाराणसी मण्डल एवं पूर्वान्चल के जिलों के और स्थापित कलाकारों के अतिरिक्त युवा कलाकारों को आमंत्रित किया गया, जिनकी कलाकृतियां सृजन के विविध आयामों और स्वरूपों को प्रस्तुत करती है। अनेक कृतियां नई सम्भावनाओं की ओर उन्मुख है तो कुछ हमारी मान्य परम्पराओं और स्थापित मूल्यों के गौरव की साक्ष्य हैं।

इस प्रदर्शनी की सफलता की कामना करते हुए मैं राज्य ललित कला अकादमी उ० प्र० तथा अन्य सभी के सहयोग के लिए धन्यवाद देती हूँ, तथा कलाकारों की सृजनशीलता और उनके मन्तव्य की पूर्णता की कामना करती हूँ।

प्रो० मंजुला चतुर्वेदी
संयोजक
क्षेत्रीय कला प्रदर्शनी, वाराणसी
अध्यक्ष, ललित कला विभाग, म० गा० का० वि० पी०

EXHIBITION OF THE WORKS OF 57 ARTISTS OF UTTAR PRADESH

ORGANISED BY

GUJARAT STATE LALIT KALA AKADEMI ■ UTTAR PRADESH STATE LALIT KALA AKADEMI

PAINTINGS

Amar Nath Sharma

1. Blue Soul
   Oil 57×53 cm — 500

A. P. Gajjar

2. Draught
   Colour Ink (Drawing) 77×77 cm — 500

Asad Ali

3. Cosmogony
   Oil 85×67 cm — 600

Baladutt Pandey

4. The Swing
   Oil 91×60 cm — 500

B. B. Chakravorti

5. *The City Life
   Oil 85×67 cm — NFS

B. N. Arya

6. Exhilaration
   Water colour (wash) 61×101 cm — 2000

B. Roy Choudhury

7. Village Composition
   Oil 61×92 cm — 500

D. K Das Gupta

8. Symbol
   Oil 66×80 cm — 400

G. N. Chaturvedi

9. *Prisoner
   Water colour 54×76 cm — NFS

Gopal Krishna

10. Sailor's family
    Oil 92×112 cm — 400

Gopal Madhukar Chaturvedi

11. Broken Dream
    Oil 89×59 cm — 500

H. L. Merh

12. *Painting
    Water colour 38×27 cm — NFS

Jagdish Gupta

13. A Grip on moon
    Oil 62×47 cm — 500

M. L. Nagar

14. City
    Oil 90×61 cm — 600

N. Khanna

15. Baptism
    Pen and Ink (drawing) 54×35 cm — 350

N. N. Roy

16. Time and Tide
    Oil 100×90 cm — 1000

Pammi Lal

17. *Ekadasi
    Oil 92×92 cm — NFS

P. C. Little
18. Composition
    Ink on paper 27×35 cm — 250

Prokash Karmakar
19. The Post of the Devil
    Oil 52×72 cm — 1000

Rathin Mitra
20. Bloodbath in Bangla Desh
    Oil 110×78 cm — 600

R. C. Sathi
21. *Ambapole
    Water colour 37×30 cm — NFS

R. C. Shukla
22. Composition
    Oil 61×144 cm — 1200

R. S. Dhir
23. The Fish
    Oil 92×123 cm — 900

R. S. Bisht
24. *Landscape
    Oil 89×120 cm — NFS

Sanat Chaterjee
25. Study Hour
    Water Colour (Wash) 37×27 cm — 500

Satish Chandra
26. *Through the wood
    Water colour 72×54 cm — NFS

Satyasebak Mukherjee
27. Radha and Krishna
    Oil 60×90 cm — 500

S. Azmat Shah
28. Blushing Maiden
    Oil 90×61 cm — 500

S. Das Gupta
29. Composition
    Oil 84×95 cm — 550

Shree Muni Singh
30. Vikramorvst
    Water Colour 31×20 cm — 1000

S. P. Karchaudhury
31. Ready to siek
    Oil 90×89 cm — 600

Tahir M. Syed
32. Mood No. 127
    Oil 60×89 cm — 400

V. N. Khanna
33. Mother
    Oil 61×46 cm — 400

Vasudeo B. Smart
34. 'E' the Supreme Power
    Tempera 69×54 cm — 500

SCULPTURES

A. S. Panwar
46 Composition
    Wood 84×22 cm — 1000

I. C. P. Gupta
47. In Trouble
    Bronze 27×25 cm — 1000

J. N. Singh
48. Bird
    Wood 53×54 cm — 500

Latika Katt (Mrs.)
49. *Adolescence
    Wood 37×25 cm — NFS

Mukul Panwar
50. Totem
    Wood 95×20 cm — 500

Pawan Kumar
51. Day and Night
    Iron 49×38 cm — 250

Phool Chandra Sharma
52. Lady with Lotus
    Cement 68×30 cm — 500

Ramesh Bisht
53. Lust
    Wood 77×42 cm — 1000

Ramesh Jain
54. Fate of being True
    Wood 25×45 cm — 1000

Sudhir Khastgir
55. *Head of an Old man
    Stone 25×24 cm — NFS

Suleman Khan
56. Enemy
    Wood 40×61 cm — 600

Tapan Santikari
57. *Skipping Girl
    Wood 55×17 cm — NFS

* Exhibits from the permanent collection of the U. P. State Lalit Kala Akademi

EXHIBITS			MEDIUM
1. Landscape 84		I	Water colour
2. ,,	,,	II	,,
3. ,,	,,	III	,,
4. ,,	,,	IV	,,
5. ,,	,,	V	,,
6. ,,	,,	VI	,,
7. ,,	,,	VII	,,
8. ,,	,,	VIII	,,
9. ,,	,,	IX	,,
10. ,,	,,	X	,,
11. ,,	,,	XI	,,
12. ,,	,,	XII	,,
13. ,,	,,	XIII	,,
14. ,,	,,	XIV	,,
15. ,,	,,	XV	,,
16. ,,	,,	XVI	,,
17. ,,	,,	XVII	,,
18. ,,	,,	XVIII	,,
19. ,,	,,	XIX	,,
20. ,,	,,	XX	,,
21. ,,	,,	XXI	,,
22. ,,	,,	XXII	,,
23. ,,	,,	XXIII	,,
24. ,,	,,	XXIV	,,
25. ,,	,,	XXV	,,
26. ,,	,,	XXVI	,,
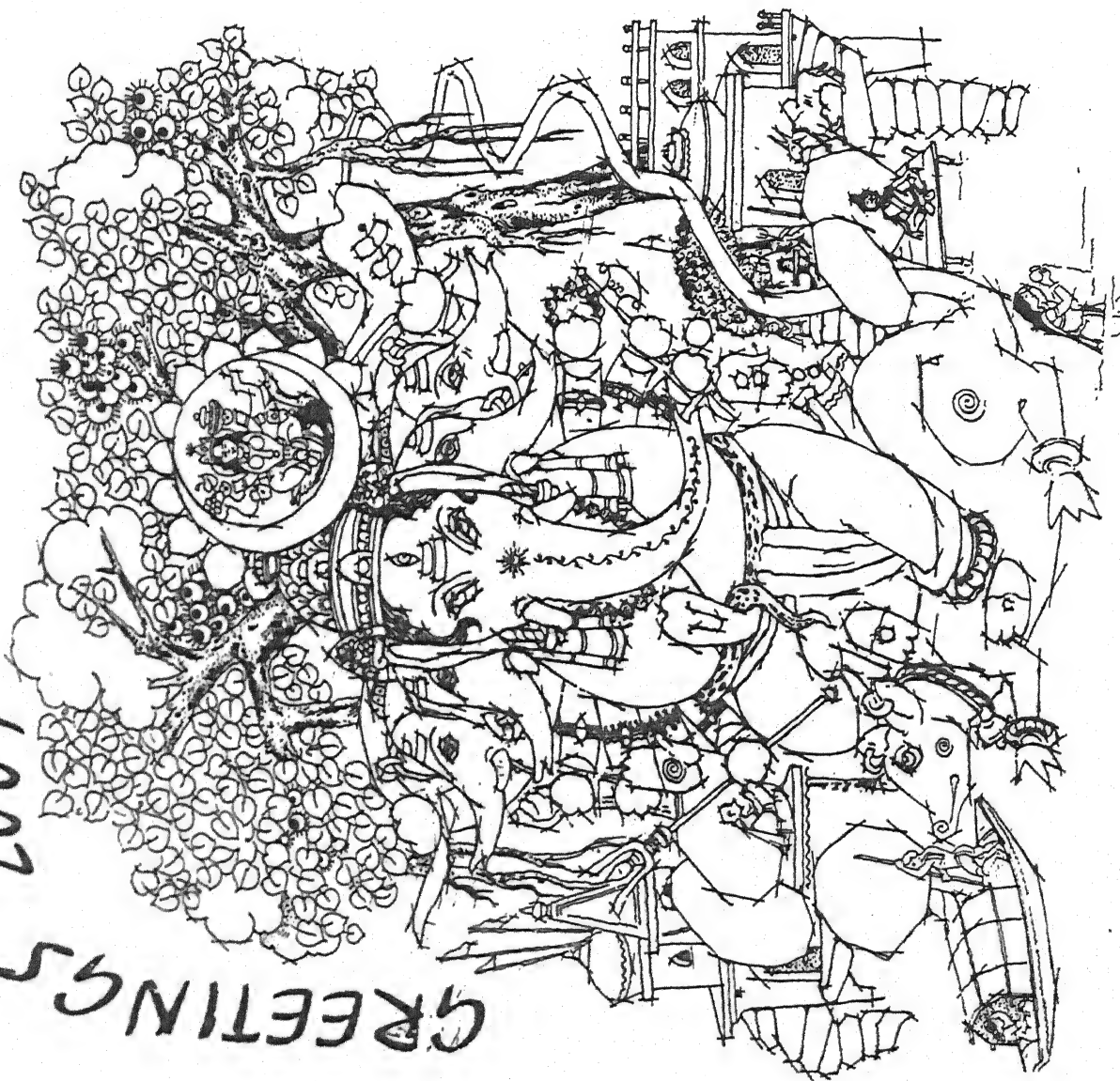
Dr. V.K.Agrawal (Chairman)
'HAPPY HOME' Education Group
Khajuri X-ing, M.A. Road, Varanasi-221002

Tel: 343328 / 510642 Fax: 348008
e-mail : happyhomevns@satyam.net.in

Sanjay Talwar & Associates
(Chartered Accountant)
Niranjan Apartment, Block A- IInd Floor - 1
Ashok Nagar, Allahabad - 201001

Tel: 420803, 420153

Prof.R.S. Dhir (Director)
HAPPY HOME School of Fine Arts
Residence : D-53/90, Naravan Nagar
Luxa, Varanasi- 221001

Tel: 355070

Drawing by : Prof. R.S. Dhir "Vision-2001"

GREETINGS 2001
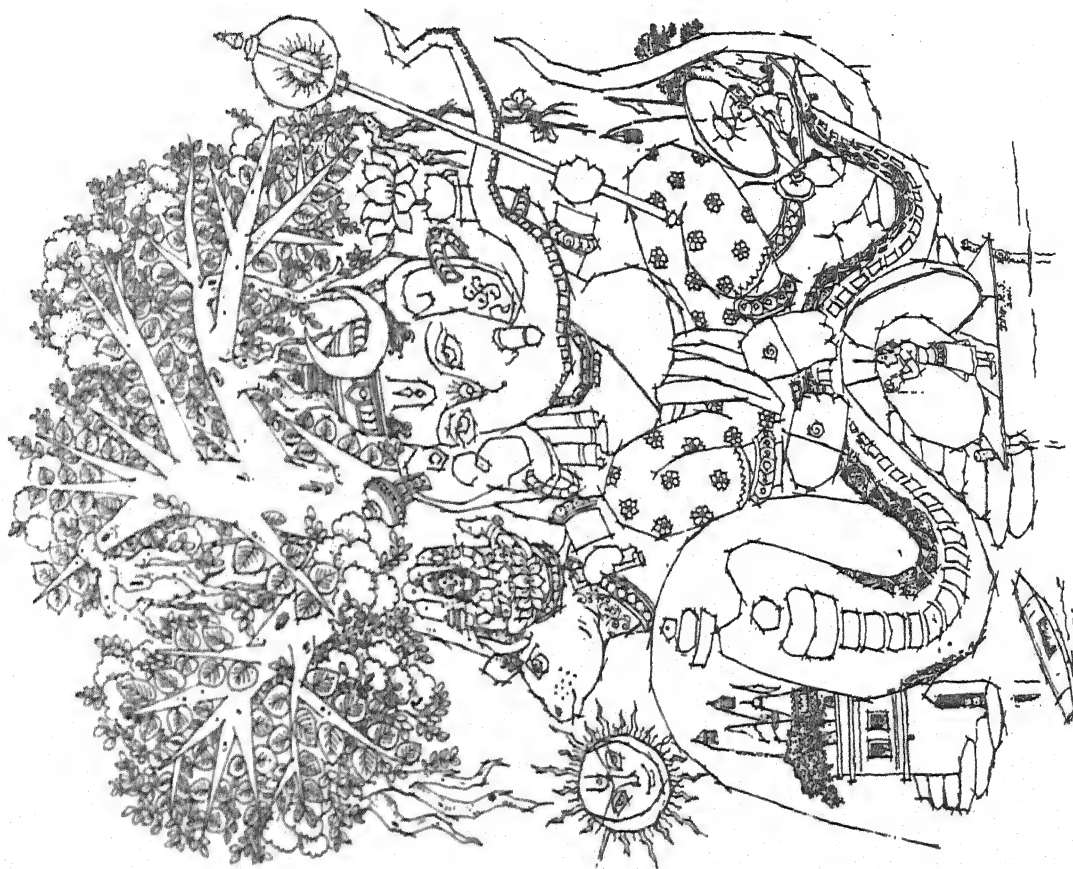
Mangal · Karan
(Drawing by Prof. R.S. Dhir)

Prof. R. S. Dhir (Director)
Happy Home School *of* Fine Arts, M. A. Road, Khajuri, Varanasi-2
Tel: 510642 Fax: 348008 e-mail: happyhomevns@satyam.net.in Tel (Resi.): 355070

Dr. Vinay K. Agrawal (Chairman)
Happy Home Education Group
M. A. Road, Khajuri X-ing, Varanasi-2 Tel: 343328 / 510642
Fax: 348008 e-mail: happyhom@sancharnet.in

Sanjay Talwar & Associates (Chartered Accountants)
Niranjan Apartment, Block A-IInd. Floor-1
Ashok Nagar, Allahabad. Tel: 420803 / 420153
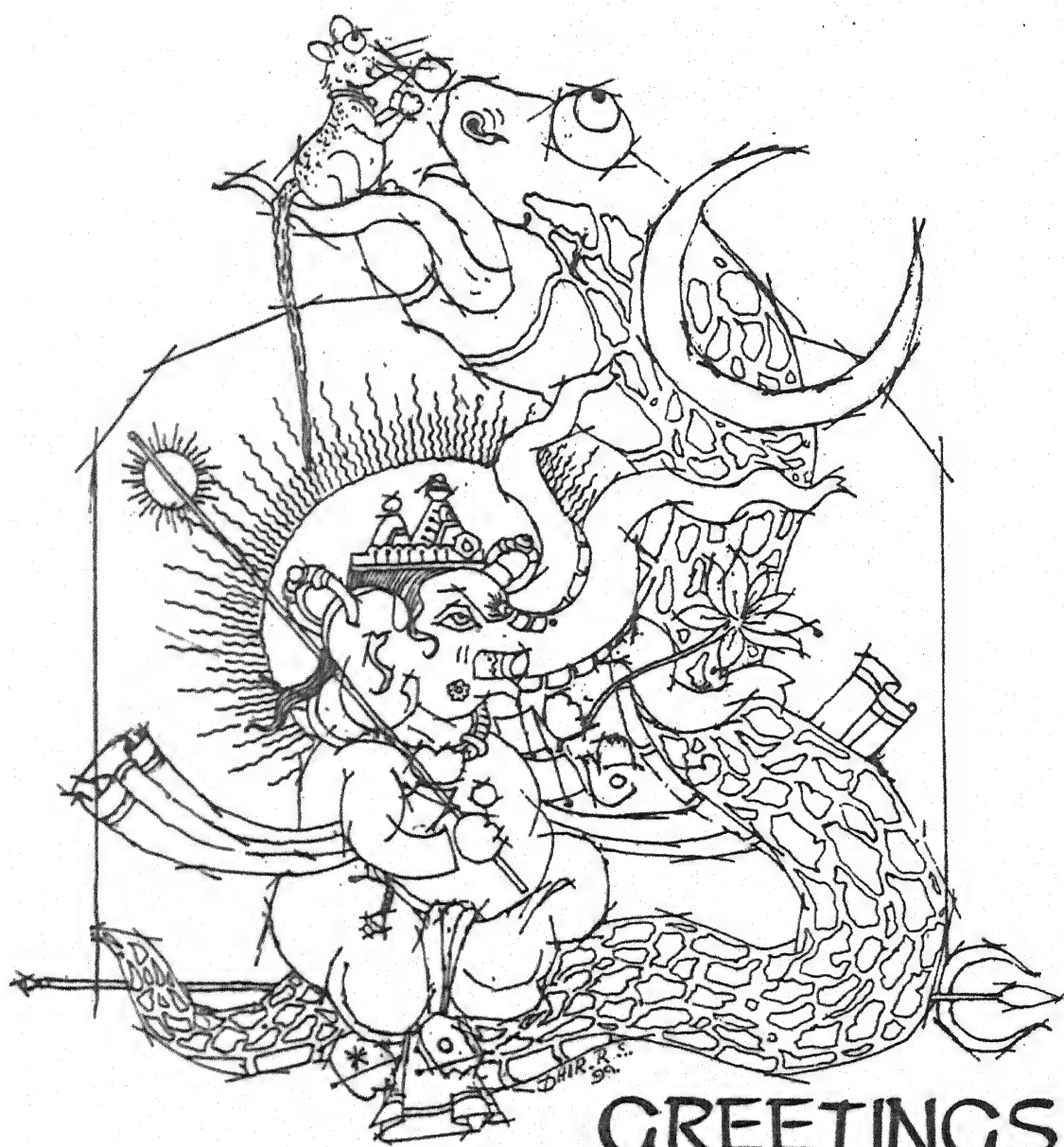
GREETINGS

कलाकार धीर को प्रथम पुरस्कार

रायपुर, शनिवार। महाकोशल कला परिषद द्वारा आयोजित अ. भा. चित्र मूर्तिकला प्रदर्शनी का प्रथम पुरस्कार इस बार वाराणसी के आर. एस. धीर को प्राप्त हुआ है। इस प्रदर्शनी में 127 कलाकारों की 168 कला कृतियां स्थान पाने में सफल रही हैं।

परिषद के सचिव श्री कल्याण प्रसाद शर्मा ने आज प्रातः पत्रकारों को बताया कि प्रदर्शनी के लिये 176 कलाकारों की 644 कलाकृतियां प्राप्त हुई थीं, किन्तु निर्णायकों की पैनी निगाह ने सिर्फ 168 कृतियों का ही चयन किया। उन्होंने कहा कि इस प्रदर्शनी का उद्घाटन 19 जून की संध्या 6 बजे प्रदेश के सुप्रसिद्ध कलाकार श्री डी. जे. जोशी करेंगे। समारोह के अध्यक्ष कुलपति श्री दीक्षित होंगे।

देशबन्धु रायपुर दिनांक २० जून १९७७ (५)
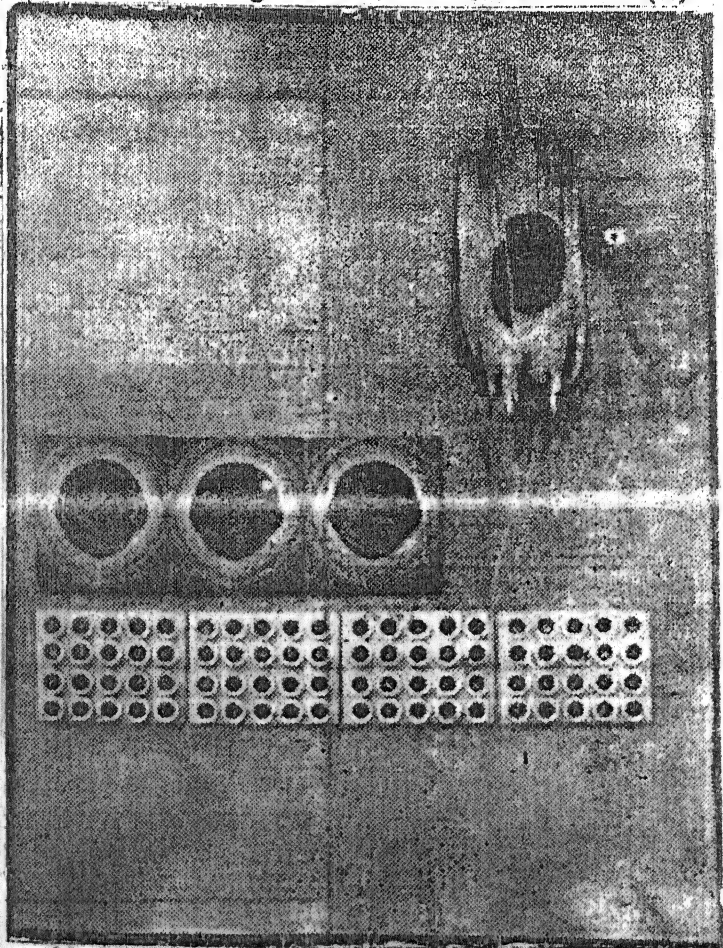
रायपुर में आयोजित अ. भा. चित्र एवं मूर्तिकला प्रदर्शनी में प्रथम पुरस्कार विजेता चित्र। शीर्षक थ्री मूड्स चित्रकार. आर. एस. धीर वाराणसी।

(४) महाकोशल रायपुर दिनांक १९ जून १९७७

थ्री मूड्स के तूलिकाकार धीर

रायपुर, शनिवार। अखिल भारतीय चित्र एवं मूर्ति कला प्रदर्शनी में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ललित कला महाविद्यालय चित्रकला विभाग के अध्यापक श्री रणबीर सिंह धीर द्वारा प्रस्तुत कृति के रूप में महाकोशल कला परिषद, रायपुर द्वारा स्वर्गीय पं. रविशंकर शुक्ल स्मृति में रविशंकर शुक्ल स्वर्ण मंजूषा एवं १ हजार रुपये नगद देकर पुरस्कृत किया

PAGE 4. THE HITAVADA, SUNDAY, JUNE 19, 1977
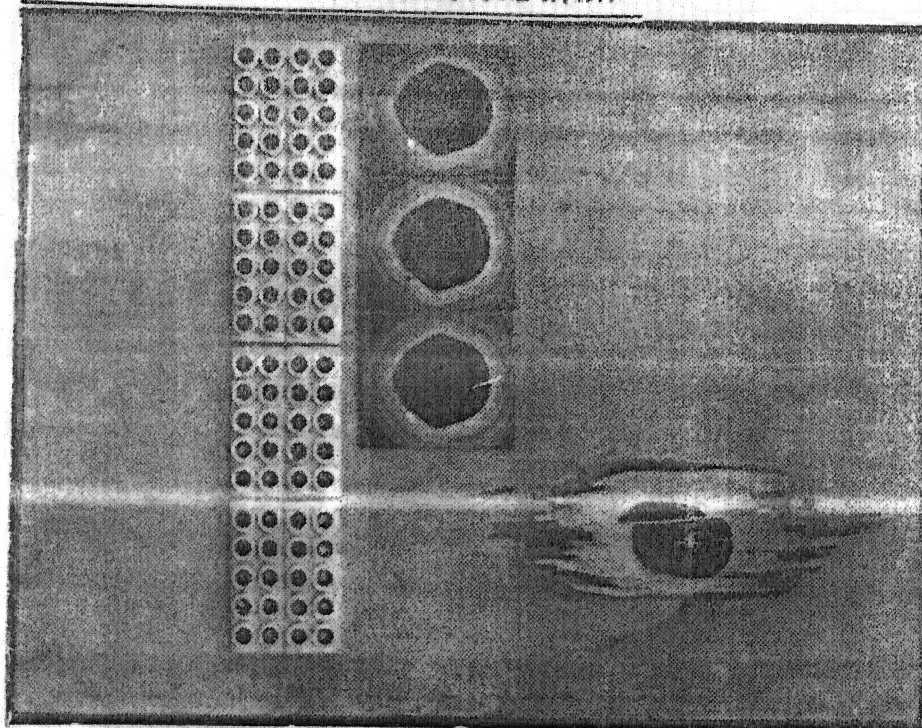
'Three Moods' the first prize winning exhibit

AT ARTS EXHIBITION

'Three Moods' bags first prize

By Our Staff Reporter

RAIPUR, June 18

'Three Moods' of Mr R S Dhir of Varanasi has been awarded the first prize of Rs 1000 with running Mummy Gold aplque in All India Art Exhibition organised by the Mahakoshal Kala Parishad Raipur. The second cash prize of Rs 500 with running Silver plaque has been given for the exhibit title 'Fish' to Mr Salim Munshi of Shantiniketan. Mr Manu J. Parekh of Ahmedabad has bagged the third prize of Rs 300 for 'Tota'.

Mr Balbir Sindh Katt of New Delhi and Mr Upendra Sharma of J&K have been given a cash prize of Rs 200 each.

(6) M.

प्रदर्शनी में वर्ष का सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार प्राप्त " थ्री मूड्स " नामक कलाकृति के लिए १२५ स्वर्ण मंजूषा एवं १००० रु. नगद श्री आर. एस. धीर वाराणसी को प्राप्त हुआ।
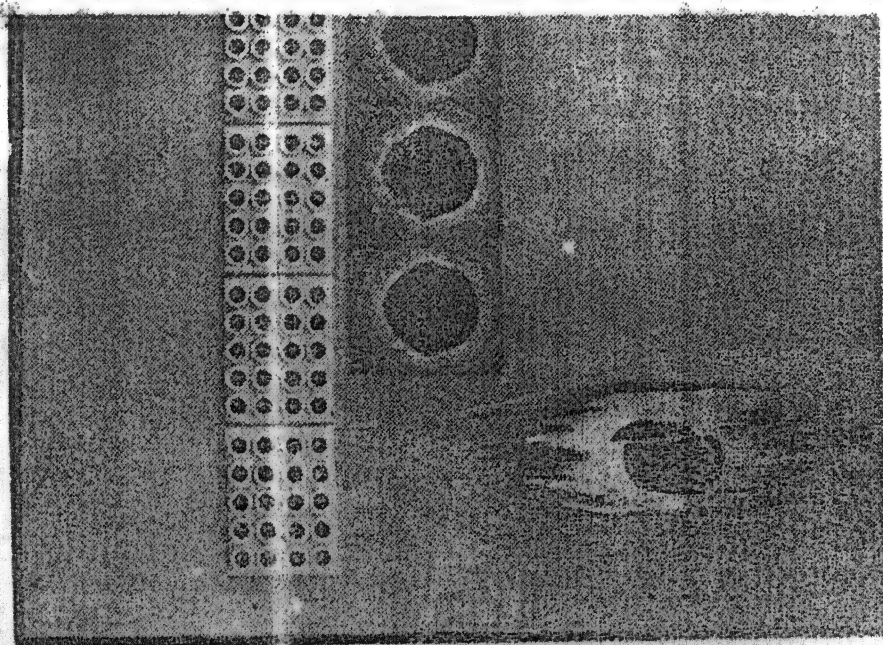
Varanasi artist bags R S Shukla plaque

RAIPUR, June 18 — R S Dhir of Varanasi has bagged the first prize of Rs 1,000 and Pt. Ravishankar Shukla Memorial Golden Plaque for his exhibit titled three needs in the All India Art exhibition organised by the Mahakoshal Kala Parishad under the auspices of Lalit Kala Academy.
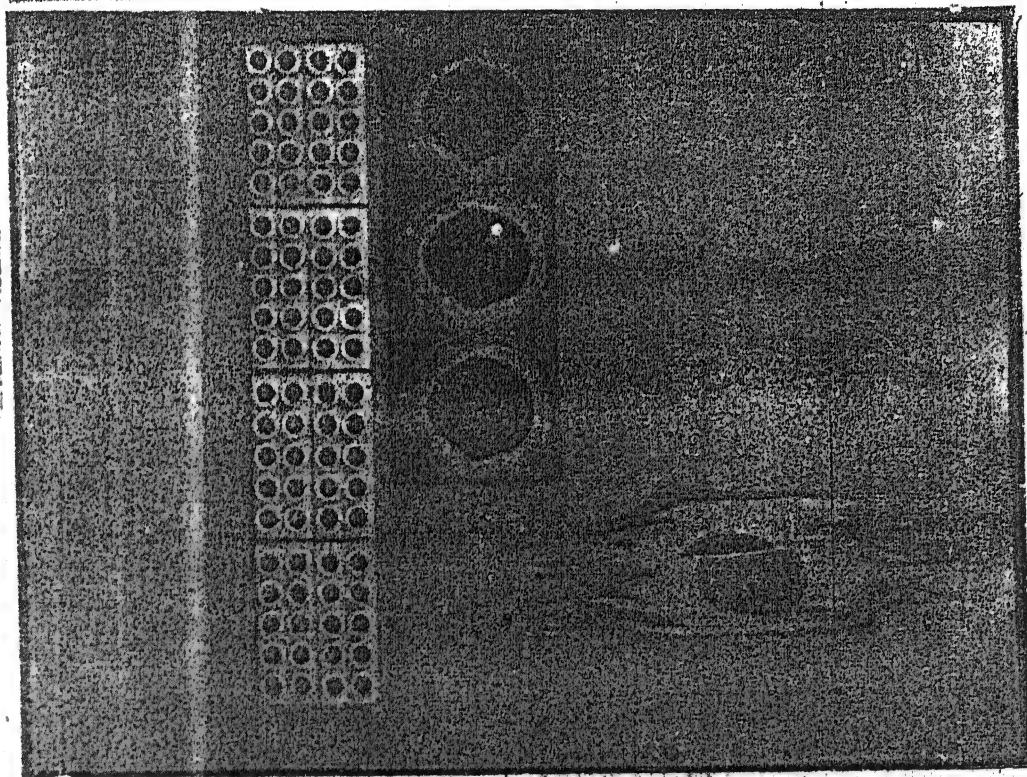
वाराणसी के श्री आर० एस० धीर की तूलिका घात से जन्मी 'थ्री मूड्स' (उपरोक्त चित्र) को वर्ष १९७६–७७ की सर्वश्रेष्ठ कृति के रूप में स्वर्ण मंजूषा एवं १ हजार रुपये नगद से पुरस्कृत किया गया।

(2) नव भारत रायपुर दिनांक 19 जून 1977

अ. भा. चित्र एवं मूर्तिकला प्रदर्शनी : सिंहावलोकन

28.6.77.

"युगधर्म" रायपुर द्वारा

क्रांति, शांति और संधिकाल में समानरूप से आंदोलित करने वाला प्रतीक "कमल" और उसका यह क्षेत्र जिसे, कमल क्षेत्र छत्तीसगढ़, धान का कटोरा आदि सम्बोधित किया जाता है, कला साहित्य आदि की अपार राशि अपने आगोश में समाए हुए हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात अन्य क्षेत्रों के समान यह क्षेत्र भी गुलामी के कालखण्ड में धीमी रही हुई सांस्कृतिक गति को पुनः गतिमान करने हेतु प्रयासरत है। विभिन्न क्षेत्र में कला, साहित्य, संगीत आदि की अनेक संस्थाएं इस दिशा में कार्यरत हैं। कला के क्षेत्र की सर्वाधिक गतिशील संस्था महाकोशल कला परिषद गत १८ वर्षों से इस क्षेत्र में कार्यरत है। इस अवधि में परिषद ने स्थानीय अखिल भारतीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय कला प्रदर्शनियां आयोजित कर क्षेत्रवासियों को कला जगत में होने वाले क्रांतिकारी परिवर्तनों से सम्पर्क कराया है। इसी कड़ी में अखिल भारतीय कला प्रदर्शनी का यह पांचवा पुष्प दि. १९-६-७७ को क्षेत्रवासियों को समर्पित किया गया। इस प्रदर्शनी में कश्मीर से लेकर कन्या कुमारी तथा मद्रास से लेकर गुजरात तक के १७६ कलाकारों ने अपनी लगभग ३४८ कलाकृतियां भेजी जिसमें से चयन समिति ने ११४ कलाकारों की १६८ कलाकृतियां प्रदर्शनी हेतु चुनी है।

प्रदर्शनी में वर्ष का सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार वाराणसी के कलाकार डा रघुबीर सिंह बीर को उनके चित्र 'थ्री मूडस' पर दिया गया है। जैसा कि चित्र का शीर्षक है विषय बड़ा गंभीर है, हिन्दी में हम 'तीन मनः स्थितियां' कह सकते हैं। विषयानुरूप रंगों का चयन गंभीर है। कलाकार इन तीन मनः स्थितियों की व्यापकता का निचोड़ मध्य में रखे तीन आकारों के मध्य रंगों के माध्यम से व्यक्त करता है ऊपर के आकार में रखा लाल रंग क्रान्ति प्रसव काल या प्रारंभ की अभिव्यक्ति देता है तो सबसे निचले आकार में रखा नीला रंग शांति सृजन तथा अन्त को इंगित करता है। बीच का रंग जो कि लाल और नीले का समन्वित रंग है वह संधिकाल का बोध कराता है और ये तीन प्राकृतिक मनः स्थितियां बड़ी व्यापक है जिसका कोई अन्त नहीं। रचना सरल होते हुए भी गूढ़ है और कलाकार अपने भावों को व्यक्त करने में सफल हुआ है।

महाकोशल रायपुर दिनांक २५ जून १९७७

रायपुर, शुक्रवार। रायपुर नगर, में ५ वीं बार महाकोशल कला परिषद द्वारा अखिल भारतीय चित्र एवं मूर्ति कला प्रदर्शनी का आयोजन केन्द्रीय ललित कला अकादमी और म० प्र० कला परिषद के तत्वावधान में किया गया है। भारत के कोने कोने से कलाकारों ने अपनी कलाकृतियां भेज कर इस प्रदर्शनी में भाग लिया।

महाकोशल कला परिषद ने लगभग ३ हजार रुपये पुरस्कार के रूप में देने की घोषणा की थी। इसके अलावा कला परिषद के एक स्वर्ण मंजूषा और एक रजत मंजूषा भी देने की घोषणा की थी।

महाकोशल कला परिषद द्वारा गठित निर्णायक समिति ने ३४८ कला कृतियों में से १६८ कलाकृतियों को प्रदर्शनी में प्रदर्शित करने की अनुमति प्रदान की। १७६ कलाकारों ने इस प्रदर्शनी में अपनी रचनाएं भेजीं जिसमें ११४ कलाकारों की कलाकृतियां प्रदर्शनी हेतु चुनी गई।

प्रदर्शनी में प्रवेश करते ही इस वर्ष की सर्वश्रेष्ठ कृति पर [illegible] आर. एस. बीर आप बनारस के कलाकार है इन्हें निर्णायकों ने स्वर्ण मंजूषा और एक हजार रुपया नगद देकर सम्मानित किया है। कलाकृति में कलाकार के तीन मनःस्थिति का चित्रण किया है। चित्र तीन रंग में चित्रित है वहीं प्लास्टिक के आवरण में कांच की गोलियों का उठाव व बनाव अलग प्रभाव डालता है दूसरी ओर कलाकार की पैनी दृष्टि से रंग संयोजन एक दूसरे में मिले हुए जान पड़ते है।

"Rani" Gets Governor's Prize At Art Exhibition

From Our Correspondent

AMRITSAR, June 26. Out of nearly 200 paintings exhibited at the 40th All-India Arts Exhibition organised by the Indian Academy of Fine Arts, the panel of judges on Tuesday selected the following exhibits for awards.

Punjab Governor's cash prize: "Rani" in water colour (R. S. Dhir).

Academy's cash prizes: Dharamsala view" in oil (Gurbachan Singh); "Rainbow Dawn" in oil (O. G. Pubare); "Street of Nasik" in water colour (M. S. Joshi); "Composition" in oil (Narsingh Dev Jamval); "Painting No. 2" in oil (Prem Raval); "Still Life" in oil (N. G. Kalele); "Worker" in oil (Mewa Singh); "Artist's Print" Graphic Niranjoy Roy); "Portrait of Suzanne" in oil (S. R. Lawate).

Academy's special Prizes for students: "Landscape" in oil (Indu Arora); "Thoughts" in black and white (Kirandip Kaur).

Academy's cash prizes for best photographs: "[illegible] it steady" (Vraj Ministry); "Scribbles of Experience" (Madan Mohan).

"Highly commended" certificates awarded to: Squadron Leader B. R. Malik; Krashia K. Rai; J. K. Anjan; Prem Singh; Suresh C. Lali and Mohinder Tuli.

An unusual camp

THE Uttar Pradesh Department of Cultural Affairs has hit upon a novel idea to bring artists and lay persons together. And what could be a better place for the purpose than the annual Magh Mela at Allahabad which draws tens of thousands of people from all over India! So far the second year running a camp of five writers and 10 painters was organized recently near the confluence of the Ganga and the Jamuna where the pilgrims also camp. The artists' camp lasted 10 days. The participants were given all facilities to pursue their creative work and draw inspiration from the people amid whom they lived. The lay people, on the other hand, had an opportunity to see how artists work. They could also listen to recitation of the writers' and poets' works even as they were at it. Some senior scholars and artists were invited on different evenings to deliver talks on various aspects of art. The camp also attracted local writers and painters, thus serving as a forum for exchange of ideas.

The painters and writers who attended the camp included some who are quite well known in their respective fields such as Vyomkesh Mohanty from Orissa, Bireshwar Bhattacharya from Bihar, Dr Chitralekha Singh, Professor R. S. Dhir and Sharad Pandeya from U.P. among the painters. Among the writers were Neela Padmanabhan from Kerala, Balasubramanian from Madras and Rajesh Dayal from U.P.

In all there were seven painters from U.P. and one each from Delhi, Orissa and Bihar. Of the five writers, two were from U.P., two from Madras and one from Kerala. The artists included four women.

R.S. Dhir from Banaras was inspired by the 'sadhus' who make the 'Sangam' their permanent abode during the Mela season. A half-naked 'Sadhu' with his head buried in the sand, a common sight, was well received. Was Dhir trying to convey that the earth will tilt on its axis, in case of a nuclear warfare.
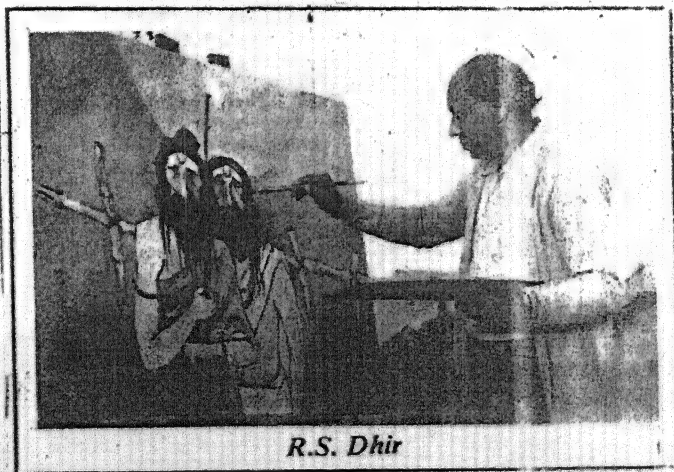
R.S. Dhir

रचनाकार शिविर की कुछ अच्छी रचनाएं

(स्वतंत्र भारत) 0.5.2.-86.

इलाहाबाद। रचना कर्म की दृष्टि से जितनी आवश्यक अखिल भारतीय रचनाकार शिविर की समीक्षा थी उतनी ही आवश्यक उसमें हुए रचनाकर्म की समीक्षा भी है। माघ मेले में यहां आयोजित रचनाकार शिविर में सांस्कृतिक कार्य विभाग ने १० चित्रकारों को बुलाया अवश्य लेकिन जब उनकी [illegible] स्पष्ट हुआ कि उनमें से कुछ ही कलाकार

आर० एस० धीर का 'सा[illegible]'

शिविरकी कसौटी पर खरे उतरे।

शिविरमें आमंत्रित चित्रकारोंमें सबसे अच्छा काम वाराणसी के आर. एस. धीर का रहा। माघ मेले में आने वाले तमाम प्रकार के साधुओं, उनके जीवन तथा आध्यात्मिक शांति की उनकी खोज ने धीर के चित्रकार को आकर्षित किया। साधुओं पर बने धीर के तीनों फलक एक ही दृष्टि में कलाकार की अभिव्यक्ति को स्पष्ट कर देते हैं। धीर ने मेले में घूम-घूमकर रेखांकन खूब किया और उन्हीं रेखांकनोंमें से तीन रेखांकनोंको विकसित कर कैनवस पर रंगों से उतार दिया। श्री धीर का रेखांकन बहुत सशक्त है तथा उतना ही सशक्त है संयोजन व रंगों की यथार्थवादी कल्पना।

ਬਾਨੀ : ਅਮਰ ਸ਼ਹੀਦ ਲਾਲਾ ਜਗਤ ਨਾਰਾਇਣ ਜੀ

Regd. No. Pb./Jl. 146

ਸਭਿਆਚਾਰ ਅੰਕ

Phones-58881, 58882, 58883, Resi. 58884

ਸਾਲ 13 The Daily JAG BANI, Jalandhar. ਅੰਕ ਨੰ. 260

ਸੋਮਵਾਰ 8 ਅਪ੍ਰੈਲ, 1991 ਮੁਤਾਬਕ 26 ਚੇਤਰ 2048 ਮੁੱਲ 1 ਰੁਪਿਆ 20 ਪੈਸੇ, ਹਵਾਈ ਡਾਕ ਰਾਹੀਂ 1 ਰੁਪਿਆ 30 ਪੈਸੇ

ਕੋਮਲ ਕਲਾ ਚਿੱਤਰਕਾਰੀ ਵਰਕਸ਼ਾਪ

ਬੀਤੇ ਦਿਨ ਏ. ਪੀ. ਜੇ. ਕਾਲਜ ਆਫ ਫਾਈਨ ਆਰਟਸ ਜਲੰਧਰ ਵਿਖੇ, ਇਕ ਚਿਤ੍ਰਕਲਾ ਵਰਕਸ਼ਾਪ 26 ਫਰਵਰੀ ਤੋਂ 28 ਫਰਵਰੀ ਤਕ ਲਗਾਈ ਗਈ, ਜੋ ਕਲਚਰ ਅਫੇਅਰ ਪੰਜਾਬ ਡੀਪਾਰਟਮੈਂਟ ਵਲੋਂ ਸਪਾਂਸਰ ਕੀਤੀ ਗਈ। ਇਸ ਵਰਕਸ਼ਾਪ ਦਾ ਮਹੱਤਵ ਇਸ ਗੱਲੋਂ ਵੱਧ ਹੈ ਕਿ ਇਸ ਤੋਂ ਕਲਾ ਵਿਦਿਆਰਥੀ ਅਤੇ ਕਲਾ ਉਪਾਸ਼ਕ, ਉਤਰੀ ਭਾਰਤ ਵਿਚ ਚਲ ਰਹੇ ਆਧੁਨਿਕ ਟਰੈਂਡਜ਼ ਤੋਂ ਵਾਕਫ ਹੋਏ। ਇਸ ਵਿਚ ਉੱਤਰੀ ਭਾਰਤ ਦੇ ਨਾਮਵਰ ਇਕ ਦਰਜਨ ਆਧੁਨਿਕ ਕਲਾਕਾਰਾਂ ਨੇ ਭਾਗ ਲਿਆ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਕਲਾਕਾਰਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ-ਆਪਣੇ ਵਿਸ਼ੇ ਤੇ ਜੀਵਨ ਵਿਚ ਜਦੋਜਹਿਦ ਕਰ ਕੇ ਸਿੱਖੀਆਂ ਆਪਣੀਆਂ ਤਕਨੀਕੀ ਮੁਹਾਰਤਾਂ ਦਾ ਪ੍ਰਦਰਸ਼ਨ ਕੀਤਾ।

ਦਿੱਲੀ ਤੋਂ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਪੋਰਟਰੇਟ ਪੇਂਟਰ ਸ. ਮੇਹਰ ਸਿੰਘ ਨੇ ਆਪਣੀ ਕਲਾ ਦੇ ਜੌਹਰ ਵਿਖਾਏ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਕਾਲਜ ਦੀ ਨੌਜਵਾਨ ਸੁੰਦਰੀ ਦਾ ਸਾਹਮਣੇ ਬਿਠਾ ਕੇ ਵਿਅਕਤੀ ਚਿਤਰਨ ਕੀਤਾ ਜਿਹੜਾ ਕਿ ਕਲਾ ਦੇ ਮਾਹਿਰਾਂ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਆਮ ਵਿਅਕਤੀ ਤਕ ਸਭ ਨੇ ਸਲਾਹਿਆ।

ਬਨਾਰਸ ਦੇ ਸ੍ਰੀ ਆਰ. ਐੱਸ. ਧੀਰ, ਜੋ ਕਿ ਬਨਾਰਸ ਹਿੰਦੂ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਵਿਚ ਕੋਮਲ ਕਲਾ ਵਿਭਾਗ ਦੇ ਮੁਖੀ ਹਨ ਅਤੇ ਕਲਾ ਖੇਤਰ ਵਿਚ ਮੰਨੇ-ਪ੍ਰਮੰਨੇ ਕਲਾਕਾਰ ਅਤੇ ਸੁਘੜ ਕਲਾ ਅਧਿਆਪਕ ਹਨ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਸਟਿੱਲ ਲਾਈਫ ਵਿਸ਼ੇ 'ਤੇ ਰਚਨਾਤਮਕ ਸੰਯੋਜਨ ਕਰਨ ਵਿਚ ਮੁਹਾਰਤ ਹਾਸਲ ਹੈ, ਨੇ ਸਟਿੱਲ ਲਾਈਫ ਚਿਤ੍ਰਨ ਕੀਤਾ।
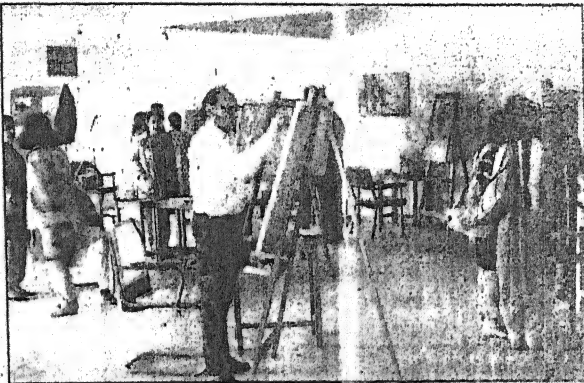
ਆਰ. ਐੱਸ. ਧੀਰ (ਬਨਾਰਸ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ) ਵਰਕਸ਼ਾਪ ਵਿਚ ਕੰਮ ਕਰਦੇ ਹੋਏ
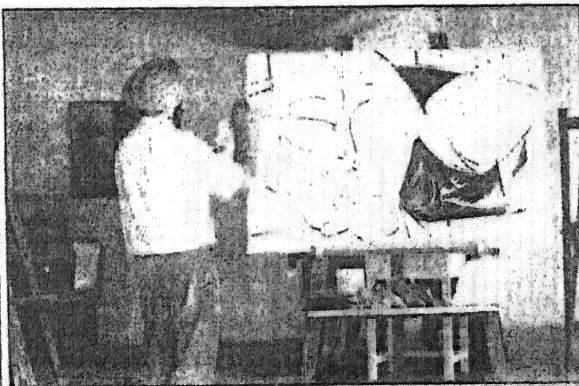
ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਕਲਾਕਾਰ ਪ੍ਰੇਮ ਸਿੰਘ : ਨਿਰੰਤਰ ਕਲਾ ਸਾਧਨਾ

ਕਪੂਰਥਲਾ ਤੋਂ ਸੈਨਿਕ ਸਕੂਲ ਵਿਚ ਕਲਾ ਅਧਿਆਪਨ ਕਰ ਰਹੇ ਸ੍ਰੀ ਸੁਮੰਤ ਸ਼ਾਹ ਜੋ ਕਿ ਨੈਸ਼ਨਲ ਪ੍ਰਸਿੱਧੀ ਦੇ ਮਾਲਕ ਹਨ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਤੌਖਈਅਲ ਵਿਚ ਸੰਯੋਜਨ ਕੀਤਾ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਚਾਕੂ ਅਤੇ ਬਲੇਡ ਸ਼ੈਲੀ ਵਿਚ ਰੰਗਾਂ ਦੀ ਮੋਟੀ ਪਰਤ ਲਗਾ ਕੇ ਸੰਯੋਜਨ ਵਿਚ ਸੰਗੀਤਮਈ ਲੈਅ ਪੈਦਾ ਕਰਨ ਵਿਚ ਮੁਹਾਰਤ ਹਾਸਲ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਚਿੱਤਰ ਰਚਨਾ ਕੈਨਵਸ ਦੇ ਪਟ ਤੋਂ ਉਭਰ ਕੇ ਆਉਂਦੀ ਹੈ ਤੇ ਕਲਾ ਅਨੁਭਵੀ ਵਿਅਕਤੀ ਦੀਆਂ ਇੰਦਰੀਆਂ ਆਕਰਸ਼ਤ ਕਰ ਲੈਂਦੀ ਹੈ।

ਦਿੱਲੀ ਅਧਾਰਿਤ ਰਾਸ਼ਟਰੀ ਪੁਰਸਕ੍ਰਿਤ ਕਲਾਕਾਰ ਬ੍ਰਹਮ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਆਪਣੀ ਕਲਾ ਸ਼ੈਲੀ ਵਿਚ ਧਰਾਤਲ (ਟੈਕਸਚਰ) ਰਚਨਾ ਦਾ ਸੁਘੜ ਕਲਾਕਾਰ ਮੰਨਿਆ ਗਿਆ ਹੈ। ਉਹ ਕੈਨਵਸ ਪਟ ਨੂੰ ਜੁਮੈਟ੍ਰੀਕਲਆਕਾਰਾਂ ਵਿਚ ਵੰਡ ਕੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਵੱਖਰੇ-ਵੱਖਰੇ ਰੰਗਾਂ ਦੇ ਟੈਕਸਚਰ ਨਾਲ ਸਜਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਵੇਖਣ ਨੂੰ ਸੰਯੋਜਨ ਬੜਾ ਸਾਦਾ ਪ੍ਰਤੀਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ, ਪਰ ਉਸ ਦੇ ਚਿਤਰਾਂ ਦਾ ਕੰਟੈਂਟ ਡੂੰਘਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਨੇ ਪ੍ਰਿੰਟ ਮੇਕਿੰਗ ਅਤੇ ਚਿਤਰਕਾਰੀ ਦੇ ਸੁਮੇਲ ਨਾਲ ਆਧੁਨਿਕ ਚਿਤਰਕਾਰੀ ਦੇ ਖੇਤਰ ਵਿਚ ਭਾਰਤੀ ਚਿਤਰਕਾਰੀ ਵਿਚ ਨਵੀਂ ਸ਼ੈਲੀ ਨੂੰ ਜਨਮ ਦਿਤਾ ਹੈ। ਉਸ ਨੇ ਆਪਣੇ ਨਵੇਂ ਚਿੱਤਰਾਂ ਵਿਚ ਅਮੂਰਤ ਮਨੁੱਖੀ ਚਿਹਰਾ ਜੋੜਿਆ ਹੈ। ਇਸੇ ਹੀ ਸ਼ੈਲੀ ਵਿਚ ਉਸ ਨੇ ਆਪਣੇ ਜੌਹਰ ਵਰਕਸ਼ਾਪ ਵਿਚ ਵਿਖਾਏ।

ਸ਼ਿਮਲੇ ਤੋਂ ਸ੍ਰੀ ਸੁਰਜੀਤ ਸਿੰਘ ਨੇ ਆਪਣੇ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਵਿਸ਼ੇ ਕੰਸਟ੍ਰਕਸ਼ਨ (ਉਸਾਰੀ) ਨੂੰ ਨਵੇਂ ਅਰਥਾਂ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ। ਆਧੁਨਿਕ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਜੋ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਮਨੁੱਖ ਨਾਲ ਲੜਾਈ ਚਲ ਰਹੀ ਹੈ, ਉਸ ਨੂੰ ਬੇਜਾਨ ਆਬਜੈਕਟਸ ਰਾਹੀਂ ਦਰਸਾਇਆ ਹੈ। ਚਿੱਤਰਕਾਰ ਨੇ ਨਾਈਫ ਅਤੇ ਬੁਰਸ਼ ਦਾ ਇਕੋ ਸਮੇਂ ਇਸਤੇਮਾਲ ਕੀਤਾ ਹੈ।

ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ ਤੋਂ ਜਾਣੇ-ਪਛਾਣੇ ਕਲਾਕਾਰ ਪ੍ਰੇਮ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਮਲਕੀਤ ਸਿੰਘ ਕਲਾ ਜਗਤ ਵਿਚ ਆਪਣੇ ਹਸਤਾਖਰ ਛੱਡ ਚੁੱਕੇ ਹਨ। ਪ੍ਰੇਮ ਸਿੰਘ ਰੰਗਾਂ ਰੇਖਾਵਾਂ ਨੂੰ ਡੂੰਘੇ ਅਤੇ ਨਾਜ਼ਕਿ ਆਕਾਰ ਦੇਣ ਵਿਚ ਪ੍ਰਬੀਨ ਹੈ। ਉਸ ਨੇ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਅਜੋਕੀ ਸਥਿਤੀ ਦਾ ਚਿਤ੍ਰਨ ਆਲੇ-ਦੁਆਲੇ ਵਿਚੋਂ ਆਕਾਰ ਲੈ ਕੇ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ। ਇਕ "ਔਰਤ ਅਮਨ ਦੀ ਉਡੀਕ ਵਿਚ" ਦਾ ਚਿਤਰਨ, ਜਿਸ ਦੀ ਪ੍ਰਸੰਸਾ ਲਈ ਸ਼ਬਦ ਲੱਭਣੇ ਔਖੇ ਹਨ। ਅਨੁਭਵ ਦੀ ਗੱਲ ਸਿਰਫ ਅਨੁਭਵ ਵਿਚ ਹੀ ਹੈ। ਮਲਕੀਤ ਪਿਛਲੇ ਕੁਝ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਖੇਤਾਂ ਵਿਚ ਰਖੇ ਇਕ ਡਰਾਉਣੇ (ਸਕੇਅਰ-ਕਰੋ) ਅਤੇ ਮੱਛੀ (ਫਿਸ਼) ਮੋਟਿਫ ਨੂੰ ਮਾਧਿਅਮ ਬਣਾ ਕੇ ਆਪਣੇ ਮਨ ਦੇ ਵਲਵਲੇ ਸਾਕਾਰ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਉਸੇ ਸੀਰੀਜ਼ ਵਿਚੋਂ ਉਸ ਨੇ ਕੁਦਰਤ ਨੂੰ ਆਧੁਨਿਕ ਅਰਥਾਂ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਆਕਾਸ਼ ਵਿਚ ਲਟਕਿਆ ਰੁੱਖ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹੋ ਗੁਜ਼ਰਿਆ ਹੈ। ਸੰਯੋਜਕ ਬਹੁਤ ਸਾਦਾ, ਪਰ ਅਰਥ ਭਰਪੂਰ ਹੈ। ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ ਤੋਂ ਹੀ ਇਕ ਹੋਰ ਉਭਰ ਰਹੇ ਕਲਾਕਾਰ ਰਾਜ ਕੁਮਾਰ ਨੇ ਵੀ ਭਾਗ ਲਿਆ। ਉਸ ਨੇ ਦੋ ਮਨੁੱਖੀ ਨੌਜਵਾਨ ਆਕਾਰਾਂ ਵਿਚ ਅਰਥ ਭਰੇ ਹਨ। ਚਿਤਰ ਰੁਮਾਂਸਵਾਦੀ ਹੋ ਨਿਬੜਿਆ ਹੈ।

ਇਸ ਰਿਪੋਰਟ ਦੇ ਰਚਇਤਾ ਅਜੀਤ ਜੱਬਲ ਨੇ ਹੁਸ਼ਿਆਰਪੁਰ ਤੋਂ ਭਾਗ ਲਿਆ। ਉਸ ਨੇ ਆਪਣੇ ਜਾਣੇ-ਪਛਾਣੇ ਅਧਿਆਤਮਕ ਅਤੇ ਰਚਨਾਤਮਕ ਵਿਸ਼ੇ ਨੂੰ ਪ੍ਰਿਜ਼ਮ, ਜੋ ਸਭ ਰੰਗਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਅੰਦਰ ਸਮੋਈ ਬੈਠੀ ਹੈ, ਐਨਕ ਰਿਨਮੈਂਟ ਰਾਹੀਂ ਅਰਥ ਦਿਤੇ ਹਨ। [illegible] ਖਿੜਕੀਆਂ ਇਨਸਾਨੀ ਦਿਮਾਗ ਦੇ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹਨ। ਆਧੁਨਿਕ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਅਧਿਆਤਮਵਾਦ ਹੀ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨੂੰ ਸ਼ਾਂਤੀ ਦਾ ਰਸਤਾ ਦਿਖਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਅਜਿਹਾ ਅਨੁਭਵ ਆਪਣੇ ਚਿਤਰ ਰਾਹੀਂ [illegible] ਦਾ ਜੱਬਲ ਦਾ ਪ੍ਰਯਾਸ ਹੈ।

ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਤੋਂ ਸ੍ਰੀ ਈ. ਕੇ. ਰਾਜ ਨੇ ਆਪਣੀ ਥੀਮ ਪਰ ਮਿੱਠੇ ਰੰਗਾਂ ਦੀ ਸ਼ੈਲੀ ਵਿਚ [illegible] ਦਾ ਚਿਤਰਨ ਕੀਤਾ, ਜਿਹੜਾ ਪਹਾੜੀ ਤੇ [illegible] ਦੀ ਯਾਦ ਦਿਲਾਂਦਾ ਹੈ। ਕਲਾਕਾਰ ਨੇ ਆਪਣੇ ਮਨੋਵਿਗਿਆਨ ਨੂੰ ਸਾਕਾਰ ਕੀਤਾ ਹੈ।

[illegible] ਤੋਂ ਜਸਪਾਲ ਐੱਸ. ਨੇ ਭਾਗ ਲਿਆ। ਉਸ ਨੇ ਰੰਗਾਂ ਅਤੇ ਆਕਾਰਾਂ ਨੂੰ [illegible] ਅਦਾ ਨਾਲ ਉਲੀਕਿਆ। [illegible]

[illegible] ਤੋਂ ਪਾਣੀ ਵਾਲੇ ਰੰਗਾਂ ਦੇ ਮਾਹਰ ਕਲਾਕਾਰ ਸ੍ਰੀ ਸੀ. ਐੱਲ. ਸ਼ਰਮਾ ਨੇ ਆਪਣਾ ਵਿਅਕਤੀ ਚਿਤਰਨ [illegible] ਕੀਤਾ। ਤਕਨੀਕ ਸਿੱਧੇ ਉਪਰ ਰਿਹਾ। [illegible] ਇਨ੍ਹਾਂ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਜਲੰਧਰ [illegible] ਹੋਰ [illegible] ਅਧਿਆਪਕਾਵਾਂ ਮਿਸਿਜ਼ ਸੁਚੇਤਿਤਾ ਅਤੇ [illegible] ਨੇ ਭਾਗ ਲਿਆ। ਮੂਰਤੀ ਕਲਾ ਵਿਭਾਗ ਦੇ ਅਧਿਆਪਕ ਮਿਸਟਰ ਵਿਸਵਾਸ ਨੇ [illegible] ਦੇ ਮੂਰਤੀ [illegible] ਮਨੁੱਖੀ [illegible] ਦੀ [illegible] ਪੀੜੀ। [illegible] ਹਨ।

ਪੰਜਾਬ ਕਲਚਰਲ ਵਿਭਾਗ [illegible] ਜਿਸ ਨੇ [illegible] ਕਲਾ ਅਤੇ ਕਲਾਕਾਰਾਂ ਨੂੰ ਹੀ ਉਜਾਗਰ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ ਸਗੋਂ ਕੋਮਲ ਕਲਾਵਾਂ ਨੂੰ ਜਨਤਾ ਦੇ ਉਸਾਰੂ ਰੁਚੀਆਂ ਵੱਲ ਧਿਆਨ ਦੁਆਇਆ ਹੈ। ਏ. ਪੀ. ਜੇ. ਕਾਲਜ ਦੇ ਫਾਈਨ ਆਰਟ ਵਿਭਾਗ ਦੇ ਮੁਖੀ ਸ੍ਰੀਮਤੀ ਸਰਜੀਤ ਕੌਰ ਅਤੇ ਪ੍ਰਿੰਸੀਪਲ ਵੀਨਾ ਦਾਦਾ ਨੇ ਇਸ ਵਰਕਸ਼ਾਪ ਨੂੰ ਕਾਮਯਾਬ ਬਣਾਉਣ ਲਈ ਕੋਈ ਕਸਰ ਨਹੀਂ ਛੱਡੀ। ਕਲਾਕਾਰਾਂ ਨੂੰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਹਰ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀ ਸਹੂਲਤ ਦਿਤੀ। ਵਿਭਾਗ ਦੇ ਫਾਈਨ ਆਰਟ ਦੇ ਵਿਦਿਆਰਥੀਆਂ ਨੇ ਕਲਾਕਾਰਾਂ ਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਕੰਮ ਵਿਚ ਪੂਰੀ ਰੁਚੀ ਵਿਖਾਈ। ਇਹੋ ਜਿਹੀਆਂ ਕਲਾ ਵਰਕਸ਼ਾਪਾਂ ਪੰਜਾਬ ਵਿਚ ਹੋਰ ਥਾਵਾਂ ਤੇ ਵੀ ਕੀਤੀਆਂ ਜਾਣੀਆਂ ਚਾਹੀਦੀਆਂ ਹਨ ਤਾਂ ਜੋ ਲੋਕਾਂ ਵਿਚ ਕਲਾ ਬਾਰੇ ਜਾਗਰਤਾ ਜਗਾਇਆ ਜਾ ਸਕੇ।

—ਪ੍ਰੋ. ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਜੱਬਲ

Paintings must please mind, eye : Ganguly

(From Our Varanasi Office)
VARANASI, Mar. 28.

Declaring open a solo art exhibition of unique series of 20 landscape paintings of Shri R. S. Dhir of the B.H.U. Fine Arts College, depicting the snows and scenes of the Himalayas, suggesting reminiscences of Dr. Nicholas, Dr. O. C. Ganguly, the eminent Art critic and connoisseur, said 'a picture is created in supreme moments of spiritual exaltation'.

Stating that every essay in line and colour was not necessarily a picture, the octogenarian Art expert deplored that young painters nowadays painted pictures according to their own individual fancy, not caring to know what the visitors should like to see.

An exhibition, Dr. Ganguly said, was an invitation to the public to come and look at pictures. Formerly in India, there were no pictorial exhibitions. Pictures were permanently painted on the walls of temples which pilgrims came to see and admired with eyes of devotion.

Dr. Ganguly said, nowadays artists pained pictures in their own studio according to their own individual fancy, not caring to know what the visitors should like to see. Formerly, he said, pictures were pained according to the needs and demands of the public. The result to-day was that the visitors did not always like or did not admire the paintings of these fanciful painters.

Dr. Ganguly regretted that as a rule these pictures were very seldom sold and the artist carried them back to his studio to gather dust and dirt and neglect. Not having sold any picture the artist continued to starve cursing the public which had not purchased his pictures.

Defining what was a picture with quotations from Tagore Dr. Ganguly said it was what pleased the eye and the mind, which carried in its bosom the lights and shadows of Nature. The artist made imaginative use of this light and shadow, dived into the sea of forms and fished out the finest forms for the enjoyment of man.

About the adverse critics of pictures and painters Dr. Ganguly deplored that they never realised how difficult it was to master the brush and the colours. The thought it was mere fun and frolic.

Impressive art exhibition

(From Our Varanasi Office)
VARANASI, Mar. 28.

The solo art exhibition of the 20 large size landscapes in water painting by Shri R. S. Dhir, impressive and delightfully refreshing as they were, needed more space to get the depth needed for proper display of this type.

Held in the hardly 20-feet, long room of the United Artists Gallery at Godhowlia judicious use of the available space had been made with a one row hanging up in the middle of the hessian cloth back drop and the other lined up on the floor. An angular use of the corner space with vertical projection was likely perhaps, to make it tidier.

Shri Dhir is a lecturer in the Banaras Hindu University College of Fine Arts and an accomplished artist of some repute with the Mysore Dussera exhibition Gold Medal for best work in water colour. According to Dr. Rai Krishna Das, Director, Bharat Kala Bhawan museum of the BHU 'his works show his keen art sense and his landscape has the architectural qualities'.

Painted mostly in the conventional style the series of the 20, pieced together, sing the saga of the snows and the heights of the Himalayas as viewed—20 aspects, as Shri Dhir himself informed, of the Himalayas as viewed from the Pashupatinath temple in Nepal. The colour were so vivid, the shading so vivacious and tenderly executed, the designs so varied, that the total impression was of a mobile soul captivated in the stillness of the mountain fastness.

With remarkably fading shades of the same colour in different pigments Shri Dhir had succeeded in inducing depth in his representation.

One could only wish that a bit of oil would have imported a dazzling glass to the paintings to captivate the sensation of the visitor, reminiscent of the famous Himalaya pictures of the late Dr. Nicholas Roerich.

The exhibition would be open to the public every day from 5 p.m. to 9 p.m. till April 3. Most of the exhibits were offered for sale.

रामनगर तटपर (जलरंग)

Dhir's Graphics Impress

LUCKNOW, Friday—Inaugurating a five-day graphic art exhibition of the works of Mr. RS Dhir, a young painter from Varanasi, at the Soochna Kendra here this evening, Mrs C Snow, wife of Mr. Christopher Snow, officer in charge of the American Cultural Centre, said that it was a pleasure to her to find an artist "so completely in love with his country" as to tackle typical Indian scenes in his works.

Mrs. Snow was appreciative of the exhibits. She said that through this exhibition, Dhir had exploited a new medium—graphic art—to give expression to his "versatility" as an artist. "He can view this exhibition, second of its kind of his works, with satisfaction at his commendable accomplishments," she added.

Of the pieces—forty-five—including linocuts, woodcuts, glass monotypes and offsets, the linocut and glass monotype ones bore unmistakable evidence of the artist's thorough study of the picturesque Varanasi ghats. Among the still-life pieces, the one depicting a flower vase, with bright yellows and Indian reds, was the most arresting, with its strikingly balanced interplay of colours, the contrast of shade whereof having been worked out to the minutest detail. Outstanding among the woodcut items was the portrait of an Indian village woman.

The overall impression of the visitors at the exhibition is that Dhir's boldness of strokes amply bears out his maturity and confidence as an artist.

Mr. HL Merh, former principal of the Government College of Arts and Crafts, welcomed the chief guest.

PAINTINGS OF R.S. DHAR

(From Our Varanasi Office)

VARANASI, July 24.

The art exhibition of about three dozen paintings of Mr. R. S. Dhar was marked by the straight forward, bold and presentation, clarity of expression and balanced designing and colour. The exhibition was opened in the Bharat Kala Bhavan of the Banaras Hindu University by Shri Rai Krishna Das, its Director.

The paintings were in Graphic art—a technique combining in itself some devices of modern block printing with the fine-art of painting. The new medium including linocuts, woodcuts, glass monotypes, was admirably exploited by Mr. Dhar whose approach was conventional and the presentation traditional.

A remarkable feature of the exhibition was the matter of fact choice of and approach to the subjects, which were common to life. The landscapes, three drawings of the Varanasi ghats on the glass monotype, were a lovely combination of colour design and bold lines.

Graphic art falls in the so-called Modern Art group. Yet Mr. Dhar's paintings were different from the average specimens of the group. That perplexing and not easily understandable impression, so characteristic of Modern Art, was not there.

The stills were mellowed in their colour, the shades fading out imperceptibly, without impairing the boldness of the lines.

Rai Krishna Das pointed out at the opening that the art of Mr. Dhar, even in this latest modern medium, had retained the characteristic feature which had distinguished the art of India in the international reckoning and had given it a separate entity in the sphere of fine art.

'आज'—साप्ताहिक विशेषांक

ग्रामबाला

चित्र : धीर

Impressions

Graphic Art On Exhibit

Ravi Chawla

Looking through the exhibition of graphic painting of Mr. R.S. Dhir, an Indian artist from Benares, the viewer is bound to feel that "there is something different", for graphic art is still something new in Kathmandu.

The exhibition, which has inaugurated by Mr. G.B.Karki, Asst. Minister for Education, at the Nepal Bharat Sanskritik Kendra, New Rood, on Saturday afternoon, comprises of 26 graphic paintings 10 woodcuts, 9 mono types, 4 lino cuts and 1 each offset, lino and silk screen. As an added attraction are 13 water colour landscapes done by the artist in the week he has been in Kathmandu.

Any lover of art would find it worthwhile to have a close look at these exhibits and hear from their creator who is usually around, about the processes by which these paintings were produced.

I was particularly impressed by six of the 26 graphic paintings, four of them wood cuts and two lino cuts. There were no titles given to the exhibits and therefore Mr. Dhir painstakingly went around telling the interested viewer the title of each piece.

Best among the wood cuts and in my opinion the best exhibit of the show was No. 21 (Sister and Brother). This is a piece where perfect use has been made of the medium. It's boldness strikes even a layman on the very first viewing. The colour scheme is just what one could wish for. The combination of Indian Red with Light Red goes fairly well with the bluish green. The overall impression left on the viewer is so strong that he is likely to completely ignore the folds on the paper on which the painting has been executed.

Second rank would go to No. 10 (Benares Ghats). This lino cut (so called because linoleam is the medium used) exhibits the patience with which Mr Dhir has worked. As many as five colours and this means five stages of production-have been used. But in spite of it, the cool effect of the calm scene is somehow conveyed to the viewer. The solid black boats in the centre foreground enhance the values of the diagonal composition of this painting. Two minus points about this one: One, the bottom right hand corner is damaged: Two, This one has been put up in such an odd spot that the viewer has to o[illegible] several hurdles in w[illegible] to have a closer look [at] th[e] work.

[No.] 5 (Gossip), a wood c[ut] c[ould] also have been one [of] th[e] best on display. T[he] reason why it is not is that [it] suffers from uneven [d]istribut[ion] of the vermilion which [has] apparently been washed aw[ay] in parts, thus leaving [a] "patchy" effect. This does [not] happen in the case of No [illegible] (Going to Market), a lino c[ut] as several cuts have be[en] harmoniously overlapped, le[a]ving a "pleasing" [illegible] eye [illegible]. This is very [certainly] [a] bold experiment.

Although it is comparatively [a] smaller wood cut, No. 1 [illegible] has a beautiful effe[ct] due primarily to the [illegible] use of Indian Red.

No. 7 [illegible] is another impressive [illegible] principally because of [illegible] position and the three colour combination. The [illegible] [illegible] blend well with th[e] emerald green and yellowish grey. Another print of th[e] (No. 3) in olive green [and] black fails to catch the eye.

Coming to the 13 water colour landscapes of Kath[mandu] mandu area, one is struck b[y]

Contd on page 4 col 2

Dhir's Graphics Impressive

BY DAN

The paintings of Mr. R.S. Dhir now on display at Bharat Nepal SanskritKendra are potent enough to impress a viewer in many respects. In the first place one is touched by its strikingly balanced interplay of colours and boldness of strokes. Furthermore appealing is their easily understandable quality As one takes round the gallery automatically the paintings lead majority of people to utter with feeling of identity "After all these are not abstract and perplexing."

Of the 31 pieces of paintings on show-26 in Graphic Art and 13 in watercolours all inscapes — painting No 8,10,30 21 and 25 are outstanding. On the whole these, very heartly, manifest painter's boldness and purpose.

Happily, Mr. Dhir's paintings in Graphic have been successfully able to chose varied modern mediums such as linocuts offset, woodcut, Silk s c r e e n, monotype, though in theme they seen to be rather limited. The portraitson conventional subjects such as fruits, animals potteries etc on show give testimony to this fact.

The landscapes which present various glimpses of rural Kathmandu and which, as the artist told this writer, are his works performed during his weeks stay here, very amply throw light on the painters love towards Nature and his speed in painting. Dhir's rlealstic presentation and fast hand are certainly some thing tobe applauded.

Also in water colour landscape paintings influences of Grapnic Art are traced in Mr Dhir's performances. It would be far better if he succeeds to keep away from such influences for distinction.

Mr Dhir's painting also manifest that he is now not very far from having his individual style.

Mr. Dhir—30—an Indian artist of Punjab, a greaduate of arts from Lucknow University, is working now as lecturer in Fine Arts College, BHU, Banaras.

The one man show of Mr. Dhir's painting which was declared open by Deputy

(Contd on Col 7)

वाराणसी : धीरकी तूलिका द्वारा अंकित

—घनश्याम रंजन—

कलामें कलाकारकी प्रतिभा मुखरित होती है—यह एक सत्य है। इसे कोई नकार नहीं सकता। किसी कलाकारकी कृतियोंको समझनेके लिए कलाकारको जानना जरूरी है।

श्री आर० एस० धीर आजकल बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें ललित कला विभागमें व्याख्याताके पदपर कार्य कर रहे हैं। इस पदपर आनेसे पूर्व श्री धीरने कलाके क्षेत्रमें अपना कुछ स्थान बना लिया था। तब वह कलरग में विशेषकर कार्य किया करते थे। मैं इनकी कलाको तबसे देखता आ रहा हूं। स्थल दृश्यांकनमें इन्होंने जिस क्षमताका परिचय दिया था वह क्षमता इधरके उनके हेल चित्रोंमें भी दृष्टिगोचर हो रहा है। हेल रंगोंमें उन्होंने अपनी पहले वाली मूर्त शैलीको नया रूप दिया है। यद्यपि अब भी वे पूर्णरूपेण अमूर्त चित्रांकन नहीं करते हैं, फिर भी मूर्त और अमूर्तके मध्यमें उनकी चित्रकलाको रखा जायगा। और इस शैलीमें उनका व्यक्तित्व साफ झलक मारता लगता है। तूलिकाके सशक्त संस्पर्श और रंगोंका संयोजन इनकी चित्रकलामें एक विशेषता रखते हैं। पैलेट चाकूके आघातों में प्रवाह है और संयोजन में प्रौढ़ता। मैंने इनके पहलेके चित्र भी देखे हैं जिनमें वाराणसीका चित्रण किया गया है। किन्तु इधर वाराणसीके चित्रणमें उनकी तूलिकाने जो नयी देन दी है वह प्रशंसनीय ही नहीं श्लाघ्य भी है। वाराणसीके चित्रणमें गंगा तट सीढ़ियां और छतरियां तथा सांड़ आदिका संयोजित चित्रण करना ही पर्याप्त नहीं होता है। इस प्रकारके चित्रणमें जबतक वाराणसीकी गंध नहीं आती तबतक चित्रांकनको प्रौढ़ तथा उच्चता प्राप्त नहीं हो सकती। श्री धीरके चित्रोंमें मुझे वह प्रौढ़ता दिखाई पड़ती है।

अभी हालमें ही दिल्ली महानगरोंमें एक ग्रुप शोमें श्री धीरके चित्र भी सम्मिलित थे उनमें भी वाराणसीका चित्रण लगता है वाराणसी आनेके बाद धीरके मस्तिष्क पर वाराणसीका इतना अधिक प्रभाव पड़ा है कि वह उस प्रभावको चित्रोंके माध्यमसे अभिव्यक्ति प्रदान करनेको विवश हो गये हैं। मुझे लगता है यह उनकी विवशता ही है। केवल चित्रण करनेके लिए ही वाराणसी चित्रित नहीं करते।

मैंने बहुत पहले श्री रामकुमार द्वारा चित्रित वाराणसीके चित्र भी देखे थे। और धीरके भी चित्र देखे हैं। किन्तु श्री रामकुमारके वाराणसी चित्रोंमें वह स्वाभाविकता विशेष नजर नहीं आती जो धीरके चित्रोंमें मिलती है। इसका कारण सम्भवतः धीरके रोम-रोममें वाराणसीका समा जाना ही सकता है।

श्री धीर अबतक चार व्यक्तिगत प्रदर्शन बनारस, लखनऊ और काठमाण्डू में कर चुके हैं। साथ ही विभिन्न कला प्रदर्शनियोंमें अनेक चित्रोंका प्रतिनिधित्व रहता है। मैसूर, अमृतसर आदि कला संस्थाओंके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश कलाकार संघने भी इनकी कृतियोंपर पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। मैसूर प्रदर्शनीमें तो इनके एक कलरंग चित्रपर स्वर्णपदक भी मिल चुका है।

काशीके घाट — चित्र—धीर

समस्त है । अभी दर्शक की दृष्टि एक झांकी की अभ्यस्त नहीं हो पाती कि दूसरी प्रस्तुत हो जाती है, फिर तीसरी और फिर चौथी । पहले इस बारादरी में मुर्दा अजायबघर था — जड़ वस्तुओं का स्थायित्व प्रदर्शित किया जाता था, दर्शक बदलते थे, दृष्टि में थोड़ा बहुत हेरफेर हो जाता था, किन्तु अकादमी की स्थापना के बाद रंग और रेखाओं से जड़ता में सजीवता प्रदान की जाती है और

आर. एस. धीर

है । हां, तो कहा न मैंने यह लाल बारादरी है, लाल संभवतः रमणीय कला का प्रतीक बन गया है और बारादरी एक बिरादरी के लोगों का मिलन-स्थल ।

इस बार प्रदर्शनी कक्ष में प्रविष्ट हुआ तो कुछ नयी बात लगी — चित्रकारों के नये नाम, शैली और कलम की नवीनता और प्रस्तुत करने की विधा भी सीधी-सादी और साफ । यह वाराणसी के दस उठते-ऊगते और उभरते चित्रकारों की प्रदर्शनी थी । तीस-बत्तीस चित्र होंगे कुल मिलाकर । अधिकांश तो कपड़े पर बने तैल चित्र थे, केवल कुछेक वुड-कट या अन्य शैली के ।

मेरी जिज्ञासा तीव्रतम थी, क्योंकि प्रकोष्ठ में फैली-बिखरी विविधता की एकरूपता से मैं स्तंभित था । एक प्रश्नवाचक था मेरे लिए कि सांध्य की यह [प्रदर्श]नी के एक प्रबन्धक ने संकेत किया — बड़ा आकर्षक है यह चित्र । चित्रकार ने अभी तीस-बत्तीस बसंत ही देखे हैं और पर लगता है उसके जीवन का हरेक बसंत प्रतिभा की एक नयी किरण लेकर अवतरित हुआ है । प्रबन्धक महोदय मेरी उत्सुकता देखकर कहते जा रहे थे— जिनके चित्र सामने देख रहे हैं न आप, ये सभी तीस-पैंतीस वर्ष की अवस्था से कम ही हैं और उनमें से कुछ ने तो अभी तीन दशक भी पूरे नहीं किये हैं । इनमें से कोई बड़ोदा से आया है तो कोई बम्बई से; कोई दिल्ली का पढ़ा हुआ है तो कोई लखनऊ का; और हां वाराणसी के ही पले - बसे हैं कुछ । पर सबमें समान रूप से एक उमंग है, एक उत्साह और तूली के माध्यम द्वारा एक सर्जनात्मक प्रेरणा प्रदान करने की प्रबल उत्कंठा ।

(शेष पेज २ कालम ४ पर)

काशी : गंगा तट चित्र—धीर

काशी : सीढ़ियां चित्र—धीर

जिसे मैं भुला नहीं सकता

(... १ कालम ७ से आगे)

बात करते-करते हम श्री ... धीर के ... चित्र ... गये । श्री धीर लख- ... के छात्र रहे हैं और उनके चित्र के देखते ही उनके अन्य ... चित्रों का स्मरण हो आया । कुछ वर्ष पूर्व मैसूर की ... प्रदर्शनी में स्वर्ण-पदक ... हुआ था उन्हें । उन दिनों पत्रिकाओं में बड़ी चर्चा रही उनकी ।

... चार-छै बार विविध ... नियों में उनके चित्र देखे— ... और सुकुमार । तब ... कभी किसी ने बताया था कि यह श्री बी. एन. आर्य ... मान सुयोग्य गुरु के योग्य हैं । पिछले वर्ष लखनऊ के ... में उनके ग्राफिक ... की प्रदर्शनी हुई थी । फिर पत्र-पत्रिकाओं में उनके ... की प्रदर्शनियों के विषय में ... सुनता रहा । अभी मैं इन ... में ही सोचा था कि एक ... ने करीम मामदानी के ... की ओर संकेत करते ... —यह वुड-कट है न ।" ... तो सचमुच ही यह एक वुड-कट था— एक ... पोयड की मुखाकृति के ... मन सहृदयक की जिज्ञासा ... —आपका अनु- ... है । ... ही उत्कृष्ट

... की आवाजें
... सूरज घई

... यह । देखते नहीं हर ...-सी देती है । अवसाद ... प्रखर भाव हैं इस चेहरे ... ही काशी के घाट का ... था — बड़ा सजीव, ... कलाकार थे श्री धीर । ... प्रकोष्ठ में घूमते हुए ... कुछ ने रोका, ... और कुछ ने अपनी ... । शांतु पटेल का चित्र ... स्वीकार ही नहीं करता ... लगा कि इसे दो- ... में नहीं बाँधा जा ... एक रहस्यात्मक अनु- ... उसके पीछे जिसे भाषा- ... असमान्य थे । कुछ यही ... चार-पाँच अन्य चित्रों के विषय में । उनकी सांकेतिकता पैनी थी, सहज ही अन्तर्मन में प्रविष्ट हो जाने वाली । पैर विभूति चक्रवर्ती का यह चित्र तो मानो चिल्ला-चिल्ला कर अपना नाम बता रहा हो । अंग्रेजी में इसे 'हांटेड' कहलें या हिन्दी में मुतहा ।

लीजिये ये अनिल और सुधीर के चित्र हैं और ये अफसार और दासके और देखिये वह कोने पर लगा चित्र करुणा निधान का है । अपने साथियों की विशेषता को ताल-मेल बिठा लिया है उन्होंने । एकरूपता की पृष्ठभूमि में भी सबसे अपनी विशेषता है । यदि अनिल

वुडकट : करीम ममदानी

दर्शक का हृदय पकड़ लेते हैं तो सुधीर उसकी अनुभूति को सहलाने में सिद्धहस्त हैं । अफसार और दास रेखाओंके घुमाव-फिराव में दक्षऔर कला के सूक्ष्म-अचेतन पक्ष के समर्थ अंकनकार हैं ।

जीवन के विविध क्षेत्रों के समान ही कला के क्षेत्र में भी मूल्य, मापदण्ड और विधाओं में तेजी के साथ हेरफेर हो रहा है । मेरे देखते ही देखते श्री धीर कहाँ से चले, कहाँ रुके और कहाँ पहुँच गये । प्रत्यावर्तन की इस धूमिली छाया से हम भयभीत हों, इसका तो कोई कारण नहीं; हम अपने पूर्वाग्रह के वशीभूत होकर उसकी उपेक्षा कर दें, ऐसा भी उचित नहीं और सही तो यह भी है कि नवीनता को मौलिकता समझने की भूल करके हम उन अपूर्व और अभूतपूर्व कलाकृतियों को रूढ़िवादी या घिसी-पिटी बतला दें जिन्होंने दशकों नहीं शतियों तक प्रासादों, मन्दिरों और प्रस्तर खण्डों का अलंकरण किया है ।

हां, तो कुछ और सोचने लगा मैं । प्रसिद्ध चित्रकार आचार्य श्री दिनकर कौशिक ने इस प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए ठीक ही कहा था कि ये नयी प्रतिभाएं हैं, हमें इनका समादर करना चाहिए । पर प्रश्न यह है कि कलाका समादर करे कौन— व्यक्ति, संस्था या दर्शक । निस्संदेह दर्शक । वही कला का सच्चा प्रशंसक और पारखी है ।

प्रदर्शनी में कोई अधिक भीड़ नहीं थी, दर्शक थोड़े ही थे । संभवतः पर्याप्त प्रचार नहीं हो सका था इस प्रदर्शनी का, वैसे इस कार्य में अकादमी सदैव पर्याप्त रुचि लेती है । चित्रों के नीचे शीर्षक न देने का नया प्रयोग भी अच्छा नहीं रहा । पत्रकारों, कला समीक्षकों तथा चित्रकला से रुचि रखने वाले जिज्ञासुओं को तो ऐसे अवसर पर स्मरण कर ही लिया जाना चाहिए । यह इस सबकी अपेक्षा कलाकार तो करता नहीं और न उसे करना ही चाहिए । आत्म-विस्मृति का अभिलाषी कलाकार बहुत दिनों तक अहं का पोषण करके जीवित नहीं रह सकता । मेरा अभिप्राय है प्रचार-प्रवृत्ति साधना में सबसे अधिक बाधक है—चाहे वह जीवन के किसी क्षेत्र में भी हो ।

अभी उस दिन रवीन्द्रनाथ त्यागी की पुस्तक पढ़ रहा था— 'सूखे और हरे पत्ते' । इस काव्य संकलन के विषय में पंत जी ने लिखा था — 'ये कविताएं अपने भीतर नयी किरणों का नीड़ छिपाये हैं । सरल, मधुर, प्रेर-

शीत ऋतु : आर. एस. धीर

णाएं — ऐसा लगता है अपने आपही काव्य की भाषा में ढल गयी हैं । रचनाओं में कवि का व्यक्तित्व स्पष्ट झलकता है । उसकी सौन्दर्य दृष्टि साधारण दैनंदिन की होते हुए भी मार्मिक है, सूक्ष्म है ।'...लगता है कि पंक्तियां मानो इस सूक्ष्म कला-प्रदर्शनी के लिए ही कही गयी हों । और फिर प्रदर्शनी के चित्रों पर एक उड़ती हुई दृष्टि डालते हुए जब मैं प्रकोष्ठ के बाहर निकला तो याद आ गयी 'सूखे और हरे पत्ते' की पंक्तियां- कोट की तरह उतार कर अपनी जिन्दगी किसी को दे सकता हूँ

° ° °

छिपे हुए पाप की तरह .

LUCKNOW: NAVJIVAN,

धीरकी कला और आम आदमी

कला सबके लिए है। चन्द लोगोंकी अर्थ सिद्धिके लिए नहीं। काशी हिन्दू विश्वविद्यालयके प्रमुख चित्रकार श्री आर एस धीर ने स्पष्ट शब्दोंमें कहा कलाकारको जन साधारणके बीच रहकर उसकी आन्तरिक जिन्दगीको देखना, उसका अध्ययन करना अति आवश्यक है। मनुष्यके अभाव, घुटन तनाव संघर्ष और आन्तरिक पीड़ा तथा खुशीके क्षणोंको चित्रित करना कलाकारका उत्तरदायित्व भी है और नैतिक कर्तव्य भी, यदि कलाकार यहां उदासीन है तो वह समाज और राष्ट्रको ही नहीं अपने आपको भी धोखा दे रहा है। निश्चित ही धीरके कथन की सत्यतामें संदेह नहीं किया जा सकता।

श्री धीर उन कलाकारोंमें से है जो संघर्षशील जीवनके बावजूद

चित्रकार श्री धीर

घंटों काम करते हैं और गजबकी स्फूर्ति रखते हैं। उनकी संवेदनशील आंखे काम करते हुए मजदूरोंसे लेकर कुर्सी पर बैठे हुये मठाधीशों तक हर स्थितको देखती हैं।

पंजाबमें जन्मे श्री धीरका बचपन लखनऊ जैसे रंगीन शहरमें बीता। आपने १९६१ में गवर्नमेण्ट कालेज आफ आर्टसे चित्रकलामें डिप्लोमा तथा १९६३ में पोस्ट डिप्लोमा प्राप्त किया और फिर वाटर कलरका एक जोरदार अभियान शुरु हुआ।

आपकी वाश पेण्टिंगके कुछ दृश्य अब भी याद आते हैं जिसमें वाराणसी सीरीजके चित्र मख्य हैं। रेलकी पटरीपर कोयला बीनते हुए मजदूरका चित्र, कामसे थककर विश्राम करते हुए मजदूर तथा काली पूजाके चित्रमें भक्तोंके चेहरेके भावों दृश्य अब भी आंखोंके आगे घूम जाते हैं। आपने जहां साधारण जन और देवी देवताओंको दिखाया है वहीं गंगाके बीच बजरेपर बैठे हुए सैलानियोंका मनोरंजन करती हुई नर्तकीको बड़ी भाव पूर्ण मुद्रामें चित्रित किया है। वैसे भी आप अपनी राहमें अच्छी चीजोंको आत्मिक एकांतिक ढंगसे देखते रहे हैं। वाराणसी के घाटों तथा गलियोंका तो उन्होंने विशेष रूपसे अध्ययन किया है यही कारण है कि वाराणसी सीरिजके चित्र उनके चित्रकार जीवनके महत्वपूर्ण अंग बन चुके हैं। इन चित्रोंको आप देश विदेशके प्रमुख नगरोंमें प्रदर्शित भी कर चुके हैं।

इसके बाद आपने तैल रंगोंसे स्टील लाइफ (व्यक्ति चित्रण) का अभियान शुरु किया लेकिन डोक्टर के मना करनेपर (तैलरंगोसे एलर्जी के कारण) यह ज्यादा दिनों न चल सका और उन्होंने कोलाजके रूपमें अपने भावोंकी अभिव्यक्ति शुरू कर दी।

श्री धीरके कोलाजोंको याद करें तो पायेंगे कि आपने अपनी भावनाओंको कागज टाट लकड़ी प्लास्टिक और कांचकी गोलियों जैसी अनेक रचना सामग्रियोंके माध्यमसे उरेहा है। अनेक कोलाज दो प्रकारके है। कथा वस्तु प्रधान कोलाजोंमें धीर अपने सांस्कृतिक प्रतीकोंके माध्यमसे अपनी धार्मिक चेतनाकी अभिव्यक्ति करते है वहीं शून्य या अरूपवादी कोलाजोंमें विभिन्न प्रकारके टेक्सचर तथा चटकीले रंगोके सामंजस्य द्वारा एक लयात्मक सन्तुलन तथा आध्यात्मिक प्रभाव उपस्थित करते हैं।

—महेशचंद्र

कोलाजोंके बाद आपने अपना अगला अभियान एक आन्दोलनके रूपमें समीक्षावादी कलाकारोंके साथ शुरु किया जिसमें आपने पश्चिमी माप दंडोंको नकारकर भारतीय आदर्शोंपर आधारित मौलिक चिंतनसे ठेठ भारतीय जीवनसे जुड़ी हुयी कृतियोंका सृजन करनेका संकल्प लिया है। आपने अपने चित्रोंमें जैन चित्रकलाके मूलाधारोंपर अपनी शैली निर्मित करनेका प्रयास किया है। इन समीक्षावादी चित्रोंकी पहली प्रदर्शनी अन्य समीक्षावादियोंके चित्रोंके साथ जनवरी १९७९ में दिल्लीमें हुयी थी जिसका उद्घाटन जनता पार्टी अध्यक्ष श्री चन्द्रशेखरने किया था। श्री चन्द्रशेखरने भी इनके चित्रोंकी प्रशंसाकी थी। आपके चित्रोंमें आपातकालका भूत, दहेजपर शादी व उतार चढाव नामक रूपसे सराहनीय रहे।

श्री धीरके पास स्वर्णपदक और पुरस्कारोंकी फहरिस्त है। आपने समीक्षावादियोंके साथ जिस कला आन्दोलनका सूत्रपात किया, निश्चित ही एक साहसिक कदम है। आशाकी जा सकती है कि श्री धीरमें कलाको जनमानस तक पहुंचाने समर्थ होंगे। विदेशी प्रभावको कम कर एक आदर्शके रूपमें सामने आयेंगे।

Back to business

THE recently renovated hall of the Lalit Kala Akademi is once again humming with activity, as this time twelve eminent painters from various states attend a camp sponsored by NCZC based in Allahabad with the Akademi acting as coordinator.

The artists include Mamoon Nomani, Sharad Pandey, Rajendra Prasad, N. Khanna and R.S. Dheer from Uttar Pradesh, Vijaya Bagai, Naresh Kapooria and Surinder from Delhi, Abbas Batliwala from Rajasthan, S.K. Bhardwaj from Haryana, Shyam Sharma from Bihar and Yusuf from Madhya Pradesh.

The ten-day camp, incurring a cost of around Rs 8,500 per artist by way of fare, boarding, lodging, material cost and incentive amount, has brought under one roof, those conforming to disciplines ranging from realistic to abstract and depictions, bizarre to straight for ward.

Commenting on the basis of selection, Mr Satish Chandra, chairman, State Lalit Kala Akademi, while emphasizing that he was confident that largely proper procedure had been followed, also conceded that a case or two did appear to have fallen a little weak, and the selection on that count could be questioned.

However, he refused to divulge further information on this issue.

This first-ever such collaboration, and a lavish one at that, between the NCZC and Akademi, the camp, inaugurated by the governor Mr Motilal Vora last week, has been hailed by the artist community, which now finds new vistas of opportunity opening up before them.

Eminence being the chief criteria, with the bio-data of the participants sprinkled with awards and other achievements, this has sure been a feather in the cap of the Akademi--provided it does not end up in generating some unsavoury controversy.

—Sharmishtha Sharma

(४) 'आज' लखनऊ ३ मार्च १९९८

लखनऊ महानगर

कम्प्यूटर से बने रंगीन चित्रों की प्रदर्शनी

लखनऊ, सोमवार (सांस्कृतिक प्रतिनिधि)। आधुनिक कला में चित्रांकन एवं तकनीकी स्तर पर आये दिन कुछ न कुछ प्रयोग हो रहे है अब चाहे उसके पीछे कलाकार की भावना मौलिक हो या न हो यह अलग बात है। इसी प्रकार का एक तकनीकी प्रयोग प्रो.आर.एस. धीर ने किया है कम्प्यूटर द्वारा चित्रांकन करके। इन दिनों उनके ऐसे ही ३६ चित्रों की कला प्रदर्शनी सृष्टि कला दीर्घा में दस मार्च तक आयोजित की गई है। प्रस्तुत प्रदर्शनी का उद्घाटन प्रो.आर.एस. विष्ट ने किया। प्रो. धीर लखनऊ आर्टस कालेज की ही प्रोडक्ट है और उन्होंने प्रो.बी.एन. आर्य से प्रशिक्षण प्राप्त किया था। उसके बाद बी.एच.यू. ललित कला संकाय में कला गुरु एवं विभागाध्यक्ष पद पर कार्य करके सेवानिवृत्त हुये।

प्रस्तुत कला प्रदर्शनी में निर्मित रंगीन चित्रों में श्री गणेश पर आधारित संयोजन, कई दृश्य चित्र उनकी कला के आत्म विश्वास को मुखरित करते है। सीधी साधी सामान्य दर्शक की समझ में आने वाली उनकी कला के संयोजन तकनीकी दृष्टि से चम्तकारिक है। दो चित्रों को छोड़कर बाकी ३४ चित्रों के रंगों के मिश्रण एवं फैलाव का कम्प्यूटरी चित्रांकन अपनी फिनीशिग वैल्यू के कारण निश्चय ही दर्शनीय है। लखनऊ में अपने प्रकार की यह प्रथम कला प्रदर्शनी है। इसके लिये प्रो. धीर की पूरा अतीत बहुत पीछे चला जाता है। यहां पर मुखरित हुई है। उनकी लंबी कला साधना।

प्रस्तुत चित्रों में जहां मानवीय आकृतियां, मकान, पक्षी और श्री गणेश, शिवलिग, ओम आदि मखरित हुये है वहीं पर प्रकृति को भी विभिन्न कोणों से मुखरित किया गया है। इसमें आकाश को कई धरातलों पर रंगों के मिश्रण एवं फैलाव के अद्भुत परिदृश्य में दर्शाया गया है। यहां पर भी धीर जी की प्रयोगात्मक मनोवृत्ति ने अपनी कल्पना शीलता का परिचय दिया है। वाह्य एवं आन्तरिक रेखा ये स्पष्ट एवं सशक्त है। निगेटिव प्रासेस के रंग विहीन दो चित्र रंगीन दृश्य चित्रों के ही विपरीत रूप है। दर्शक को यहां पर उन्होंने चौंकाया है। तकनीकी दृष्टि के जानकार चित्रकार पी.सी. लिटिल ने उनके ब्रोसर में इस तकनीकी पर अच्छी जानकारी दी है।

INDIAN ARTISTS IN CAPITAL

Kathmandu, Oct. 30.

An Indian artist Mr. R.S. Dhir has arrived here form Banaras with a plan to hold a one—man paintings exhibition.

Mr. Dhir who holds Masters Degree in painting from Lucknow university and is now a lecturer in Banaras Uni—versity, had his exhibitions a number of times also in his home-country, India.

He told our correspondent that he hopes to hold exhibitions with the help of some prominient art association of Nepal, probably NAFA

Although Mr. Dhir is a man of varied interest in arts, he is an ardent lover of Graphic Art.

Modern Trends From Ancient City

By An Art Critic

VARANASI is famously known as an eternal city like Rome. Yet in the realm of art one can witness an active ferment and a keen sensibility to accept time as a palpable dimension. Ten active painters from Varanasi have united together to make their debut in the capital. The violent distortions of form are a portent and a writing on the wall. They seem to prophesy an age of upheaval and unrest. The artist is no more content to portray the age-old themes of pastoral peace and beatitude. Now the seething mass, threatening its own existence, is charging the horizons. One can at once spot out the talented expression of Mamdani and Suraj Ghei which bears a stamp of inner unrest. Dhir's work, on the other hand, has a tentative mood of experimentation. His graphics make an impact of considerable value. Anil, Bibhas Bibhuti, Karuna and others contribute in a fair measure to the variety and excellence of the exhibition. The exhibition was inaugurated by Principal Dinkar Kaushik, at the Lal Baradari on Monday. The show, which has been sponsored by the Lalit Kala Akadami, will be open to the public till May 14.

Graphic Art On.

Contd from page col 5

the freshness of colours a[illegible] boldness of brush strokes. (these No. 4 (View from t[illegible] Bagmati) creates a goo[illegible] dimensional effect by the u[illegible] of various colours. The brig[illegible] cobalt blue on one hill, on th[illegible] woman's skirt and across th[illegible] sky, creates an acceptabl[illegible] compositional effect. Gree[illegible] plays predominant part in a[illegible] the landscapes.

DHIRS ..

Contd From Col 4

Education Minister Mr Gyanendra Bahadur Karki on last Saturday. Mr. Karki told this writer during the inauguration that he was impressed by Mr. Dhir's paintingsThe Minister expressed good wishes for him Secretary Mr.Dirgha Koirala w.s also presnt on the occasion

The show will conclude the eveing'

5 राष्ट्रीय सहारा
लखनऊ, मंगलवार 3 मार्च 1998

'माउस' की कूची से उभरीं खूबसूरत चित्रकृतियां

सृष्टि कला दीर्घा में आर.एस.धीर के कम्प्यूटर चित्रों की प्रदर्शनी

सहारा समाचार

लखनऊ, 2 मार्च। कम्प्यूटर स्क्रीन के कैनवास पर 'माउस' की कूची से आकार लेती कलाकार की कल्पना उसकी रंग चयन व मिश्रण की परिपक्वता से कितनी खूबसूरत और अकृत्रिम हो सकती हैं, यह प्रो. आर.एस. धीर की कम्प्यूटर कलाकृतियों का अवलोकन कर महसूस किया जा सकता है। प्रो. धीर की कला-कृतियों की प्रदर्शनी इन दिनों सृष्टि कला दीर्घा में लगायी गयी है। प्रदर्शनी में 34 रंगचित्र एवं दो श्वेत-श्याम चित्र शामिल हैं। प्रो. धीर ने कुछ नया करने की ललक में 'माउस' का चयन किया और रेखाओं पर नियंत्रण कर आकार रचे हैं। कलाकार ने इस भ्रम को तोड़ा है कि कम्प्यूटर से बनी कृतियां केवल प्रिन्ट हो सकती हैं एवं इनके मशीनी होने का आभास होता है। प्रो. धीर ने इस भ्रम को तोड़ने के लिए किसी विशेष कम्प्यूटर पैकेज का सहारा लेने के बजाय सामान्य माउस से रेखाएं व डाट्स बनाये हैं। साथ ही इनमें रंगों को इतनी खूबसूरती से ढाला है जैसे कैनवास पर ब्रश से रंग संयोजित किये गये हों। रंगों का फ्यूजन व विविध शेड वास्तविक लगते हैं।

नव प्रयोग के दौरान प्रो. धीर ने यह प्रयास किया है कि कम्प्यूटर चित्र जलरंग व तैलरंग के समान नजर आये। अपने इस प्रयोग में कलाकार ने विविध विषयों के इर्द गिर्द 'माउस' को गति दी है। प्राकृतिक सौन्दर्य, काशी के घाट, भगवान गणेश के अतिरिक्त प्रो. धीर ने कुछ 'संयोजन' बनाये है। प्रत्येक चित्र में 'स्पेश' और आकारों का संतुलन तथा पूरी कलाकृति में आकारों का संयोजन काबिले तारीफ है। इस संतुलन में कमी की बात कहना वाजिब नही है क्योंकि प्रो. धीर काफी वरिष्ठ कलाकार हैं और इसका उन्हें खासा अनुभव है। चित्र को संतुलित करने के लिए बनाये गये आकार चित्र को नया अर्थ देते है। भगवान गणेश के एकचित्र में अर्द्धचन्द्र, दो शिवलिंग व एक गोलाकृति जहां चित्र को 'बैलेन्स' करती है वहीं शिव व गणेश के सम्बन्ध को दर्शाती है। प्रकृति चित्रण में प्रो. धीर ने रंगों का खूबसूरत चयन किया है। पहाड़ों में लुका छिपी करते बादलों का चित्रण करते समय कलाकार ने कृत्रिमता को कोसों दूर कर दिया है। ये लैण्डस्केप वाकई तारीफ के काबिल है। हरे,पीले व नीले रंग के फ्यूजन से बने ये लैण्डस्केप प्रो. धीर के नवप्रयोग के सफलतम नमूने हैं। आकारों के संयोजन सामान्य से अलग हटकर नहीं है।

प्रो. आर.एस. धीर ने लीक से अलग हटकर काम करने की कोशिश में जहां कुछ आकर्षक चित्रकृतियां बनायी हैं वहीं कुछ काफी साधारण 'लुक' देती हैं। रंगों के मामले में भी प्रो. धीर काफी सचेत लगते हैं लेकिन चटख रंग उनकी खास पसन्द बन गये हैं। वाराणसी में कला साधना कर रहे प्रो. धीर अपने काम के विषय में कहते हैं कि कुछ नया करने के लिए उन्होंने कम्प्यूटर को चुना। प्रचलित माध्यमों से बने रंगचित्रों की तरह कम्प्यूटर चित्र बनाने का उनका पहला प्रयास चार माह पहले आरम्भ हुआ। उन्होंने अब तक 80 चित्रकृतियां बनायी हैं, जिसमें 36 यहां प्रदर्शनी में शामिल की गयी हैं। उनके चित्रों की अगली प्रदर्शनी बांग्लादेश में लगेगी। सृष्टि कला दीर्घा में उनके कम्प्यूटर चित्रों की प्रदर्शनी 10 मार्च तक चलेगी।

वरिष्ठ चित्रकार **आर.एस.धीर** को सीनियर फेलोशिप
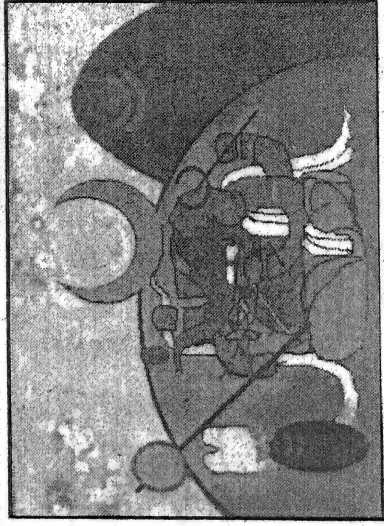
'वाश और लोक शैली को विशिष्ट अर्थ मिला'

सहारा समाचार
वाराणसी, 14 जनवरी

चित्रकला में वाश शैली, लोक शैली और यथार्थ चित्रण शैली को विशिष्ट अर्थ सौंपने वाले नगर के वरिष्ठ चित्रकार रघुबीर सेन धीर को केन्द्रीय संस्कृति विभाग ने दो वर्ष की सीनियर फेलोशिप प्रदान की है। चित्रकला की वाश शैली के लिए देश भर में विख्यात लखनऊ आर्ट्स कॉलेज और फिर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से दीक्षित श्री धीर कहते हैं कि पहले चार दशकों में वाश पेन्टिंग शैली को विशिष्ट अर्थ देने की जो गौरवमयी परम्परा विकसित हुई थी, वह अक्षुण्ण होते हुए भी आज शिथिल हुई है।

सम्प्रति बड़े आकार के कैनवासों पर रामायण-श्रृंखला पर काम कर रहे श्री धीर ने पिछले चार दशकों में विभिन्न रूपाकारों के अनुशासन में काम किया है। एक ओर जहां उन्होने वाश, जल रंग और तैल रंगों में यथार्थधर्मी काम किये, वहीं मधुबनी लोक कला से आगे निकलकर लोकधर्मी कला विशिष्टताओं को भिन्न आयाम सौंपे। काशी के घाट उनके कैनवास पर लैण्डस्केप के तौर पर भी हैं और अमूर्तन में भी। प्रायः पांच से आठ फुट के कैनवास पर काम करने वाले आर.एस. धीर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से सेवानिवृत होने के बाद सम्प्रति काशी विद्यापीठ के ललित कला संकाय में विजिटिंग प्रोफेसर है। सुधीर खास्तगीर के समय के लखनऊ आर्ट्स कालेज तथा अब के समय और फिर श्री कुलकर्णी के समय में दृश्य कला संकाय, हिन्दू विश्वविद्यालय में पढे श्री धीर साठ और नब्बे के दशक में कला दौर में सीखने-सिखाने के स्तर पर काफी फर्क पाते हैं वे बताते हैं, श्री खास्तगीर और ए.एन. रॉय जैसे
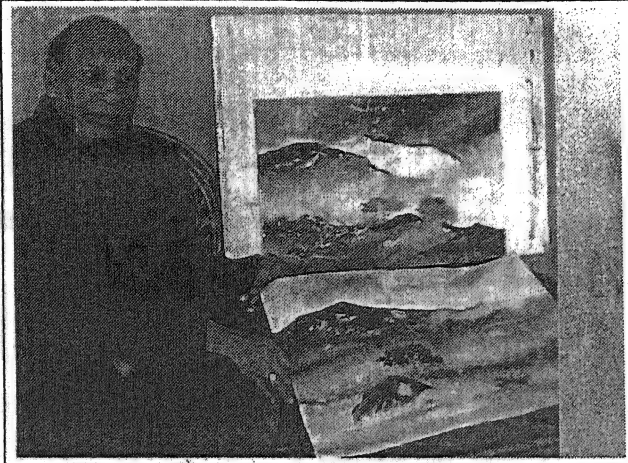
शिक्षकों ने मुझे कला की प्रेरणा दी।

बद्रीनाथ आर्या जैसे वाश शैली के गुरुओं ने मुझमें लगन का बोध दिया। रियलिस्टिक से अमूर्तन की ओर गया तो अमूर्तन भी अर्थवन हुए। आज के विद्यार्थी कलाकार सीधे अमूर्तन से शुरू होते हैं। इसी कारण कला और कला वातावरण के प्रति कलाप्रेमियों की निष्ठा संदिग्ध हुई है।

वाश शैली में रची अपनी एक प्रसिद्ध कृति 'बुढ़वा मंगल' तथा पिछले तीस वर्षो में रची अपनी बहुप्रशंसित व पुरस्कृत कृतियों को सामने रखते हुए उन्होने एक प्रकार से एक मौलिक परम्परा की थाती को सामने रखा। उनके कमरे की दीवारों पर टंगे अमूर्त व जलरंग, तैल रंगों के लैण्डस्केप के बीच लगी लोक शैली की कृति को देखते ही पहले मधुबनी शैली का एहसास होता है फिर तथ्य खुलता है कि यह शैली यहां महज आधार भर है, धीर साहब ने इसे बिल्कुल मौलिक, भिन्न और अनूठी शैली में विकसित होने दिया है।

गत दिनों उन्होने पूर्व काशिराज की स्मृति में आयोजित एक कार्यशाला में लैण्डस्केप बनाये। फिलहाल वे रामायण पर काम कर रहे हैं। उसी अपनी विशिष्ट और काव्यात्मक लोक शैली में अब तक बनी दो-तीन कृतियों से वे अपना अर्थ व कला अस्तित्व सामने रखते हैं। मूलतः पंजाब में जन्मे श्री धीर इस फेलोशिप के तहत भारतीय वांगमय पर काम करने को उत्सुक हैं।

---

(४) 'आज' लखनऊ ३ मार्च १९९८

लखनऊ महानगर

कम्प्यूटर से बने रंगीन चित्रों की प्रदर्शनी

लखनऊ, सोमवार (सांस्कृतिक प्रतिनिधि)। आधुनिक कला में चित्रांकन एवं तकनीकी स्तर पर आये दिन कुछ न कुछ प्रयोग हो रहे है अब चाहे उसके पीछे कलाकार की भावना मौलिक हो या न हो यह अलग बात है। इसी प्रकार का एक तकनीकी प्रयोग प्रो.आर.एस. धीर ने किया है कम्प्यूटर द्वारा चित्रांकन करके। इन दिनों उनके ऐसे ही ३६ चित्रों की कला प्रदर्शनी सृष्टि कला दीर्घा में दस मार्च तक आयोजित की गई है। प्रस्तुत प्रदर्शनी का उद्घाटन प्रो.आर.एस. विष्ट ने किया। प्रो. धीर लखनऊ आर्टस कालेज की ही प्रोडक्ट है और उन्होंने प्रो.बी.एन. आर्य से प्रशिक्षण प्राप्त किया था। उसके बाद बी.एच.यू. ललित कला संकाय में कला गुरु एवं विभागाध्यक्ष पद पर कार्य करके सेवानिवृत्त हुये।

प्रस्तुत कला प्रदर्शनी में निर्मित रंगीन चित्रों में श्री गणेश पर आधारित संयोजन, कई दृश्य चित्र उनकी कला के आत्म विश्वास को मुखरित करते है। सीधी साधी सामान्य दर्शक की समझ में आने वाली उनकी कला के संयोजन तकनीकी दृष्टि से चम्तकारिक है। दो चित्रों को छोड़कर बाकी ३४ चित्रों के रंगों के मिश्रण एवं फैलाव का कम्प्यूटरी चित्रांकन अपनी फिनीशिग वैल्यू के कारण निश्चय ही दर्शनीय है। लखनऊ में अपने प्रकार की यह प्रथम कला प्रदर्शनी है। इसके लिये प्रो. धीर की पूरा अतीत बहुत पीछे चला जाता है। यहां पर मुखरित हुई है। उनकी लंबी कला साधना।

प्रस्तुत चित्रों में जहां मानवीय आकृतियां, मकान, पक्षी और श्री गणेश, शिवलिंग, ओम आदि मखरित हुये है वहीं पर प्रकृति को भी विभिन्न कोणों से मुखरित किया गया है। इसमें आकाश को कई धरातलों पर रंगों के मिश्रण एवं फैलाव के अद्भुत परिदृश्य में दर्शाया गया है। यहां पर भी धीर जी की प्रयोगात्मक मनोवृत्ति ने अपनी कल्पना शीलता का परिचय दिया है। वाह्य एवं आन्तरिक रेखा ये स्पष्ट एवं सशक्त है। निगेटिव प्रासेस के रंग विहीन दो चित्र रंगीन दृश्य चित्रों के ही विपरीत रूप है। दर्शक को यहां पर उन्होंने चौंकाया है। तकनीकी दृष्टि के जानकार चित्रकार पी.सी. लिटिल ने उनके ब्रोसर में इस तकनीकी पर अच्छी जानकारी दी है।

दाबाद, कानपुर, देहरादून, अलीगढ़, इलाहाबाद एवं झांसी से प्रकाशित

लखनऊ संस्करण

अमर उजाला

कानपुर, शुक्रवार, 10 अप्रैल सन् 1998 चैत्र शुक्ल पक्ष 14 सम्वत् 2055 पृष्ठ 14+4=18 मूल्य तीन रुपये

आर.एस. धीर के कम्प्यूटर चित्र

गैलरी

—अनिल सिन्हा

चित्रकला की विशाल और विविधता भरी दुनिया को देखते हुए मुझे बार-बार ऐसा लगता रहा है कि उसका एक बड़ा पक्ष है उसकी प्रयोग धर्मिता। चाहे रंग-कूची का क्षेत्र हो, चाहे उसके टेक्स्चर का, चाहे उसकी कलात्मकता तथा उपकरण का या उसकी विषय वस्तु का प्रयोगधर्मिता एक बड़ा पक्ष है जो उसके आयाम को विस्तारित करते रहते हैं। इसके विस्तार व विविधता से ही एक चित्रकार की सफलता भी छिपी हुई है। इससे होता यह है कि आधुनिक विकसित होती विज्ञान व प्रयोग तथा तकनीक की दुनिया में जो कुछ नया आता है एक चित्रकार को उसे पकड़ने, उसके अनुरुप अपनी चित्रकला व उसके उपकरण को विकसित करने का रोज नया मौका मिलता है। ठीक इसी तरह बीसवीं शताब्दी का अंत आते-आते दुनिया का सामाजिक, राजनीतिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक सभी तरह के परिदृश्य निरंतर बदल रहे हैं। यानी सामाजिक सरोकार व मूल्य बदल रहे हैं नई चुनौतियां व समाज निर्माण के नए संघर्ष रोज नया रुप ले रहे हैं। खास तौर से तीसरी दुनिया के देशों से ये चुनौतियां बड़े विकट रुप में सामने आ रही हैं, क्योंकि यहां अभी मनुष्य की मूलभूत समस्याओं का ही निदान नहीं हो पाया है - उसे किसी तरह का नागरिक अधिकार पूरी तरह प्राप्त नहीं है - वह सामान्य रुप से अपना जीवन बिता सके इसके लिए इस दुनिया की राजसत्ता व्यावहारिक रुप से कोई भी कारगर कदम उठाती दिखाई नहीं दे रही है। भारत में भी स्थिति ऐसी ही है और शोषण, उत्पीड़न, भुखमरी, अशिक्षा, बदहाल जिन्दगी, आदिमयुगीन बर्बरता तथा इन सबके विरुद्ध संघर्ष और प्रतिरोध की स्थितियां। भारत में यह सब कुछ मौजूद है। इन्हीं स्थितियों से चित्रकारों को अपनी कला के लिए विषय वस्तु भी उपलब्ध होती हैं। इसीलिए एक चित्रकार को आज एक तरफ तो अपने कला-उपकरण नए मिल रहे हैं दूसरी तरफ विषय वस्तु। इनके समुचित संयोजन के बिना आज कोई भी चित्रकार/कलाकार/रचनाकार कुछ महत्वपूर्ण दे पाएगा ऐसा नहीं कहा जा सकता। वास्तव में एक चित्रकार के सामने आज यही रचनात्मक चुनौती भी है।

इस कठिन और चुनौती भरे समय में वाराणसी स्थित जाने-माने चित्रकार आर.एस. धीर के 38 कामों की एक प्रदर्शनी 'सृष्टि' कला दीर्घा ने एक मार्च से दस मार्च 98 तक अपनी दीर्घाओं में आयोजित की। लम्बे अंतराल के बाद लखनऊ में उनकी कोई एकल (या सम्मिलित) प्रदर्शनी आयोजित हुई थी इसलिए भी और शायद इसलिए भी कि इस प्रदर्शनी में, बिल्कुल नए माध्यम में किए गए उनके काम प्रदर्शित हो रहे थे वरिष्ठ चित्रकार आर.एस. बिष्ट ने इस प्रदर्शनी का उद्घाटन किया।

आर.एस. धीर एक प्रयोगधर्मी चित्रकार के रुप में जाने जाते हैं। इन 38 कामों में भी उन्होंने तकनीक के स्तर पर नए प्रयोग किए हैं। उन्होंने अपने ये सारे काम कम्प्यूटर पर तैयार किए हैं। कम्प्यूटर पर काम करने वाले चित्रकार अभी भारत में बहुत कम हैं क्योंकि इसके द्वारा काम किए जाने की परिकल्पना और रंग संयोजन को लेकर ही अभी पूरी दुनिया के कला-जगत से स्थिति बहुत साफ नहीं है। गो कि कम्प्यूटर पर कलाकृतियां निर्मित करने या परिकल्पित करने की शुरुआत जापान के चित्रकारों ने शुरु की लेकिन मुझे लगता है इसकी प्रेरणा अमेरिका के उस कला-अध्याय में छिपी है जिसके अंतर्गत कलाकारों ने अत्याधुनिक चित्रकला के नाम पर विशाल कैनवास पर चतुर्कोणीय तथा ज्यामितिक आकारों को रंग, रेशा, धागा, जूट आदि से निर्मित करने का प्रयास किया। संभवतः स्थापत्य कला में नित नए प्रयोगों का प्रभाव था कि अमेरिकी आधुनिक चित्रकारों ने इस प्रकार विशाल कैनवास पर इस ढंग के रुपाकार और रंग सज्जा को जगह दी। इस तरह के अनेक कामों से ऐसा आभास होता था कि परिदृश्य में विशाल भवनों का आउट लाइन तैयार है चौकोर, तिरछे, पर रेखाओं से ही निर्मित। कई काम तो ऐसे भी दिखाई पड़े थे कि विशाल कैनवास है (10x12 फुट का मान लिजिए या इससे भी बड़े) उस पर कोई एक तैल रंग बहुत गाढ़ा करके पोता गया है और कहीं ऊपर एक चौकोर खिड़की खुलती दिखाई देती है या नीचे एक आयताकार दरवाजा दिख रहा है या कि पूरे कैनवास में एक छेद है जिससे कुछ रिस रहा है या उससे कोई उत्रास आ रहा है या कई चौकोर आकार एक दूसरे को काटते हुए या बड़े से छोटे और छोटे होते हुए दर्शक के ऊपर हावी होने की कोशिश कर रहे हैं आदि-इत्यादि।

आर. एस. धीर का एक कम्प्यूटर काम

इन कामों को देखकर लगता था कि जैसे किसी कम्प्यूटर पर ग्राफ पेपर्स-सा आभास देते हुए काम किया गया हो। जापान में कम्प्यूटर पर जो काम चित्रकारों ने शुरु किए उनमें प्रारम्भ में ग्राफ पेपर्स पर किए गए काम का आभास होता था। फिर निरंतर प्रयोग और परिकल्पना से इस तरह के काम में बदलाव आए पर आज भी स्थिति यह है कि चित्रकार अभी रंग-कूची से ही काम करना ज्यादा रचनात्मक और कलात्मक मानते हैं इसीलिए कम्प्यूटर पर चित्रकला के काम का विकास कम हुआ दिखाई देता है।

आज से कुछ साल पहले जयपुर हाउस, दिल्ली में 'नवकला दीर्घा' की ओर से कम्प्यूटर द्वारा तैयार किए गए चित्रकला के कुछ कामों का प्रदर्शन किया गया था पर चित्रकला की दुनिया में यह एक प्रयोग और उत्सुकता की प्रदर्शनी होकर ही रह गयी और तमाम नए चित्रकारों ने भी इसमें कोई विशेष रुचि नहीं दिखाई। कुछ काम कम्प्यूटर पर पटना में भी हुए थे और उनकी एक प्रदर्शनी लगाने की योजना थी पर वह कहां तक पहुंचा इसकी कोई निश्चित जानकारी मुझे नहीं है। आज यह भी स्पष्ट नहीं है कि भारत के विभिन्न कला केन्द्रों तथा कला-नगरों में कम्प्यूटर पर कितने चित्रकार काम कर रहे हैं। इन तमाम स्थितियों व आशंकाओं तथा 'मशीनी काम' की अवधारणा के बावजूद यह सत्य है कि कम्प्यूटर का विकास और उसमें किए जाने वाले विविध प्रयोगों का विकास बहुत तेजी से हो रहा है तभी तो कहा जा रहा है कि 'आज का जमाना कम्प्यूटर का जमाना है।' यही कारण है कि अभी कुछ समय पहले तक कम्प्यूटर पर सादे काम (ब्लैक एंड ह्वाइट) ही हुआ करते थे पर आज उससे रंगों में भी काम किये जा रहे हैं। कम्प्यूटर में रंगों का आना वास्तव में चित्रकारों के लिए एक आकर्षण और नए प्रयोग को उकसाने वाली दशा का निर्माण करता है। इस नए काम व तकनीक की एक चुनौती की तरह लेते हैं आर.एस. धीर। वह एक प्रयोगधर्मी चित्रकार हैं इसलिए बहुत स्वाभाविक था कि उन्हें यह चुनौती स्वीकार होती। इस चुनौती का ही परिणाम है कि पिछले कुछ समय से वह कम्प्यूटर पर चित्रकला का काम कर रहे हैं और यहां उनके 38 काम इस दिशा में उनकी महारत की ओर इशारा करते हैं। कम्प्यूटर में होता है एक माउस (हम उसे चूहा कह लें)। उसे दबा-दबा कर स्क्रीन पर कमांड दिया जाता है और कलाकार अपनी परिकल्पना को उतारने के लिए चित्रकार के मन में कोई विषय वस्तु भी होनी चाहिए जिसके आधार पर वह अपने काम को आकार दे।

आर.एस. धीर इन दोनों प्रक्रियाओं से गुजरते हुए 'इन्फार्मेटिक्स कम्प्यूटर इन्स्टीच्यूट (वाराणसी केन्द्र)' पर अपने काम को अंजाम देते हैं। आर.एस. धीर कहीं बहुत गहराई से एक आस्तिक मन के चित्रकार हैं और भारतीय देवी-देवताओं, पौराणिक मिथकों, घाटों, मंदिरों आदि में उनकी गहरी रुचि है। उनके अंतरतम में और मस्तिष्क में ये ही रुप पड़े हुए हैं जिनका प्रभाव उनके यहां प्रदर्शित कई कामों में दिखाई देता है। वह स्वीकारते हैं कि उन्होंने बहुत सोचकर ये धार्मिक चेतना के चित्र नहीं बनाए हैं पर चूंकि उनके अंदर यह चेतना बसी हुई है इसलिए शायद उसके प्रभाव यहां आ गए हैं।

यहां प्रदर्शित उनके 38 कामों को मुख्यतः दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। पहली श्रेणी के वे काम हैं जिनमें भूदृश्यों और प्राकृतिक दृश्यों को चित्रित किया गया है। रंग संयोजन तथा रंगों की गहराई के कारण श्री धीर के ये काम आकर्षित करते हैं। ये सुन्दर व मनोहारी काम हैं। खास तौर से दो तीन काम तो बहुत सुरुचिसंपन्नता व रंगों के मनोरम संयोजन के उदाहरण हैं। इन कामों को चूंकि कोई शीर्षक नहीं दिया गया है इसलिए उनके नाम से मैं इंगित नहीं कर सकता। वास्तव में चित्रकार धीर के कम्प्यूटर चित्रों की ये ही उपलब्धियां हैं।

उनकी दूसरी श्रेणी के काम उनकी धार्मिक आस्था के प्रतीक हैं जिनमें शिवलिंग, शालिग्राम पिंड, विभिन्न सूंढ़ों वाले गणेश, मंदिर, ध्वजाएं, घाट, शंकर का बैल, गणेश का मूषक, पूजा के लिए तैयार महिला कुछ फूल, त्रिशूल व कमल का फूल आदि बड़ी प्रमुखता से दिखाई देते हैं। गौर करने की बात है कि गणेश व शंकर के मिथकों के साथ आमतौर पर कमल का फूल नहीं दिखाई देता पर धीर के काम में कमल का फूल आया है जिससे ऐसा लगता है कि आज की भारतीय जनता पार्टी के प्रतीक व प्रभाव या उसके प्रति उनकी आस्था सहज ही एक रुप ले रही है।

उत्तर भारत में रहकर काम कर रहे अधिसंख्य पुराने, नए चित्रकारों के साथ एक विचित्र बात यह है कि वे देवी-देवताओं, पौराणिक व धार्मिक मिथकों, हिन्दूवादी भावनाओं व आस्थाओं के इर्द-गिर्द घूमते दिखाई देते हैं या इन्हीं विषयों को अपने काम का विषय बनाकर शायद गर्व का अनुभव करते हैं।

इससे होता यह है कि ऐसे चित्रकार नित परिवर्तित होते समाज, विडम्बनाओं, तनावों, नए मूल्यों में विकसित होते समाज को न देखकर पुरातनपंथी दिशा में ही अपने को केन्द्रित किए दिखाई देते हैं। इससे उनके सामाजिक सरोकारों व चिंताओं का भी पता चलता है कि वे अभी पुराने गह्वर में ही पड़े हैं और नए परिवर्तनों, मूल्यों पर उनका कोई ध्यान नहीं। रचनात्मकता के क्षेत्र में यह पिछड़े विचारों के वर्चस्व का एक स्वरुप भी दिखाता है। चित्रकार धीर कहते हैं कि उनका कम्प्यूटर माउस उन्हें जहां ले गया है वहां वे चले भी गए हैं जैसे गणेश की सूंड़ बनाते समय छोटे-बड़े, ऊपर नीचे जो भी आकार उनके चूहे ने लिया वे उसकी तरफ बढ़ते गए जैसे उनका वश न हो उन पर।

लेकिन वह यह स्वीकारते हैं कि मानस में जो कुछ भरा होता है वह काम में आने लगता है और उन्हें फिर रोकना मुश्किल हो जाता है (माउस एक चित्रकार पर हावी हो जाता है और सबसे ऊपर चित्रकार का मानसिक रु[illegible])। पर श्री धीर यह भी कहते हैं कि यहां के काम में जो भी दिखाई देता हो उनके काम में विविध रुप आए हैं।

यह अच्छी बात होगी और क्या ही अच्छा हो अगर आर. एस. धीर जैसे अनुभवी चित्रकार समाज की आधुनिक चुनौतियां सामाजिक, राजनीतिक विडम्बनाओं तथा समाज परिवर्तन की दिशा में लगे विशाल जन-समुदाय की समस्याओं को अपने काम में [illegible] दें।
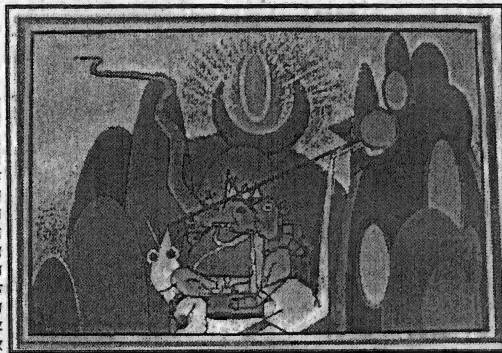
दैनिक जागरण, वाराणसी (इला.), 23 अप्रैल, 1998 (

कम्प्यूटर पर प्रो. आर.एस. धीर द्वारा बनाया गया एक चित्र व प्रो. धीर (इन्सेट में)। छाया: जागरण

डा. धीर ने 'माउस-कूची' से बनायी खूबसूरत चित्रकृतियां

❑ राजेंद्र प्रसाद घाट के आसपास आर्ट गैलरी खोलने का सरकारी प्रयास

वाराणसी, 22 अप्रैल। काशी हिंदू विश्वविद्यालय के पूर्व संकायाध्यक्ष व वाराणसी के प्रख्यात चित्रकार प्रो. आर.एस. धीर ने कम्प्यूटर स्क्रीन के कैनवास पर 'माउस' की कूची से लाजवाब चित्रकृतियां उतारी हैं जिन्हें देखने वाला बस देखता ही रह जाता है। माउस से आकार लेती उनकी कल्पना, रंग चयन व मिश्रण की परिपक्वता बड़े वास्तविक लगते हैं। कला क्षेत्र में प्रो. आर.एस. धीर ने अपने प्रयोगधर्मी विचारधारा को अवतरित किया है। वे अब तक ऐसे दो सौ से भी ज्यादा चित्रों का सृजन कर चुके हैं।

इस बाबत प्रो. धीर ने संवाददाता सम्मेलन में बताया कि कम्प्यूटर पर काम करने वाले चित्रकार आज भारत में बहुत कम हैं क्योंकि इसके द्वारा काम किये जाने की परिकल्पना और रंगों के संयोजन को लेकर ही आज सारी दुनिया के ललित कला जगत की स्थिति बहुत स्पष्ट नहीं है। कम्प्यूटर पर चित्रकृतियां निर्मित करने या परिकल्पित करने की शुरूआत जापान के चित्रकारों ने की। उन कलाकारों के काम को देखने से ऐसा आभास होता था कि वे ग्राफ पेपर्स पर किये गये हैं। इस वजह से आज भी अधिकांश चित्रकार रंग ब्रश से ही काम करना ज्यादा रचनात्मक और कलात्मक मानते हैं। इसीलिए कम्प्यूटर पर चित्रकला के काम का विकास कम दिखाई देता है। इसलिए उन्होंने कम्प्यूटर का प्रयोग व्यावहारिक कला में विशेष रुप से किया है।

प्रो. धीर ने बताया कि वे गहरे चिंतन और आस्तिक मन से भारतीय देवी-देवताओं, पौराणिक मिथकों, घाटों, मंदिरों के चित्र उकेरते हैं। इसलिए ऐसे चित्रों के मशीनी होने का अभास कतई नहीं होता। इसलिए वे माउस से रेखाएं व डाट्स बनाते हैं। इसलिए इन चित्रों में रंगों को इतनी खूबसूरती से ढाला जाता है जैसे ये कैनवास पर ब्रश से रंग संयोजित किये गये हों। रंगों का फ्यूजन व विविध शेड वास्तविक लगते हैं।

वे बताते हैं कि कम्प्यूटर चित्र जलरंग व तैलरंग के समान नजर आते हैं। वे विविध विषयों के इर्द गिर्द माउस चलाते हैं और संयोजन, स्पेस, आकार आदि का संतुलन चित्र को नया अर्थ देते हैं। रंगों के मामले में वे चटख रंगों को ज्यादा महत्व देते हैं। अब वे आगामी दिनों ढाका (बंगलादेश) में अपने कम्प्यूटर चित्रकृतियों की प्रदर्शनी लगायेंगे। हाल में उनकी चित्र प्रदर्शनी लखनऊ में सम्पन्न हुई है।

प्रोफेसर धीर ने बताया कि राज्य सरकार एक आर्ट गैलरी डा. राजेंद्र प्रसाद घाट के आसपास खोलने पर विचार कर रही है। इस संबंध में कला से जुड़े आयुक्त स्तर का एक अधिकारी आकर जगह आदि तजबीज चुका है, ऐसा सुनने में आया है। उन्होंने बताया कि कम्प्यूटर चित्रकृतियों के प्रति रूचि जागृत करने के लिए हैप्पी होम इंग्लिश स्कूल, मकबूल आलम रोड, खजुरी तिराहा में दो माह की पेंटिंग प्रशिक्षण कार्यशाला दो मई से प्रारंभ होगी।

इस कार्यशाला में सिर्फ छात्राएं ही भाग लेंगी और वाटर कलर, आयल पेंटिंग, रेखांकन व चित्रांकन का उन्हें प्रशिक्षण दिया जायगा। इन दिनों उनके चित्रों की एक प्रदर्शनी इस विद्यालय परिसर में लगायी गयी है। इस मौके पर श्री विनय कृष्ण अग्रवाल ने भी प्रशिक्षण के संबंध में पत्रकारों को जानकारियां दीं।

गुरुवार, २३ अप्रैल १९९८ सौर १० वैशाख सं. २०५५ वि.

कम्प्यूटरसे पेण्टिंग बनाने संबंधी कार्यशाला दो मईसे

मकबूल आलम रोड स्थित हैप्पी होम इंग्लिश स्कूलकी ओरसे प्रख्यात चित्रकार तथा काशी हिन्दू विश्वविद्यालयके दृश्यकला संकायके पूर्व प्रमुख प्रोफेसर आर.एस.धीरके निर्देशनमें स्कूलमें दो मईसे पेण्टिंग प्रशिक्षण कार्यशालाका आयोजन किया जायेगा। कार्यशाला दो माहतक चलेगी।

प्रोफेसर धीरने बुधवारको पत्र-प्रतिनिधियोंको बताया कि कार्यशालामें वाटर कलर, आयल पेण्टिंग, रेखांकन एवं चित्रांकन का प्रशिक्षण दिया जायेगा। इसमें कलाके क्षेत्रमें रुचि रखनेवाली छात्राओंको नवीनतम कम्प्यूटर चित्र तकनीकीकी जानकारी दी जायेगी। उन्होंने कहा कि कम्प्यूटरसे चित्र बनानेवाले देशमें बहुत कम हैं। कम्प्यूटरपर कलाकृतियां निर्मित करनेकी शुरुआत जापानके चित्रकारोंने की इसकी प्रेरणा अमेरिकाके उस कला अध्यायमें छिपी है जिसके अन्तर्गत कलाकारोंने अत्याधुनिक चित्रकलाके नामपर विशाल कैनवासपर चतुष्कोणीय तथा ज्यामितीय आकारोंको रंग, धागा, रेखाओं, जूट आदिसे निर्मित करनेका प्रयास किया। आजके युगमें कम्प्यूटरका प्रयोग व्यावहारिक कलामें विशेष रूपसे किया जाता है।

प्रोफेसर धीर रंग, ब्रश एवं कम्प्यूटरकी प्रक्रियाओंसे गुजरते हुए इनफार्मेटिक्स कम्प्यूटर इंस्टीट्यूटमें कलाकृतियां बनाते हैं। वे बहुत गहरे चिंतन एवं आस्तिक मनके चित्रकार हैं। भारतीय देवी, देवताओं, पौराणिक मिथकों, घाटों, मंदिरों आदिमें उनकी गहरी रुचि है। इस कार्यशालाका लाभ उन छात्र-छात्राओंको होगा जो कलामें रुचिके साथ ही कम्प्यूटरका ज्ञान भी अर्जित करना चाहते हैं।
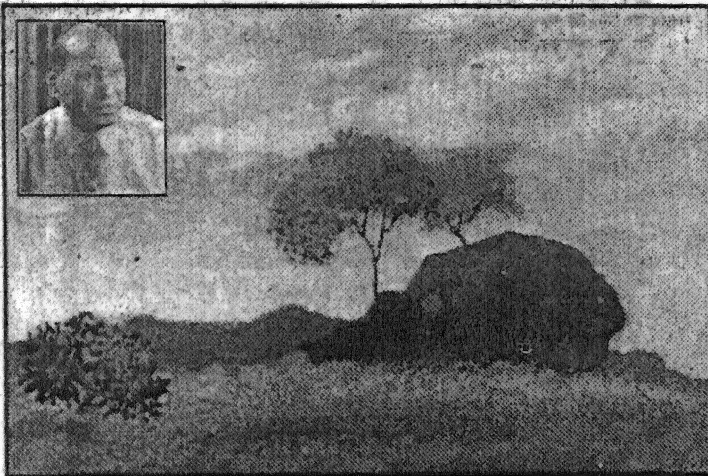
कम्प्यूटरसे निर्मित एक चित्र। इनसेटमें चित्र बनानेवाले प्रोफेसर आर.एस.धीर।

के. 37/38 ग्वालदास साहूलेन, गोलघर, वाराणसी 221001

सन्मार्ग

(पृष्ठ २) सन्मार्ग २४ अप्रैल ९८

दो माह की पेंटिंग प्रशिक्षण कार्यशाला २ मई से

वाराणसी, २३ अप्रैल। हैप्पी होम इंगिलश स्कूल मकबूल आलमरोड खजुरी त्रिरहा वाराणसी द्वारा प्रख्यात चित्रकारप्रो० आर एस धीर [पूर्व संकायाध्यक्ष दृश्य कला सकाय] काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के निर्देशनमें एक दो माह की पेंटिंग प्रशिक्षण कार्यशाला २ मई से प्रारम्भ हो रहीं है इस कार्यशाला में वाटर कलर आयल पेंटिंग रेखांकन एव चित्रांकन का प्रशिक्षण दिया जायेगा। इसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि कला के क्षेत्र में रुचि रखनेवाली छात्राओंको नवीनतम कम्प्यूटर चित्रतकनीकी की भी जानकारी उपलब्धकराई जाएगी।

उक्त जानकारी स्कूलके चेयरमैन डा० विनयकृष्ण अग्रवाल ने दी है। उन्होंने बताया कि कला क्षेत्रमें प्रो० धीरने अपने प्रयोगधर्मी विचारधारा को अवतरित किया हैं आज ये दो सौ से ज्यादा कम्प्यूटर चित्रोंका सृजनकर चुके हैं जिनकी अनेकों प्रदर्शनियां आयोजित हो चुकी हैं जिसे कला प्रेमियोंने सराहा भी है कम्प्यूटर में काम करनेवाले चित्रकार आज भारतमें बहुंत कम है क्योंकि इसके द्वारा काम किये जाने की परिकल्पना और रगोंके सयोजन को लेकर ही आज सारी दुनिया के ललित कला जगत से बहुत स्पष्ट नहीं है।

कम्प्यूटर पर कलाकृतियां निर्मित करने या परिकल्पित करने की शुरूआत जापानके चित्रकारों ने शुरु किया लेकिन लगता है इसकी प्रेरणा अमेरिका के उस कला अध्याय में छिपी हैं जिसके अन्तर्गत कलाकारोंने अत्याधुनिक चित्रकलाके नामपर विशाल कैनवासपर चतुर्कोणीय ज्यामितीय अकारोंको रग धागा रेखाये जूट आदि से निर्मित करने का प्रयास किया, सम्भवतः स्थापत्य कला में दिन प्रतिदिन नये प्रयोगों का प्रभाव था।

डा०अग्रवालके अनुसार प्रो० आर एस धीर इन दोनों प्रक्रियाओसे गुजरते हुंए इनफार्मेटिक्स कम्प्यूटर इन्स्टीटयूट वाराणसी केन्द्रपर अपने कामको अंजाम देते हैं प्रो० धीर बहुंत गहरे चिन्तन एव आस्तिक मनके चित्रकार हैं और भारतीय देवी देवताओं पौराणिक मिथको घाटों मन्दिरो आदि में उनकी गहरी रूचि हैं। ऊनके अन्तरमन में और मस्तिष्क में ये रुप पड़े हुए है जिनका प्रभाव उनके यहां प्रदशित कई कामों में दिखाई देता है वह स्वीकारते हैं कि उन्होंने बहुंत सोचकर ये धार्मिक चेतनाके चित्र नहीं बनाये हैं पर चूंकि ऊनके अन्दर यह चेतना बसी हुंई है इसलिए शायद ऊसके प्रभाव यहां आ गये हैं।

इस कार्यशाला का सबसे ज्यादा लाभ उनछात्राओंको होगा जो कि कला में रुचि रखते हैं साथ ही कम्प्यूटर का ज्ञान भी अर्जित करना चाहते हैं। विशेष रूपसे इन्टरमीडिएट व बी० ए०, बी०एफ०ए०, एम० एफ०ए० की छात्राये लाभान्वित हो सकती हैं।

TIMES OF INDIA (LUCKNOW)

MUST SEE MUST DO

Fusion of art and technology

Everyone has heard of computers in offices, institutions, industries, even shops, plants with machines chugging and humming, to PCs kept in homes and elsewhere.

But then when it comes to art, few can visualise a keyboard replacing the paint brush. Prof RS Dhir of Varanasi belongs to a class of artists who have decided to probe the potential of computer technology in creativity. Experimenting with forms and colours and gaining control over manoeuvrability through the mouse, the artist has arrived at a stage when he can display his creations. And so after traversing through the
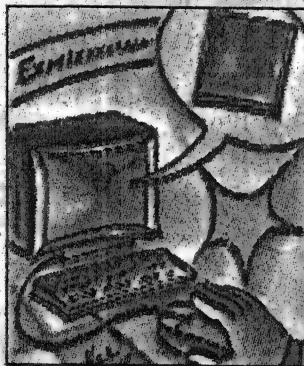
world of drawings, wash, oils and collages over the past forty years, Prof Dhir, having achieved a level of mastery over this new-found tool and mode for expression, is holding an exhibition of his works at the Srishti Art Gallery from Sunday. The show to be inaugurated by Prof RS Bisht, former principal, College of Arts and Crafts, will have thirty-two works on display upto the 10th of March. Although many wonder about the kinds of results a computer may give on the canvas, there is no element of surprise from many quarters. Firstly because there is no field left untouched by computers and secondly because graphics and designs on the monitors have become the order of the day.

Definitely an interesting show, a must for technology as well as art buffs.

Venue: Srishti Art Gallery
Dates: March 1 to March 10

गांडीव २५ अप्रैल, १९९८ (५)

सुविख्यात चित्रकार प्रो० धीर छात्राओं को कम्प्यूटर सहित अन्य विधाओं का प्रशिक्षण देंगे

राजेंद्र प्रसाद घाट पर शीघ्र कला दीर्घा की स्थापना
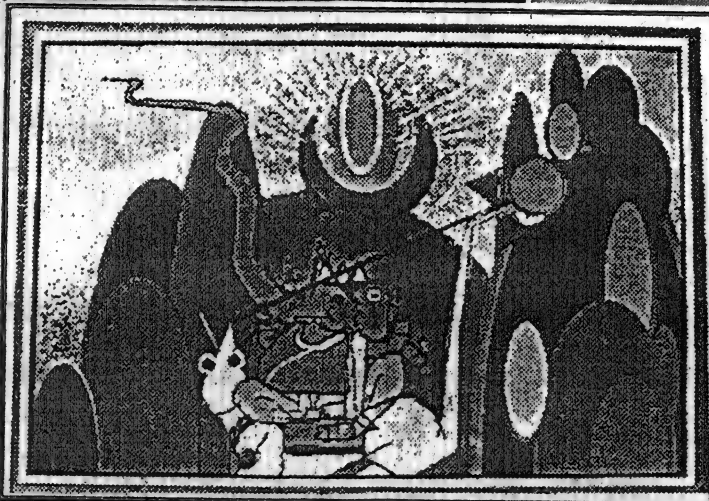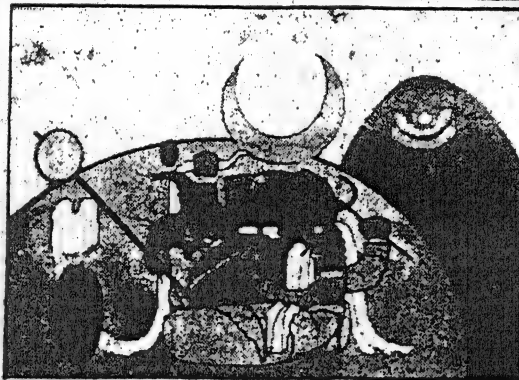
प्रो० धीर की कम्प्यूटर कलाकृति, इनसेट में प्रो. धीर।

काशी। देश के जाने माने चित्रकार व दृश्य कला संकाय बी०एच०यू० के पूर्व संकायाध्यक्ष प्रो० आर०एस० धीर हैपी होम इंग्लिश स्कूल (मकबूल आलम रोड, वाराणसी) के इन्फार्मेटिक्स कंप्यूटर इन्स्टीट्यूट प्रभाग द्वारा २ मई से शुरु हो रही कार्यशाला में कला क्षेत्र में रुचि रखने वाली बालिकाओं को वाटर कलर, आयल पेंटिंग, रेखांकन व चित्रांकन सहित कंप्यूटर पर चित्र बनाने की तकनीकी का प्रशिक्षण देंगे।

यह प्रशिक्षण २ सप्ताह का होगा जो सप्ताह में दो दिन सायं ४ से ६.३० बजे तक चलेगा। प्रत्येक सत्र में १० छात्राओं के मात्र २ बैच प्रशिक्षण प्राप्त करेंगे। इसका कुल शुल्क मात्र ३ हजार रु० होगा।

पत्रकारों को इससे अवगत कराते हुए संस्थान के संचालक विनय कृष्ण अग्रवाल, मनोरंजन अग्रवाल तथा मधुबनी घराने के जैन मिनियर आर्ट बाटिक सहित कलाकृतियों के चितेरे प्रो० धीर ने बताया कि अब तक उन्होंने कंप्यूटर पर २ सौ से अधिक देवी देवताओं, सीनरी आदि के चित्र बनाये हैं जिनकी प्रदर्शनी अनेक शहरों में लगी है तथा मई में ढाका में भी लगने जा रही है।

उन्होंने बताया कि कंप्यूटर पर कूची की जगह माउस से चित्र बनाना एक अनोखा अनुभव है, परंतु गहन चिंतक और आस्तिक मन के चलते ही उन्हें कोई परेशानी नहीं होती। अपने इसी ज्ञान को वे बच्चियों में बांटेंगे। वाराणसी में यह कार्य पहली बार होगा जबकि देश के कुछ शहरों में ही इसके प्रशिक्षण की व्यवस्था है जो कि बहुत महंगी है। कंप्यूटर पर माउस से उकेरे गये चित्रों में तैल व जल रंगों का आयाम होता है और पूर्णतः प्राकृतिक लगती है मशीनी नहीं। चटक रंगों को नियंत्रित प्रयोग, रंगों का फ्यूजन व विविध शेड उन्हें नया आयाम देते हैं।

एक प्रश्न के उत्तर में प्रो० धीर ने बताया कि सरकार द्वारा राजेन्द्र प्रसाद घाट के समीप शीघ्र ही एक कलादीर्घा की स्थापना हो रही है। इससे आम लोगों को चित्रों को देखने का लाभ मिलेगा। इस बारे में उनसे एक वरिष्ठ अधिकारी ने मुलाकात की थी। उन्होंने हिंदू देवी देवताओं के चित्रकार मकबूल फिदा हुसैन के विवादास्पद चित्रण को सस्ती लोकप्रियता का प्रयास बताते हुए कहा कि कलाकारों को ऐसी नौटंकी करने की कोई जरुरत नहीं है। सुर्खियों में रहने के लिए ही हुसैन साहब अक्सर उलूल जुलूस हरकते किया करते हैं। कार्यशाला में प्रवेश की इच्छुक छात्रायें फोन नं० ३४३३२८ पर संपर्क कर सकती है।

ललित कला अकादमी की प्रदर्शनी के मौके पर आयोजित समारोह को संबोधित करते अकादमी के अध्यक्ष श्री योगी। छाया : अमर उजाला

देहरादून

चित्रकारों पर हावी रहा पहाड़ का जादू

धनोल्टी में बने चित्रों की दून में प्रदर्शनी

मुख्य संवाददाता
देहरादून, 1 नवंबर

पर्वतों की शांत व सुरम्य वादियों और देवदार के जंगलों की सुंदरता ने दूसरों पर अपना रंग जमाने वाले चित्रकारों को भी अपने रंग में रंग दिया। ललित कला अकादमी के धनोल्टी शिविर में शिरकत करने आए चित्रकारों पर पहाड़ का रंग ऐसा चढ़ा कि उनकी तूलिका पहाड़ों की ओर मुड़ गई। तूलिकाओं और इन्द्रधनुषी रंगों का यह जादू आज दर्शकों के सिर चढ़कर बोला।

धनोल्टी में सात दिन चले इस शिविर में बने तैल चित्रों की प्रदर्शनी ने आज दर्शकों को मुग्ध कर दिया। दून प्रेस क्लब के सभागार में आज शाम इस प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। प्रदेश के विभिन्न हिस्सों से आए प्रतिष्ठित चित्रकारों की इन कृतियों में अधिकांश में पहाड़, देवदार, नदी और झरनों के मनोरम दृश्य अलग-अलग अंदाज में मौजूद थे। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के ललित कला विभाग के पूर्व अध्यक्ष व लब्ध प्रतिष्ठित चित्रकार प्रो. आर.एस. धीर के दो चित्रों में से एक में पहाड़, पेड़, फूल-पत्तियां और कैक्टस जीवंत हो उठे थे। उनकी दूसरी कृति में शिवलिंग पर चढ़कर नृत्य करते बाल गणेश का अनूठा चित्रण था।

ललित कला अकादमी से जुड़े लखनऊ के युवा चित्रकार व शिविर के व्यवस्थापक अवधेश मिश्र के दोनों तैल चित्रों में देवदार के सुंदर पेड़ों के बीच मौजूद बालाएं बगैर कुछ बोले काफी कुछ कहती प्रतीत हो रही थीं। शरीर के ऊपरी हिस्सों तक सिमटे अनावृत्त बालिकाओं के ये चित्र दर्शकों को कहीं से भी अश्लील नहीं लगे। लखनऊ के ही शरद पांडेय ने प्रतीक्षा करती महिलाओं को लकड़ी के परम्परागत-सुंदर दरवाजों-खिड़कियों के साथ कैनवास पर उतारा। पीले और कत्थई रंग के मणिकांचन प्रयोग से मनोक्राम शेड पैदा करके पांडेय इन चित्रों को एक अलग पहचान देने में कामयाब रहे। बरेली कालेज के ललित कला विभाग की अध्यक्ष डा. मंजू सिंह के एक चित्र में पहाड़ पर प्रतीक्षा करती नारी का मनोहारी दृश्य था और दूसरे में बच्चे का सहारा लेकर चलते बुजुर्ग के जरिये प्रतिकात्मक रूप से दो पीढ़ियों की एक-दूसरे पर निर्भरता का प्रभावशाली चित्रण था। बनारस की उत्तमा ने जिम्मेदारियों के ताने बाने में उलझी इंसानी जिंदगी और बंधनों में जकड़ी नारी को प्रतीकात्मक रूप से कैनवास पर उतारा। आगरा के बी.डी.के. कालेज के ललित कला विभाग की रीडर डा. रेखा कक्कड़ ने धनोल्टी के प्राकृतिक दृश्य को तूलिका का विषय बनाया। उनका दूसरा चित्र 'रोड साइड' भी बहुत पसंद किया गया।

लखनऊ की प्रेरणा सिंह के दोनों चित्रों में रंग-बिरंगे पहाड़ एक नए अंदाज में नजर आए। पहली बार पहाड़ पर आई इस युवा चित्रकार ने कहा कि समझ में नहीं आ रहा था कि वह बनाएं जो पहले से दिल में है या वहां के वातावरण को कैनवास पर उतारें। पहाड़ और उनका वातावरण कलाकारों पर हावी हो गया था। मासूम पहाड़ों पर कारगिल में क्या कुछ गुजरा, वह भी दिमाग में घूम रहा था। लगा जैसे पहाड़ रंग बदल कर कुछ कहना चाह रहे हों। लखनऊ के उमेन्द्र प्रताप सिंह ने चट्टानों को चित्रों की विषय वस्तु बनाया, तो वहीं से आए अजीत सिंह ने टूटते-चटकते पहाड़ों के बीच दो नारियां चित्रित कीं। चित्रकार ने मसूरी के भवन को भी अपना विषय बनाकर एक अलग प्रभाव पैदा कर दिया।

देहरादून के एक केंद्रीय विद्यालय से जुड़ी आशा सहाय ने अमूर्तोन्मुख चित्रों के जरिये तूलिका का चमत्कार दिखाया। लखनऊ के दुर्गादत्त पांडेय के चित्रों में भी पहाड़, वृक्षों आदि के खूबसूरत नजारे दर्शकों को प्रभावित कर रहे थे। प्रदर्शनी के संयोजक व प्रसिद्ध चित्रकार बी.पी. काम्बोज देवदार ने वृक्षों और पहाड़ के साथ ही दूसरे चित्र में भूत, वर्तमान और शास्वत का प्रतीकात्मक चित्रण किया। दून के तीन युवा चित्रकारों रचना त्यागी, राजेंद्र पाल और हरीश के चित्र भी दर्शकों को बहुत पसंद आए। रचना ने रंग और आकारों का तारतम्य मोहक अंदाज में प्रस्तुत किया। राजेंद्र और हरीश ने पहाड़, हरियाली आदि के नयनाभिराम दृश्य कैनवास पर उतारे।

प्रदर्शनी के मौके पर उ.प्र. ललित कला अकादमी के अध्यक्ष वाई.एन. योगी ने कहा कि अकादमी के कार्य का विस्तार करने के लिए विभिन्न स्थानों पर शिविर आयोजित करने का निर्णय किया गया है। अगला शिविर अल्मोड़ा में लगाया जाएगा। जल्द ही एक बहुउद्देशीय योजना शुरु की जाएगी। शिविर संयोजक काम्बोज ने कहा कि अनुभवों के आदान-प्रदान और नए वातावरण में नए प्रयोगों के लिए ये शिविर बहुत महत्वपूर्ण हैं। इस मौके पर डी.ए.वी. कालेज के चित्रकला विभाग के अध्यक्ष प्रो. पी.के. सहाय भी मौजूद थे।

कलाकारों की प्रतिभा से 'रूबरू' हुए दर्शक

नगर प्रतिनिधि

देहरादून, 1 नवम्बर। राज्य ललित कला अकादमी के तत्वावधान में आयोजित चित्रकला प्रदर्शनी में प्रदेश भर के लगभग एक दर्जन चित्रकारों ने प्रकृति के विहंगम दृश्यों को केनवास पर उतारा गया। कलाकारों द्वारा बनाये गये चित्रों का प्रदर्शन आज शांय दून प्रेस क्लब में किया गया। शिविर का आयोजन 25 अक्टूबर से 1 नवम्बर तक गढ़वाल मण्डल विकास निगम के धनौल्टी स्थित अतिथि गृह में किया गया।

अठ्ठारह एवार्ड जीत चुके प्रो. आर.एस. धीर अवकाश प्राप्त अध्यक्ष बी एच यू ने कैनवास पर रंगों का भरपूर इस्तेमाल करते हुए शिवलिंग के ऊपर गणेश जी को नृत्य करते हुए दर्शाया। लखनऊ की चित्रकार प्रेरणा सिंह ने बताया कि उन्होंने पहली बार पहाड़ों पर चित्रांकन किया। उन्होंने कहा कि धनौल्टी जाने पर पर्यावरण ही उन पर हावी रहा। उन्होंने प्रकृति के बदलते रंग पर पहाड़ों का चित्रण किया। देहरादून डी.ए.वी. कालेज के छात्र हरीश ने अपने चित्र में कुंभ की अपवित्रता पर ऋषि के क्रोध को अपनी तूलिका कैनवास पर उकेरा।

लखनऊ के चित्रकार शरद पाण्डेय ने मोनो क्रोम शेड पर काष्ट निर्मित द्वार पर प्रतीक्षा करती हुई महिला को दर्शाया। अजीत सिंह ने अपने चित्र के बारे में बताते हुए कहा कि वे विषमताओं से निकलकर एकान्त पर पहुंचने जो विचार व भाव उनके अन्दर से निकलते हैं वे रंगों के माध्यम से कैनवास पर उतार देते हैं। डा. रेख कक्कड प्रवक्ता पी.डी. के महाविद्यालय आगरा ने धनौल्टी की पहाड़ियों को दर्शाया। एम.के.पी. इंटर कालेज की रचना त्यागी ने आकार व रंग और स्थान के तालमेल को प्रदर्शित किया। बनारस की कलाकार उत्तमा सिंह ने अपने चित्र में दिखाया कि समाज व्यक्ति से किस तरह जुड़ता है। डा. मंजू सिंह ने ग्रामीण इलाके के चित्र में दिखाया वृद्ध अपने बेटे का सहारा लेकर चल रहा है। इसके अलावा लखनऊ से अवधेश मिश्रा, डा. दुर्गादत्त पाण्डेय, उमेन्द्र सिंह तथा दून की श्रीमती आशा सहाय ने अपने चित्रों को प्रदर्शित किया। देहरादून के स्थानीय कलाकारों राजपाल डी ए वी कालेज व दर्शन सहाय ने भी भाग लिया।

अकादमी के समन्वयक बी पी काम्बोज ने बताया कि अकादमी में चित्रकारों को प्रदेश सरकार द्वारा पांच हजार रुपये तथा नये कलाकारों को दो हजार रुपये दिए जाते हैं।

प्रेस क्लब में पेन्टिंग प्रदर्शनी का अवलोकन करते योगेन्द्र नारायण व अन्य कलाकार- छाया: जागरण

देहरादून, 2 नवंबर, 1999

सुबह-ए बनारस

वाराणसी, गुरुवार, 4 अप्रैल 2002

काशी के सांस्कृतिक परिवेश में बुढ़वा मंगल

डा. गौरीशंकर गुप्त

चित्र सौजन्य: आर. एस. धीर
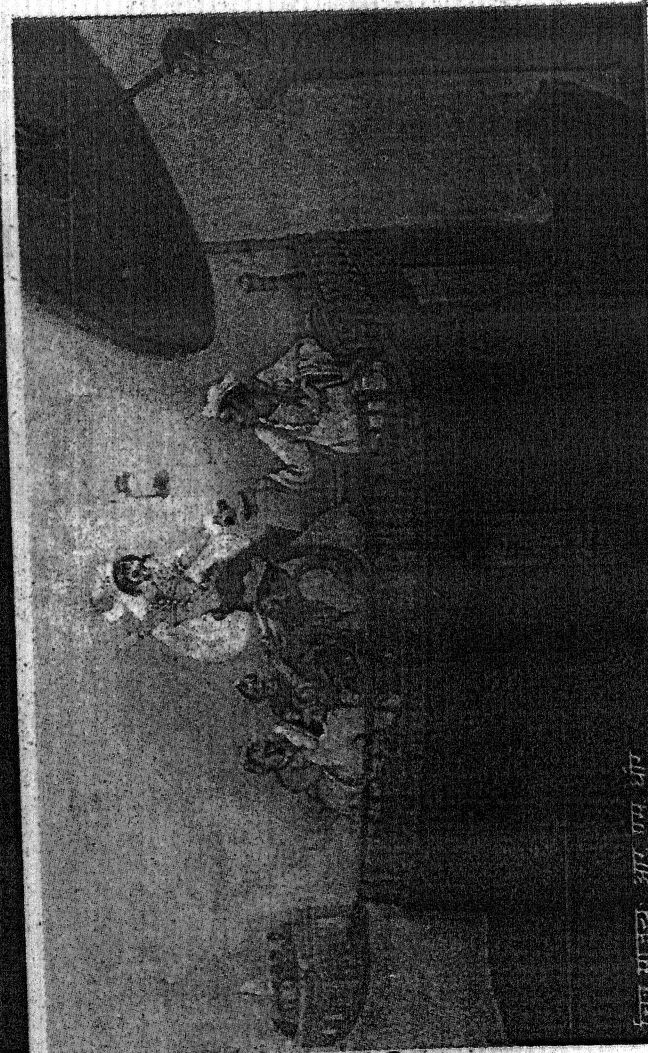
'लहासी' 'काटना' कहते हैं। पटैले को 'कच्छा' भी कहते हैं। इस पर एक कहावत प्रसिद्ध हुई -किसी के कच्छे में अपनी 'पनसुइया' (डोंगी

और गंडासे तक चल जाते। ऐसे भी प्रसंग आए कि सिंधियाघाट वालों से शिवाला घाट के लोगों की हाथा -बाँही तक हो गयी और विवाद ने इतना उग्र रूप धारण किया कि रामनगर से लौटती नावों को रोककर

जबर्दस्ती लहासी बांधते तो दूसरी ओर से लल... दे लहासी। अब भी पुराने लोग व्यंग्यात्मक ... प्रयोग करते हैं, जब मनोविनोद की दृष्टि से ...

या नाव) मत बांधना, अर्थात किसी का

शिवाला घाट वालों ने भरपूर बदला लिया।

स्वलहरी का समुचित आनंद लेती। संगीत ...
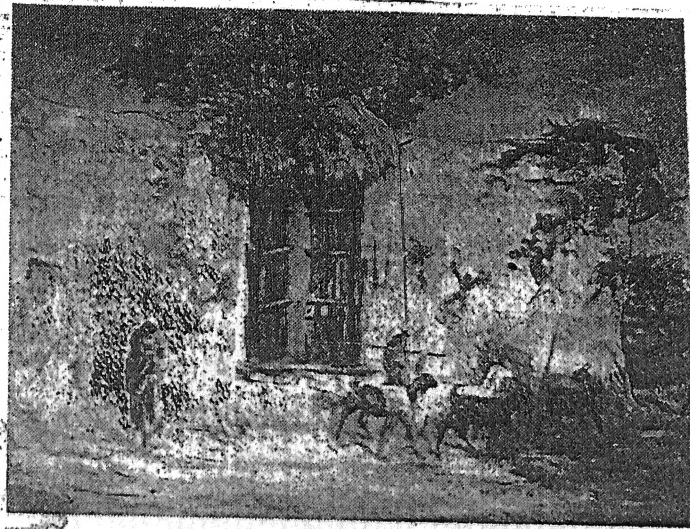
गांव धीर

चित्रकार आर० एस० धीर
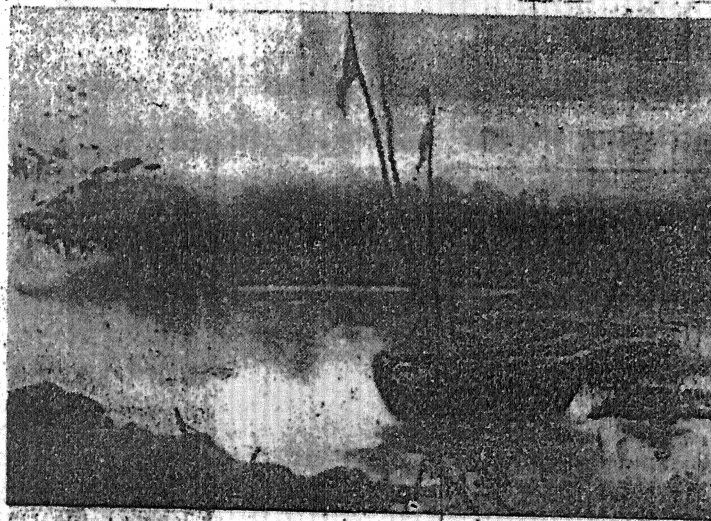
वाराणसी (जल-रंग में) धीर

वाराणसी (जल-रंग में) : धीर

र्वतीय सौन्दर्य : आर० एस० धीर